श्री चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शांतिसागर
दि. जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक संघ - फलटण

अध्यक्ष,
स्वस्तिश्री जिनसेन भट्टारक पट्टाचार्य
श्री १०८ चा. च. आचार्य [illegible] जैन
" जिनवाणी जीर्णोद्धारक सरथा " फलटण

श्री तत्वार्थ टीका

अर्थ प्रकाशिका

पं. सदासुखदास विरचित

प्रकाशक
चा. च. आचार्य शांतिसागर
दि. जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक संस्था - फलटण

वीरसंवत २५०८ इ. सन. १९८२

मूल्य - स्वाध्याय

प्रकाशक

श्री. माणिकचंद तुळजाराम शहा

— अध्यक्ष —

श्री. चा. च. शांतिसागर दि. जैन

जिनवाणी जीर्णोधारक संस्था

फलटण.

प्रथम आवृती- १९८२   ६०० प्रती

प्रकाशक,

श्रुतभांडार ग्रंथ प्रकाशन समिती, फलटण.

अध्यक्ष,

स्वस्तिश्री जिनसेन भट्टारक पट्टाचार्य

श्री १०८ [illegible] दि जैन

" जिनवाणी [illegible] रक संस्था " फलटण.

मुद्रक

श्री. वज्रकांत वालचंद शहा

अनेकांत मुद्रणालय,

१३११ भद्रावती पेठ,

सोलापूर - ४१३ ००५

श्री १०८ चारित्रचक्रवर्ती आचार्य शांतिसागर

दि. जैन जिनवाणी जीर्णोद्धार संस्थाका

संक्षिप्त परिचय

परमपूज्य श्री १०८ चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर दि. जैन जिनवाणी जीर्णोद्धार संस्थाका शुभसकल्प विक्रम सवत् २००० में पर्युषण पर्वके शुभ अवसरपर श्री सिद्धक्षेत्र कुथलगिरि क्षेत्र पर हुआ। सस्थाकी नियमावली बनाकर यह सस्था वि. स. २००१ मे बारामतीमे ट्रस्ट करनेमे आ गई। सस्थाका मुख्य उद्देश्य प्राचीन जैनसिद्धात शास्त्रोका जीर्णोद्धार करके जैनसाहित्यका प्रकाशन करना तथा उसका प्रचार करना यह है।

धर्मसस्कृतिका प्राण उसका साहित्य ही होता है। धर्मसस्कृतिकी प्रभावनाका प्रमुख अग प्राचीन जैन साहित्य की रक्षा करना, तथा उसका प्रकाशन करना, पठन-पाठन कराकर प्रचार करना यह जानकर जब परमपूज्य आचार्य श्रीका वि. सं. २००० मे श्री सिद्धक्षेत्र कुथलगिरि पर चातुर्मास था उस समय आचार्यश्रीको पता चला कि मूडबिद्रीमें जैन सिद्धांतके मूलभूत प्राण प्राचीन ग्रंथ धवला-जयधवला महाधवला ताडपत्र ग्रन्थ बहुत जीर्ण अवस्थामे पडे हुए है। उनमेसे महाधवलका करीब चार पॉच हजार श्लोक प्रमाण भाग कृमिकीटकों द्वारा नष्ट हो चुका है। यदि उनकी सुरक्षा न की जाय तो सभी सिद्धातं ग्रन्थ प्राय. नष्ट हो जावेंगे।

इस वार्तासे आचार्यश्री अत्यत चिंतित हुए। उस समय क्षेत्र पर (१) श्री १०५ भट्टारक जिनसेन मठाधीश कोल्हापूर, (२) श्री ध. दानवीर संघपति शेठ गेदनमलजी, बम्बई, (३) श्री गुरुभक्त शेठ चदुलाल ज्योतिचद सराफ, बारामती, (४) श्री दानवीर रामचंद्र धनजी दावडा, नातेपुते तथा अन्य उपस्थित धर्मानुरागी श्रावकोके सम्मुख पू आचार्य महाराजने आगमरक्षाकी अपनी अतरंग व्यथा सुनवाई।

आचार्यश्रीके उपदेश तथा आदेशसे प्रेरित होकर उस कार्यकी पूर्ति करनेका सकल्प तुरत किया गया। उसी समय लगभग एक लाख रुपयेके दानकी स्वीकृति प्राप्त हुई। तथा कार्यकी रूपरेखा निश्चित करनेके हेतु एक स्थायी कमेटी नियुक्त की गई।

उपरोक्त सिद्धांत ग्रन्थ आगामी कालमें दीर्घकाल तक सुरक्षित रहे इस उद्देश्यसे उनको ताम्रपत्रों पर खुदवाकर उनको सुरक्षित स्थान पर रखनेकी इच्छा आचार्यश्रीने प्रकट की। प्रथम उनको हस्तकारागिरोंके द्वारा ताम्रपत्रो पर अक्षर खुदवानेका विचार किया गया। परन्तु इसमे अतिकष्ट तथा अशुद्धताका अधिक सभव, खर्चकी बहुलता तथा कार्यपूर्तिमें अतिविलंब आदि त्रुटियां अनुभवमे आई। श्रीमान् शेठ वालचंद देवचद शहा बम्बई इन्होने इस कार्यकी

पूर्ति रासायनिक प्रक्रियासे होनी चाहिये, इससे यह कार्य अच्छी तरहसे और शीघ्रगतिमें पूरा हो सकेगा ऐसा प्रस्ताव रखा जो कि तत्काल सर्वसम्मत हुआ। उस समय वहाँ पूज्य श्री १०८ समतभद्र महाराज उपस्थित थे। उनके सूचनेनुसार श्रीमान् शेठ वालचंदजी शहाको मत्रीपद देनेका आदेश आचार्य श्री शातिसागर महाराजने देकर ताम्रपट बनानेका कार्यभार उन्हींको सौपा गया।

वि० सं० २००१ मे जब आचार्यश्री महाराज बारामतीमें गुरुभक्त शेठ चंदुलालजी सराफ इनके वगीचेमे विराजमान थे उस समय श्री प० खूबचंदजी श्री पं० मक्खनलालजी आदि विद्वान् तथा धर्मानुरागी श्रावक जनोकी सभामे (१) सिद्धात ग्रन्थोका संशोधन पूर्वक देवनागरी लिपिमे ताम्रपत्रो पर अकित करके उनकी स्थायी रक्षाका प्रबंध करना, तथा (२) अन्य प्राचीन ग्रन्थोंका जीर्णोद्धार करके उनको प्रकाशित कराकर उनका पठन-पाठन स्वाध्याय करनेके लिये त्यागीगणोको, मदिरको, तथा विद्वान् लोगोंको उनका विना मूल्य वितरण करना इन दो प्रधान उद्देश्योको पूर्ति करनेके उद्देश्यसे–'श्री १०८ चरित्रचक्रवर्ती आचार्य शातिसागर दि० जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक सस्था, इस नामस सस्थाकी स्थापना की गई।

उसके लिये १००० रु० या अधिक दान देनेवाले सस्थाके स्थायी सदस्य हो ऐसी योजना बनाई गई। सर्वप्रथम बटरपेपर ग्रन्थ छपवाकर रासयनिक प्रक्रियासे ताम्रपत्र पर अकित करवाना, तथा मूल ग्रन्थ की ५००-५०० प्रतिया छपवाना, एक एक मुद्रित प्रति स्थायी सदस्योको भेटरूपमे देना, तीर्थ क्षेत्रो पर तथा मदिरोंमे एक एक प्रति रखना, इस प्रकार आचार्यश्रीके आदेशानुसार निर्णय लिया गया।

कानूनके अनुसार सस्था रजिस्टर करनेके लिये समितिका गठन हुआ। समितिमें श्री शेठ वालचद देवचंद, श्री वालचद देवीदास चवरे वकील, आकोला तथा श्री माधवराव लेले वकील, सोलापूर सदस्य थे। एकमतसे सस्थाकी नियमावली तैयार की गई। तथा सोसायटीज रजिस्ट्रेशन ऐक्ट २१-१८६० के अनुसार सस्थाका दिनाक २५-५-१९४५ को अ० नं० १३७२ में रजिस्ट्रेशन सपन्न हुआ।

सिद्धात ग्रन्थोको हस्तलिखित प्रति प० गजपती शास्त्री इन्होंने मूडबिद्रीसे लाई थी। उसका मूल ताडपत्र ग्रन्थसे मिलान करनेमे स्व० प० लोकनाथ शास्त्रीजीका अमूल्य सहयोग प्राप्त हुआ। तथापि उसमे बहुत-सी त्रुटिया रह गई।

ताडपत्र ग्रन्थोका सशोधन शुद्ध और साफ होना जरूरी था। इसलिये तथा ताडपत्रे ग्रन्थ जीर्ण हुए है। भविष्यकालमें उनका दर्शन दुर्लभ होगा 'इस हेतुसे मूल ताडपत्र ग्रन्थोंके फोटो लेकर रखनेका निर्णय हुआ। इस कार्यमे ब्र० बोधिचद्रजी, श्री १०५ भट्टारक चारुकीर्तिजी, मूडबिद्रीके ट्रस्टीगण, पं० लोकनाथ शास्त्री, प० वर्धमान शास्त्री सोलापूर, श्री झारापकर

स्टुडिओके सचालक वर्ग आदि सज्जनोका अच्छा सहयोग प्राप्त हुआ। उनका धन्यवाद कपूर्व आभार मानना हम अपना कर्तव्य समझते है।

ताडपत्र ग्रथोके फोटो लेनेके लिये मत्री श्री वालचंद देवचद शहा, प० वर्द्धमान शास्त्री, श्री झारापकर बंधु मूडबिद्री गये। वहाँ पन्द्रह दिन ठहरकर मिद्धात ग्रन्थोंके ११०० फोटो लिये गये। उसका अदाज खर्च रु ११००० आया।

धवला ग्रथके मुद्रणका कार्य प्रथम बबईके निर्णयसागर प्रेसमे श्री प० खूबचदजी शास्त्रीके निगरानीमे प्रारभ हुआ। श्री. पडितजीकी सेवा विना वेतन प्राप्त हुई। छपाईका काम शीघ्रगतिसे हो इस दृष्टिसे सोलापूरके कल्याण प्रेसमे श्री प० पन्नालालजी सोनीके देखभालमे उक्त कार्य साढे तीन वर्षमे पूरा हुआ।

धवला ग्रन्थका सपादन-संशोधन-मुद्रण आदिके लिये रु. ३०००० धनराशि खर्च हुई श्री धवल ग्रन्थ ताम्रपत्र वनानेमे रु. २१००० खर्च हुआ।

स० २००६ में श्री गजपथाजी सिद्ध क्षेत्रके वार्षिक सभाके अवसर पर श्री सघपति सेठ गेदनमलजीके शुभहस्त द्वारा सशोधित मुद्रित प्रति तथा ताम्रपट आचार्यश्रीको समर्पण करनेका समारोह सपन्न हुआ।

जैन समाजमें धर्मश्रद्धा तो है। परन्तु वह दृढमूल बनने स्थितिकरणमे मुख्य साधन जिनागमका स्वाध्याय-मनन आदि है। स्वाध्यायके लिये आगम ग्रथोकी सुलभता होनी चाहिये। इस अभिप्रायसे वि० सं० २०१० मे श्री चा० च० आचार्य शातिसागर दि० जैन जीर्णोद्धार सस्था द्वारा प्रमाणित श्री श्रुतभडार तथा ग्रन्थ प्रकाशन समिति नामक संस्था आचार्य श्रीके उपदेश तथा आदेशसे स्थापित हुई। आचार्य श्रीके हीरक जयती महोत्सवके समय फलटणमे श्री चद्रप्रभ मदिरके सभा मडपके ऊपर एक श्रुतभडार हॉल बनवाया गया। वही पर धवला ग्रथ ताम्रपट तथा मुद्रित ग्रथ सुरक्षित रखे गये है।

इस प्रकार आचार्य श्रीके आदेशसे और मगल आशीर्वादसे आचार्य शातिसागर दि० जैन जिनवाणी जीर्णोद्धारक सस्था स्थापन होकर उसके द्वारा धवला ग्रथराजोंको ताम्रपट-पर उत्कीर्ण कराकर उनको दीर्घकालतक सुरक्षित रखनेका पवित्रतम कार्य सपन्न हुआ। तथा आजतक अनेक प्राचीन जैन साहित्यका प्रकाशन कराकर उनका विना मूल्य स्वाध्यायके लिये प्रचार करनेका पवित्र कार्य यह सस्था कर रही है और आगे भी करती रहेगी।

इस ग्रथ प्रकाशन समिति सस्था द्वारा आजतक निम्न ग्रथ प्रकाशित हो गये है।

ग्रंथ नाम	दातारोंके नाम
१. रत्नकरंड श्रावकाचार	श्री गंगाराम कामचंद, फलटण
२. समयसार (आत्मख्याति)	,, हिरालाल केवलचंद दोशी, फलटण
३. सर्वार्थसिद्धि	,, शिवलाल माणिकचंद कोठारी
४. मूलाचार	,, गुलाबचंद जीवनचंद गांधी, दहीपठी
५ उत्तर पुराण	,, जीवराज खुशालचंद गांधी, मुंबई
६. अनगार धर्मामृत	,, चंदूलाल कस्तूरचंद शहा, मुंबई
७ सागार धर्मामृत	,, पद्मप्पा धरणाप्पा वैद्य, निमगांव
८. धवला (सूत्रार्त)	,, हिराचंद तलकचंद, बारामती
९. जय धवला	,, बाबूराव भरमाप्पा सेनापुरे-कुडची
१० कुंदकुंद भारती	संस्थामार्फत
११. अष्ट पाहुड	
१२. श्रावकाचार संग्रह भाग १ (वीर संवत् २५०२)	
१३ महापुराण भाग १ ,,	
१४. भ. महावीर उपदेश परंपरा ,,	,,
१५ श्रावकाचार संग्रह भाग २	संस्थामार्फत
१६. ,, भाग ३	,,
१७. ,, भाग ४	,,
१८. ,, भाग ५	,,
१९ महापुराण भाग २	,,
२०. अर्थ प्रकाशिका—	,,

ग्रंथ प्रकाशन कार्यका खर्च ध्रुवनिधिका जो व्याज आता है उसमेंसे किया जाता है। ध्रुवनिधि बैंकोंमे **Fixed Deposit** रूपसे सुरक्षित रखी गई है।

इस प्रकार यह संस्था आचार्य महाराजके मंगल आशीर्वादसे प्राचीन जैन साहित्यका प्रकाशन तथा प्रचार कार्य कर रही है। प्रकाशित ग्रंथ बिना मूल्य स्वाध्यायके लिये जिन मंदिरोंमे तथा त्यागी गणोंको भेट दिये जाते है। इस प्रकार यह संस्थाका संक्षिप्त परिचय सादर करते है।

मंत्री
स्व. बालचंद देवचंद शहा

अध्यक्ष
स्वस्तिश्री जिनसेन भट्टारक
श्री १०८ चा च आचार्य शांतिसागर दि. जैन
जिनवाणी जीर्णोद्धारक संस्था

मंत्री
मोतीलाल मलुकचंद दोशी

अध्यक्ष
चंदुलाल तलकचंद शहा
श्रुतभंडार व ग्रंथ प्रकाशन समिति

प्रथमावृत्ति
प्रस्तावना

यह 'अर्थ प्रकाशिका' नामकी तत्वार्थ सूत्र की टीका सुप्रसिद्ध जैन ग्रथोके भाषा टीकाकार जयपूर निवासी पडितवर सदासुखदासजीने बनाई है। सस्कृत भाषामे अन्य अन्य आचार्योने तत्वार्थसूत्र पर अनेक टीका ग्रथ रचे है। उनके नाम इस ग्रथके अतमे परिशिष्टमे सदासुखदासजीने लिखे है। तत्वार्थसूत्र ग्रथका मुख्य नाम मोक्षशास्त्र है। सर्व कर्मोसे आत्माको मुक्ति होना (आत्मा का स्वतःसिद्ध आत्मारूप रहना) उसे मोक्ष कहते है। शास्ति कहिये शासन करता है। अथवा शिक्षा-उपदेश देता है। उसे शास्त्र कहते है। मोक्ष का उपदेश देनेवाला जो शास्त्र उसे मोक्षशास्त्र कहते है।

इसके पढनेसे तत्त्वोके अर्थका ज्ञान होता है इस हेतुसे इसको तत्त्वार्थाधिगम ऐसा विशेषण दिया है। इसके पढनेसे तत्त्वार्थका ज्ञान होता है। यह ग्रथ सूत्रमय है। अतः पडित जन इसे तत्त्वार्थसूत्र कहते हैं।

इस कलिकालमे साक्षात् गणधर देवके समान महामुनि श्रीमान् उमास्वामी नामके आचार्यने ये सूत्र रचे है। इसके दश अध्याय है।

> पढम चउक्के पढम पचम्मे जाण पुग्गल तच्च।
> छह-सत्तमेसु आसव अट्ठम्मे बध णायव्वो॥
> णवमे सवर-णिज्जर, दहमे मोक्ख वियाणेई॥

प्रथम द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ इन चार अध्यायोमे जीवतत्त्व, पाचवे अध्यायमे पच प्रकार अजीवतत्त्व, छठे और सातवे अध्यायमे आस्रव तत्त्व, आठवे अध्यायमे बंधतत्त्व, नवमे अध्यायमे संवर और निर्जरा तत्त्व और दसवे अध्यायमे मोक्षतत्त्व इस प्रकार दस अध्यायोमे क्रमसे सात तत्त्वोका वर्णन किया है।

इसके पढनेसे एक अनशन उपवास का फल प्राप्त होता है। सम्यग्दृष्टि श्रावक हो वा यति हो उनको इस ग्रंथका नित्य स्वाध्याय करना चाहिये। ऐसी शास्त्र की आज्ञा है। कर्नाटक देशमें श्रावक लोक स्नानके अनंतर नित्य सध्या वंदन क्रियामे मोक्षशास्त्र का प्रथम अध्यायका पठन पूजन करते है। उत्तर देशमे उपवास दिनोमें केई श्रावक नित्य इन सूत्रोका पाठ पढते है। सुनते

है। हम लोक जिस ग्रथका स्वाध्याय करते है उसका अर्थका ज्ञान अवश्य होना चाहिये। परंतु सूत्र तो हम लोकोको बहुतही दुर्बोध होगये है। यद्यपि गीर्वाण भाषामें इसके अनेक टीका ग्रंथ है तथापि गीर्वाण भाषा बडी कठीण हैं। हम लोक गीर्वाण भाषाके अनभिज्ञ होनेसे सस्कृत टीका पढकर भी हमको सूत्रार्थज्ञान नही होता हैं। इसलिये जयपूर निवासी पडितवर सदासुखदासजीने परोपकार बुद्धीसे अथवा मार्ग प्रभावना के लिये बहुत परिश्रम करके अनेक सस्कृत टीका ग्रथोका आशय जानकर यह अर्थ प्रकाशिका नामकी भाषा टीका रची हैं। उसके पढनेसे बहुतही उपकार हो रहा हैं।

परतु ग्रथ बहुत बडा होनेसे उसकी प्रत बनाकर सर्वसाधारण जैनीभाइयोको अपने सग्रहमे रखनेको कष्टसाध्य होता हैं। लेखकोंके अज्ञानसे या प्रमादसे ग्रथमे अशुद्धि बहुत रहती है। इस अनर्थको दूर करनेके लिये इस ग्रथ को छपानेका विचार किया है।

इस ग्रथकी प्रथमावृत्ति छपानेमे अनेक दातारोने १) श्री. रामचद्र अभयचद्र, वावीकर २) श्री शिवलाल मलुकचद, पढरपूरकर ३) श्री. शेठ माणिकचंद पानाचद, मुबई ४) गांधी नाथारंगजी मुबई ५) श्री. शेठ हिराचद नेमचद, सोलापूर. ६) श्री हेमचद साकळा, आळद इन्होने पूर्ण सहायता दी है। श्री. प. सदासुखदासजीने टीका की हैं। इसमे छपानेमे मेरा कुछ भी पुरुपार्थ नहीं हैं।

लेखकोंके प्रमादसे मूलप्रतीमे कुछ अशुद्धपाठ हो गये थे उनको मेरे अल्पबद्धीसे शुद्ध करके ग्रथ छपाया है। मै हिंदीभाषाका जानकार नहीं हू। जिनागमका भी अनभिज्ञ हू। अर्थात् मेरे संशोधनमे भी बहुत स्थळोमे प्रमाद हुआ होगा। उसको विद्वद्जन शुद्ध करे।

करकृतमपराध क्षन्तुमर्हन्तु सन्त.।

आपका
कल्लाप्पा भरमापा निटवे-नांदणीकर
कोल्हापूर-शके १९२४

द्वितीयावृत्ति
प्रस्तावना

यह 'अर्थ प्रकाशिका' नामक ग्रथ तत्त्वार्थ सूत्रवृत्ति या मोक्षशास्त्र की जो सर्वार्थसिद्धि टीका हैं उसका सक्षेपमे भाषानुवाद प सदासुखदासजी इनके द्वारा किया गया है। यह ग्रथ जैन साहित्यमे बडा महत्त्व पूर्ण है। आज कल यह ग्रथ दुर्लभ होनेसे इसका पुनर्मुद्रण नितात आवश्यक जानकर इस ग्रथकी ६०० प्रतिया श्री शातिसागर श्रुतप्रकाशन समिति फलटण द्वारा तथा ५०० प्रतिया जीवराज जैन ग्रथमाला द्वारा प्रकाशित करनेका निर्णय लेकर यह ग्रथ प्रकाशित हो रहा है। इस ग्रथके प्रकाशनमे कई मुमुक्षु साधर्मी बाधवोने स्वय प्रेरणासे ज्ञानदान स्वीकार करनेसे इस ग्रथका मूल्य लागतसे भी कम रखनेका सुअवसर प्राप्त हुआ है यह एक प्रशसनीय और अनुकरणीय है। डॉ नानकचद जैन-मेरठ इन्होने स्वय प्रेरणासे रु १०००।- दान स्वीकृत किया है। इनकी प्रेरणासे ही इस ग्रथका प्रकाशन कार्य सपन्न हुआ है। स्याद्वाद जिनवाणी का प्रचार घरघर होवे यही एक पवित्र भावना है। 'विद्याधन दैवधन तवैव। आत्मा की निजी स्वाभाविक सपत्ति विद्याधन ही है।

'न हि ज्ञानेन सदृश पवित्र इह विद्यते' ज्ञानके सदृश पवित्र, कल्याणकारक, सुख-शातिदायक अन्य कोई वस्तु नही है।

अज्ञानात् एव बध:, ज्ञानात् एव मोक्ष: अज्ञानसे ही ससारमे भ्रमण करनेका दु.ख प्राप्त होता है और ज्ञानके द्वारा ही ससार बधनसे मुक्त होकर शाश्वत सुख-शाति की प्राप्ति होती है।

सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामया:।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु न कश्चित् दुःखभाक्भवेत्।

—संशोधक

पं नरेंद्रकुमार शास्त्री सोलापूर
(न्यायतीर्थ- महामहिमोपाध्याय)

अर्थ प्रकाशिका

(तत्वार्थ टीका)

पं. सदासुखदास विरचित

भूमिका

ॐ नमः सिद्धेभ्यः । नम स्याद्वादिने सर्वज्ञाय ।

नमो ऽनेकान्तवादिने जिनाय । श्री सर्वज्ञ वीतरागाय नमः ।

श्री सरस्वत्यै नमः । श्री निर्ग्रंथ गुरुभ्यो नमः ।

अथ दशाध्याय तत्वार्थसूत्रनिकी अर्थप्रकाशिका नाम टीका लिखिये है ।

मंगलाचरण

वंदौ श्री वृषभादि जिन, धर्मतीर्थकरतार ।
नमै जास पद इंद्रसत शिवमारग रुचिधार ॥१॥

महावीर प्रभु चरम जिन, घाति घातिया चार ।
लहि केवलपद विभु कह्यो, शुद्धधर्म विस्तार ॥२॥

अथ देवाधिदेव परमपूज्य धर्मतीर्थके प्रवर्तन करनेवाले अनत चतुष्टयादि अनतगुण रूप अतरगविभूति करि भूषित अर इद्रादिक देव परमभक्ति करि निर्मापण किया जो अनुपम विभूति करि भूषित अर इद्रादिक देव परमभक्ति करि निर्मापण किया जो अनुपम विभूति सहित समवसरणादि बहिरग लक्ष्मी तिसकरि मडित वहुरि इद्रादिक असख्यात देवनिके समूहकरि वदनीक, बहुरि अनतगुणनिके अतिशयनिकरि सहित, अर अष्टादश दोषरहित जीवनिका परम उपकार करनेवाला अर लोक अलोकका प्रकाश करनेवाला अर त्रिकालवर्ती अनतद्रव्य, अनतगुण, अनतपर्यायनिका युगपत् क्रमरहित एककालमे उद्योन करनेवाला अर अनत महिमायुक्त, अनतशक्तिसहित, अर ससार समुद्रमे डूबते अनेक प्राणीनिकू हस्तावलवन देनेवाला, अर परमात्मा परब्रम्ह, परमेश्वर, परमेष्ठी, स्वयभू, शिव, अरिहत आदि नामकरि विख्यात, अर अशरण प्राणीनिकू अद्वितीय शरण अर परमऔदारिक देहमे तिष्ठता, अर सप्तऋद्धि समृद्ध गौतमादि गणधर मुनिनिकरि सेवनीय है चरणारविद जाका, अर कठ ओष्ठ तालु जिन्हादिक अगोपागनिका कपन स्पर्शनरहित उपज्या अर समस्त प्राणीनिके पुण्यप्रभावकरी प्रेरित आर्य-अनार्य समस्त देशनिके प्राणिनिके ग्रहणमे आवता समस्त पापका घातक ऐसा

दिव्यध्वनि करि भव्य जीवनिका मोह अधकार दूरी करता, अर चोसठि चामरनिकरी विराजमान, अष्ट प्रतिहार्य विभूषित, सिहासनतै चारि अगुल अंतरीक विराजमान भगवान् सकलपूज्य परम भट्टारक श्री वर्धमान देवाधिदेव मोक्षमार्गके प्रकाशनिके अर्थि समस्त पदार्थनिका स्वरूप सातिशय दिव्यध्वनि करि प्रगट किया। तिस अवसरमें निकटवर्ती निर्ग्रंथ ऋषीश्वर समस्त मुनिगणकरि वंदनीक, सप्तऋद्धिकरि समृद्ध चार ज्ञानके धारक, श्री गौतमनाम गणधर देव भगवान्भाषित अर्थकू धारण करि द्वादशांग श्रुतरूप रचना रची।

बहुरि श्री वर्धमान स्वामीकू मुक्तिगये पीछे १ गौतमस्वामी, २ सुधर्माचार्य,३ जबूस्वामी ये तीन केवली बासठ वर्षपर्यंत पदार्थनिकी प्ररूपणा करी। बहुरि तिनके पीछे अनुक्रम करि १ विष्णु, २ नदिमित्र, ३ अपराजित ४ गोवर्धन, ५ भद्रबाहु ये पाच श्रुतकेवली द्वादशागके पारगामी भये। तिनका १०० वर्षपर्यंत का अवसर भया। तिस अवसरमे भगवान केवली तुल्य समस्त पदार्थनिका प्ररूपण भया। बहुरि १ विशाखाचार्य,२ प्रौष्ठिलाचार्य, ३ क्षत्रिय, ४ जयसेन, ५ नामसेन, ६ सिद्धार्थ, ७ धृतिषेण, ८ विजय, ९ बुद्धिमान्,१० गगदेव,११ धर्मसेन, ये दशपूर्व के धारक एकादश परम निर्ग्रथ मुनि अनुक्रमतै १४३ वर्षमे भये। ते यथार्थ पदार्थनिकी सम्यक् प्ररूपण करी। बहुरि १ नक्षत्र, २ जयपाल, ३ पाडु, ४ ध्रुवसेन, ५ कसाचार्य पांच महामुनि एकादशांगविद्याका पारगामी अनुक्रमतै २२० वर्ष पर्यत यथावत् प्ररूपणा करी। बहुरि १ सुभद्र, २ यशोभद्र, ३ भद्रबाहु, ४ महायश, ५ लोहाचार्य ये पाच महामुनि एक प्रथम अगका पारगामी ११८ वर्षमे भये। ऐसे कालके निमित्त तै बुद्धि-वीर्यादिकनिकी मदता होते श्री कुंदकुदादिक अनेक परम निर्ग्रथ वीतरागी अगके वस्तुनिका ज्ञानी होते भये। तथा उमास्वामी भये।

ऐसे पापतै भयभीत ज्ञानविज्ञान सपन्न परमसयमगुणकरि मडित गुरुनिकी परिपाटीतै श्रुतका अविछिन्न अर्थके धारक इस कलिकालमे श्रुतकेवलीतुल्य श्री उमास्वामी नामा परमवीत-रागी मुनि भव्यजीवनिके परम उपकार करने को भगवानको परमागकी आज्ञातै तत्वार्थसूत्र दशाध्यायरूप रचना करी।

बहुरि कालके निमित्ततै जीवनिकी बुद्धिकी मदता जानि मोक्षमार्गके प्रवर्तन के अर्थि श्री पूज्यपाद स्वामी तवार्थसूत्रकी सर्वार्थसिद्धि नामा टीका रची। अर श्री समतभद्रस्वामी ८४००० श्लोक प्रमाण गधहस्ती नामा बडी टीका रची। तथा श्री अकलक देव तत्वार्थवार्ति-ककार ताकू राजवार्तिक कहिये ऐसी १६००० श्लोकनिमे टीका रची। बहुरि श्री विद्यानदीस्वामी श्लोकवार्तिक नामा २०००० श्लोकनिमे टीका रची।

सो अब इस कलिकालमे ऐसे सस्कृत ग्रथ पढने समझनेवाले अति अल्प रहि गये, तातै मदज्ञानी जीवनिके मोक्षमार्गरूप शास्त्रका किंचित् अर्थ समझनेकू देशभाषामय वचनिका लिखिये है।

दोहा— पंचपरमपदको नमौ, चैत्यचैत्यगृहसार। जैनधर्म वच वंदिकै, करो मगलाचार ॥१॥

सूत्रवृत्ति वार्तिक महा, भाष्य ग्रंथ करतार ।
ध्याऊं श्रीगुरुके वचन, करहु सु मम उपकार ॥२॥

चौपाई— जयति सुगुरु शिवमग विस्तारै । कर्म कठिन नय विविध विदारै
दिखतत्त्वके जानन हारे, वदो तिस गुण होहु हमारे ॥३॥

मोक्षशास्त्र गभीर अपारा, ताको लहि फलितार्थ उदारा ।
अति संक्षेप रूप गहि नीका, अर्थप्रकाश लिखू लघु टीका ॥४॥

सवैया तेईसा— प्रथम अवस्थामें भविजन ने तत्त्वारथके है रुचिवान् ।
तिनके सुगम मार्ग मिलनेको हो है अर्थप्रकाश महान् ।
मिलै सुराह उच्छाह बढै तब पढै बृहत् ग्रन्थयाहितठान
दर्शनज्ञान करै निज निर्मल धरै चरन पावै शिवथान ॥५॥

अर्थ प्रकाशिका

(तत्वार्थ टीका)

दशाध्यायरुप तत्त्वार्थकी आदिविषै आप्तका लक्षणपूर्वक आप्तकू वदना करे है।

(मगलाचरण)

मोक्ष मार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्मभूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये ।।

मोक्षमार्गके प्रवर्तावनवारा अर कर्मरूप पर्वतनिकू भेदन वारा, अर समस्त तत्त्वनिको जाननवारा जो है, ताहि तिसके गुणनिकी प्राप्तिके अर्थि वदना करू हू ।।

इहा तीन विशेषणनि सहित आप्तकी स्तुतिरूप मगलाचरण कीया। तहा मोक्षमार्गका नेतृत्व विशेषणतै तो आप्तका जगतके प्राणीनिप्रति परमहितोपदेशपणा करि अद्वितीय उपकार प्रतिपादनरूप वर्णन किया। अर कर्मभूभृद्भेत्तृत्व विशेषण करि आप्तके सर्वोत्कृष्ट सामर्थ्यपणा वा निर्दोषपणा तथा वीतरागपणा प्रकट किया। जातै इन्द्रादिक समस्त देव जाकू जीतै नही सके। अर जगतके समस्त जीवनिकू जीति, स्वरूपतै भ्रष्ट करि जडरूप करि, नष्ट कीया ऐसा मोहनीय कर्म तथा ज्ञानावरण दर्शनावरण-अतराय इति चार कर्मनिका नाश करि अपना जयनशील जिन नाम प्रगट किया। वहुरि विश्वतत्त्वज्ञातृत्व विशेषण करि समस्त गुणपर्यायसहित पदार्थनिका क्रमरहित युगपत् जाननेतै सर्वज्ञपणा वीतरागपणा प्रगट किया।

ऐसे सर्वज्ञ, वीतराग परमहितोपदेशक तीन विशेषण विशिष्ट ही आप्त होय है। सोही शास्त्रकी उत्पत्ति तथा शास्त्रका यथार्थज्ञान तथा आपसमान भव्य जीवनिको सर्वज्ञ वीतराग वननेका निर्वाध आदर्शरूप निमित्त कारण है। तातै आप्तकू नमस्कार रूप मगल किया है।

अव यहा कुछ अल्प विशेष लिखिये है—

इस श्लोकमे आप्तकू नमस्कार करनेतै तथा मोक्ष अर मोक्षका मार्ग समर्थनतै प्रथम तो नास्तिकवादी वा शून्यवादी निका परिहार है। जातै सर्वज्ञ अर जीवादिक समस्त पदार्थनिका सद्भाव नास्तिकवादी अर शून्यवादी नाही माने है। बहुरि मोक्षतत्त्व कहनेतै जो चार्वाकमतवाले परलोक तथा जीव तथा मोक्षका अभाव माने है तिनिका परिहार भया।

कर्मभूभृता भेत्तार इस विशेषणतै जे सदाशिव मतवाले ईश्वरको सदा मुक्त ही कहे है, ईश्वरको निष्कर्मा मानकर अन्य मुक्तात्माकी तरह कर्मका नाश करि मोक्ष नाही माने है तिनका परिहार भया।

वहुरि मीमासादिक ब्रम्हवादी सर्वथा अद्वैतवादीका एकांतकरि सर्व जगतकू एक ब्रम्हरूप ही मानकर उसका विस्तारा माने है और समस्त जीव अजीवादि पदार्थनिका अभाव ही माने है तिनका कर्मभूभृता भेत्तार विशेषण करि परिहार किया। जातै ज्ञानावरण आदि समस्त कर्म है ते पुद्गल अजीवरूप ही है।

बहुरि विश्वतत्त्व ज्ञातृत्व विशेषण करि सर्वज्ञका अभाव माननेवाले चार्वाक मत तथा मीमासक मत है तिनका परिहार किया। वहुरि तद्गुणलब्धये इस वचनतै नैयायिक-वैशेषिक मतवाले मुक्तजीवतैंहू वा परमात्माकी जाति जुदी माने है जीव के परमात्मपदकी प्राप्ति नाही माने है, तिनका परिहार भया। अथवा मीमासा मतही का भेदरूप भाट्टमतवाले आत्माके मोक्ष होता नाही माने है तिनका परिहार किया।

या प्रकार अन्य मतनितै स्याद्वाद अनेकात भिन्न है. अन्यमतनिमे मान्या हुआ आप्त प्रमाण नाही है, अर स्याद्वाद अनेकातरूप जैनमतमे मान्या हुआ आप्त ही प्रमाण है नमस्कार करने योग्य है ऐसा इन विशेषण करि सिद्ध किया है।

इस शास्त्रविषै मोक्षमार्गका उपदेश है। जो घातिकर्मका नाश करि सर्वज्ञ-वीतराग परमहितोपदेशक होय सोही आप्त है। ताहीका प्रवर्ताया मोक्षमार्ग प्रमाणसिद्ध है। जातै जो सर्वज्ञ न होय तो सूक्ष्म अनरित अर दूरार्थ पदार्थनिको कौन जाने। तहा सूक्ष्मपदार्थ तो परमाणू आदि ज्ञेय है। अर अतरित जे अतीत कालमे हो गये अर अनागत आगामी कालमे होयेगे। अर दूरार्थ-दूरवर्ती जे मेरुगिरी, नरक-स्वर्ग विमान आदि पदार्थ है। इनि पदार्थनिकू सर्वज्ञविना यथार्थ कोनही जाणि न सके. तदि कैसे यथार्थ उपदेश करे। अर वीतराग नाही होय तो [illegible] हुआ यथावन् नही कह सके। अर परम हितोपदेशक नही होय तो [illegible] आत्मकल्याणमे कौन प्रवर्तावै? साक्षात् उपकार तो उपदेशतै ही होय है।

सत्यार्थवादी परमहितोपदेशक आप्त है। जातै सम्यक् आप्त विना छद्मस्थ अन्यवादी एकाती अपनी इच्छातै अनेक प्रकार मिथ्या कल्पना करि वस्तूका अन्यथा स्वरूप कहे है।

कोई जीवको ज्ञानादि गुणतै भिन्न निर्गुण माने है। कोई जीव कू सर्वथा कर्मकी उपाधिरहित नित्यशुद्ध सदामुक्त माने है। इत्यादि एकात अभिप्रायतै वस्तु अनेकातस्वरुप अनतधर्मनी सहित होते हुये भी ताकू एकातस्वरूप जाने है। केई जीवका सर्वथा अभाव माने है। यदि जीवका सर्वथा अभावही होय तो मै सुखी हू, मै दुखी हू, मै ज्ञाता हू, मै या करी, या करुगा ऐसा विकल्प स्वसवेदन अचेतन देहके नाही होय। जे बुद्धिपूर्वक क्रिया देखिए है ते समस्त ज्ञानस्वरूप आत्मा को है। इद्रिय-मन का विषय आत्माविना कौन ग्रहण करे। भिन्न-अभिन्न कोन जाणे। तातै आत्माका सद्भाव प्रगट है। आबाल गोपालादिक समस्तके स्वसवेदनद्वारा अनुभवमे आवे है। कोई जीवका अस्तित्व माने। परतु ज्ञान अर आत्माका अस्तित्व भिन्न माने। सो आत्माविना ज्ञानका अस्तित्व कैसे साधेगा ? ज्ञान विना आत्माका सद्भाव कैसे साधेगा ? तातै जीवके अर ज्ञानके गुण-गुणी भावकरि तो कथचित् भिन्नपणा है। जैसे अग्नि अर उष्णताके। अर वस्तुत्व करि दोनो अभिन्न एक वस्तु है। अभेद है। प्रदेशभेद नाही है। गुण और गुणी प्रदेशनिकरि भी यदि भिन्न होय तो दोऊनिका अभाव हो जाय।

वहुरि कोई जीवकू कर्मउपाधिकरि सर्वथा रहित माने है। परतु प्रत्यक्ष केई दरिद्री देखिये है। केई लक्ष्मीवान्, केई, रोगी, केई निरोगी, केई राजा कई रक, केई दु खी, केई सुखी, केई कुरूप, केई सुरूप, केई पडित, केई मूर्ख, केई नीचकुलीन, केई उच्चकुलीन, ऐसे नाना रचना प्रत्यक्ष देखिये है। ते कैसे वने ? पूर्वोपार्जित कर्म करि ही जीवके जानी जाय है। वहुरि जीवकू सर्वथा शुद्ध ही कहे। तो दीक्षा-शिक्षा-व्रत ध्यानादिक समस्त निष्फल होय जाय। तातै आप्त जो सर्वज्ञ वीतराग कह्या आत्माका स्वरूप ही सत्यार्थ है। वहुरि एकाती मोक्षका स्वरुप भी अन्यथा कल्पे है।

तहा केई तो ज्ञान, सुख, दु.ख का अभावकू मोक्ष कल्पे है। केई प्रदीपनिर्वाणवत् कहे है। जैसे दीपक बुझि जाय, तदि दिशामे नही जाय, विदिशामे नही जाय। अभाव हो जाय। तैसे आत्माका अभावकू मोक्ष माने है। सो आप्तका उपदेश विना यथार्थ नाही जाने है। वहुरि मोक्षके उपाय प्रति भी अन्यथा कल्पना करे है। केई चारित्रविना ज्ञानमात्रही ते मोक्ष माने है। केई ज्ञान-चारित्र निरपेक्ष, श्रद्धानमात्रते मोक्ष माने है। केई दर्शन-ज्ञान-निरपेक्ष चारित्रते ही मोक्ष माने है। केई दर्शन निरपेक्ष ज्ञान चारित्रते, केई ज्ञाननिरपेक्ष दर्शन चारित्रते, केई चारित्र निरपेक्ष दर्शन-ज्ञान ही तै, केई तीनोंका अभावतै मोक्ष माने है। ते एकातवादी वस्तूका यथावत् स्वरूप जाने नाही।

सो अब इनका यथावत् स्वरूप सर्वज्ञद्वारा प्रकाशित आगमतै जानना उचित है ।

सो इस प्रथम श्लोक मे आप्तका लक्षण कह्या । तिसकी निर्बाध सिद्धिके अर्थि श्री विद्यानदि स्वामीने ८००० श्लोकनिमे आप्तमीमासा रची । अर ३००० श्लोकनिमे आप्तपरीक्षा रची । तिनमे आप्तका स्वरुपका निर्णय करी, परीक्षाप्रधानी ज्ञानी-जननिका हृदयमे महान् उद्योत किया ।

अब मिथ्यावादीनिकरि कह्या जो ज्ञानमात्र ही तै मोक्ष होना, तथा क्रियाकाड-मात्रतेही मोक्ष होना इत्यादि एकात पक्षका निराकरणार्थ भगवान् सर्वज्ञ वीतराग अरहत देवनि करि कह्या जो मोक्षका उपाय-मार्ग ताको प्रगट करनेकू सूत्र कहे है ।

अध्याय–9

सूत्र–१

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्ग : ।। १ ।।

अर्थ– सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र इन तीनोकी एकता मोक्षका मार्ग है । मोक्ष की प्राप्तिका उपाय है । इस सूत्रमे ,सम्यक्' शब्द प्रशसावाची है । सो प्रत्येक को लगावना । सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र ये तीनो मिले हुये मोक्षका मार्ग है ऐसा कह्या । सो इहा मार्ग शब्दको एकवचनकहनेते ये तीन भिन्न भिन्न स्वतत्र एक एक मार्ग नही है । तीनोंका मिल्या हूआ मोक्षमार्ग एक ही है ऐसा अर्थ जनावनेकू मार्ग ऐसा एकवचन कह्या है ।

जो पदार्थनिका अध्यात्म स्वरुपका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है । जिस जिस प्रकार करि जीवादि पदार्थ अवस्थित है तिसतिस प्रकार करि नय-प्रमाणपूर्वक अर सशय-विपर्यय-अनध्यवसाय इत्यादि दोषनि करि रहित जाणै सो सम्यग्ज्ञान है । पाच प्रकारका ससारका कारण जे मिथ्यात्व-कषायादिक तिनका अभाव करनेमे उद्यमी ऐसा जो सम्यग्ज्ञानी ताकै कर्मके ग्रहण [illegible] जे बाह्य-अभ्यन्तर क्रियारुप परिणाम तिनका त्याग सो सम्यक्चारित्र है ।

ससारीनिका समस्त आचरण कषाय योगपूर्वकक्रिया कर्मबधक् कारण है। जिस आचरणतै नवीन कर्मका आस्रव रुकि[1] जाय सोही सम्यक्चरित्र है। अज्ञानपूर्वक आचरण के निषेधके अर्थि चारित्रके सम्यक् विशेषण कह्या हैं।

प्रश्न-- कोऊ कहे- ज्ञानका ग्रहण पहले किया चाहिये। सम्यग्दर्शन जो पदार्थनिका श्रद्धान है सो ज्ञानपूर्वक ही होय हैं। वहुरि ज्ञान शब्द दर्शन शब्दसे अल्प अच्वाला (अल्पअक्षरवाला) है। सूत्रमे अल्पअक्षरवालेकू पूर्वे कह्या चाहिये।

उत्तर-- यह कोई दोष नही है। जैसे मेघपटल दूरि होते ही सूर्यका प्रताप अर प्रकाश दोऊ युगपत् प्रकट होय है। तैसे दर्शन मोहका उपशमतै वा क्षयोमशमतै, वा क्षयतै आत्माका सम्यग्दर्शन स्वभाव प्रकट होय है। तिसही कालमे आत्माके कुमति -- कुश्रुत ज्ञानका अभावरूप मतिज्ञान -- श्रुतज्ञान प्रकट होय है। तातै सम्यग्दर्शन -- अर सम्यग्ज्ञानके कालभेद नाही। दोनो युगपत् होय है। (उसी समय सवर-निर्जराका कारण सम्यक् चारित्र भी प्रकट होनेसे तीनो युगपत् होय है)

वहुरि ज्ञानकू अल्प अक्षरकरि प्रधान कह्या तोहू (अल्पाक्षरात् प्रधान वलीय) अल्पाक्षरसे जो प्रधान होता है वह वलवान् होता है इस न्यायने सम्यग्ज्ञानसे सम्यग्दर्शन प्रधान होनेके कारण उसको पूर्वे कह्या है। सम्यग्दर्शन सवमे पूज्य है, जातै सम्यग्दर्शन होते सते ज्ञान और चारित्र आदि सव गुण युगपत् सम्यक् होते है इसलिये सूत्रमें सम्यग्दर्शनको प्रथम कह्या। ज्ञान कू मध्यमे कह्या सो सम्यग्ज्ञानपूर्वक ही सम्यक्चारित्र होय है। अज्ञानीका चारित्र-वन्धका ही कारण है। तातै चारित्र अतमे कह्या।

अव आदिमे कह्या जो सम्यग्दर्शन ताका लक्षणनिर्देशके अर्थि सूत्र कहे है --

तत्त्वार्थ श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥२॥

अर्थ तत्वार्थनिका जो श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है। तत्त्वशब्द यह सामान्यवाची सर्वनाम है इसलिये भाव-सामान्य वाचक है। जो पदार्थ जैसा स्वरूपसे अवस्थित है तैसा तिस स्वरूपताका होना सो तत्त्व है। अर अर्यते इति अर्थ. जाकू निश्चय करिये सो अर्थ हैं। तत्त्वरूपसे जो पदार्थका निश्चय सो तत्त्वार्थ है। भावार्थ -- जो अर्थ जिस स्वभावकरि अवस्थित है ताका

---

१ टीप-- अविरत सम्यग्दृष्टीको ४ थे गुणस्थानसे ४१ प्रकृतियोकी वधव्युच्छित्ति होकर सवर पूर्वक निर्जराका प्रारभ होता है। यहां सवरको ही सम्यक्चारित्र कहा है। इसलिये सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रकी एकतारूप मोक्षमार्गका प्रारभ गुण ४ से ही होता है। विना शुद्धोपयोग के सवर या सम्यक्चारित्र नही होता है। इसलिये गुण ४ से शुद्धोपयोगका प्रारभ मानना नितात आवश्यक है।

तिसस्वभावकरि भूतार्थ नयसे ग्रहण करना, निश्चय करना सो तत्त्वार्थ है । तत्त्वार्थनिका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है । सो दोय प्रकार है ।

१ सराग सम्यग्दर्शन २ वीतराग सम्यग्यदर्शन.

१) तहा प्रशम-सवेग-अनुकपा-आस्तिक्य है लक्षण जाका ऐसा सराग[1] सम्यग्दर्शन है ।

१) तहां रागादिकनिकी उत्कटताका अभाव सो प्रशम है । इहा उत्कटताका अनतानुबंधी-सबधी रागका अभाव अभिप्रेत हैं । २) ससार-देह-भोगनितै भयभीतता सो सवेग हैं । ३) सर्व प्राणिनिविषै मैत्रीभाव सो अनुकपा है । ४) जीवादिक पदार्थ यथायोग्य अपने स्वभावकरि जैसे आगमविषै अस्तिरूप कहे है तैसे अंगीकार करना सो आस्तिक्य है ॥ (विना निश्चय सम्यक्त्वके प्रशमादिक व्यवहारनयसे भी सम्यक्त्व के लक्षण नही है ।)

२) केवल निजआत्मस्वरूप की शुद्धता सो वीतराग सम्यक्त्व है ।

आगे कहे है– जो जीवादि पदार्थनिका सम्यक् श्रद्धानतैं
सम्यग्दर्शन कैसे उपजे है इस हेतु सूचक सूत्र कहे है –

तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥३॥

अर्थ– जो सम्यग्दर्शन स्वभावके लक्ष्यसे उपजे, अन्यके उपदेश की अपेक्षा नही करे सो निसर्गज सम्यग्दर्शन हैं । अर जो परके उपदेशते भया जो अर्थज्ञान तातैं उपजे सो अधिगमज सम्यग्दर्शन हैं ।

प्रश्न– निसर्गज सम्यग्दर्शनविषे पदार्थनिका ज्ञान है किनाही ? यदि ज्ञान है तो वहअधिगमज ही भया । कुछ भेद नही रह्या । अर जो पदार्थनिका ज्ञान नही है तो पदार्थनिकू जाने विना कैसे श्रद्धान होय है ?

उत्तर– सम्यग्दर्शनकी उत्पत्तिविषै अतरग हेतु जो दर्शनमोहका उपशम-क्षय-क्षयोपशम सो तो दोऊ ही सम्यक्त्वमे समान है ।

---

१ टीप– शास्त्रमे प्रयोजनवश सराग सम्यक्त्व को व्यवहार सम्यक्त्व और वीतराग सम्यक्त्व को निश्चय सम्यक्त्व कहा है । परतु (सनि मुखो उपचार प्रवर्तते) इस न्यायसे निश्चय या वीतराग सम्यक्त्व के साथ होनेपर ही व्यवहार या सराग सम्यक्त्वको सम्यक्त्व माना गया है । समयसारमे जिसको अणुमात्र राग है उसको सम्यग्दर्शन नही है ऐसा कहनेपर प्रश्न उठाया गया है कि चतुर्थ-पञ्चम गुणस्थानवर्ती राम-रावणादिक सरागीथे, ता क्या वे सम्यग्दृष्टि नही थे ? इसके उत्तरमे कहा है– वे सरागी होकर भी सम्यग्दृष्टी थे ।

क्योंकि उनको अनतानुबंधी– अप्रत्याख्यानकृत रागका अभाव होनेसे सराग और वीतरागताका मिश्रभाव रहता है । सम्यग्दर्शन तो सबका वीतरागही होता है सराग चरित्र के साथ जो सम्यग्दर्शन वह सराग और वीतराग चरित्र के साथ जो सम्यग्दर्शन वह वीत राग ।

ताकू होतै, जो बाह्य परके उपदेशादिक निमित्त विना होय ताकू निसर्गज कहिये। बहुरि जो परोपरदेश पूर्वक होय सो अधिगमज कहिये है। जैसे पूर्वकृत कर्मके उदयके निमित्ततै सिहमे क्रूरता, शार्दूलमे शूरवीरता, श्यालीमे कायरता, सर्पमे दुष्टता, स्वभावहीतै है। किसीके उपदेशतै नाही। तातै निसर्गज कहिये है तैसे दर्शनमोहका उपशम-क्षय-क्षयोपशमतै स्व-पर तत्त्वका श्रद्धान होय सो निसर्गज सम्यग्दर्शन है।

अथवा देवकुरु-उत्तरकुरु भोगभूमीमे वाहृय पुरुषका उद्यमादि प्रयत्नविना ही सुवर्ण आदि होय है। तैसे बाहृय उपदेशविना ही जीवादिकनिका श्रद्धान होय सो निसर्गज है

अर जैसे सुवर्णपाषाण है सो सुवर्ण निकासनेकी विधि उपायका जाननेवाला पुरुष का प्रयोगत सुवर्ण निकसे है, तैसे अधिगमज है।

इहा सूत्रमे तत् शब्द कह्या है सो पहले सूत्रमे सम्यग्दर्शन कह्या है तिसके ग्रहणके अर्थी है।

अव तत्त्व कौन है इसका सूचक सूत्र कहे है –

जीवाजीवास्रवबंध संवर निर्जरा मोक्षास्तत्त्वम् ॥४॥

अर्थ– १ जीव २ अजीव ३ आस्रव ४ बध ५ सवर ६ निर्जरा ७ मोक्ष ये सात तत्त्व है। यहा कोऊ अद्वैतवादी कहे है–

प्रश्न– तत्त्व एकही कहना युक्त है। एकही के अनेक भेद है। तातै सात कहना युक्त नाही।

उत्तर– यद्यपि तत्त्व सामान्य अनतपर्यायरूप एकही है। तथा जीव – अजीव ऐसे दोय है। इनतै बाह्य कोऊ नही तातै दोय हा है। शब्द-अर्थ-ज्ञान इनतै वाह्य कोऊ नाही तात तीन ही है। ऐसे सख्यात-असख्यात-अनत है। परतु शिष्यके अभिप्रायके वशतै तत्त्व की निरुपणा हो है। तातै अति सक्षेप ही कहे तो बडे बुद्धिवान् ही के समझमे आवे। अर अति विस्ताररुप कहे तो बहुत कालमे भी ग्रहण नही होय। तातै मध्यम क्रमकरि सात ही कहे।

जातै इस मोक्षशास्त्रविषै मोक्षका प्रकरण है, तातै मोक्ष तो अवश्य कह्या चाहिये। अर मोक्ष कौनके होय ? जीवक होई। तातै जीव ग्रहण कीया। अर जीवके मोक्ष होय, सो पूर्वे जो जीव कहू बधतै बध को प्राप्त भया होय ताहीके छूटना मुक्त होना सभवै। सो जीव अजीव दोऊनिके परस्पर मिलनेतै है। तातै अजीवका ग्रहण कीया। ससारका प्रधान कारण आस्रव बध है। तातै उनका ग्रहण किया। अर मोक्षका प्रधान कारण सवर निजरा है। तातै सवर-निर्जराकू ग्रहण किया। ऐसे सामान्यमे गर्भित थे तोऊ प्रधान जाणि सप्र तत्त्व कहे। तहा चेतना लक्षण जीव है। अर चेतना गुण जिनमे नाही ऐसे पुग्दल-धर्म-अधर्म-आकाश-काल ये पाच अजीव तत्त्व है। शुभ-अशुभ कर्मका आगमनका द्वाररूप आस्रव है। आत्मा और कर्म इन दोऊनिके प्रदेशनिका परस्पर प्रवेश होना सो वध है। आस्रव द्वारनिका रुकना निरोध

होना सो सवर है। एकदेश कर्मका क्षय होना सो निर्जरा हैं। समस्त कर्मनिका वियोग होना सो मोक्ष है। इनका विशेष वर्णन आगे करसी।

अब ये कहे जे सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवाजीवादिक तिनका सव्यवहार विशेष में जो व्यभिचार आवे तिसके दूरि करनेके अर्थि सूत्र कहे हैं।

नामस्थापना द्रव्य भावतस्तन्न्यासः ॥५॥

अथ– जीवादिक पदार्थनिका तथा सम्यग्दर्शनादिक का नाम-स्थापना-द्रव्य-भाव इन चार प्रकार करि न्यास कहिये निक्षेप है। आगममे जीवादिक पदार्थका सव्यवहार– कथन प्रयोग चार प्रकारके निक्षेपद्वारा होता है। नाम शब्दकी निरूक्ति दोय प्रकार करिय है–

(नीयते अर्थ अनेन इति नाम) नीयते कहिये सन्मुख करिये है अर्थ जाकरि अथवा सो नाम है। अर्थकू प्राप्त होइए जा करि सो नाम हैं। अथवा नमति कहिये अर्थकू सन्मुख करे सो नाम हैं। जिसको सुणतै ही उसका अर्थ सन्मुख हो जाय सो नाम हैं। गुण-जाति-द्रव्य-क्रिया इनकी अपेक्षा रहित-वस्तुविषै अपना पुरुषार्थ करि अपनी इच्छानुसार सज्ञा करना, नाम रखना सो नामनिक्षेप है। कोऊ कारणी अपेक्षातैं होई सो नामनिक्षेप नही कहावे है। नाम-रूप-गुण-जाति-द्रव्य-क्रिया इन की अपेक्षा न रखते हुये लोकमे प्रवृत्तिके अर्थि अपनी इच्छातैं सज्ञा करना सो नामनिक्षप है। जैसे किसी पुरुष का नाम इंद्रराज रखना। तहा इद्रका गुण-जाति-द्रव्य-क्रिया एकहू नही पावे, अपने मातापिता इद्रराज नाम धरि दीया, तहा नामनिक्षेप कहिये अथवा किसीकु चतुर्भुज-वा धनपाल-देवदत्त-इद्रदत्त-जिनादत्ता-हरीसिह- इत्यादिक नाम गुण-जाति-द्रव्य-क्रिया विना हि लोक कहै। सो नामनिक्षेप है। अर धवल गुणके धारककू धवल कहियें शुभ कह तहा गुणद्वारे नाम है। मनुष्य-देव-गौ-अश्व-हस्ती इत्यादिक जातीद्वारे नाम है। पूजन करते कु पूजक, नृत्य करते कु नतक कहिये। ऐसे क्रियाद्वारे नाम है। इनकु नामनिक्षेप नाहि कहिये।

वहुरि काष्ठ-पाषाण-माटी-चित्रकर्म आदिविषै तथा सतरंजके रोणानिविषै हस्ती-घोटक (घोडा) आदि तदाकार वा अतदाकरि विषै सो यह है ऐसी स्थापना करना सो स्थापना निक्षेप है। जैसे पाषाणदिकनिका तदाकार विवविषै वा अतदाकार अक्षत-पुष्पादिक विषै यह जिनेद्र है, चद्रप्रभ देव है, यह इद्र है ऐसी स्थापना करना तथा यह जीव है वा सम्यग्दर्शन है, यह ज्ञान है ऐसे स्थापन करना सो स्थापना निक्षेप है।

प्रश्न– नाम और स्थापना तो एक ही भया। जैसे नामके अनुकूल गुण रहितका नाम सो नामनिक्षप है। तैसेही काष्ठ-पाषाणादिकनि विषै तदाकार-अतदाकारमे यह इद्र है ऐसा नाम करना सोही स्थापना है। जिसविषै नाम नही किया तिस विषै स्थापना भी नही होय हैं। न तैं नाम अर स्थापना एक ही है। भिन्न नाही।

उत्तर– उक्त प्रश्न ठीक नही है। नाम और स्थापनामे अत्यत भेद है।

किसीका नाम इंद्रक ह्या वा जिन कह्या तिसमे इंद्रपणाका जिन पणाका आदर नही है। अनुग्रह की वाछा नही परतु धातुपाषाण दिकमे स्थापना किया तिसकू इंद्र या जिन माने हैं। जिनेद्रकी प्रतिविवकी स्थापनातै आपका उपकार होना वाछे है। स्थापना निक्षेप विषै तो साक्षात् वे ही है ऐसामाने है। कुछ भेद नही माने है। स्तवन करे, पूज करे, ध्यान करे। अर नामनिक्षेपविषै अन्य प्रयोजन नाही। केवल व्यवहारके अर्थि नाम धऱ्या है। ऋषभ ऐसा नाम किसीका होई। तहां कुछ पूजादिक प्रयोजन नाही। अर स्थापनाविषै ताकू साक्षात् पापका क्षय करनेवाला ऋषभ जिनेद्र मानि पूजा-स्तवन-ध्यान करें। ऐसा भेद है।

वहुरि जिसकी स्थापना करनी होई तिसका आकारादि रूप स्थापना सो तदाकार स्थापना है। याकू सभ्दाव स्थापना कहिये है। और आकारादि रहित स्थापना अतदाकार स्थापना है।

प्रश्न— इस पचमकालमें अरहत परमेष्ठीका अतदाकार स्थापना करना कि नाही करना ?

उत्तर— इस पचकालमे अन्यमतका देवनिकी अनेक प्रकार अनेक विपरीतरूप स्थापना होगई। जिनके शस्त्रादिकका ग्रहण, उग्ररूप-वक्रता-तीव्रराग तै लिया ऐसी परिणामनिकू विकार करनेवाली विपरीत स्थापना दीखे है।

अव कोई अतदाकार स्थापना कू आगममे कही जाणि फत्तर-माटी इत्यादिकमे कल्पना करि कहे है कि हमारे ये ही अरहत है। ऐसे जाणि अरहत मानि पूजन-ध्यान-करने लग जाय तो धर्म व्यभिचार हो जाय। तातै ज्ञानी जन इस कालमे तदाकार स्थापना हीका अधिकार किया है।

प्रश्न— अरहत प्रतिमा किस अर्थ पूजिये है ? अरहंत भगवान तो मोक्ष गये, सिद्धस्थानमें हैं। धातुपाषाणका विवविषै तो वे आवे नाही। वा पूजा चाहैं नाही। वा किसीका उपकार-अपकार करे नाही। जे पूजन-स्तवन अभिषेक करे तामे राग करे नाही। फिर किस वास्तै पूजिये हैं।

उत्तर— गृहस्थ आरभ-परिग्रह धारा है। ताका मन शुद्धात्मस्वरूपका अवलबन विषै तो प्रवर्तै नाही। अर निरालवन चित्त ठहरै नाही। तव आपकै परमात्मभावका अवलवनके अर्थि वीतरागता सू परिणाम जोडनेके अर्थि प्रतिमाकू साक्षात् अरहत स्वरूप सकल्प करि ध्यान-स्तवन-पूजन करे है। तिस अरहत स्वरूपमे आपका परिणाम जोडनेतै उस अवसरमे सासारिक समस्त सकल्प रूकि, अपने परमात्माका अनुभव न होय तवतक तिस परमात्मस्वरूपमे एकाग्रता होनेकरि सुख ज्ञानरूप सपदामे विघ्न करनेवाला अतरायकर्मका अनुभाग-रस सूकि जाय है वा वीतराग भावके प्रसादतै असातावेदनीयक् आदि लेय समस्त अशुभ प्रकृति जे पूर्वे वधी हुई सत्तामे निष्ठै थी तिनका अनुभाग रस नष्ट होजाय हे। अर जे पूर्वे वाधी पुण्यप्रकृति तिनमे अनुभार रस वधि जाय है। अर मदकषायके प्रभावतै शुभ आयु कर्म विना समस्त

कर्मप्रकृतिनीकी स्थिति घटि जाय है। सो सिद्धांतमे भगवानका हुकम (आज्ञा-उपदेश) प्रसिद्ध है।

मदकषायके प्रभावतैं पूर्वे बाधे हुये शुभकर्मनिमें रस वधि जाय हैं। अर अशुभकर्मात्रिमे रस सुकी जाय है। घटिजाय हैं। अर स्थिति भिन्न आयुविना समस्त कर्म प्रकृतिनिका घटि जाय है। अर तीव्र कषाय के प्रभावतैं कर्मकी समस्त पाप प्रकृतिनिमे अनुभाग रस वदि जाय अर पुण्य प्रकृतिनिमे रस घटि जाय है। अर स्थिति तीन आयुविना समस्त कर्मनिकी स्थिति वधि जाय है।

तातैं अरहत भगवानका गुणमे लीनता सो ही अरहत भक्ति तिसके प्रभावतैं सुखकी कारण पुण्य प्रकृतिनिमे रस बढि जाय तब स्वर्गादिकनिका सुख, तथा राजसपदा भोगादिक आपहीतैं प्रगट होय हैं। यद्यापि भगवान अरहत धातुपाषाणके विपमे आवे नाही. अव किसीका उपकार-अपकार भी वीतरागी भगवान करे नाही। तथापि उनका नाम स्मरण तथा प्रतिविंवका दर्शन अपने शुकपरिणाम-वीतरागरूप ध्यान होनेकू बाह्य निमित्त है। जातैं रागरूप स्त्रीपुरुषनिकैं अचेतन चित्र देखनेतैं जैसे राग प्रकट होय है, तैंसे वीतराग प्रतिविंव देखनेतैं वीतरागता प्रकट होय है। तथा इस ससारमें रागद्वेष जीवनिके होय है। सो समस्त केवल अचेतन सुवर्ण-रूपा-मणि-माणिक्य महल - वन, बाग, नगर-ग्राम, पाषाण, कदर्म-स्मशान-वा मनुष्य-तिर्यचनिके देह-वचन-राग सदन-दुर्गंध-सुगध, रस, विरस इत्यादिक समस्त अचेतन पुग्दल द्रव्यनिके चितवन, श्रवण-अवलोकन अनुभवनतैं होय है।

समस्त अचेतन आत्माके रागद्वेष उपनावनेकू सहकारी कारण है। तैंसे जिनेंद्रकी परमशात मुद्रा ज्ञानीनिके वीतरागता होनेकू सहकारी कारण है। प्रेरक नही। अर वीतरागतातैं अन्य चाहना भव्यनिकैं है नाही। वहुरि जो जिनेंद्रके अग्रस्थान विषैं जल चदनादिक अष्ट द्रव्य उतारण करि चढाड है सो कुछ भगवान भक्षण करे वा वासना लेवे ऐसा अभिप्राय नाही है। याका ऐसा भाव है जैसे वडे मडलेश्वर राजाका समागम होय तदि उनके उपरि सुवर्णरत्न-मोती वा रफेर करी क्षेप दिजिये वा आरति उताहिये हैं। पुष्प-अक्षतादिक उतारण करि क्षेपिये सो समस्त अपनी भक्ति हैं। राजाके कुदा सेनेका प्रयोजन नाही है। तैंसे भव्यजीव भक्ति करि त्रैलोक्यनाथ परम मगळरूप परमेश्वर परमात्मस्वरूप भगवान अरहतके प्रतिविंवको देखते हुये उत्पन्न भया है आनद जाकैं ऐसा निकट भव्य जीव भक्तितैं अर्घ्य[1] उतारण करि अग्रभूमीमे क्षेपै है। और कुछ वाछा नाही है। सो भक्तिका मार्ग-अनादिकालतैं चला आवे है। नवीन नाही भया है। अर जे समस्त आरभ परिग्रहादिकनिके त्यागी होय निज आत्मिक परमात्मरसमें लीन है तिनके दर्शन-पूजनादिकमे प्रधानता नही है। ते परमात्मरूपतैं आराध्य आराधक रूप

१ टीप— जिन प्रतिमाग्रे अर्घ्यं निर्वपामि स्वाहा।

भेद बुद्धि छाडि परमात्मस्वरूप आत्मानुभवमे लीन भये तिष्ठे हैं। ऐसे स्थापना' निक्षेपमें प्रकरण पाय कथन किया।

अव द्रव्य निक्षेपका स्वरूप कहिये है–

जो अन्यगत परिणाम प्रति सन्मुखपणा सो द्रव्यनिक्षेप हैं। जैसे इद्र की मूर्ति बनावनेके अर्थि लाया जो पाषाणताके इद्रकी प्रतिमाकी पर्यायप्रति सन्मुखपणा हैं। तातैं तिस पाषाणकू द्रव्य इद्र कहिये है। तथा देव पर्यायके सन्मुख जीवकू द्रव्यदेव कहिये है। तथा सम्यग्दर्शनादि परिणति प्रति सन्मुख भया जीवकू द्रव्य सम्यग्दर्शन कहिये। सो द्रव्यनिक्षेप। दोय प्रकार है। १ आगम द्रव्य निक्षेप २ नो आगम द्रव्यनिक्षेप। तहा कोऊ पुरुष जिसका निक्षेप करना होइ तिस वस्तूके कथनका आगम जो शास्त्र ताका जाननेवाला होय। परतु तिस अवसर विषै उस शास्त्रका चितन-पठनादिकमे अनुपयुक्त (उपयोगरहित) हो तिसकू आगम द्रव्य निक्षेप कहिये।

जैसे कोऊ पुरुष सम्यग्दर्शनके कथन का, तथा सामायिक के कथनका वा जीवद्रव्यके कथनका शास्त्रकू। जाननेवाला हो, परतु उस समय शास्त्रके कथनका पठन-चितन आदि व्यापार रहित-(अनुपयुक्त) हो अन्यव्यवहारमे उपयुक्त हो तिस कालमे उस पुरुषकू आगम द्रव्य सम्यग्दर्शन कहिये। वा आगम द्रव्य मामायिक वा आगम द्रव्यजीव कहिये। ऐसे आगम-द्रव्य निक्षेप कह्या। अव तो आगमद्रय निक्षेप तीन प्रकार है।

१ ज्ञायक शरीर २ भावि ३ तद्व्यतिरिक्त। तिनमे ज्ञायक शरीर हू तीन भेद रूप है। १ भूत २ भावी ३ वर्तमान। तहा तिस आगमशास्त्र का ज्ञाताके शरीर पूर्वपर्यायमे था तिसकू छाडि आय सो भूत ज्ञायक शरीर है। अर जिस शरीरते सम्यग्दर्शनादिक आगम शास्त्रकू जाते है सो वर्तमान ज्ञायक शरीर है। वहुरि जिस आगम शास्त्रकू जानानेवाला शरीर धारणा करेगा सो भावी ज्ञायक शरीर है। तहा भूत ज्ञायक शरीर का भी तीन भेद है। – १ च्युत २ च्यावित ३ त्यक्त। जो शरीर अपनी आयुक्त अत होतै परिपाकतै स्वय छूटे सो च्युत है। अर जो कदलीघात समान विषभक्षण-करि, वा मारण-ताडन-त्रासनादिक वेदनाकरि तथा रूधिरका शरीरतै निकसने रूप रक्तस्रावकरि, तथा भयकरि तथा शस्त्रदिकनिका घात करि, तथा सक्लेश होने करि, उच्छ्वासके रुकने करि, आहारका, निरोध करि, ताका आयुकर्मके निषेक एकठे छूटनेकरि उदीरणा होकरि मरण भया सो च्यावित मरण हे। अर जो सन्यास धारण करि सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र तप आराधना कू आराधी त्याग व्रत-सयम सहित शरीर कू त्यागा सो व्यक्त है। ऐसे ज्ञायक शरीरका स्वरूप कह्या।

अव आगमद्रव्यका पूजा मेंद जो भावि सो कहिये है। जो सम्यग्दर्शनादिकका आगम शास्त्रका जाननेवाला शरीर आगे होयगा सो भावि नो आगम द्रव्य निक्षेप है। अव तद्व्यति–

रिक्त तो आगम द्रव्यनिक्षेपके २ भेद है। १ कर्म २ नोकर्म : तिनमें दर्शनमोहरुप कर्म प्रकृतिका उपशम-क्षय-क्षयोपशम होने योग्य रुप जो द्रव्यरुप कर्मवर्गणक सो नो आगम द्रव्य सम्यग्दर्शन का कर्म तद्व्यतिरिक्त है।

तथा सामायिक विषै लगावे तो चारित्रमोहका मद उदय-अनुभागरुप द्रव्यकर्म सो सामायिक कर्म तद्व्यतिरिक्त हैं। तथा जीव विषै लगावे-तो ज्ञानावरणके क्षयोपशमरुप कर्म-परमाणू तिनकू जीव कर्म तद्व्यतिरिक्त कहिये। बहुरि तो सम्यग्दर्शनादि होनेके वाह्य उपदेशादिक तथा समताभाव होनेके कारण जे वाह्यद्रव्य-एकात स्थान-जिनमदिर आदि, ते तद्व्यतिरिक्त नोकर्म हैं। ऐसे द्रव्यनिक्षेप कह्या।

बहुरि भावनिक्षेपके २ भेद है। १ आगमभाव निक्षेप २ नो आगम भाव निक्षेप। तहा जिस वस्तुका निक्षेप करिये तिसके कथनका आगमशास्त्रको जाननेवाला पुरुप जिस कालमे उस शास्त्रमे उपयुक्त हो, उपयोग लगी रह्या होय तिस पुरुपको आगम भावनिक्षेप कहिये। बहुरि जिस वस्तुका निक्षेप करिये तिस पर्यायरुप तिस कालमे वर्तमान परिणत होय सो नो आगम भावनिक्षेप है। (वर्तमान तत्पर्यायोपलक्षित द्रव्य भाव) ऐसे चार निक्षेप कहे। इहा प्रयोजन ऐसा — जो लोकव्यवहारमे नामनिक्षेप-को ही भावनिक्षेप समझी जाय, नाम-स्थापना कू भावनिक्षेप जाने ताके व्यभिचार दोष आवे है। ताको दूरिकरि यथार्थ समझानेके अर्थि यह निक्षेप विधि है।

तहा द्रव्यार्थिकनयतै प्रधानकरि नाम-स्थापना-द्रव्य ये तीन निक्षेप है। अर पर्यायार्थिक नयकरि भावनिक्षेप हैं।

अब नामादिक निक्षेप करि नानाभेद रुप विस्तारे जीवादिक तिनका स्वरुपज्ञान काहेतै होई यातै सूत्र कहे है। -

प्रमाणनयैरधिगमः ॥६॥

अर्थ— प्रमाणकरि अर नयकरि जीवादिक पदार्थनिका ज्ञान होय है। जीवादिक के यथार्थ स्वरुपका ज्ञान प्रत्यक्ष-परोक्ष प्रमाणकरि तथा द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नय करि होय है। तहा प्रमाणके २ भेद है — १ स्वार्थप्रमाण २ परार्थप्रमाण १ स्वार्थ प्रमाण तो ज्ञानस्वरुप है। २ परार्थप्रमाण है वचन स्वरुप है। तिनमें चार ज्ञान तो स्वार्थप्रमाण है। अर श्रुतज्ञान ज्ञानरुप स्वार्थ और वचन रुप परार्थ की है। बहुरि श्रुतप्रमाणके विकल्प-भेद-है ते नय है। जे नय है ते प्रमाणकी सापेक्षारुप है। सापेक्ष नय सम्यक्नय है। निरपेक्ष नय मिथ्यानय है।

इहा प्रत्येक वस्तु अनेकान्तात्मक-परस्पर विरोधी उभयधर्मात्मक-सामान्य विशेष धर्मात्मक है।

वस्तूका सामान्य धर्म नित्य-एक-सत्‌रुप-अभेद-तन्‌रुप शुद्धरुप, होता हे। वस्तूके विशेष धर्म (पर्यायधर्म)-असत्‌रुप होते है।

इहा नित्य-अनित्य आदि अनेक धर्मसहित वस्तु प्रमाणका विषयभावकू प्राप्त होय है। वहुरि काहू एक एक धर्मकी मुख्य विवक्षा लेय अविरोधरुप जाकरि साध्य पदार्थकू जानिये सो नय है। सकलादेश प्रमाणाधीन। विकलादेश नयाधीन। वस्तूके सकलधर्मको युगपत् ग्रहण करना प्रमाणका विषय है। वस्तूके विवक्षित एक एक धर्म को ग्रहण करना यह नयका विषय है।

नय है सो श्रुत प्रमाणके विकल्प है। अश है। मतिज्ञान-अवधिज्ञान-मन पर्ययज्ञान प्रमाणात्मक ही है। नयात्मक नही है। जातै वचनके निमित्ततै उपजा श्रुतज्ञान ताके ही नय विकल्प विशेष समवे है।

वहुरि जो अधिगम है सो ज्ञानात्मक और वचनात्मक भेद करि दोय प्रकार है। प्रत्येक के प्रमाणात्मक-और नयात्मक भेद करि दोय प्रकार है।

तहा एक वक्तविषै अविरोधकरि एक धर्म के विधि निषेधतै सप्तभग होय है। १ स्यात् अस्ति २ स्यात् नास्ति ३ स्यात् अस्ति-नास्ति ४ स्यात् अवक्तव्य ५ स्यात् अस्ति-अवक्यव्य ६ स्यात् नास्ति अवक्तव्य ७ स्यात् अस्ति-नास्ति-अवक्तव्य।

१ तहा वस्तु है सो स्वरुपचतुष्टयकरि अस्ति स्वरुप ही है। जैसे-घट है, सो अपने अपने द्रव्य-क्षेत्र-काल भाव करि अस्तिस्वरुप ही है। तहा गुण-पर्यायनिके समुदायरुप सो तो स्वद्रव्य है। वहुरि द्रव्यकी सकोचविस्तार रुप अवगाहना-द्रव्यका रहनेका स्वप्रदेशरुप स्थान वह स्वक्षेत्र हैं। द्रव्यका परिणमत्रका जो नियतक्रमवद्ध काल सो स्वकाल है। द्रव्य का नियत परिणमनरुप जो योग्यता रुप शक्ति सो स्वभाव है। ऐसे वस्तु अपने स्वतुष्टय करि सदा अस्तिस्वरुप ही है। यह प्रथम भग है।

बहुरि जो वस्तु है सो परद्रव्य-परक्षेत्र-परकाल परभाव करि नास्ति स्वरुपही है। जैसे घट है सो पटादि परद्रव्यनिका चतुष्य करि नास्तिरुप ही है। जातै अपने स्वरुपका ग्रहण-एकत्व-अभिन्न-तादात्म्य और परस्वरुपका त्याग-विभक्त-पृथक्त्व सो ही वस्तूका वस्तूपणा है। जो आपविषै परका नास्तिपणा नाही होय तो घट-पटादिक सारा एकरुप सकट होय जाय। तातै परका नास्तिपणा सोही अपना अस्तित्व साधे है। ऐसा दूजाभग है।

वहुरि वस्तुविषै स्वचतुष्यकरि अस्तिपणा और परचतुष्टयकरि नास्तिपणा ऐसे दोऊ धर्म परस्परविरोधी धर्म भिन्नभिन्न विवक्षासे युगपत् एककाल अविरोध रुपसे अविन्नभाव रुपसे सिद्ध होते है। वस्तुमे भिन्न कालमे क्रमसे रहते है ऐसा नही हैं। परतु दोऊ धर्म एक कालमे

वचन करि कह्या जाय नाही । तातै क्रमकरि अस्ति-नास्ति ऐसा यह तीजा द्विसयोगी भग है ।।

अर वस्तुमे अस्ति-नास्ति दोऊ धर्म युगपत् है । परतु वचनमे युगपत् कहनेका सामर्थ्य नही है सो वस्तु कथचित् अवक्तव्य है । ऐसा यह चौथा भग है ।

वहुरि वस्तु स्वचतुष्ट्य की अपेक्षा अस्तिरुप है, अर युगपत् स्वचतुष्टय-परचतुष्टय की अपेक्षा अस्ति-नास्ति दोऊ धर्म युगपत् एककाल कह्या जाय नही, यातै वस्तु कथचित् अवक्तव्य है । स्वचतुष्टच की अपेक्षा अस्ति और युगपत् स्व-पर चतुष्टच की अपेक्षा स्यात् अस्ति-अवक्तव्य मिलाकर द्विसयोगी पाचमा भग है ।

वहुरि वस्तु क्रमकरि स्व-पर-चतुष्टच की अपेक्षा अस्ति-नास्तिरुप वक्तव्य है अर युगपत् स्व-पर-चतुष्टच की अपेक्षा अवक्तव्य है नातै क्रमकरि वक्तव्य अर युगपत् स्व-पर चतुष्टच की अपेक्षा अवक्तव्य ऐसा मिलकर स्थात् अस्ति-नास्ति-अवक्तव्य यह त्रिसयोगी सातमा भग है । ऐसे विधि-निषेधकी अपेक्षासे सप्त भग है ।

इनमे अस्ति, नास्ति और अवक्तव्य ये तीन भग तो असयोगी भग हैं । अस्ति-नास्ति अस्ति-अवक्तव्य और नास्ति अवक्तव्य ये तीन भग द्विसयोगी है । और अतिम भग अस्ति-नास्ति-अवक्तव्य यह त्रिसयोगी भग है ।

वहा पहले तीन भग तो वक्तव्य के भेद है । चौथा अवक्तव्य भग है । अतके तीन भग अवक्तव्य के साथ सयोगरुप वक्तव्यके तीन भग हैं । ऐसे ये सात प्रकार वस्तुके धर्म है ।

वस्तुके अस्ति-नास्ति रुप वक्तव्य धर्म और अवक्तव्य रुप धर्म इन तीनके अपुनरुक्त भग सातही होते है । कम अथवा जादा नाही सभवे है ।

१, २, ३, (असयोगी तीन)
(१+२), (१+३) (२+३) (द्विसयोगी तीन)
(१+२+३) (त्रिसयोगी एक)

ऐसे तीन [illegible]के अपुनरुक्त सात ही भग होते है । इसी को सप्तभगी कहते है । इस [illegible] प्रयोजन - वस्तुका यथार्थज्ञान अर वस्तु की अर्थक्रियारुप प्रवृत्ति का निश्चय [illegible] सप्तभगी कथन का प्रयोजन है ।

अन्य विवक्षासे वस्तुमे विरोधी दूसरा धर्म भी है इसका सूचक है। तातै अनेकातके प्रकाशनेको स्यात् शब्दका प्रयोग नितान आवश्यक है। स्यात् पदतै सर्वथा एकात पक्षका निराकरण हो है।

वस्तुस्वरुपके वाचक – वाक्य दो प्रकारके है। १ प्रमाणात्मक २ नयात्मक प्रमाणात्मक वाक्यमे उभय धर्मोका कथन मुख्य विवक्षित होता है। नयात्मक वाक्यमे एक धर्मका कथन विवक्षित मुख्य और अन्यधर्मका कथन गौण अविवक्षित होता है। प्रमाणवाक्यमे दोनो धर्मोको कथन क्रमसे करते समय 'च' शब्द का प्रयोग किया जाता है। जैसे– स्यात् अस्ति च स्यात् नास्तिच। नयवाक्यमे विवक्षित धर्मकी मुख्यता सूचक 'एव' शब्दका अवधारणात्मक प्रयोग सूचित किया जाता है।

जैसे वस्तु स्वचतुष्टच की अपेक्षासे स्यात् अस्ति एव परचतुष्टचकी अपेक्षासे स्यात् नास्ति एव।

इहा भाव ऐसा-जो वस्तुका स्वरुप अनेकातात्मक है। तातै वस्तुके जनाने वाले निको स्यात् शब्द जानवे योग्य है।

प्रश्न– वस्तु सर्वथा अनेकातात्मक ही हे ऐसा कहनेमे भी सर्वथा एकात आवे है। तव अनेकात कैसे रह्या ?

उत्तर– हमारा अनेकान्त भी अनेकान्तात्मक है। कथचिन् एकात कथचित् अनेकात स्वरुप है। प्रमाण वचन करि वस्तु अनेकात स्वरुप है। नयवचनकरि वस्तु एकात स्वरुप है। जातै एकात और अनेकात भी दोय प्रकार है। १ सम्यक् एकात २ मिथ्या एकात तथा १ सम्यक् अनेकांत २ मिथ्या अनेकात। हेतु विशेपका सामर्थ्यकी अपेक्षातै प्रमाणकरि प्ररुपण किया पदार्थके एकदेश धर्मकू कहना सो सम्यक् एकात हे। एक धर्मका ही निश्चय कर अन्य धर्मका निराकरण रुप वचन सो मिथ्या एकात है।

जातै नयकी अपेक्षातै वस्तूके विवक्षित धर्मका नियम करना, कथन करना सो सम्यक् एकात है। वस्तुमे नित्य-अनित्य आदि अनेक परस्पर विरोधी धर्म है। तथापि द्रव्यार्थिकनय प्रधान करि वस्तु नित्य ही हैं, अनित्य नाही। पर्यायार्थिक नय प्रधान करि वस्तु अनित्य ही है, नित्य नाही। ऐसी नय विवक्षाकरि एक एक धर्मकी मुख्यता करि कथन करना सो सम्यक् एकात है। अर नयकी विवक्षा रहित वस्तुमे सर्वथा एकही धर्मका सम्द्राव मानना मिथ्या एकात है।

वहुरि अनेकात भी दोय प्रकार है। १ सम्यक् अनेकात २ मिथ्या अनेकात एकही वस्तुमे अपना अपना प्रतिपक्षसहित अनेक धर्मका भिन्न भिन्न नय विवक्षामे युक्तिपूर्वक आगमतै अविरोधरुप निरुपण करना सो सम्यक् अनेकात है।

तत् अतत् स्वभावकरि शून्य कल्पना करना सो मिथ्या अनेकांत है।

प्रश्न– अनेकांत परस्पर विरोधी नित्य-अनित्य आदि दोऊ पथकू कहे है तातै सशयका कारण है। विरोध आदि दोष आवे है। तातै प्रमाण नाही।

उत्तर– सशय तो जहां दोऊ कोटिका निर्णय नही होय तहां होय है। जैसे-कोऊ अधकारका अवसर विषै दूरतै देखियो स्थाणु है कि पुरुष है। ऐसे दोऊ कोटिनिकू स्पर्श करनेवाला ज्ञान, दोऊनिकू नाही छाडै सो सशय ज्ञान है। जहा दोऊ पक्षका निश्चय नाही होय तहा सशय होय है। अनेकात विषै दोऊ पक्षके विषय सुनिश्चित है तातै सशयका कारण नाही।

वहुरि जो दोऊ धर्मनिके विरोध होई तहा सशय होय है। जहा नयकी विवक्षातै दोऊ विरोधी धर्म अविरोध एकही वस्तुमे पाये जाते है तहा सशय कैसे ?

जैसे एक पुरुष विषै पिता-पुत्र-भ्राता-भगिनेय मातुल-स्वामी-सेवक आदि अनेक धर्म पुत्र-पितादिक की अपेक्षातै विरोधकू नही प्राप्त होय है। पुत्रकी अपेक्षा पिता ही है। पिताकी अपेक्षा वही पुत्र ही है। भाई की अपेक्षा भाई। वहणजा (भाजा) की अपेक्षा मामा, मामा की अपेक्षा भाजा, इत्यादिक अनेक धर्म एकही पुरुषविषै विरोधकू प्राप्त नही होय है। तातै सशय कैसे होय ? ऐसे अनेकात स्वरुप जो जीवादिक तत्त्वार्थ तिनका ज्ञान प्रमाण-नय तैंही होय है।

तातै प्रमाण-नयका अभ्यास करना। जातै इस कालमे भी परीक्षा मुख, प्रमेय कमल मार्तंड-प्रमेयचद्रिका, प्रमाण-परीक्षा, प्रमाणनिर्णय, प्रमाण मीमासा, न्याय कुमुद चंद्रोदय, अप्टसहस्त्री, अप्तपरीक्षा, श्लोकवार्तिका राजवार्तिक, आदि अनत ग्रथ प्रमाणनय समझनेकू ही है।

ऐसे प्रमाण-नय-करि जाणे जे जीवादिक तिनका जाननेका अन्य उपाय दिखावने कू सूत्र कहे है–

निर्देश स्वामित्व साधनाधिकरणस्थिति विधानत : ॥७॥

अधिकरण-क्षेत्र त्रसनाडी है। ५ सम्यग्दर्शनकी स्थिति-उपशम सम्यक्त्व की वा जघन्य स्थिति अतर्मुहूर्त है। क्षायिक सम्यक्त्व की उत्कृष्टस्थिति ससारविषै तेतीस सागर अतर्मुहूर्त सहित आठ वर्ष घाटि दोय कोटिपूर्व अधिक हैं। जघन्य स्थिति-अतर्मुहूर्तमे मुक्त होय है। मुक्त जीवके सम्यग्दर्शनकी स्थिति सादि अनत काल है। क्षायोपशमिक सम्यक्त्व की उत्कृष्ट स्थिति छासठि सागर प्रमाण है। जघन्यस्थिति अंतर्मुहुर्त है। ६ सम्यग्दर्शन सामान्य ते एक प्रकार है। निसर्गज-अधिगमज भेदते दोय प्रकार है। उपशम-क्षय-क्षयोपशम भेदते तीन प्रकार हैं। ऐसे यहां सक्षेपते कह्या। सो यह कथन १४ गुणस्थान, १४ मार्गणास्थान विषै सविस्तर सर्वार्थसिद्धि आदि शास्त्रनिमे कह्या तहांते जानना। तथा ऐसेही ज्ञान-चारित्र विषै तथा जीवादिक पदार्थनिविषै निर्देशादिक आगमके अनुसार जानना। ये निर्देशादिक कहे ते श्रुतप्रमाणके विशेष है। सो शब्दात्मक तथा ज्ञानात्मक दोऊ प्रकार जानना।

प्रश्न– वस्तूका स्वरुप तो अवक्तव्य है। वचन गोचर नाही। तातै निर्देश काहेका करिये ?

उत्तर– जो तू अवक्तव्य कहे है, सो ऐसे तेरे कहने ते वक्तव्यपना आवे है। जैसे कोऊ कहे मेरे मौनव्रत है ऐसे कहनेवालेका मौनव्रत काहे का ? तातै अवक्तव्यका एकात करना युक्त नाही। तथा कोई स्वामित्व नाही माने है। ताकू कहिये-जो सबन्ध मानिये तो स्वामीपणा क्यों नही मानिये ? नही मानिये तो सर्व व्यवहारका लोण हो जाय।

वहुरि जो साधनकू नही माने, ताके इप्टतत्त्वकी सिद्धि नाही सभवै। वहुरि आधार-आधेय भाव द्रव्य-गुणादिकके प्रसिद्ध ही है। वहुरि स्थिति है सो भी प्रमाणसिद्ध है। जो वस्तूकू सदा क्षणभगुर माने तो पुर्वापर जोडरुप प्रत्यभिज्ञान रुप व्यवहारका लोप हो जाय। ऐसे ही विधान कहिये प्रकार भी प्रमाण सिद्ध है। जो वस्तु सर्वथा एक प्रकार ही मानिये तो प्रत्यक्ष अनेक प्रकार दीखे है। ताका लोप कैसे करिये। प्रत्यक्षकू असत्यमाने तो शून्यताका प्रसंग आवे। तातै निर्देशादि करि जीवादि पदार्थनिका अधिगम करना युक्त है।

जीवादिकनिको जाननेका क्या कोई और अन्यभी उपाय है ऐसे पूछे, सूत्र कहे है–

सत्-संख्या-क्षेत्र-स्पर्शन-काल-अंतर-भाव-अल्पबहुत्वैश्च ॥८॥

अर्थ– १ सत् २ सख्या ३ क्षेत्र ४ स्पर्शन ५ काल ६ अतर ७ भाव ८ अल्पवहुत्व इन आठ अनुयोग करि-केभी जीवादिक पदार्थनिका अधिगम होय है। १ तहा सत् का अर्थ अस्तित्व है। २ संख्या-भेद की गणना। ३ क्षेत्र वर्तमान निवास क्षेत्र ४ स्पर्शन-तीन कालमे विचरन करनेका क्षेत्र ५ काल-वस्तूके परिणामकी काल मर्यादा। ६ वहुरि अंतर विरहकाल कहिये। जो एक परिणामते दूसरे परिणाम जाय फेर तिसही परिणामकू आवे ताके बीच जेता काल रहे सो

विरहकाल है। ताकू अतर कहिये। भाव-उपशमादिक भाव है। ८ अल्पबहुत्व-परस्पर दूसरेकी अपेक्षा थोरा-घना-पनाका कहना। ऐसे इन आठ अनुयोगनि करि सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवादिक पदार्थनिका अधिगम जानना। इनका कथन १४ गुणस्थान १४ मार्गणास्थाननिमें सर्वार्थसिद्धि शास्त्रनिविषैं विशेष कथन है, सो आगमतै अविरोधरुप जानना।

प्रश्न– इहां कोई अन्यमतवादी वस्तूका सर्वथा अभाव ही माने है। समस्त जगत् अविद्याकरि भासे हैं। जगत् कोई वस्तु नाही है। सर्व शून्य है। अवस्तु है।

उत्तर– जगत् शून्यका कू कहनेवाला पुरुप वा आगम सो सत् या असत्? यदि सत् है तो शून्य नाही ठहऱ्या। जैसे आपको सत् मान्या। तैसे परको भी सत् कहो। अर जो तुम शून्यता को कहनेवाला पुरुष वा आगम असत् कहो तो तुमारा वचन असत् हुआ। काहूके अंगीकार करने योग्य नाही। इस प्रकार 'सत्' कहनेते शून्यवादी-नास्तिक-वादीके पक्षका निराकरण किया।

कोई वस्तुको सर्वथा अभेदरुप कहे है, तिनका निषेध भेद न की गणनातै जानना।

वहुरि कोई वस्तूके प्रदेश अवयव नाही माने है। तिनका निषेध क्षेत्र कहनेते जानना।

वहुरि कोई वस्तुकू सर्वथा क्रिया रहित निष्क्रिय माने है तिनका निषेध स्पर्शन कहनेते जानना।

वहुरि कोई वस्तूका कदाचित् सर्वथा प्रलय होना माने है। तथा क्षणिक ही माने है। तिनका निषेध काल कहनेते होय है तथा केई वस्तूकू क्षणिक ही माने ह तिनका निषेध अतर कहनेते होय है। तथा केई वस्तूकू एक ही माने है, तथा अनेक ही माने है। तिनका निषध अल्प-वहुत्व कहनेते होय है।

इहा ऐसा जानना-जो वस्तु है सो अनेकान्तात्मक है। ताके द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव की अपेक्षा विधि-निषेधतै प्रमाण नय-निक्षेप-अनुयोगन की विधिकरि साधते सते यथार्थज्ञान होनेतै अधिगमज सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होय है। ऐसे आदिमे कह्या जो सम्यग्दर्शन ताका लक्षण-उत्पत्ति-स्वामी-विषय-न्याय अर अधिगम जो जानना तिनका उपाय कह्या। अर सम्यग्दर्शनका ही सबध करि जीवादिक तत्त्वनिका नामादिनिक्षेपनिका वर्णन किया।

१ जो पाच इद्रिय और मन करि पदार्थकू जाने सो मतिज्ञान है ।

२ मतिज्ञान करि निश्चय किया जो पदार्थ तिसकू अवलबन करि तिसही पदार्थ सबधकू लीये अन्य कोई पदार्थ तिसकू जाने सो श्रुतज्ञान है । अथवा इद्रिय अर मनकरि निश्चय कीया जो यह घट है ऐसे तो मतिज्ञान भया । तिस घट की जाति के अनेक देशमे या अनेक कालमे उसने अकने वर्णरुप-धोला-काला-लाल-पीला-छोटा-वडा अनेक अवगाहनारुप वा सोनाका, रुपाका, लोहेका, काष्ठका, पाषाणका, चित्रामका, पीतलका, तावाका इत्यादि अनेक प्रकारका पूर्वे नही देख्या, नही श्रवण कीया, नही चितवन मे आया, ऐसा अपूर्व अनेक प्रकारके घटनिकू देखते ही जास्ति जाय जी यह घट है'। ऐसे एक घट नामा अर्थकू देखि, उसके सदृश-विसदृश अनेक घटनिकू जाने सो श्रुतज्ञान है ।

अथवा जीव-अजीव पदार्थनिकू इद्रियकरि अर मनकरि ग्रहण कीया, वहुरि तिनहीकू सत् सख्या-क्षेत्र-स्पर्शन-काल अतर-भाव-अल्पवहुत्व आदि प्रकार करि जाननेंमे समर्थ होय सो श्रुतज्ञान है ।

अथवा घट ऐसे दोय अक्षर श्रवणकरि कर्णेद्रिय द्वारै मतिज्ञान करि शब्दमात्र ग्रहण करे सो मतिज्ञान है । वहुरि इस घट शब्द श्रवणतै घट पदार्थ वाचा अर घटशद्व वाचक ऐसे वाच्यवाचक सबधका सकेन करायनेका सामर्थ्य करि जल भरनेकू यह समर्थ है ऐसा घटके अर्थक्रियाका प्रयोजनका ग्रहण करना सो अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है ।

वहुरि कोऊके शरीरकै पवनका स्पर्श भया तदा स्पर्शन-इद्रिय द्वारा पवनका शीतस्पर्श जान्या सो तो मतिज्ञान है । फिर इस पवनका स्पर्शनेही ऐसा विचार भया तो यो पवन वायुके रोगी के रोगवृद्धीका कारण है । तथा इस पवनतें वर्षाका अभाव होयगा वा वर्षा आवेगी, अथवा इस जातिके वृक्ष फलेगे फूलेगे या वृक्षनकै फल-फूल नही उपजेगे, वा पवनतै लोकनिके रोगकी वृद्धि होगी वा रोग घटि जायगा । इत्यादिक पवनका स्पर्शतैही अनेक प्रकारका ज्ञान होना सो अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान है ।

ऐसे श्रुतज्ञानावरण के भेद जो इद्रिय-अनिद्रियावरण नामा कर्म के क्षयोपशमतै दोय प्रकार श्रुतज्ञान है । इहा ऐसा जानना-जो कर्णेद्रिय विना अन्यइद्रयनिके द्वारा अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान है सो एकेद्रियादि समस्त जीवनिके प्रवर्ते है । सो तो प्रमाणके कथनमे ग्राह्य नाही । ताका अधिकार नाही । अर जो श्रोत्रेद्रियद्वारा शद्व श्रवणरुप मतिज्ञानके पीछे (पूर्वक) अक्षरके अर्थ जाननेरुप मनके द्वारा शास्त्रका ज्ञान होय सो अक्षरात्मक श्रुतज्ञान इहा प्रमाणमे प्रधान है । याकरि नाम सहित तत्त्वार्थनिका स्वरूप नीके जान्या जाय है । (३) वहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भाव की मर्यादा लिये रुपी पदार्थका जो प्रत्यक्ष जाने सो अवधिज्ञान है । (४) बहुरि मनुष्य क्षेत्र प्रमाण पैतालिस लाख योजन प्रमाण घन प्रतर क्षेत्र विषै तिष्ठते

जीवनिके मनविषै सरलता और वक्रतारुप चिंतवन किये जे रुपी पदार्थ तिनकू अवाधिज्ञानके जाननेते हू अनतभाग सूक्ष्मताने लीयें जाने सो मन.पर्याय– ज्ञान है । (५) वहुरि सर्वद्रव्य अर उनके त्रिकालवर्ती सर्व पर्याय इनकों युगपत् प्रत्यक्ष जाने सो केवलज्ञान है। 'प्रमाणनयै रधिगमः' इस सूत्रमे प्रमाण-नय निकरि अधिगम होना कहा । तिनमे कितनेक अन्यमत वाले इंद्रिय और पदार्थ इनका सनिकर्षकु (सयोग) प्रमाण कहे है। इस हेतुतै अधिकारमे आये हुयें जे मतिआदिक ज्ञान है तिनहीके प्रमाणपणाकी प्रकटताके अर्थी सूत्र कहे है –

तत्प्रमाणे ॥१०॥

अर्थ– तत् कहिये जो मति आदि पाच ज्ञान कहे तेही प्रमाण है । अन्य नाही है ।

जे केई अन्यमत वादी सनिकर्ष आदिकू प्रमाण कह्ये है ते प्रमाण नाही है । जाते जो इंद्रिय अर पदार्थनिका स्पर्शनिकू सनिकर्ष कहिये है । तिनमे मन अर नेत्रइद्रिय इनतै तो विषयभूत पदार्थनिका सनिकर्ष नाही प्रतीत होय है । अर जो सनिकर्पकू प्रमाण मानियें, तो सूक्ष्म पदार्थ-क्षेत्रसे दूरवर्ती पदार्थ, कालसे अतरित पदार्थ तिनकू संनिकर्प प्रमाण ग्रहण करनेकू समर्थ नही । जातै सनिकर्ष तो इद्रिय अर पदार्थ भिडे-स्पर्शे तदि होय है । तदा सूक्ष्म-अतरित-दूरवर्ती पदार्थ सनिकर्ष प्रमाणका विषय नाही ठहरै । तातै पूर्व कहे जे मति आदिक पाच ज्ञान है तेही प्रमाण है। ते प्रमाण प्रत्यक्ष-परोक्ष भेद करि दोय प्रकार है । जे सामान्य-विशेषात्मक वस्तु है ते प्रमाणका विषय प्रमेय है ।

वहुरि इन परोक्ष-प्रत्यक्ष भेदरुप प्रमाणके दोय भेद विषै समस्त (अन्यमत कल्पित समस्त प्रमाण भेद) गर्भित है । प्रमाणका फल अज्ञान नाश, (अज्ञानका अभाव होना) तथा हेय विषै त्याग भाव, उपादेयविषै प्रवृत्ति भाव तथा राग-द्वेषके अभावरुप परम उपेक्षाभाव माध्यस्थ भाव-समताभाव ते समस्त प्रमाणका फल है ।

प्रश्न– इद्रियजनित ज्ञान में कोऊ प्रकार बाधा आवे है , विपरीत भी जाने है, ताकू प्रमाण कैसे कहिये ?

उत्तर– जो सम्यग्ज्ञान है सो प्रमाण है । अर मिथ्याज्ञान है सो अप्रमाण है । इहाभी-मतिज्ञान अर श्रुतज्ञान अपने विषयनिमें हू एकदेश प्रमाण है । जैसे उगता चद्रमा पृथ्वीसो लग्या निकट ही दीखे है । तहा चद्रमाकी अपेक्षा प्रमाण है । पृथ्वीके लग्या निकटही दीखे सो अप्रमाण है । ऐसे एकदेश प्रमाण-अप्रमाण है । अपना विषय जेता है तितनेमे प्रमाण है । शेष अप्रमाण है । मति आदि चार ज्ञान क्षायोपशमिक है । क्षयोपशम ज्ञानमे इस प्रकार एक देश प्रमाणता-अप्रमाणता सभवे है । जहा बाधा आवे तहा अप्रमाण है । जहा बाधा नही

तहा प्रमाण है। केवलज्ञान सर्वथा निर्बाध प्रमाण स्वरुप ही हैं। इसके प्रति पक्षी कर्म नाही है।

प्रश्न— मति श्रुतज्ञानके प्रमाण-अप्रमाणका व्यवहार कैसे प्रवर्तेगा ?

उत्तर— जाका ज्ञान जिस प्रकरण विषै निर्बाध होय तहा वाकू प्रमाण ही कहियें। अन्य विषयमे कदाचित् अप्रमाण भी होई तो वाकी मुख्यता नही करे। ऐसे मुख्य-गौण की अपेक्षा व्यवहार वर्ते है। अर परमार्थतै समस्त बाधारहित केवलज्ञानी सर्वज्ञ ही जाने है। सर्वथा निर्बाध ज्ञान तो केवलज्ञान ही है।

अन्य वादीनिकरि कल्पित सनिंकर्ष तथा इद्रिय ते प्रमाण नाही है। बहुरि केई विशेष रहित केवल सामान्यकू तथा केई सामान्य रहित केवल विशेषकू तथा केई परस्पर निरपेक्ष सामान्य अर विशेष दोनोकू प्रमाणका विषय स्थापन करे है सो वास्तवम सामान्य तो विशेष विना अथवा विशेष सामान्य विना कहू है नाही। सो परवादीनि करि कल्पित प्रमाण तथा प्रमाणके विषयनिका निराकरण जैन शासनके न्याय ग्रथनिमे है। प्रमाण का स्वरुप-सख्या-विषय-फल इनविषै अन्यथावाद का निराकरण अर स्वाद्वादमत करि प्रमाण-का यथावत् स्थापन इत्यादि विशेष कथन श्लोकवार्तिक-परीक्षामुख आदि न्याय ग्रथनिमे है तहाते जानना। यहा सूत्रमे प्रमाण शब्दके द्विवचन कहनेकरि प्रमाण दोयही है ऐसा नियम किया। परतु दोय प्रमाण कैसे ? केई प्रत्यक्ष अर अनुमान ऐसे दोय प्रमाण माने है। केई अनुमान अर उपमान, केई अनुमान अर आगम, केई उपमान अर प्रत्यक्ष, केई उपमान अर आगम, केई आगम अर प्रत्यक्ष ऐसे दो प्रमाण माने हैं। तातै मत्यादिकनिके विपर्यय का प्रसग आवे हैं। तिनका कहना बाधा सहित है। सो प्रमेयकमल मार्तंड-तथा प्रमेयचद्रिकामे वर्णन कीया है। उनके कहे भेद जैन शासनमे कहे हुय परोक्ष-प्रत्यक्ष भेदमे गर्भित होते हैं। वे दोय भेद कौन है इसके निश्चयके अर्थि सूत्र कहे है—

आद्ये परोक्षम् ॥११॥

अर्थ— पच ज्ञाननिमे आदिके दोय मतिज्ञान अर श्रुतज्ञान ये परोक्ष प्रमाण है। यहा आद्ये यह पद द्विवचनकरिके कहा। तातै मति-श्रुत दोऊ ग्रहण करने। मति-श्रुत ये दो ज्ञान परोक्ष प्रमाण है।

पर कहिये इद्रिय अर मन तथा परका उपदेश तथा प्रकाश आदिक पर निमित्त की सहायता करि होय तातै परोक्ष कहिये। तथा पर प्रत्यय (अन्य ज्ञान-प्रत्ययातर) इन करि यामे अतर (व्यवधान) पडे है। परकी अपेक्षातै होय है। अर अविशद अस्पष्ट है यातै परोक्ष-प्रमाण है। इनके प्रत्यक्षपणा नाही हैं।

बहुरि स्मृति-प्रत्यभिज्ञान-तर्क अनुमान ये सब परोक्ष मतिज्ञानके भेद हैं। बहुरि इन विना जो चक्षुरादिक इंद्रियनितै बहु आदि पदार्थनिका जो अवग्रहादिरूप मतिज्ञान है उसे साव्यवहारिक प्रत्यक्ष भी कहिये है। जातै है व्यवहारीजन इंद्रियज्ञानकोही प्रत्यक्ष कहे है। तथापि परमार्थतै विचारिये तो यह मतिज्ञान पराधीनपणातै परोक्ष ही है। आगे मतिश्रुत विना अन्य तीन ज्ञान प्रत्यक्ष है ऐसा सूत्र कहे है।

प्रत्यक्ष मन्यत् ॥१२॥

अर्थ– अन्यत् कहिये मति-श्रुत तैं अन्य अन्य अवधि-मन. पर्यय-केवल ये तीन ज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। जो (अक्ष्णोति-व्याप्नोति-जानाति-इति अक्ष आत्मा) पदार्थोको जो व्यापता है जानता है वह अक्ष है। अक्ष नाम आत्माका है। (अक्षं प्रति तत् प्रत्यक्ष) आत्माको ही प्रति व्याकर नियम है आत्माका ही आश्रय करि जो उपजे है, अन्यका सहायकी अपेक्षा नाही है। इद्रिय प्रकाश उपदेशादिक की सहायविना ही विशेषसहित वस्तूका जाननेवाला जो स्पष्ट ज्ञान सो प्रत्यक्ष प्रमाण है। तहां अवधि और मन पर्यय ज्ञान तो विकल प्रत्यक्ष है। अर केवलज्ञान सकल प्रत्यक्ष प्रमाण है।

अब परोक्ष प्रमाणका विशेष जाननेके अर्थि सूत्र कहे हैं।

मतिः स्मृतिः संज्ञा चिंताऽभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥१३॥

अर्थ– मति-स्मृति-सज्ञा-चिंता-अभिनिबोध ये पाच ज्ञान अनर्थान्तर है। ये सब मतिज्ञानके ही भेद है। आदिविषै कहा जो मतिज्ञान ताहीके ये पर्यायवाचक नामान्तर है। जातै ये सर्व ही मतिज्ञानावरण कर्मके क्षयोपशम करि उपजा जो उपयोग ताके विशेषभेद है।

(१) मति– तहा मनन मति.। मनन करना, चितन करना सो मति है।

(२) स्मृति– पूर्वे जो अवग्रह-इहा-अवाय-धारणारूप अनुभवमे आया था उसका कालांतरमें 'वह' इस प्रकार तत् पना करि उल्लेख करनेवाला जो स्मरणरुप ज्ञान उसे स्मृति कहते है। जैसे-काहू पुरुपको पहले देखा था सो कालातरमे उसकी याद आना कि 'वह देवदत्त' सो स्मृति है।

(३) प्रत्यभिज्ञान– बहुरि सज्ञा नाम प्रत्यभिज्ञान का हैं। वर्तमानमें कोऊ वस्तू कू देखि, पूर्वे देखा था ताका स्मरण पूर्वक जो सकलनात्मक जोडरुप ज्ञान वह प्रत्यभिज्ञान है। वह अनेक प्रकार है। जैसे– १) काहू पुरुप को देखिकरि उसका स्मरण पूर्वक यह वही देवदत्त है सो एकत्व प्रत्यभिज्ञान है। २) बहुरि काहूने वनविषै गवय (वन गाय) देखी तो पूर्वे गाममें देखि गो का स्मरण होई यो सदृश गवय है, ऐसा जो सकलनरुप ज्ञान सो सादृश्य प्रत्यभिज्ञान है।

३) वहुरि भैसाकू देखिकर पूर्वे जो वलध (बैल) देखा था यह वह नही है, उससे विलक्षण हैं ऐसा जो संकलन रुप ज्ञान सो विलक्षण प्रत्यभिज्ञान है। ४) यह उसके सदृश नही हैं, उससे विसदृश्य है सो विसदृश्य प्रत्यभिज्ञान है। ५) वहुरि काहूकू निकट देखि करि अर काहूकू दूर देखिकरि यह इससे दूर है, अथवा वह इससे निकट था, अथवा यह उससे छोटा है, वह इससे वडा था इस प्रकार क्षेत्र-कालादिक की अपेक्षा अन्य-अन्य की अपेक्षा करि जो सकलनरुप ज्ञान सो प्रतियोगी प्रत्यभिज्ञान है। इत्यादि प्रत्यभिज्ञान के अनेक भेद है सो सर्व ही परोक्षप्रमाण है।

(३) चिता– (तर्क) – (चितन चिता) लिंग की लिंगी के साथ साधन की साध्य के साथ अथवा कारण की कार्य के साथ जो व्याप्ति का ज्ञान सो चिता या तर्क कहिये। (व्याप्तिज्ञान तर्क) इस चिता ज्ञान को तर्क–ऊह ऐसे अपर एकार्थवाचक नाम है। जहा अन्वय या व्यतिरेक सबध सार्वकालिक नियत होय सो व्याप्ति-ज्ञान है। व्याप्तिका अपर नाम अविनाभाव भी है। व्याप्ति के दो भेद है। १ अन्वय व्याप्ति २ व्यतिरेक व्याप्ति १ अन्वयव्याप्तिका दूसरा नाम तथोपपत्ति भी है। २ व्यतिरेक व्याप्तिका दूसरा नाम अन्यथा-अनुपपत्ति भी है। (सर्वोपसंहारवती व्याप्ति) यह व्याप्ति-(व्याप्य-व्यापक सबध) (सर्वदा-सर्वकालसबधी) अर सर्वत्र (सर्वत्र सबधी) नियत-सुनिश्चित होती है।

१) (यत्सत्त्वे यस्य सत्त्व अन्वय) जिसके होनेपर जिसका होना अवश्य-भावी नियत हैं सो अन्वयव्याप्ति हैं। (यदभावे यस्य अभाव) जिसके न होनेपर जिसका न होना अवश्यभावी है नियत है सो व्यतिरेक व्याप्ति है। जैसे-अग्नि धूमका कारण है, धूम कार्य है। सो अग्निके होपनेर ही धूम का होना, कारण के होनेपर ही कार्यका होना सो अन्वय व्याप्ति है।

अग्निके न होनेपर धूमका न होना, कारणके न होनेपर कार्यका न होना सो व्यतिरेक व्याप्ति है।

ऐसा जो व्याप्तिज्ञान सो तर्क प्रमाण है।

(४) अभिनिवोध – अभि कहिये सन्मुख-लिंगादिक देखि, निवोध कहिये लिगी का निश्चय करे सो अभिनिवोध कहिये। इसहीकू अनुमान भी कहिये है। (लिंगात् लिंगिनि ज्ञानं अनुमान) अथवा (साधनात् साध्य विज्ञान) जो लिंगसे लिंगीका ज्ञान होना अथवा साधन साधन कहिये हेतु तातै साध्य कहिये जो सिद्ध करने योग्य वस्तू ताका ज्ञान होना सो अनुमान प्रमाण है।

१ साध्य – जो इष्ट-अभिप्रेत हो, जो शक्य-अवाधित हो अर जो असिद्ध है सोही साध्य होय है। जो किसीभी प्रमाणकरि अवाधितपणा करि साधनेकू शक्य होय सो साध्य होय है। जामे साधने की योग्यता नाही तो साधनेकू शक्य नाही सो साध्य नाही। जैसे

आकाशका फूल साध्य नाही होय है। बहुरि जो वादी को अभिप्रेत-हो इष्ट हो सो ही साध्य होय है। जो अभिप्रेत नाही ऐसी अन्य वस्तू साध्य नाही होय है। तथा जो पहले सिद्ध होय ताकू सिद्ध करना निष्फल है। जिसके कुछ सदेहादिक हो, जो पूर्व ज्ञान न होय, जो अप्रसिद्ध होय, सो ही साधने योग्य है। ऐसे साध्यके सन्मुख जो लिंगादिक नियत साधन ताकरि साध्यका जो निश्चित ज्ञान होय जाकू अभिनिबोध कहिये। ऐसे स्मृति आदि चार ज्ञान कहे ते सर्व मतिज्ञान है सो परोक्षप्रमाण है। बहुरि आगम नामा परोक्षप्रमाण है सो श्रुतज्ञान है। अन्यमतवादी अर्थापत्ति-उपमान आदि अन्य प्रमाण भेद माने है ते सर्व मतिज्ञान मे अतर्भूत होय है।

आगे मतिज्ञान का स्वरुपका लाभविषैं निमित्त क्या है ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहे है–

तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तम् ॥१४॥

अर्थ– तत् कहिये सो मतिज्ञान-इद्रिय अर अनिद्रिय है निमित्त कहिये कारण जाके ऐसा है। पाच इद्रिय अर मन इनके निमित्ततैं मतिज्ञान होय होय है। अतरग निमित्त मतिज्ञानावरण कर्मका क्षमोपशम होतैं बाह्य निमित्त इद्रिय वा मनके निमित्ततैं मतिज्ञान होय है।

जातैं मतिज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशतैं जानने योग्य पदार्थ जाननेकी योग्यता-लब्धिरुप-शक्ति तो प्रकट भई परतु इद्रिय-मन रुप बाह्य निमित्त विना जाननेकू स्वय समर्थ नाही होय है तातैं पराधीनताकरि मतिज्ञान को परोक्ष कहिये है। पदार्थनिके जाननेकू कारण जे चिन्ह होय तिनकू इद्रिय कहिये। अथवा जो अदृश्य-गूढ है ताके अस्तित्व जानावनेका जो चिन्ह वह इद्रिय है। इद्रियनिकी प्रवृत्तितै आत्मा जाना जाय है। जाते इद्र नाम ससारी आत्माका है। (इद्रस्य लिंग इद्रिय) पदार्थकू जाननेका जो आत्माका लिंग-साधन सो इद्रिय है। अथवा इद्र नाम नामकर्मका है। नामकर्मकरि रची ने इद्रिय है बहुरि अनिद्रिय नाम मनका है। याकू अत करण भी कहिये। यह अभ्यतर इद्रिय है।

प्रश्न– जो इद्रिय नाही सो अनिद्रिय कहिये। मन अनिद्रिय कैसे ?

उत्तर– इद्रियका अभाव सो अनिद्रिय ऐसा नही है। यहा (ईषदर्थे नञ् ईषद् अर्थमें नञ् जानना। जैसे कन्याकू अनुदरा कहा, तहा जाके उदर नही सो अनुदरा ऐसा अर्थ नही लेना। जो अन् कहिये ईषत, कृष-क्षीण, उदर हो ताकू अनुदरा कहिये है।

तरणादि पच कल्याणिक महोत्सव, पुण्यविशेषका हेतु षोडशकारण भावना, तपश्चरण तथा चद्र-सूर्यादि ग्रह-नक्षत्रनिके गमन, ग्रहण, शकुन आदिका फल वर्णन है।

१२) **प्राणवाद पूर्व**– (१३ कोटि पद) अप्ट प्रकार वैद्यक चिकित्सा-भूतादिक व्याधि दूरि करनेका कारण मत्र-तत्रादिक-विष दूरि करनहारा गारुडविद्यादिक-तथा स्वरोदयादिक, दशप्राणनिके उपकारक-अनुपकारक द्रव्यनिका-गति-आदिकनिका वर्णन है।

१३) **क्रियाविशाल पूर्व**– (९ कोटि पद) सगीत शास्त्र छद-अलकार-आदि पुरुषकी ७२ कला अर शिल्पकला आदि चातुर्यता, स्त्रीनिका ६४ गुणनिका, गर्भाधानादि ८४ क्रिया, सम्यग्दर्शनादि १०८ क्रिया. देववदनादिक २५ क्रिया निमित्त-नैमित्तिक क्रियाका वर्णन।

१४) **त्रिलोक बिंदु सार पूर्व**– (१२ कोटि ५० लाख पद) तीन लोक का स्वरुप, षड्विंशति परिकर्म, आठ प्रकार-व्यवहार गणित, चार प्रकार बीज गणित-मोक्षका कारण-भूत क्रिया-मोक्ष सुखका वर्णन है।

) चूलिका – ताके ५ भेद है।

१) **जलगता** – (२ कोटि, ९ लाख, ८९, २०० पद) जलका स्तभन करना, जलविषै गमन करना, अग्निका स्तभन, अग्निप्रवेश, अग्निभक्षण इत्यादिके कारण रूप मत्र तत्रादिक का प्ररूपण है।

२) **स्थलगता** – (२ कोटि ९ लाख ८९,२०० पद) मेरुपर्वत-भूमि इत्यादिकनिमे प्रवेश करना-शीघ्र गमन करना, इत्यादि क्रियाके कारणभूत मत्रतत्र-आदिका प्ररूपण है।

३) **मायागता** – (२ कोटि ९ लाख ८९,२०० पद) मायामयी इंद्रजालादिक क्रिया के कारणरूप मत्र-तत्र आचरणादिका प्ररूपण है।

४) **रुपगता**– (२ कोटि ९ लाख ८९,२०० पद) सिंह-हस्ती घोडा-वैल-हरिण आदिके रूप पलटनेका कारण मत्र-तत्र तपश्चरणादिका प्ररूपण है।

५) **आकाशगता**– (२ कोटि ९ लाख ८९,२०० पद) आकाशमे गमनादिक का कारणभूत मंत्र तत्र-तपश्चरण आदिका वर्णन है।

ऐसे अगप्रविष्ट श्रुतज्ञानका वर्णन कहा।

व अंगवाह्य श्रुतके ८ कोटि, ०१ लक्ष, ०८१७५ प्रमाण अक्षर रहे ताके चौदह प्रकीर्णक है।

१) **सामायिक**– नाम स्थापना-द्रव्य-क्षेत्र-काल भाव करि षट् प्रकार सामायिक का वर्णन।

२) संस्तव – तीर्थंकरनिके पचकल्याणक चौतीस अतिशय-अष्ट प्रातिहार्य परमऔदारिक दिव्य देह, समवसरण, धर्मोपदेश आदि तीर्थंकरनिके माहात्म्यका प्रकट करनेवाला स्तवन का वर्णन है।

३) वंदना– तीर्थंकर का आश्रयके अर्थि प्रतिमा चैत्यालय आदिका स्तवन-वदनाका वर्णना-

४) प्रतिक्रमण– दैवसिक-रात्रिक-पाक्षिक-चातुर्मासिक-सांवत्सरिक ऐर्यापथिक-उत्तमार्थ-कहिये सन्यास मरण अवसर विषै सपूर्ण पर्यायमे उपजे दोष तिनका निराकरण अर्थि प्रतिक्रमण ताका वर्णन है।

५) विनय– दर्शन-ज्ञान चारित्र-तप-उपचार ऐसे पाच विनयका वर्णन है।

६) कृतिकर्म– जिन पूजनादि क्रियाके विधानका वर्णन, अरिहत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-साधु–जिनधर्म–जिनप्रतिमा, जिनवचन, जिनमदीर, ये जे नव देवता तिनकी वदनाके अर्थि तीन प्रदक्षिणा, तीन अवनति, चार शिरोनति, बारह आवर्त इत्यादि नित्य-नैमित्तिक क्रियाका वर्णन है।

७) दशवैकालिक– साधुनिके आचारके गोचर आहार की शुद्धिका वर्णन है।

८) उत्तराध्ययन– चार प्रकारका उपसर्ग बावीस परिषह सहनेका विधान-इनका फलवर्णन है।

९) कल्प्य व्यवहार– साधुनिके योग्य आचरण विधान-अयोग्य सेवन होते प्रायश्चितका वर्णन है।

१०) कल्प्याकल्प्य– द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावकै अनुकूल साधुके योग्य-अयोग्य आचरणका विधान है।

११) महाकल्प– उत्कृष्ट सहनन सहित जिनकल्पी साधुनिके द्रव्य-क्षेत्र-कालभावके योग्य त्रिकाल योगादिका आचरण वर्णन, स्थविरकल्पी साधुनिका दीक्षा-शिक्षा गणपोषण, आत्मसस्कार-सल्लेखना-उत्तमार्थ स्थान गत उत्कृष्ट आराधनाका वर्णन है।

१२) पुंडरीक– चार प्रकारके देवनिमे उपजनेका कारण दान-पूजा, तपश्चरण-अकाम निर्जरा-सम्यक्त्व-सयम-आदिका वर्णन देवनिके उपपादस्थानका वैभव वर्णन।

१३) महापुंडरीक– इद्र प्रतींद्रादिक में उत्पत्तिका कारण तपश्चरणादिक का वर्णन।

१४ निषिधिका– प्रमाद जनित दोष दूरि करनेके अर्थि प्रायश्चित्तादिक का वर्णन है।

ऐसे अग प्रविष्ट अर अगबाह्य श्रुतज्ञान है सो प्रमाण है। तहा वचनरूप शब्दात्मक

यश्रुत है। सो ज्ञानस्वरूप भावश्रुतका कारण है। श्रुतज्ञान है सो परोक्ष प्रमाण है। सो द्रव्य-
ा-पर्यायके विशेषसहित सर्व पदार्थनिको केवलज्ञान की तरह सत्यार्थ प्रकाशे है। जैसा केवलज्ञान
रे प्रत्यक्ष जाने तैसा ही श्रुतज्ञानकरि परोक्ष जाने है।

अव तीन प्रकारका कहा जो प्रत्यक्ष प्रमाण तिसमे अवधिज्ञान के दो भेद है। भव प्रत्यय २ गुण प्रत्यय। उममे प्रथम भेद भवप्रत्यय का स्वामी कहे है–

भवप्रत्ययो ऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥२१॥

ा– देव अर नारकीनिके भवप्रत्यय अवधिज्ञान होय है। जातै अवधिज्ञानावरण अर र्यातराय के क्षयोपशम होते सते यह अवधिज्ञान होय है। सो क्षयोपशम तो व्रत-नियम श्चरणतै होय है। अर देवनारकीनिके तो व्रत-नियम-तपश्चरणादिक है नही। तातै देव-रकीनिके अपना देव-नारक का भव-पावना ही क्षयोपशमका कारण है। तातै भवप्रत्यय नामकं धिज्ञान देवनारकीहिके होय है। सो देशावधि है। देवनारकी निके अवधिते जानना स्तनिके समान नही है। जैसा जैसा क्षयोपशम तैसा तैसा द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावकी मर्यादाम रूपी द्रव्यकू ही अवधितै जाने है। मिथ्या दृष्टिका अवधिज्ञान विभगावधि कहावे है।

अव क्षयोपशम निमित्तक गुणप्रत्यय अवधिज्ञान कौनके हो है याका सूत्र कहे है–

क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥२२॥

– अवधिज्ञानावरण अर वीर्यांतराय का विशेष क्षयोपशम है निमित्त जाकू ऐसा गुणप्रत्यय धिज्ञान षट् प्रकार है। सो शेष जो मनुष्य-तिर्यंच तिनके होय है। सो समस्त मनुष्य-ंचनिके नही होय है। सैनी-पचेद्रियके ही होय है।

अर सम्यग्दर्शनादिक निमित्तकू होतैसतै कोऊकै अवधिज्ञानावरण कर्मके क्षयोपशम होय है। तातै गुणप्रत्यय कहिए है। सो गुणप्रत्यय अवधि छह भेदरुप है। १ अनुगामी। ननुगामी। ३ वर्द्धमान। ४ हीयमान। ५ अवस्थित। ६ अनवस्थित। तहा जो अवधिज्ञान ा स्वामी जीवकै साथिही गमन करै ताकू अनुगामी कहिए। ताके तीन भेद है। त्रानुगामी। २ भवानुगामी। ३ उभयानुगामी।

तहा जिस जीवकै जिस क्षेत्रविषै अवधिज्ञान उपजा तिस जीवकू अन्य क्षेत्रमै गमन साथिही गमन करै सो क्षेत्रानुगामी है। वहुरि जो परभवकू गमनकरतै जीवक केपर्यंत अवधि जाय सो भवानुगामी है। वहुरि जो अवधि अन्य क्षेत्रविषैभी साथि जाय अन्यभवविषैभी साथि जाय सो उभयानुगामी है। वहुरि जो अवधिज्ञान अपना स्वामी कै साथि गमन नही करै सो अननुगामी अवधि है। ताके तीन भेद है। १ क्षेत्राननुगामी।

२ भवाननुगामी। ३ उभयाननुगामी। तहां जो अन्य क्षेत्रविषै गमन करता जीवकै साथि न जाय सो क्षेत्राननुगामी है। बहुरि जो अन्य भवविषै गमन करता जीवकै साथि नही जाय सो भवाननुगामी है। बहुरि जो अन्यक्षेत्रविषै गमन करता जीवके साथि नही जाय वा परभवविषैभी साथि नही जाय सो उभयाननुगामी है।

बहुरि जो सम्यग्दर्शनादि गुणरूप विशद्धपरिणामनिकी वृद्धि होनेतै जिस प्रमाणको लीए उपज्या तातै वधताही चल्याजाय सो वर्धमान अवधिज्ञान है। बहुरि जो सम्यग्दर्शनादि गुणकी हानि अर सक्लेशपरिणामनिकी वृद्धिके योगतै जो ज्ञान घटताही जाय सो हीयमान अवधिज्ञान है। बहुरि जो अवधिज्ञान जेते परिणामको लीए उपजै तेताही रहै घटै बधै सो नही सो अवस्थित अवधिज्ञान है। बहुरि जो अवधिज्ञान जेते परिणामको लीए उपजै तातै घटैभी वधैभी। जैसे पवनका वेगकरि प्रेर्‌या जल वारवार हानिवृद्धिरुप होय तैसै अनवस्थित अवधिज्ञान है। ऐसै गुण-प्रत्ययदेशावधिज्ञान है ते छह भेदरुप है। अथवा प्रतिपाती अप्रतिपाती भेदसहित आठ भेदरूपभी है।

बहुरि आगमविषै देशावधि परमावधि सर्ववधि ऐसा भेद कह्या है। तिनमै देशावधि छह भेदरूप वा आठ भेदरुप जानना। अर परमावधि सर्वावधि केवलज्ञान उपजे तहांताई अनुगामी हैही। अर परमावधि सर्वावधिका धारक अन्य भव नाही धारै तातै भवातरकी अपेक्षा अननुगामी कहिए अर ए दोऊ अप्रतिपातीही है। केवलज्ञान उपजै तहाताई छूटै नही। बहुरि परमावधि है सो वर्धमानस्वरूपही है हीयमान नाही। बहुरि परमावधि सर्वावधि है सो चरमशरीरी तद्‌भवमोक्षगामी सयमीमुनीहीकै होय है। अन्य तीर्थंकरादिक गृहस्थ मनुष्य तिर्यंच देव नारकीनिकै नही होई। इनिकै देशावधिहीकी योग्यता है। बहुरि परमावधि सर्वावधि दोऊ गुणप्रत्ययही है। उत्कृष्ट सयमादि गुणनितैही उपजै है। अर देशावधिज्ञान गुणप्रत्यय, भवप्रत्यय दोऊ प्रकार होय है। बहुरि जो भवप्रत्यय अवधिज्ञान है सो नारकीनिकै देवनिकै चरमभवधारक तीर्थंकरनिकै होय है। सो सर्व आत्माके प्रदेशनिमै तिष्ठता जो अवधिज्ञानावरण वीर्यांतराय कर्मके क्षयोपशतै समस्त अगतै उपजैहै। अर गुणप्रत्यय अवधिज्ञान है सो पर्याप्तमनुष्यनिकै तथा सज्ञीपचेद्रिय पर्याप्ततिर्यंचनिकै उपजै है सो नाभीकै ऊपरि शख पद्म वज्र स्वस्तिक मत्स्य कलशादिक शुभचिन्हकरि सहित आत्माके प्रदेशनिमै तिष्ठता जो अवधिज्ञानावरण तथा वीर्यातराय तथा कर्मके क्षयोपशमतै उत्पन्न होय हैं। बहुरि अवधि नाम मर्यादका है सो ये अवधिज्ञान द्रव्य क्षेत्र काल भावकी मर्याद लीए होय है सो इस द्रव्य क्षेत्र काल भावका प्रमाण गोमटसारतै वां राजवार्तिकतै जानना। ऐसे अवधिज्ञानका वर्णन कीया। अब मन पर्ययज्ञानका भेदादि कहनेकू सूत्र कहै है।

॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥

अर्थप्रकाशिका— ऋजुमतिमन-पर्यय अर विपुलमतिमन पर्यय ऐसै मन पर्ययके भेद

भेद है। मन वचन कायका सरलपणाकरि मनमै तिष्ठता रूपीपदार्थ तथा परके मनमै तिष्ठता पदार्थकू जाणै सो ऋजुमतिमन पर्यय है। वहुरि सरल तथा वक्र रूप परके मनमै तिष्ठता रूपीपदार्थकू जानै सो विपुलमतिमन.पर्यय हैं। देव मनुष्य तथा तिर्यच इनि सवनिके मनविषै प्राप्तभया रूपीपुद्गलद्रव्य तथा ससारी जीवद्रव्य तिन समस्तनिकू मन पर्ययज्ञान प्रत्यक्ष जानै है।

तहा ऋजुमतिमन पर्ययज्ञान तीन प्रकार है। १ सरलमनकरि कीया अर्थकू जानै २ सरल वचनकरि कीया अर्थकू जानै। ३ सरलकायकरि कीया अर्थकू जानै ऐसै तीन प्रकार है। जैसे कोऊ पुरुष मनकरि कोऊ पदार्थकौ चिंतवन कीया तथा धर्मादिसयुक्त वचन तथा लौकिकवचनकू भिन्नभिन्न अक्षरनिकरि उच्चारण कीया तथा दोऊ लोकके कार्य प्रकट करनेकै अर्थि अपने अग उपागनिका पकटना खेंचना पसारणा इत्यादिक कार्यकी चेष्टाकरि अर फेरि लगतेही समयविषै वा वहुतकाल व्यतीत भए तिसके विस्मरण होनेतै तिसही अर्थके चिंतवन करनेकू वा तिसही वचनके कहनेकू वा कायकी चेष्टा करनेकू समर्थ नही होय। तिस पदार्थकू वचनकू कायकी चेष्टाकू ऋजुमतिमन पर्ययज्ञानी पूछे वा नही पूछे समस्तकू जो तुमन ऐसी विधकरि ऐसा पदार्थकू चिंतवन कीया है वा कह्या है वा कायकरि कीया है। ऐसा जानना है। वा आपका तथा परका चिंतवन जीवित मरण सुख दु ख लाभ अलाभादिकनिकू जाणै है। चिंतवनादिकरि जिस अर्थकू मन वचन कायकी चेष्टादिकनिमे जिस अर्थकू प्रक कीया तिसहीकू ऋजुमतिमन पर्ययज्ञान जाणै अर अप्रकटकू नही जानै। कालकरि तो जीवोका तथा आपका दो तीन भव तो जघन्यकरि जानै अर उत्कृष्ट सप्त अष्ट भव जानै। गमन आगमन करिकै अर क्षेत्रतै जघन्यकरि तीन कोश ऊपरी अर नवकोशकै अभ्यतरही जानै। अर उत्कृष्टकरि तीन योजनकै ऊपरी अर नव योजनकै माहि जानै।

वहुरि विपुलमतिमन पर्ययज्ञान सरल अर वक्र मन वचन कायके विषयतै छह प्रकार है। तथा आपका अर परजीवननिका चिंतवन जीवित मरण सुख दु.ख लाभ अलाभादिक अव्यक्त मनकरि तथा व्यक्त मनकरि चिंतवन कीया वा नही चिंतवन कीया वा चिंतवन करैगा तिन सबनिकू विपुलमतिज्ञानी जानै है। कालकरि जघन्य तो सात आठ भव जानै उत्कृष्ट असख्यात भवगति आगतिकरि प्ररूपण करै। क्षेत्र थकी जघन्य तो तीन योजन उपरि नव योजना माहि जानै उत्कृष्टकरि मानुषोत्तरपर्वतकै माहि जानै बाहिरले पदार्थकू नही जाने। अर गोमटसारके कथनमै पैतालीस लाख योजन घनरुप जाने है। ऐसै वर्णन कीया है जो पैतालीस लक्ष चोडा लवा ऊचा क्षेत्रमे वर्त्तते अर्थकू जानै है। ऐसे दोय प्रकार मन पर्यय ज्ञान वर्णन कीया तिनम परस्पर भेद दिखावनेकू सूत्र कहे है।

विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४॥

अर्थप्रकाशिका— विशुद्धिता अर अप्रतिपात इनि दोयविशेषनिकरि इनि दोऊनिमै

विशेष कहिए अधिकता है। मन पर्ययज्ञानावरण कर्मके क्षयोपशमतैं जो आत्माकी उज्वलता सो विशुद्धिता है। अर सयमपरिणामकी घटवारी हानिपना सो प्रतिपात है। अर जो प्रतिपात है नही होय सो अप्रतिपात है। तहा ऋजुमतिज्ञानतैं विपुलमतिमन.पर्ययकी विशुद्धिता अधिक है। अर ऋजुमतिमन पर्ययज्ञानी तो प्रतिपातीभी है छूटिभी जाय है। अर विपुलमतिमन पर्ययज्ञानी अप्रतिपातीही है। विपुल मतिमन पर्यय होय ताकै चारित्र वर्द्धमानही होय है। प्रतिपात नही होय है केवलज्ञानही उपजावै है। अर सर्वावधिज्ञानकरि जो कार्मणद्रव्यका अनतमा भाग रूपी-द्रव्यकू जानै है ताका अनतमा भाग ऋजुमतिमन.पर्यय जाने हैं। अर ताका अनंतमा भागकू विपुलमति जाने हैं। ऐसे ऋजुमति विपुलमति मन पर्ययज्ञानमें विशेष जानना। अब अवधिज्ञान अर मन पर्ययज्ञान इनमें काहेतैं विशेष है इस हेतुतैं सूत्र कहे है।

विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्ययोः ॥२५॥

अर्थप्रकाशिका— अवधिज्ञान अर मन पर्यय ज्ञान इनि दोऊनिमें विशुद्धि क्षेत्र स्वामी अर विषय इनि च्यार भेदनितैं भेद है। जातैं अवधिज्ञान जो रूपीद्रव्यको जानै है ताकै अनतभागभी सूक्ष्म रूपीद्रव्यकौ मन पर्ययज्ञान जानै है। तातैं अवधिज्ञानतैं मन.पर्ययज्ञान विशुद्ध है निर्मल है। बहुरि अवधिज्ञानके उत्पत्तिका क्षेत्र त्रसनालीपर्यंत है। अर विषयका क्षेत्र सर्व लोक है। अर मन पर्ययज्ञान मनुष्यलोकहीमें उपजै है। अर पैंतालीस लाख योजन घनरूपही याका विषयका क्षेत्र है। बहुरि अवधिज्ञान च्यारो गतिके सैनीपचेंद्रियजीवनिके होय है। अर मन.पर्ययज्ञान गर्भमनुष्य कर्मभूमीके पर्याप्तनिकैंही उपजै। अर भावलिंगी सयमीनिकैंही उपजै अर सयमीनिमैंहू जे वर्द्धमान चारित्रहीमें उपजै हीयमानमें नही उपजै। अर वर्द्धमान चारित्रके धारकनिमैंहू सप्तप्रकारकी ऋद्धिमैंतैं एक दोय तीन इत्यादिक ऋद्धि उपजी आइ होय तिनकैंही मन पर्ययज्ञान होय। ऋद्धिधारी विना नही होय। अर ऋद्धिधारी-निमैंहू केईकनिकैंही उपजै है। समस्त ऋद्धिधारीनिकै नही उपजै है। बहुरि विषयकी अपेक्षा भेद है ताका सूत्र आगैं कहसी। ऐसे अवधि मन पर्यय ज्ञानमे विशुद्धतादिकनितैं भेद दिखाया। अब केवलज्ञानका लक्षण कहनेका अवसरकू उल्लघनकरिकै ज्ञाननिका विषयका नियमकू कहै है जातैं केवलज्ञानका स्वरूप मोक्षतत्वका वर्णनरूप दशम अध्यायम वर्णन करसी। अब मति-श्रुतज्ञानका विषयअर्थि सूत्र कहे है।

मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥२६॥

अर्थप्रकाशिका— मतिज्ञान अर श्रुतज्ञान इनि दोऊनिका विषयका नियम द्रव्यनिकैं असर्वपर्यायनिविषैं है। समस्तपर्यायनिकू नही जाने है। इहां सूत्रमे विषय शब्द नही है सो "विशुद्धिक्षेत्र" इत्यादिसूत्रतैं अनुवृत्ति आई है। सो जाननी। इहा "द्रव्येषु" ऐसा बहुवचनतैं जीव पुद्गल धर्म अधर्म काल आकाश ए समस्त द्रव्य ग्रहण करनें तिनके असर्वपर्याय कहिए

केईक पर्याय लेने सर्व पर्यायनिसहित इनका विषय नाही है। जातै एक एक द्रव्यके अनत अनत त्रिकालसबधी पर्याय है। इहा कोऊ कहै, धर्मास्तिकायादिक अमूर्तिक द्रव्य है सो मतिज्ञानका विषय कैसे होय। यातै सर्वद्रव्यनिविषै मतिज्ञान प्रवर्त्तै है ऐसे कहना अयुक्त है। ताकू कहिए ए दोष नाही है। जातै अनिद्रिय कहिए मन नामा अतरग करण है द्रव्यमन है तिसका अवलवनका धारक नोइद्रियावरणकर्मके क्षयोपशमरूप लब्धिपूर्वक उपयोग है। सो अवग्रहादिरूप पहलै उपजै है पाछै तत्पूर्वक श्रुतज्ञान सर्वद्रव्यनिविषै आपकै योग्य पर्यायनिविषै प्रवर्त्तै है ऐसा जानना। अव याकै अनतर अवधिज्ञानका विषयनिबध कहा है यातै सूत्र कहे है।

रूपिष्ववधेः ॥२७॥

अर्थ प्रकाशिका— अवधिज्ञानका विषयका नियम रूपीपदार्थनिविषै है। इहा सूत्रविषै विषयनिबध शब्दकी अनुवृत्ति पहिले सूत्रमै लेनी। तथा 'सर्वपर्यायेषु' इस पदकीहू पूर्वसूत्रतै अनुवृत्ति लेणी। वहुरि रूपी कहनेतै पुद्गलद्रव्य ग्रहण करना पुद्गलकीही कितनेक पर्यायनिकौ जानै है। वहुरि पुद्गलद्रव्यका सबधसहित जीवद्रव्यहुकू जानै हैं। मुक्तजीवकू तथा अन्य अमूर्तिक पदार्थनिकै नही जातै है। अर क्षयोपशमकै याग्य सूक्ष्म स्थूल रूप परणए तथा दूर क्षेत्र वा निकट क्षेत्रमै वर्त्तते तथा अतीत अनागत वर्त्तमान कितनेक पर्यायसहित पुद्गलव्यको साक्षात् प्रत्यक्ष जाने है। अव मन.पर्ययज्ञानका नियम कहनेकू सूत्र कहे है।

तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य ॥२८॥

अर्थप्रकाशिका—जो रूपीद्रव्य सर्वावधिज्ञानका विषयपणाकरि कह्या तिसका अनत-भाग करिए तिसका एकभागविषै मन पर्ययज्ञान प्रवर्त्तै है। याका सामर्थ्य अति सूक्ष्मद्रव्य जाननेका है। इहा कोई कहै सर्वावधिका विषय तो परमाणुपर्यंतका है। अर ताका अनतवा भागकू मन.पर्ययज्ञान जाने है। सो परमाणूमै अनतवा भाग कैसे सभवै। ताका समाधान। एक परमाणूमै स्पर्श रस गध वर्णके अनतानत अविभाग परिच्छेद है तिनके घटने वधनेकी अपेक्षा अनंतका भाग सभवै है। अव केवलज्ञानका विषयनिबध कहनेकू सूत्र कहे है।

सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥२९॥

अर्थप्रकाशिका—केवलज्ञानके विषयका नियम सर्वद्रव्यपर्यायनिविषै है। एक एक द्रव्यनिके त्रिकालसंबधी अनतानत पर्याय है। सो सर्वद्रव्य अर सर्वद्रव्यनिकी त्रिकालवर्ती अनतानतपर्यायनिको अक्रमतै एकै काल प्रत्यक्ष केवलज्ञान जाने है। ज्ञानकी स्वच्छताविषै विना इच्छा सहजही सर्व ज्ञेय प्रत्यक्ष होई है। लोक अलोककू जाने है। अर केवलज्ञानमे शक्ति ऐसी है जो अनतानत लोक अलोक और होई तो उनहूकू जाननेकू समर्थ है। ज्ञाननिका

विषय तो कह्या अब एक आत्माविषे अपने निमित्ततै उपजे ज्ञान युगपत् केतेक होय यातै सूत्र कहे है।

एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥३०॥

अर्थप्रकाशिका– एक आत्मविषै एककालविषै युगपत् एक वा दोय तीन च्यार ऐसे विकल्प रूप होय। जहा एक होय तहा केवलज्ञान होय। अर दोई होय तहा मतिज्ञान श्रुतज्ञान होय। तीन होय तहा मति श्रुति अवधि होय। अथवा मति श्रुति मन.पर्यय होय। च्यार होय तो मति श्रुत अवधि मन पर्यय होय। च्यारिसिवाय नही होय। जातै केवलज्ञान क्षायिक है। असहाय है। समस्त ज्ञानावरणके क्षयतै होय है। इहा क्षयोपशम ज्ञान कहातै होय? इहा प्रश्न। जो क्षायोपशमिक ज्ञान तो क्रमवर्ती है। एक कालमे एकही ज्ञान प्रवर्त्तै है। ताका समाधान। जो ज्ञानावरणका क्षयोपशम होतै च्यार ज्ञानकी जाननशक्तिरूप लब्धि तो एक कालमै होय है। अर उपयोग इनिमै एक काल एक ज्ञानस्वरूपही होय है। तथापि इहां उपयोगकं पलटनेकी शीघ्रतातै कालका भेद नही जान्या जाय है। अर सूक्ष्म काल भेद है ही। अब ये कहे जे मत्यादिक ते ज्ञाननामकरिही है, की अन्यथाभी है इस हेतुतै सूत्र कहे है।

मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥३१॥

अर्थप्रकाशिका– मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान ए तीन ज्ञान है ते विपर्ययभी होय है। विपर्यय नाम मिथ्याका है। इहा सम्यक्ज्ञानका अधिकार है सूत्रमे च शब्द समुच्चयार्थ है। तातै मति श्रुत अवधि ए तीन ज्ञान विपर्ययभी है अर सम्यक्भी हैं। इहा कोऊ पूछे इनकै विपर्ययपणा काहेतै होय ताकू कहिए है। मिथ्यादर्शनका उदयकरि सहित एक आत्मविषै समवायसबंधरूप एकता होतै विपर्यय होय है। कुमति कुश्रुत कुअवधि तथा याकू विभंगभी कहिए। जैसे कटुकतुवा गीरसहित होई तामै दुग्ध क्षेपियै तो कटुक हो जाय तैसे मिथ्यादर्शनका उदयसहित आत्मविषै भी ज्ञान होय सो मिथ्याज्ञान होय है। इहा विपर्यय कहनैतै मिथ्याज्ञान कह्या है। सो सशय अनध्यवसायभी लेना। तहा मति श्रुत ज्ञानही सशय विपर्यय अनध्यवसाय होतै कुमति कुश्रुत ज्ञान होय है। अर अवधिज्ञानमै सशय नही होय है कदाचित् अनध्यवसाय होय वा विपर्यय होय है तातै कुअवधि कहिए वा विभग कहिए। अब कोऊ कहे है। मिथ्यादृष्टीकैहू रूपादिक विषयका ग्रहणमै व्यभिचारका अभाव है। तातै विपर्ययपणाका अभाव है। जैसे सम्यग्दृष्टि मतिज्ञानकरिकै रूपरसादिकनिकू ग्रहण करै है। तैसे मिथ्यादृष्टीहू मतिअज्ञान जो कुमतिज्ञान ताकरिकै रूपादिकनिकू ग्रहण करै है। बहुरि जैसे घटादिकनिमै रूपादिकनिकू श्रुतज्ञानकरि निश्चयकरै है परकू उपदेश करै है। तैसेही कुश्रुतज्ञानकरि निश्चय करै परकू उपदेश करै है। तथा जैसे अवधिज्ञानकरि रूपीपदार्थनिकू निश्चय करै तैसे विभगज्ञानकरिकैहू निश्चय करै है तातै विपर्ययपणा नही। ऐसी शका होतै सूत्र कहे है।

सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥३२॥

अर्थप्रकाशिका— मिथ्यादृष्टीकै विपर्ययज्ञान होय है सो सत्का तथा असत्का विशेषकू ही जाननेतै अपनी इच्छातै जैसेतैसे ग्रहणकरनेतै ऊन्मक्तकीनाई होय है। जैसे मदिरादिकतै न्मत्त भया पुरुष अपनी इच्छातै जैसेतैसे वस्तुको ग्रहण करे है। तैसे मिथ्यादृष्टीभी त् असत्का विशेष जान्याविना अपनी इच्छातै ग्रहण करे है। सत् कहिए विद्यमान असत् हिए अविद्यमान अथवा सत् कहिए भली असत् कहिए बुरी ऐसे सत् असत्का विशेषकू नही ानै। सत्को असत् कहै। तथा असत्कू सत् कहै अथवा कहू सत्कू सत्भी कहे कहू असत्कू सत्भी कहे। ऐसै अपनी इच्छातै जैसेतैसे ग्रहणकरि कहै तहा विपर्ययज्ञान कहिए। जैसे तवाला कोऊ कालमे माताकू भार्या कहे। कोऊ कालमे भार्याकू माता कहे। कोऊ कालमे ार्याकू भार्याभी कहे। माताकू माताभी कहै। ऐसै अपनी इच्छातै मानै अर निर्णय नही हैं। हा जो जैसाकू जैसाभी कहे तो ताकै सम्यग्ज्ञान नाही। जातै वाकै निश्चयरूप निरधार करि ानना नही है। जातै मिथ्यादृष्टी घटपटादिक पदार्थनिकू नेत्रादिककरि घटपटादिकही जानै है। र सम्यग्दृष्टीहू घटपटादिकनिकू नेत्रादिकनिकरि घटपटादिकही जाने है। तोहू मिथ्यादृष्टीका टकू घटरूप जानना मिथ्या है अर सम्यग्दृष्टीका घटकू घटरूप जानना सम्यक् है। सोही दखावै है।

यद्यपि नेत्रादिक इद्रियनितै पदार्थका रूपादिक ग्रहण करना समान है। तोहु मिथ्या-ष्टीके कारणविपर्यय स्वरूपविपर्यय भेदाभेदविपर्यय ए तीन विपर्यय तो है ही प्रथम ारणविपर्ययकू कहे है। घटादिकनिका रूप तो जैसे है तैसैही जानै है परतु इनिका कारणमे मेथ्यादृष्टि विपरीत कल्पना करै है। ब्रह्माद्वैनवादी तो रूपादिकनिका कारण एक अमूर्तिक नत्य ब्रह्महीं है। ब्रह्मतै भएही मानै हैं। अर साख्यमती रूपादिकनिका कारण एक अमूर्त्तिक नेत्य प्रकृतिहीकू कहे है। जो रूपादिक एक प्रकृतिहीतै उपजै है। वहुरि नैयायिक वैशेषिकमति ृथ्वीआदिके परिमाणुनिमै जातिभेद माने है। तिनमै पृथ्वीविषै तो स्पर्श रस गध वर्ण च्यार ुण माने है। जलविषै स्पर्श रस वर्ण तीन गुणही माने है। गध नही माने है। वहुरि अग्निविषै स्पर्श वर्ण दोय माने है रस गंध नही माने है। अर पवनविषै स्पर्शगुणही माने है रस ाध वर्ण नही मानै है। तातै पृथ्वी जल अग्नि पवन ए च्यार अपनी अपनी जातिके न्यारे न्यारे कधरूप कार्यकूं उत्पन्न करे है। अर वौद्ध है ते पृथ्वीआदि च्यार भूत कहे हैं। अर इनिके स्पर्श रस रूप गध च्यार भौतिक कर्म हैं। इनि आठनिका समुदायरूप परमाणु होय है। वहुरि चार्वाकमतवाले पृथ्वीके परमाणूनिके तो काठिन्यादि गुण अर जलके परमाणूनिके द्रवत्वादि गुण अर अग्निके परमाणूनिके उष्णत्वादि गुण अर पवनके परमाणूनिके ईरणत्वादि गुण है ते भिन्नभिन्न परमाणु पृथ्वीआदिक भिन्न स्कधरूप उपजावे है। ऐसे तो घटपटादि पदार्थनिके

कारणनिविषें विपर्ययपणा माने है ।

बहुरि स्वरूपविपर्ययकू कहे है । केई इनि समस्त पदार्थनिके स्वरूपविषैं भी भेद माने है। केतेक तो रूप रसादिकको निरश निर्विकल्प माने है । उनिमें अभेद नही माने है । तथा केतेक कहे है जो रूपादिक वाह्यवस्तु हैही नही रूपादिकनिके आकार परणया ज्ञानही है । तिस ज्ञानका आलवनरूप वाह्यवस्तु नाही । कोऊ सर्वथा नित्यही माने है कोऊ अनित्यही माने है । ऐसे मिथ्यादर्शनके उदयतै वस्तुका स्वरूपमें विपर्यय माने है ।

बहुरि भेदाभेद विपर्यय माने है । ते केई तो कारणतै कार्यको भिन्नही माने हैं । तथा द्रव्यतै गुणकू भिन्नही माने है । तथा कारणतै कार्यकू सर्वथा अभिन्नही माने है । तथा समस्त द्रव्यनीको ब्रह्मतै अभिन्न माने है । इत्यादि भेद अभेदका सर्वथैकातका पक्षपाती भेदाभेदविपर्यय माने है ऐसे मिथ्यादृष्टीके जाननेविषै विपरीतता पाइए है । तैसेही सशय अनध्यवसायहू होय है जहा शरीरादिक तथा रागादिक परद्रव्यमे अर ज्ञानदर्शनादिरूप आत्मस्वभावमे स्वपरका निर्णय नही जो मै ज्ञानादिक रूपहूकी रागादिकरूप हौ ऐसा सशयज्ञान है । बहुरि केईनिके धर्म अधर्ममै सशय है । केईनिकै सर्वज्ञके अस्तित्वनास्तित्वविषै सशय है । केईनिके परलोकका अस्तित्वनास्तित्वमै सशय है । बहुरि केईनिकै सर्वही तत्वविषै अनध्यवसाय है काहा करै काहेतै निर्णय करै हेतुवादरूप तर्कशास्त्र है ते तो कहू ठरहै नाही । अर आगम है ते भिन्न भिन्न वस्तुके रूपकू कहे है कोऊ कछू कहे कोऊ कछू कहे परस्पर वात मीलै नही । अर कोऊ समस्तका ज्ञाता सर्वज्ञ वा कोई मुनि प्रत्यक्ष दीखे नाही जो ताके वचन प्रमाण करिए । अर धर्मका स्वरूप यथार्थ सूक्ष्म है सो कैसे निर्णय होय । तातै जो वडा जिस मार्ग चले आये तैसे चलता प्रवर्त्तना ठीक है । निर्णय होता नाही ऐसे अभिप्रायकू अनध्यवसाय कहिए है । ऐसे सशय विपर्यय अनध्यव्यवसाय होय है । तहा अवधिज्ञानविषै विपर्यय देशावधिही होय हैं । परमावधि सर्वावधि मन पर्यय है ते केवलज्ञानकी ज्यो सम्यक्स्वरूपही है विपर्ययरुप नाही होय है । ए ज्ञान सम्यक्दर्शनविना होय नाही । ऐसे प्रमाण अप्रमाणका भेद दिखावनेके अर्थि विपर्ययज्ञानका स्वरुप कह्या । अब प्रमाणके अनतर कहे जे नय तिनका निर्देश करनेकू सूत्र कहे है ।

नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसमभिरूढैवम्भूता नयाः ॥३३॥

अर्थप्रकाशिका– नैगम सग्रह व्यवहार ऋजुसूत्र शब्द समभिरूढ एवभूत । ऐसे ये सात नय है । इनि नयनिका सामान्यस्वरूप अर विशेषस्वरूप कहने योग्य हैं इनिका सामान्यस्वरूप ऐसा । जो वस्तु अनेक धर्मरूप है तहा काहू एक धर्मकी मुख्यता लेय अविरोधरूप जाकरि साध्य पदार्थक जानिए सो नय है सोही ग्रथनिमे कह्या है ।

गाथा – णाणाधम्मजुद पि य एय धम्मं पि उच्चदे अत्थ ।।
तस्सेव विववखादो णत्थिविवक्खा हि सेसाण ।। १ ।।

अर्थ– नानाधर्मनिकरि युक्तहू अर्थकू नयके वशतै एकरूपकरि कहिए है । जातै तिस एकधर्म्मके कहनेकी इच्छा है अन्य शेष धर्मनिके कहनेकी इच्छा नाही है । वहुरि कहे जे सप्तनय तिनका विशेष ऐसा है सो कहे है ।

जे द्रव्य है ते तीन कालके पर्यायनितै अन्वयरूप है जोडरूप है । द्रव्य है ते भूतपर्यायनितै वर्त्तमानपर्यायनितै अर भविष्यत्पर्यायनितै भिन्न नही है । तातै जो अतीनपर्यायनिमै वर्त्तमानवत् सकल्प करे अर आगामीपर्यायमेभी वर्तमानवत् सकल्प करे अर वर्तमानपर्यायनिमै जो पर्याय निष्पन्न कहिए पूर्ण भया तथा अनिष्पन्न कहिए परिपूर्ण नही भया ताकू निष्पन्नरूप सकल्प करे ऐसे ज्ञानकू तथा वचनकू नैगमनय कहिए है । वहुरि जो समस्तवस्तुनिकू तथा समस्तपर्यायनिको सग्रहरूपकरि एकस्वरूप कहे सो सग्रहनय है वहुरि जो अनेकप्रकार भेदकरि व्यवहरण करे भेदै मो व्यवहारनय है ।

वहुरि जो सरल सूधा वर्त्तमान पर्यायमात्रको ग्रहण करे सो ऋजुसूत्र है सो सूक्ष्म स्थूल भेदकरि दोय प्रकार है । वहुरि लिग, सख्या, साधन, काल, उपसर्ग इत्यादिकमै जो व्यभिचार ताको दूरिकरनेविषै तत्पर सो शब्द नय है । वहुरि एक शब्दके अनेक अर्थ है तिनमे सो कोऊ एक प्रसिद्ध अर्थको ग्रहणकरि तिसहीको कह्या करे सो समभिरुढनय है ।

वहुरि वस्तुका जिस धर्मकी मुख्यताकरि नाम होय सो तिसही क्रियारूप जिस काल परिणमे ताकौ तिस नामकरि कहे है सो एवभूतनय है । ऐसे ए सात नय है । इनिका उदाहरण कहिए है ।

तहा नैगमनयके तीन भेद है । अतीतकालमे जो वस्तु भई ताके वर्त्तमानकी ज्यो कहै । तथा भविष्यत्कालसवधीको निपज्या वर्त्तमानज्यो कहे । वहुरि जो वस्तु करनेका आरभ कीया अर कछु निपज्या कछु नही निपज्या ताकौं निपज्याही कहना सो वर्त्तमाननैगम है । जैसे कोऊ भात पाचाइवेकी सामग्री भेली करै था तिसकू काहूने पूछीं तू कहा करे है । तव वाने कह्या मे भात पचाऊहू । तहा भातपर्याय तो प्रकट नही भई अर भात पचाई वाके अर्थि इधन मेले है वा जलभरे है तोहू नैगमनयतै भविष्यत्पर्यायमे वर्तमान का सकल्प करे सो नैगमनय है । वहुरि नैगमनयके अन्यप्रकारभी तीन भेद है । १ द्रव्यनैगम २ पर्यायनैगम ३ द्रव्यपर्यायनैगम । सो इनका स्वरूप अन्यग्रथनितै जानना ।

वहुरि सामान्यरूप जो ग्रहण तिसकू सग्रह कहिए । जैसे सर्वद्रव्य है सो सत्तालक्षणसयुक्त है । तथा जीववस्तु चित्तसामान्यकरि एक है । तथा अजीवसामान्यकरि जीवद्रव्यविना पंचद्रव्य अजीव है । तथा पुद्गलसामान्यकरि समस्त पुद्गल एकद्रव्य है । इत्यादि जानने ।

वहुरि सग्रहनयकरि ग्रहणकीये जे वस्तु तिनका विधिपूर्वक व्यवहरण कहिए भेदरूप करना सो व्यवहारनय है। जैसे सत् कह्या सो सत् ते द्रव्यभी है गुणभी है ताका ग्रहण करिए तातै सत्का व्यवहारनयकरि भेदकरे तदि व्यवहार प्रवर्त्तै। सामान्य सन्मात्र कहनेतैंही व्यवहार नही प्रवर्त्तै। तथा द्रव्य एसे कहनैहू व्यवहार नही प्रवर्त्तै है। तातै व्यवहारका आश्रय करिए तदि द्रव्य दोय प्रकार हैं। जीवद्रव्य तथा अजीवद्रव्य। ऐसे जीवद्रव्यमेभी व्यवहार-नयकरि देव नारकादि भेद होय है। तथा जीवका समारी मुक्त ऐसे दोय भेद होई है। तथा अजीवके पुद्गलादि पाच भेद होई है। तथा पुद्गल है ते अणु स्कध ऐसे दोय प्रकार है। तथा स्कध अनेक प्रकार है इत्यादि अनेक प्रकार भेद करता चल्या जाय जहा फेर भेद नहीं होय तहा ताई व्यवहारनय है।

वहुरि दो अतीत अनागत कालसबधी पर्यायनिकू छाडि वर्त्तमानका जो एकसमय तिस समयवर्त्ती पर्यायकू ग्रहण करनेवाला ऋजुसूत्रनय है। जातै वर्त्तमानपर्यायकी जघन्यस्थिति समयमात्रही है। वस्तु है। सो समय समय परिणमै है। जो एकसमयवर्त्ती पर्यायकू अर्थपर्याय कहिए। सो अर्थपर्याय है सो ऋजुसूत्रनयका विषय है तिसमात्रही वस्तुका कहे है। वहुरि घडी मुहूर्त्तादिक कालकौभी व्यवहारमे वर्त्तमान कहिए है। सो तिस वर्तमानकालस्थायी पर्यायकूभी साधै तथा स्थूलऋजुसूत्रसज्ञा है। जैसे मनुष्यादि पर्याय है सो अपने आयुपरिमाण रहे है। ऐसे स्थूलअपेक्षा वर्त्तमानपर्यायका ग्रहणकीया सो स्थूलऋजुसूत्रनय है। ऐसे ऋजुसूत्रनय है

आगे शब्दनयकू कहिए है। लिंग सख्या साधन इत्यादिकका व्यभिचारकू दूरि करनेविषै तत्पर सो शब्दनय है। तहा जो स्त्रीलिंगविषै पुरुषलिंग कहना जैसे तारका शब्द तो स्त्रीलिंग है ताकूही स्वाति ऐसा पुरुषलिंग कहना। अर पुरुषलिंगविषै स्त्रीलिंग कहना जैसे अवगम ऐसा पुरुषलिंग है ताकू विद्या ऐसा स्त्रीलिंग कहना। वहुरि स्त्रीलिंगविषै नपुसकलिंग कहना जैसे वीणा ऐसा स्त्रीलिंग है ताकू अतोद्य ऐसा नपुसकलिंग कहना। वहुरी नपुसक लिंगविषै पुरुषलिंग कहना जैसे द्रव्य ऐसा नपुसकलिंगकू परशु ऐसा पुरुषलिंग कहना। वहुरि एकही वस्तुकू तीनू लिंग कहना ऐसे तो लिंगव्यभिचार है वा एकवचनकू द्विवचन वहुवचन कहना वहूवचनकू एक वचन कहना। ऐसे सख्याव्यभिचार है।

वहुरि मध्यपुरुषकी क्रिया कहने योग्यमे प्रथमपुरुष वा उत्तमपुरुषकी क्रिया कहना सो पुरुषव्यभिचार है। वहुरि कालव्यभिचार जैसे "विश्वदृश्वाऽस्य पुत्रो जनिता" याका अर्थ ऐसा जो विश्व समस्तलोक ताकू जो देखताभया सो याकै पुत्र होसी। इहा जो विश्वकू देखतभया यो ता अतीतकालवाचक शब्द है। अर होसी सो आगामिकालवाची तथा होणहार था सो हो गया। इहामै होणहार तो आगामिकालकू कहे है। अर होगया यो अतीत कालकू कहे है। ऐसे कालव्यभिचार भया। वहुरि आत्मनेपदीकू परस्मैपद भया ऐसेही उपसर्ग व्यभिचारकू व्यवहारनय अन्याय माने हैं। तथापि शब्दनयका एही विषय है। जो जैसा शब्द कहै तैसाही अर्थमे भेदरूप माने इस शब्दनयतै समस्तविरोध मीटे हैं।

आगे समभिरूढनयका लक्षण कहे हैं। तहा जैसे गोशब्द है सो गमनादि अनेक अर्थविषै प्रवर्त्तै है तोहू मुख्यताकरि गौ नाम वलध पशूका ग्रहण कीया। ताको चालता बैठता सोवतांभी समस्तलोक गौही कहे है। सो समभिरूढनय है।

आगे एवम्भूतनयकू कहै है। जिस कालमे जो क्रिया करता होई तिस कालहीमे ताकू तिस नामकरि कहे सो एवम्भूतनय है। जैसे देवनिके पतिकू परमैश्वर्यपणानै जिस कालमे प्राप्त होई तिस कालहीमें इद्र कहे। पूजन अभिषेकादि करतेकू इद्र नही कहे। तथा जिस कालमे शक्तिरूपक्रियाकू करे तिस कालमे शक्र कहे अन्यकालमे नाही कहे। ऐसे सप्तनय जानने। पूर्वपूर्वनयके आगे आगे अनुकूलविषय है। वा इनका उत्तरोत्तर अल्पविषय है।

वहुरि सक्षेपतै द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक ऐसे दोय नय है। तहा द्रव्य है मुख्य प्रयोजन जाका सो द्रव्यार्थिक कहिए है। अर पर्याय है प्रयोजन जाका सो पर्यायार्थिक है। तहा नैगम सग्रह व्यवहार इनिकू तो द्रव्यार्थिकनय कह्या है। ऋजुसूत्र शब्द समभिरूढ एवम्भूत ए पर्यायार्थिक नय है। वहुरि कोऊ पूछे जो निश्चय व्यवहार दोय नय प्रसिद्ध सुनिए है तिनका स्वरूप कैसे है। तहा कहिए है। जो पदार्थके निजस्वरूपकौ मुख्य करे सो निश्चय कहिए है। तिस निश्चयनयके द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक दोय भेद है जातै वस्तुका स्वरूप द्रव्यपर्यायरूपही है। ए दोऊ नय तत्वका स्वरूप है सत्यार्थ है अर व्यवहारनय है सो उपनय है। जहा अन्य पदार्थके भावको अन्यविषै आरोपण करे तथा परनिमित्तनै भए जे नैमित्तिक भाव ताकूही वस्तुका निजभाव कहे। तथा आधारआधेयभाव आदि प्रयोजनके वशतै आरोपण कीजिए सो इत्यादिक व्यवहारनय है। तथा एकदेशमे सर्वदेशका उपचार करे। तथा कारणविषै कार्यका उपचार करे इत्यादि सर्वही व्यवहार कहावे है।

वहुरि व्यवहारनयके तीन भेदभी कह्या हैं। सद्भूतव्यवहार। असद्भूत व्यवहार। उपचरितव्यवहार तिनमे जीवकौ रागादि भावकर्मका कर्त्ता कहिए सो सद्भूतव्यवहारनय है। जातै जीवके सत्तामे ए रागादिपर्याय है। वहुरि जीवको ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्म वा देहादिक नोकर्म तिनका कर्त्ता कहिए सो असद्भूतव्यवहारनय है।

वहुरि जीवकौ घटपटादि पुद्गलका कर्त्ता कहिए सो उपचरितव्यवहारनय है। जातै जहां मुख्यवस्तु जो नही होई अर निमित्तके वसते अन्यद्रव्य अन्यगुण अन्यपर्यायनिका अन्यद्रव्य गुणपर्यायनिविषै आरोपण करना सो उपचार है। जैसे किसीका वालककै क्रूरपणा शूरपणा देखीकरिके कह्या जो यो वालक सिंह है सो वालक सिंहवत् तीक्ष्णनख कपिलनयनादिरूप तो है नही परंतु क्रूरपणा शूरपणा देखी सिंह कह्या सो उपचार है याहीकू व्यवहारभी कहिए है। तोहू व्यवहारनय सर्वथा असत्य नही है जो व्यवहारकू सर्वथा असत्यार्थही कहे है तो एकेंद्रिया-दिक जीवकू व्यवहारनयकरि जीव कह्या है सो व्यवहार सर्वथा असत्यही होइ तो

जीवहिंसादिकका कहना असत्य होय जाय। जातै निश्चयनयकरि तो जीव नित्य है अविनाशी है याकी हिंसा नही होय तो समस्तव्यवहारका लोप हो जाय तातै व्यवहारनय सर्वथा असत्यार्थ नही है। वहुरि कह्या जो निश्चयनय सोभी शुद्धनिश्चय अशुद्धनिश्चय दोय भेद है। तहां जीवकू मतिज्ञानादिकका कर्त्ता कहिए सो अशुद्धनिश्चयनय है। तथा शुद्धज्ञानदर्शन जो केवलज्ञान केवलदर्शन तिनका कर्ता आत्माकू कहिए सो शुद्धनिश्चयनय है। जातै निश्चयव्यवहार दोऊनयनिको यथार्थपने जानि अगीकार करना योग्य योग्य है। सो इस गाथाविषै कह्या है।

जइ जिणमये पवज्जह। ता मा ववहारणिच्छय मुयह।
एवकेणविणा छिज्जई। तित्थ अण्णेण पुण तच्च ।।१।

अर्थ– भो ज्ञानीजनहो जो जिनमतमैं प्रवर्त्तीहो तो व्यवहारनिश्चयको मतीछाडो। जो निश्चयनका पक्षपाती होइ व्यवहारनयकू छाडोगे तो रत्नत्रयस्वरूप धर्मतीर्थकी प्रवृत्तिका अभाव होयगा अर जो व्यवहारनयका पक्षपाती होय निश्चयनयकू छाडोगे तो तत्वके शुद्धस्वरूपका अभाव होयगा तातै पहले तो निश्चयव्यवहार दोऊनिकू जानना पछै यथायोग्य अगीकार करना पक्षपाती नही होना। निश्चयका निश्चयरूप व्यवहारका व्यवहाररूप श्रद्धानकरना युक्त है। एकहीका श्रद्धान एकातमिथ्यात्व है। जिनशासनके वेत्ता हटग्राही नही होइ है। जातै जिनमतका कथन अनेक प्रकार है अविरोधरूप है।

वहुरि नयनिके वहुत भेद है। तथा नयनकी शाखा उपशाखा वहुत विस्ताररूप है। ए नयनिके भेद काहैतै होय है जातै द्रव्य अनतशक्तिको लीए है तातै एक एकशक्तिप्रति भेदरूप भये वहुत भेद होय है। तहा नय मुख्यगौणपणाकरि परस्पर सापेक्षारूप भये सते अधिगमका कारण है। वस्तु है सो अनेकधर्म स्वरूप है। एकस्वभाव अनेकस्वभाव भेदस्वभाव अभेदस्वभाव चेतनस्वभाव अचेतनस्वभाव मूर्त्तस्वभाव अमूर्त्तस्वभाव शुद्धस्वभाव अशुद्धस्वभाव अतरगत्व वहिरगत्व हेतुत्व अहेतुत्व अपेक्षत्व इत्यादि सविरूद्ध अविरूद्धरूप अनेकधर्म है। ऐसे अनेकधर्मरूप वस्तु है सो तिनके अधिगमका उपाय प्रमाणनय है। प्रमाणनयके जानेविना जे पुरुष वस्तुके स्वरूपको साधनेका अधिकारी वनै है ते अज्ञान है। तिनके अधिगम नाही होय है। अन्य मतका सिद्धात एकान्तपक्षकरि दूषित है। अर जिनमतके सिद्धात सर्वत्र स्याद्वदकरि व्यापक है। जातै वस्तुकै अनेकधर्मस्वरूपपना है। जहा कोऊ एकधर्मके कहनेकी इच्छाकरि एकधर्मकी तो विवक्षा करे अन्यधर्मके कहनेकी विवक्षा नाही करे तहा ऐसा तो नाही जो अन्यधर्मका अभावही है अन्यधर्मका अभाव तो नही करे है इहा तो प्रयोजनके आश्रय एकधर्मकी मुख्यताकरि कहै है सो अवशेष अन्यधर्मनिकी विवक्षा नही करे तो ताका लोप नाही करिसके है। तथा सापेक्ष सहित अपेक्षासहित होय सो सुनय है। अर प्रतिपक्षी धर्मका सर्वथा अभाव कहै है सो दुर्नय है नयाभास है।

ऐसे इस गाथामें सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी एकत्रताकू मोक्षमार्ग कह्या। वहुरि

सम्यग्दर्शनका लक्षण कह्या। बहुरि सम्यग्दर्शनकी उत्पत्ति दोय प्रकार कहि सम्यग्दर्शनके विषयभूत सप्ततत्व कहे। बहुरि तत्वनके स्थापनको व्यवहारका व्यभिचार मेटनेके नाम-स्थापनादि च्यार निक्षेप कहे। बहुरि प्रमाणनयनिकरि सम्यग्दर्शनादिकनिका तथा तिनके विषय जीवादिकतत्वनिका ज्ञान होय है। बहुरि निर्देश स्वामित्वादिक छह अनुयोगनिकरि तथा सत्सख्यादिक अष्ट अनुयोगनिकरि तत्वार्थनिका अधिगम कह्या बहुरि मत्यादि पच ज्ञानके भेद कहि फिरि मतिज्ञानके अवग्रहादि भेद कहि तीनसे छत्तीस भेद कहि श्रुतज्ञानका स्वरूपभेद कह्या। बहुरि अवधिज्ञानका स्वरूप दोय सूत्रनिमे कह्या। बहुरि मन पर्ययज्ञानका भेदस्वरूप कहि अवधि मन पर्ययका विशेष कह्या। आगे पाचू ज्ञानका विषय तीन सूत्रमे कहि अर एक जीवके एक काल च्यार ताई ज्ञान होय अैसा कहि बहुरि मति श्रुत अवधि विपर्ययभी होय है ऐसा कहि ताका कारण कह्या। बहुरि नैगमादि सप्त नयकी सज्ञा कही।

ज्ञानदर्शनयोस्तत्त्वं नयनां चैव लक्षणम् ॥
ज्ञानस्य च प्रमाणत्वमध्यायेऽस्मिन्निरूपितम् ॥१॥

अर्थ— ऐसे इस प्रथम अध्यायमे ज्ञानका अर दर्शनका तो स्वरूप वर्णन कीया अर नयनिका लक्षण कह्या अर ज्ञानके प्रमाणपणा कह्या ॥६९॥

॥ इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥

ऐसे तत्त्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा दशाध्यायरूप जो मोक्षशास्त्र तिसमे प्रथम अध्याय समाप्त भया।

दोहा— है जातैं तत्त्वार्थका, अधिगम सबसुखदाय। मोक्षशास्त्र मङ्लमय, नमो प्रथम अध्याय ॥१॥

प्रथम अध्याय समाप्तः

॥ ॐ नम सिद्धेभ्य ॥

अथ द्वितीयोऽध्याय: ॥

– दोहा –

राजै सहजस्वभावतै । तजि परभाव विभाव ॥
नमो आप्तके परमपद । प्रकटै शुद्धस्वभाव ॥१॥

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिकपारिणामिकौ च ॥ १ ॥

अर्थप्रकाशिका– औपशमिक । क्षायिक । मिश्र । औदयिक । पारिणामिक । ए जीवके पाच भाव है । ते जीवके निजतत्व है । जैसे मलिनजलके विषं कतकादिद्रव्यका मिलापतै कर्दम मल तो नीचे बैठीजाय है जल उज्वल होयजाय हैं तैसे कारणके वशतै प्रतिपक्षी कर्मकी शक्तिका उदय नही होना आत्माकी विशुद्धिता होना सो उपशम भाव है । वहुरि जैसे कतकद्रव्यके मवधतै जाका कर्दम तो नीचे बैठीगया अर जल ऊपरि निर्मल हो गया तिस जलकू अन्य पवित्र उज्वल भाजनमे धारणकीया कर्दम निकासि दूरि डारि दीया तिस जलमे अत्यत उज्वलता रहे है तैसे प्रतिपक्षी कर्मका अत्यत अभाव होतासता आत्माके भावनिमे अत्यत विशुद्धिता होना सो क्षायिकभाव है । वहुरि जैसे प्रक्षलनिके वसते माचणेको दूनिमे मदशक्तिका कुछ क्षीणपणा कुछ अक्षीणपणा प्रकट होय है तैसे क्षयोपशमरूप कारणके वशतै प्रतिपक्षी कर्मके सर्वधातिस्पर्द्धकनिका उदय नही होना सोही उदयाभाव क्षय अर उपरितन निषेकनिका सत्तामे उपशम रहना अर देशघातिस्पर्द्धकनिका उदय होना सो क्षायोपशमिकभाव है याहीकू मिश्र कहिए है । वहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भावरूप निमित्तके वशतै विपच्यमान कर्मका फल प्रकट होना अपना रस देना सो उदय है । उदयतै भाव होय सो औदयिकभाव है । वहुरि जहा कर्मकी

अपेक्षा नही द्रव्यका आत्मस्वरूपही आत्मपरिणामही जाकू निमित्त होय सो पारिणामिकभाव है। ऐसे ए जीवके पाच भाव कहे। अब इन पचभावनके भेद कहनेकू सूत्र कहे है।

द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् ॥२॥

अर्थप्रकाशिका— औपशमिकभाव दोय प्रकार है। क्षायिक नव प्रकार है। मिश्र अठारह प्रकार है। औदयिक इकवीस प्रकार है। पारिणामिक तीन प्रकार है। ऐसे पचभावनके त्रेपन भेद है। अब उपशमभावनिके दोय भेदनिकू कहे है

सम्यक्त्वचारित्रे ॥३॥

अर्थप्रकाशिका— उपशमसम्यक्त्व अर उपशमचारित्र ऐसे उपशमभाव दोय प्रकार है। तहां अनतानुबधी क्रोधमानमायालोभ ए चारित्रमोहकी च्यारा अर मिथ्यात्व सम्यक्मिथ्यात्व अर सम्यक्त्व ए तीन प्रकृति दर्शनमोहनीकी ऐसें सप्तप्रकृतिनका उपशम होनेतें उपशमसम्यक्त्व होय है अर समस्त चारित्रमोहनीयकर्मके उपशमतें उपशमचारित्र होय है।

कोऊ पूछे अनादिमिथ्यादृष्टीभव्यके कर्मके उदयकरि कलुषता होतसत सप्तप्रकृतिनका उपशम होना कैसे होय। ताका उत्तर कहे है। जो काललब्ध्यादिकनिकी अपेक्षातें सप्तप्रकृतिनका उपशम होय है। सो कौनके होय, सो कहे है। नरकादि च्यारोगतिहीमे अनादिवासादि मिथ्यादृष्टि सज्ञी पर्याप्त गर्भज मदकषायका धारक ज्ञानोपयोगी जागृत अवस्थामे करणलब्धिविषै उत्कृष्ट जो अनिवृत्तिकरण ताका अतसमयविषै प्रथमोपशमसम्यक्त्वग्रहण होय है। इहा ऐसा जानना जो मिथ्यादृष्टिगुणस्थानतैं छूटि उपशमसम्यक्त्व होय ताका नाम प्रथमोपशमसम्यक्त्व है। अर उपशमश्रेणी चढतें जो क्षयोपशमसम्यक्त्वतें जो उपशमसम्यक्त्व होय ताका नाम द्वितीयोपशमसम्यक्त्व है।

प्रथमोपशमसम्यक्त्व होनेके पहिले मिथ्यादृष्टिगुणस्थानविषै पच लब्धि होय है। १ क्षयोपशमलब्धि। २ विशुद्धिलब्धि। ३ देशनालब्धि। ४ प्रायोग्यतालब्धि। ५ करणलब्धि। ए पचलब्धि है। तिनमे च्यार तो लब्धि भव्यके वा अभव्यके दोऊनिका हो जाय है परतु करणलब्धि भव्यहीके वा सम्यक्त्व होनेका नियमतेही होय है। सातिशयमिथ्यादृष्टिके जब करणलब्धि होय है तदि सम्यक्त्वके उपजनेका नियम है। अर सातिशय अप्रमत्तगुणस्थानवाला करणनिके सन्मुख होय तदि चारित्रमोहनिका उपशमावनेका वा क्षपावनेका नियम है। तहा जिस कालमे ज्ञानावरणादिक अप्रशस्तप्रकृतिनिका समूहका अनुभाग जो रस देनेकी शक्ति समय समयप्रति अनतगुणाघटता अनुक्रमकरि उदय होय जो प्रथमसमयमे रस दीया, तिसमें दूजे समय अनतगुणा घटता, तातैं तीसरे समय अनतगुण घाटि, ऐसे समय समयप्रति अनतगुण घाटीरूप उदय होय तिस कालमे क्षयोपशमलब्धि होय है।

वहुरि जो क्षयोपशमलब्धिके प्रभावतै जीवके सातावेदनीयादि शुभबध करनेकू कारण धर्मानुरागरूप शुभपरिणामनिकी प्राप्ति सो विशुद्धिलब्धि है ॥ २ ॥ वहुरि जो षड्द्रव्य नवपदार्थनिके उपदेश करनेवाले आचार्यादिकनिके सगमका लाभ होना तथा तिनके उपदेशकी प्राप्ति होना तथा तिनका उपदेश्या पदार्थके धारनेकी प्राप्ती सो तीसरी देशनालब्धि है। अर जहा नरकादिकविषै उपदेश देनेवाला नाही तहा पूर्वभवविषै धाऱ्या हुवा तत्वार्थके सस्कारका बलतै सम्यग्दर्शनकी प्राप्ती जाननी ॥ ३ ॥

वहुरि तीनलब्धिसयुक्त जीव सो समय समय विशुद्धताकरि वर्द्धमान होत सते आनेतै प्रथमसम्यक्त्व उपजै हैं। अर तेरमा स्वर्गलोकनै आदिकरि उपरिम ग्रैवेयकनिपर्यंत देवनिके एक देवऋद्धिदर्शनविना तीन कारणनिकरि सम्यक्त्व उपजै है। अर नव अनुदिश अर पच अनुत्तर-वासी देव हैं ते पूर्वजन्मतेही सम्यक्त्व लीए उपजै है। वहा मिथ्यादृष्टीनिका उत्पादही नही है। वहुरि अष्टाविंशतिप्रकार मोहनीयका उपशम होनेतै उपशमचारित्र होय है। सो उपशमचारित्र ग्यारमे गुणस्थानमेही होय है। अब नवप्रकारके क्षायिकभाव कहनेकू सूत्र कहे हैं।

ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च ॥४॥

अर्थप्रकाशिका— केवलज्ञान । केवलदर्शन । क्षायिकदान । क्षायिकलाभ । क्षायिकभोग । क्षायिकोपभोग । क्षायिकवीर्य । वहुरी चकारके कहनेतै ज्ञायिकसम्यक्त्व । क्षायिकचारित्र ए नव क्षायिकभाव है।

तिनमे ज्ञानावरण तथा दर्शनावरण कर्मके अत्यत क्षय होनैतै ज्ञानदर्शन क्षायिक होय है। अर दानातराय नाम कर्मके अत्यतक्षयतै अनतप्राणीनिके उपकार करनेवाला दिव्य-ध्वनिकू आदि लेय क्षायिक अभयदान होय है। वहुरि लाभातरायका अत्यतक्षयतै केवलाहारक्रियाकरि रहित भगवान् केवलीकै शरीरमे वलाधानका कारण अर अन्यमनुष्यनितै असाधारण परमशुभ सूक्ष्म नोकर्मपुद्गल समय समयप्रति सबधकू प्राप्त होय हैं। तिन पुद्गल-नितै औदारिक शरीरकी किंचित् ऊन कोटीपूर्ववर्षनिकी स्थिति रहै है। सोही क्षयिक लाभ है। वहुरि भोगातरायके अत्यत अभावतै अतिशयवान् पचवर्णके सुगधपुष्पनिकी वर्षा तथा चरणार-विंदके नीचै दोयसे पचीस कमलनिकी रचना तथा सुगधधूप मद सुगधपवन इत्यादिक अनेकविशेषनिको लीए क्षयिक भोग हैं। वहुरि उपभोगातरायकर्मके अत्यतक्षयतै सिंहासन छत्रत्रय वीजना अशोकवृक्ष प्रभामडल अतिगभीर देवदुदुभी इत्यादि विभूति प्रकट होय ते क्षायिक उपभोग है।

वहुरि वीर्यांतरायकर्मके अत्यतक्षयतै अनतवीर्य प्रकट होय है। वहुरि मिथ्यात्व सम्यक्मिथ्यात्व सम्यक्त्व अर अनतानुवधी क्रोध मान माया लोभ इनि सातप्रकृतिनिका अत्यंत अभावते क्षायिकसम्यक्त्व प्रकट होय है। वहुरि समस्तचारित्रमोहके अभावतै क्षायिकचारित्र

प्रकट होय है। ऐसे अरहत नाम परमात्माके क्षायिकदानादि कहे ते शरीरनामकर्म वा तीर्थंकर प्रकृतिकी सापेक्षातै कहना जानना। इहा कोऊ कहे जो सिद्धभगवानकेभी अभयदानादिकका प्रसग आवे है। ताको समाधान। जो दानादिक लब्धिका प्रतिपक्षी जो अतरायकर्म ताके अभावतै शक्ति तो प्रकट हैही, परतु शरीरविना तिनकी प्रवृत्ति होय नही, तातै ऐसा जानना जो परम उत्कृष्ट अनतवीर्य अव्यावाध स्वरूपकरिही तिनकी तहा प्रवृत्ति है। जैसे केवलज्ञान रूपकरि तीनलोकके तीनकालके अनन द्रव्य गुण पर्यायनिके युगपत् ग्रहण करनेका आयुकर्मविना अन्य सप्तकर्मनिकी अत कोटाकोटीसागरमात्रस्थिति अवशेष राखै। अर घातियानिका लता दारुरूप अर अघातियानिका निव काजीररूप द्विस्थानगत अनुभाग इहा अवशेष रहे तदि प्रायोग्यतालब्धि है। अर घातियानिका अस्थिशैलरूप अघातियानिका विषहालाहलरूप अनुभाग नही होय तदि प्रायोग्यलब्धि है। बहुरि सक्लेशी सज्ञी पचेद्रिय पर्याप्तके सभवता ऐसा उत्कृष्ट स्थितिवध अर उत्कृष्टस्थिति अनुभाग प्रदेशका सत्व, अर विशुद्धक्षपकश्रेणीकै माहि सभवता ऐसा जघन्य स्थितिवध अर जघन्य स्थिति अनुभाग प्रदेशका सत्व, इनिको होतै जीव प्रथमो-पशमसम्यक्त्वकू नही ग्रहण करे है। जातै जघन्य स्थितिबधादिक करनेवाला जीव तो पहली सम्यग्दृष्टि है। प्रथमोपशमसम्यक्त्वकै सन्मुख भया मिथ्यादृष्टि जीव सो पहली सम्यग्दृष्टी हैं। प्रथमोपशमसम्यक्त्वकै सन्मुख भया मिथ्यादृष्टि जीव सो विशुद्धिताकी वृद्धीकरि वधता प्रायोग्यलब्धिका प्रथमसमयतै लगाय पूर्वस्थितीकै सख्यातवै भागमात्र अत कोटाकोटिसागरप्रमाण आयुविना सात कर्मनिकी स्थितिवध करै है। वहुरि चोतीस बधापसरण करे है। तिनका विशेषकथन लब्धिसार नाम ग्रथमे जानना।

उपजै पहली नही उपजे । तिनके जातिस्मरण तथा धर्मश्रवण तथा जिनबिंबदर्शन इन तीन कारणनिकरि सम्यक्त्व उपजै । बहुरि देवपर्याप्तनिकैं अतर्मुहूर्त्तकें उपरि उपजै तिनमे भवनवासी व्यतर ज्योतिषी अर सहास्रारपर्यंत द्वादश स्वर्गके कल्पवासीनिके जातिस्मरण धर्मश्रवण तथा 'जिनमहिमादर्शन अर अन्य देवनिकी ऋद्धिकें देख सामर्थ्यकरिही अनतवीर्यकी प्रवृत्ति होय हैं, तैसे यह भी जानना । दश प्रकारके क्षयोपशमभाव कहनेकू सूत्र कहै है ।

ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रित्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसँयमासँयमाश्च ॥५॥

अर्थप्रकाशिका— मति श्रुत अवधि मन-पर्यय ऐसे च्यार प्रकार ज्ञान । अर कुमति कुश्रुत विभग ऐसे तीन प्रकार अज्ञान । अर नेत्रइद्रियद्वारे पदार्थकी सत्तामात्रका ग्रहण सो चक्षुर्दर्शन । अर अन्य च्यार इद्रियद्वारै पदार्थका सामान्यसत्तामात्रका ग्रहण सो अचक्षुर्दर्शन है । अर अवधिद्वारे सामान्यग्रहण सो अवधिदर्शन ऐसे तीन दर्शन । बहुरि अतरायकर्मके क्षयोपशमतै दान लाभ भोग उपभोग वीर्य ऐसे पचलब्धि अर वेदकसम्यक्त्व अर सरागचारित्र अर सयमा-सयम याकू देशव्रतभी कहिए ऐसे ए अठारह भाव अपने प्रतिपक्षी कर्मके क्षयोपशमतै होय है । तातै ये अष्टादश प्रकार क्षायोपशमिक भाव है । अब इकवीस प्रकार औदयिकभाव कहनेकू सूत्र कहे है ।

गतिकषायलिङ्गमिथ्यादर्शनाज्ञानासँयतासिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्यैकैकैकैकषड्भेदाः ॥६॥

अर्थप्रकाशिका— गति च्यार भेदरूप, कषाय च्यार प्रकार, लिंग जो वेद सो तीन प्रकार मिथ्यादर्शन एक, अज्ञान एक, असँयम एक, असिद्धत्व एक, लेश्या छह ऐसे एकविंशाति-भेदरूप औदयिकभाव है । गति च्यार है ते नरक तिर्यंच मनुष्य देव गतिनाम नामकर्मके उदयतै होय है । बहुरि चारित्रमोहका भेद जो कषायवेदनीय ताका उदयतै आत्माके क्रोधादिरूप कलुषपणाका उपजना सो क्रोध मान माया लोभ ऐसे च्यार प्रकार कषाय है । जातै आत्मानै "कषन्ति" कहिए घातै विनाशै तातै इनिकू कषाय कहिए । इनिका अनतानुबधी । अप्रत्याख्या-नावरण । प्रत्याख्यानावरण । सज्वलन ऐसे भेद है ।

बहुरि वेद नामा जो मोहनीयका भेद ताके उदयतै लिंग होय है । सो लिंग दोय प्रकार । एक द्रव्यलिंग । दूजा भावलिंग । तिनमे द्रव्यलिंग जो योनी मेहनादिक ते तो नामकर्मका उदयकरि होय है । तिनका तो इहा भावनीके कथनमे अधिकारही नही है । इहां आत्मपरिणामका कथन है । तातै भावलिंग जो स्त्री पुरुष नपुसकनिके परस्पर रमणेकी अभिलाषारूप भाव वेद है । सो चारित्रमोहका भेद जो नोकषाय ताका भेद जे स्त्री पुरुष नपुंसक नामा वेदकर्म ताके उदयते स्त्रीलिंग पुरुषलिंग नपुंसकलिंग ऐसे तीन लिंग औदयिकभाव हैं ।

बहुरि दर्शनमोहके उदयते तत्त्वार्थनिका अश्रद्धानरूप परिणाम सो मिथ्यादर्शन नाम औदयिकभाव है। बहुरि ज्ञानावरण कर्मके उदयते जो नहीं जानपना सो अज्ञान नाम औदयिकभाव है। बहुरि चारित्रमोहके उदयतै प्राणनिका घात अर इन्द्रियनिके विषय इनिमे विरक्तता नही सो असंयतभाव औदयिक है। अनादिकर्मसंबंधके संतानकरि पराधीन जो आत्मा ताकै सामान्यकर्मका उदय होते असिद्धत्वभाव औदायिक है। बहुरि कषायनिका उदयकरि रंजित जो योगनिकी प्रवृत्ति सो लेश्या है। ते कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल ऐसे षट्प्रकार है। इहा आत्माके परिणामनिके अशुद्धताकी प्रकर्षताकी अपेक्षा करि कृष्णादिकशब्द-निका उपचार कीया है।

इहा प्रश्न—जो उपशान्तकषाय क्षीणकषाय सयोगीजिनके शुक्ललेश्या आगममे कही है। अर इन गुणस्थाननिमे कषायकरि अनुरंजित जोग नही है, तातै औदयिक कैसे कहो हो एवा लेश्याही कहो हो। ताका समाधान:—जो कषायनिका अभाव होतेभी जो लेश्या कही सो पूर्वभावप्रज्ञापननयकी अपेक्षाकरि कही। जो येही जोग पूर्वै कषायकरि अनुरंजित था, तदि लेश्याथी। अब इनि गुणस्थाननिमे कषायनिका तो अभाव भया, परन्तु जोग वेही पाइए है। जो जिन उपरि पूर्वै कषायनिका रंग था, तातै उपचारतै औदयिक लेश्या कही। जैसे कुसुमकरि रंग्या वस्त्र धोयडारे तोहू कुसुमल कहिए। तैसे कषायनिका रंग दूरि भएहू लेश्या कहिए है। अर अयोगीभगवानके योग नही तातै लेश्यारहित कह्या है।

इहां कोऊ प्रश्न करे—अन्यप्रकृतिनिके उदयते जो भाव होय है ते औदयिकभावनिमे क्यो नही कहे? जैसे अज्ञान औदयिक है, तैसे अदर्शनभी औदयिक है। तथा निद्रानिद्रादिक औदयिक है। वेदनीयका उदयते सुखादुःखहू औदयिक है। हास्यादिक षट् नोकषायभी औदयिक है। आयुका उदयतै भवधारणहू औदयिक है। गोत्रकर्मके उदयतै उच्च नीच गोत्रहू औदयिक है। नामकर्मके उदयते जात्यादिक औदयिक है। इनिका सूत्रमे ग्रहण नही कीया, तातै औदयिकका न्यूनलक्षण कह्या। ताका समाधान—जो इन भावनिही गर्भित जानना। शरीरादिक जे पुद्गलविपाकी तिनका तो इहा जीवके भाव कहनेमे अधिकार ही नही। अर जाति आदिक जीवविपाकी गतिमे गर्भित जानने।

बहुरि दर्शनावरणका उदयभी मिथ्यादर्शनमे गर्भित कीया है। जातै दर्शनसामान्यका आवरणतै अतत्त्वश्रद्धानका नामभी मिथ्यादर्शन है अन्यथा देखनेका नामभी मिथ्यादर्शन है। बहुरि हास्यादिक है ते वेदके सहचारी है तातै वेदमे गर्भित भये। बहुरि वेदनीय आयु गोत्रका उदयभी अघाति है, सो गतिमे गर्भित जानने। अब जो पारिणामिक भाव तीन प्रकार कह्या तिनका भेदस्वरूप कहनेकू सूत्र कहे है।

जीवभव्याभव्यत्वानि च ॥७॥

अर्थप्रकाशिका— जीवत्व । भव्यत्व । अभव्यत्व । ए तीन अन्य द्रव्यतै असाधारण जीवकै पारिणामिकभाव है । जातै ए तीनभाव कर्मके क्षय क्षयोपशमादिककी अपेक्षारहित है यातै परिणामिक है । इहा कोऊ कहै आयुकर्मका उदयतै जीवै तातै जीव कहिए है । अनादि पारिणामिक नाही है । ताकू कहे हैं । जो ऐसे नही है, जातै आयुकर्म तो पुद्गलद्रव्य है । जो पुद्गलद्रव्यका संबधतैही जो जीवत्व होय तो धर्मादिकनिकैहू जीवत्वभाव हो जाय । तथा आयुविना सिद्धनिकै अजीवपणाका प्रसग आवे । तातै जीवत्व नाम चैतन्यपणाका है सो जीवत्व पारिणामिक है ।

वहुरि सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूप परिणामकरि होनेयोग्य होय सो भव्य है । और रत्नत्रयरूप होनेकी योग्यता जाकै नही सो अभव्य है । कोऊ या कहै जो अनतकालमेभी नही सिद्ध होसी सो अभव्यतुल्य भया तातै अभव्यही है । अर जो भव्य है सो समस्तसिद्ध होसी तद्वि आगले कालमै जगत भव्यनिकरि शून्य होसी सो नही है । जैसे सुवर्णकी खानिमे जो कनक-पाषाण अनतकालमेभी सुवर्ण नही होय तो ताकै अधकपाषाणपणा तो नही होयगा, कनकपाषाणही रहेगा । वाह्य कारण मिलजाय तो सुवर्ण निराला होजाय अर मैल कीट न्यारा होजाय । अर अधकपाषाणमैभी सुवर्ण है परन्तु कोऊ ऐसी वाह्य सामग्रीही नही जो सुवर्ण न्यारा करे । ऐसे भव्यके अनतकालपर्यंत मोक्ष होनेके योग्य सामग्री नही मिलै तो अभव्य नही हो जायगा । ऐसे ए तीन भाव जीवके परिणामिक कहे है ।

इहा प्रश्न । जो अस्तित्व नित्यत्व प्रदेशत्व इत्यादिकभावभी पारिणामिक है तिनका भी इस सूत्रमें ग्रहण कीया चाहिए । ताका उत्तर । जो इनिका ग्रहण नही चाहिए । अथवा चशब्दकरी ग्रहण कीयाभी है । फेरि पूछै जो कीया है तो तीनकी सख्या विरोधी जाय है । तहा कहिए । जो ए असाधारण जीवके भाव पारिणामिक तीनही है । वहुरि अस्तित्व आदि है ते जीवकेभी है अजीवकेभी है तातै साधारण है । यातै चशब्दकरि न्यारे ग्रहण कीजिए ।

इहा पाच भाव कहे तहा औपशमिकभाव है सोभी क्षायिकभाव कीज्यों शुद्ध है । तथापि क्षायिकभाव है सो प्रतिपक्षी कर्मके अत्यतक्षयतै परमशुद्धस्वरूप अक्षयानत आत्मस्वभाव प्रकट है । वहुरि क्षयोपशमभावविषै प्रतिपक्षी कर्मका सर्वघातिस्पर्द्धकनिका तो उदयाभाव क्षय कहिए उदयरूप रस दीएविना क्षय होना सो तो क्षय है । अर आवली उपरि उदय होनेयोग्य जे उपरितन निषेक तिनका सत्तामै अवस्थिततिष्ठणा सो उपशम अर देशघातिस्पर्द्धकनिका उदय सो क्षयोपशम होतै जो भाव सो क्षायोपशमिकभाव है । वहुरि गति कषाय आदिक आत्माकै औदयिकभाव है ते कर्मनिके उदयके वशतै है ए नैमित्तिकभाव है आत्माका स्वभाव नाही है विभावरूप है । वहुरि पारिणामिकभाव है ते आत्मद्रव्यका स्वतं स्वभावपरिणाम है यामै अन्य कारण नाही । इहा पचभावस्वरूप जीवतत्त्वका निर्देश कीया सो कर्मबध उदयै अनुदय

निर्जरा आदिकी सापेक्षातै आत्माकी अनेक अवस्थारूप परणति है। ऐसे यातै सूत्रनिकरि जीवके पचभावनिका कथन कीया।

बहुरि इहा जीवके पाच भाव कहनेतै वेदातमती आनदमात्र ब्रह्मस्वरूप माने है। तथा साख्यमती पुरुषका स्वरूप चैतन्यमात्र माने है। आत्माकौ एकांतकरि शुद्धही माने है ऐसे अनेक प्रकार माने है। तिनका इस भावनके कथनकरि निराकरण भया। जातै सर्वथा शुद्धही होय तो ससार बध मोक्षका उपाय आदिकका कथन सर्व मिथ्या ठहरै। बहुरि स्याद्वादी जे पचभावरूप जो आत्माकू कहे है तातै नयके आश्रयतै समस्त कहना कथंचित् प्रकारकरि सिद्ध होय है। तातै जीवका स्वरूप पंचभावरूपही प्रमाणसिद्ध है।

बहुरि इहा कोक तर्क करे जो जीवके पचभावका कथन नाही बनै है जातै आत्मा तौ अमूर्तिक है। ताकू कहिए है। जो आत्मा एकातकरि अमूर्तिकही नही है कथंचित् अमूर्तिक है, कथचित् मूर्तिक है, कर्मबधनरूप पर्यायकी अपेक्षाकरि देखिए तौ अनादिकालतै कर्मपुद्गलनितै एक होय रह्या है, कोई कालमे कर्मतै भिन्न हुवा नही तातै ससारी आत्मा मूर्तिक है अर आत्माका शुद्धस्वरूपकी अपेक्षा देखिए तो यद्यपि क्षीरनीरज्यों कर्मपुद्गल अर आत्मा एक होरह्या है तोहू अपना चैतन्यस्वभावकरि भिन्न ही है। पुद्गलमय कदाचित् नही होय, तातै अमूर्तिक है। इहा कोऊ फेरि पूछै जो ससार अवस्थामे आत्मा कर्मपुद्गलनितै एक होरह्या है तो आत्माका अस्तित्व कैसे जान्या जाय। ताकू उत्तर कहै है। बंधपर्यायकी अपेक्षातै आत्माकै पुद्गलतै एकपणा होतैहू लक्षणके भेदतै आत्मा अर कर्मपुद्गल भिन्न जानेजाय है फेरि पूछे है। जो आत्मा पुद्गलनितै एक होरह्याहू जातै भिन्न जाननेमे आवै ऐसा लक्षणही कहो। ऐसा प्रश्न होतै सूत्र कहै है।

उपयोगो लक्षणम् ॥८॥

अर्थप्रकाशिका— उपयोग है सो जीवका लक्षण है। सो उपयोग कहा है सो कहे है। जातै चैतन्य है सो आत्माका स्वभाव है। तिस चैतन्य स्वभावकूही जो कहै ऐसा आत्माका परिणाम कहिए परिणमन परिणति ताकू उपयोग कहीए है जेसे कटक कुडल मुद्रिकादि विकार है सो सुवर्णस्वभावकू कहनेवाला सुवर्णहीका परिणमन है, तैसे इद्रिय अनिद्रियादिकनिकै द्वारे जो परिणति है सो सब उपयोगही है। तथा घटपटादिकनिकै आकार वा सुखदुःखादिरूप परिणमन सो समस्त उपयोगही है। जो उपयोग है सो जिवका निर्वाध लक्षण है। दूषणरहित है। जातै अव्याप्त अतिव्याप्त असभवी इन तीन दूषणनिसहित जो लक्षण होय सो सदोषलक्षण होय है। तिनमे जो लक्षण लक्ष्यका एकदेशमे व्यापै समस्तलक्ष्यमे नही व्यापै सो तो अव्याप्तदोष है। जैसे गौका लक्षण सावलेयपणा कह्या सो सावलेयपणा कोईक गौमे वर्तै है समस्त गोमात्रकू भिन्न दिखावनेवाला यह लक्षण नही, तातै लक्षण अव्याप्तदोषसहित भया।

इहा सावलेयपणा कहा है सो कहे है । कोऊ बलधके पीठ उपरि जीभसी लबी होय है, ताकू सावलेय कहिए है, ताकू नाद्याभी कहे है । वहुरि जो लक्षण लक्ष्यमेभी व्यापै अर अलक्ष्यमेभी व्यापै सो अतिव्याप्तदूषण है, जैसे गोका लक्षण सीगसहितपणा कहना सो श्रृगसहित तो भैसा मीढा अनेक होय है । वहुरि जो लक्षण लक्ष्यमे सभवैही नही सो असभवी दोष है । जैसे मनुष्यका लक्षण विषाणी कहिए श्रृगवाला कहना सो मनुष्यके श्रृग संभवेही नही, सो असंभवदोष है ।

जातै यो उपयोग लक्षण है सो समस्त जीवनिमे पाइए है कोऊ जीवमात्र उपयोगरहित नाही, तातै लक्षणके अव्याप्तदोष होय नाही हैं । बहुरि उपयोग है सो जीवविना अन्य द्रव्यनिमे नही पाइए है तातै अतिव्याप्त दोषसहित नाही । वहुरि उपयोग लक्षण समस्तजिवनिमे सभवै है । प्रत्यक्षादिप्रमाणकरि बाध्या नही जाय है तातै असभवदोष सहित नही है । बहुरि औरहू दृष्टात जानना । जैसे आत्माका लक्षण अमूर्तत्व कहना सो अमूर्तिकपणा तो आकाशादि अन्यद्रव्यमेहू पाइए है यातै लक्ष्यअलक्ष्य दोऊनिमे व्यापनेते अतिव्याप्तदोषसहित लक्षण भया । वहुरि आत्माका लक्षण रागादिमत्व कहिए तो रागादिमानपणा समस्तआत्मामे नही । सिद्ध भगवान् रागादि रहित है । यातै लक्ष्यका एकदेशमे व्यापनेतै लक्षण अव्याप्तदोषसहित भया । वहुरि लक्ष्यतै विरोधी लक्षण सो असभवी हैं । जैसे आत्माका जडत्व लक्षण कहना सो सभवे नही । तातै अतिव्याप्त अव्याप्त असभव इन तीन दोषरहित आत्माका उपयोगलक्षणही सत्य है। अब उपयोगका भेद कहनेकू सूत्र कहे है ।

स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥९॥

अर्थप्रकाशिका– सो उपयोग दोय प्रकार है । एक ज्ञानरूप । एक दर्शनरूप । तिनमे मति श्रुत अवधि मन.पर्यय केवल ए पाच ज्ञान अर कुमति कुश्रुत विभग ए तीन अज्ञान । अथवा मतिअज्ञान श्रुतअज्ञान विभग अज्ञान इनिके नाम ऐसेहू है । ऐसे अष्टप्रकार ज्ञानोपयोग कह्या । अर चक्षुर्दर्शन । अचक्षुर्दर्शन । अवधिदर्शन । केवलदर्शन । ए च्यार दर्शनोपयोगके भेद कहै ।

इहा पूछै, जो, दर्शनज्ञानविषै भेद कहा है । ताका उत्तर । साकार अनाकारके भेदतै भेद है । जहा पदार्थका सामान्य सत्तामात्र ग्रहण होय सो दर्शन है । जातै पदार्थके अर इद्रियनिके सबधके अनतरहि वस्तुका आकारादिविशेप ग्रहणमे नही आवे तातै दर्शन निराकार है। अर जो आकारादिविशेषकूं जाने सो साकारज्ञान है । अर छद्मस्थके तो दर्शनपूर्वकही ज्ञान होय है । अर केवली भगवानके दर्शन ज्ञान युगपत् होय है । वहुरि दर्शन ज्ञान इन दोऊ उपयोगनिमे ज्ञान प्रधान हैं । तातै सूत्रमे पहिले ज्ञान कह्या है ।

इहा कोऊ प्रश्न करे जो अवधिज्ञान जैसे अवधिदर्शनपूर्वक होय है, तैमे मन पर्यय

ज्ञानहू मन-पर्ययदर्शनपूर्वक होना चाहिए। ताका उत्तर। आगममें ऐसे कह्या है जो मन पर्यय-दर्शनावरणकर्म है नाही। आगममे दर्शनावरणकर्मचतुष्टयहीको उपदेश्या है। तातै आवरणका अभावतै ताका क्षयोपशमकाहू अभाव है, तातै मन.पर्ययदर्शनोपयोगकाहू अभाव जानना।

बहुरि इहा ऐसा उपदेश जानना। जो मन.पर्ययज्ञान है सो अपना विषयविर्षे अवधिज्ञानज्यो समुखकरि नही प्रवर्त्ते है। तो कैसे प्रवर्त्ते है सो कहे है। अपना मन है सो परके मनकी प्रणालिकाकरि अतीत अनागत अर्थनिकू चितवन करे है परतु देखे नही है। तैसे मन-पर्ययज्ञानीहू भूत भविष्यत् पर्यायनिकू जाणै है अर देखे नही है। अर वर्तमानपदार्थहू मनका विषयमे विशेषप्रकार करिकेही प्राप्त होय है। सामान्यपूर्वक प्रवृत्तिका अभाव है तातै मन-पर्ययदर्शनोपयोग नही है। ऐसे दोय सूत्रकरि कह्या जो उपयोगका लक्षण सो जीवके शरीरतै भेदकू साधै है। जैसे उष्ण जलमे द्रवपणा अर उष्णपणा जल अग्निका भेदकू साधै है। अथवा जैसे सोनेरूपेका एकपिंड होय तहा पीतथा स्वेतता तथा गुरुपणा हलकापणा है सो सुवर्णरूपाके भेदको साधै है। तैसे इहाहू जीवपुद्गलके लक्षण भेदकरि भेद जानना। अब समस्तजीवनिमे साधारण जो उपयोग ताकरि सहित जे जीव है ते दोय प्रकार है।

संसारिणो मुक्ताश्च ॥१०॥

अर्थप्रकाशिका-- जीव है ते ससारी बहुरि मुक्त ऐसे दोय प्रकार है। ससरण ससार। ऐसी ससारशब्दकी निरुक्ति है। "ससरण" कहिए परिभ्रमणरूप होय सो ससार है। याहीकू परिवर्त्तन कहिए है। सो परिवर्तन पचप्रकार है। तहा कर्मनोकर्मरूप पुद्गलनिका ग्रहणत्यजनरूप परिभ्रमण सो द्रव्यपरिवर्त्तन है। बहुरि क्षेत्र कहिए आकाशके सर्वप्रदेशनिविषै उत्पत्तिमरणरूप परिभ्रमण सो क्षेत्रपरिवर्त्तन है। बहुरि उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालके समयनि-विषै उपजनेविनसनेरूप परिभ्रमण सो कालपरिवर्त्तन है। बहुरि त्योही भव कहिए नारकादि सर्व भवनिका आयुके भेदनिविषै उत्पत्ति मरण परिभ्रमणरूप सो भवपरिवर्तन है। बहुरि भाव कहिए अपने कपाययोगनिके स्थानरूप जे भेद जघन्य मध्यम उत्कृष्ट कर्मनिकी स्थितिबधरूप तिनका पलटनेरूप परिभ्रमण सो भावपरिवर्त्तन है। मिथ्यात्वकरि सहित जीव भाव ससारविषै भ्रमता सर्व प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशबधके जे स्थान है ते सर्वही पाए। ए पच परिवर्त्तन है। इनिका कथन विस्तारसहित अन्य शास्त्रनिविषै कह्याही है। विस्तारतै जाननेका इच्छूक तिन ग्रथनितै जानहू। अर सक्षेपतै नवम अध्यायमे लिखेगे तहातै जानना। ऐसे पंचप्रकार ससारते जीव रहित भए ते मुक्तजीव कहिए मुक्तजीव ते ससारपूर्वक होय है, तातै ससारीनिका प्रथम ग्रहण जानना। अब ससारीजीवनिके भेद कहनेकू सूत्र कहे है।

समनस्काऽमनस्का: ॥११॥

अर्थप्रकाशिका-- ससारी जीव है ते मनसहित वा मनरहित दोय प्रकार है। जे जीव

मनसहित है ते सज्ञी है । मनरहित होय ते असज्ञी है । जो हितमे प्रवर्त्तनेकी अहितमे प्रवृत्तिका निषेधकी शिक्षा ग्रहण करे सो सज्ञी हैं । बहुरि जो हस्त पाद चामठी लाठी इत्यादिक उठावनेरूप क्रियाकू होतेही ऐसे ग्रहण करे जो ये हमारे देवेगा मारेगा इत्यादि क्रियातै आपके सुख दुखादिकक् जाने । वा जाकू उपदेश लागे बुलाया आजाय, घेऱ्या चल्याजाय सो सज्ञी है । अर जाके शिक्षा क्रिया उपदेश आलापका ग्रहण नही होय सो असज्ञी है ।

जो मन है सो द्रव्यभावके भेदकरि दोय प्रकार है । तहा जो हृदयस्थानविषै अष्टपाखडीका फुले कमलके आकार सूक्ष्म पुद्‌गलका प्रचयरूप तिष्ठे है सो तो द्रव्यमन है । बहुरि द्रव्यमनके पुद्‌गलनिके अभ्यतर मन अनिंद्रियावरणकर्मका क्षयोपशमसहित अगुलके असख्यातवे भाग जे आत्माके प्रदेश ते भावमन है । बहुरि समनस्क शब्दके पूज्यपणाते सूत्रमे पहिले ग्रहण किया है । जाते मनसहित जीवके गुणदोषनिका विचारसहितपणा है, मनरहितके नही, तातै समनस्कक् सूत्रमे प्रथम ग्रहण कीया । आगे ससारीजीवका अन्यहू भेद कहनेकू सूत्र कहे है ।

ससारिणस्त्रसस्थावराः ॥१२॥

अर्थप्रकाशिका— ससारी जीव है ते त्रस और स्थावर ऐसे दोय हैं । जीव विपाकी त्रसनाम कर्मके उदयते त्रस होय है । जीव विपाकी स्थावरनामकर्मके उदयते स्थावर होय है । कोऊ कहे जो चलन हलन करे सो त्रस है अर अतिशयकरि तिष्ठते स्थावर है । ऐसे निरुक्ति करिए है । ताकू उत्तर कहे है । जो चलन हलन अपेक्षाही त्रस होय तो गर्भमे तिष्ठते अडेनिमे तिष्ठते वा मूर्छित सुप्त भयभीत ए हलनचलनरहित हैं । इनके त्रसपणाके अभावका प्रसग आवेगा । तथा पवन अग्नि जल इनिके एकदेशतै अन्यदेशातरमे प्राप्ति होना देखिए है तिनके त्रसपणाका प्रसग आवेगा । तातै त्रसस्थावरपणा चलने तिष्ठनेकी अपेक्षा नही है । त्रस अर स्थावर नामा नामकर्मकी अपेक्षातै है । इस सूत्रमेहू त्रसशब्दके पूज्यपणातै प्रथम ग्रहण कीया है । अब स्थावरनिका बहुत भेद नही है यातै आनुपूर्वीकू उल्लघनकरि स्थावरके भेद कहनेकू सूत्र कहे है । जाते लौकिकमेहू सूचीकडाहन्याय प्रसिद्ध है । जो कडाहभी घडना होय अर सूईभी घडनी होय तो पहली सूई घडदे कडाह पछै घडै । अल्प भेद स्थावरनिकू कहे है ।

पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥१३॥

अर्थप्रकाशिका— पृथ्वी अप् तेज वायु वनस्पति ये स्थावर नामकर्मके उदयके वसते पच स्थावर हैं । ए पच स्थावर तिनके इद्रियप्राण । कायबलप्राण । उछ्वास प्राण । आयुप्राण। ऐसे ए च्यार प्राण होय है । इहा ऐसा विशेष जानना । जो यद्यपि आत्मा केवलज्ञानस्वभाव है । तथापि ज्ञानावरणकर्मके वेढनेते ज्ञानका अपकर्ष न होनेतै सूक्ष्मनिगोदी या लब्धपर्याप्तजीवके अक्षरके अनतवे भाग ज्ञान रही जाय है । उस ज्ञानके आवरण नही है । जो उस पर्यायज्ञानकेहू आवरण होय तो आत्मा जडरूप होजाय तदि आत्माका अभाव होजाय । सो द्रव्यका अभाव

होय नही, तातैं पर्यायज्ञान निरावरण है याका आवरण होय तो फिर पर्यायका पलटनाही नही होय, तदि समस्त जीव निगोदतेँ नही निकसीसके ।

अव त्रस कोन है यातै सूत्र कहे है ।

द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥१४॥

अर्थप्रकाशिका– द्वीद्रियकू आदि लेय त्रीद्रिय चतुरिंद्रिय पचेद्रिय ऐसे त्रस जीव है। तहा द्वीद्रियके छह प्राण है। तिनमे स्पर्शन रसन दोय इद्रिय अर कायवल वचनवल आयु स्वासोश्वास ऐसे छह प्राण है। तीद्रियके घ्राणइद्रियकरि अधिक सात प्राण है। वहुरि चोद्रियके चक्षुइद्रियकरि अधिक आठ प्राण है। वहुरि पचेद्रियतिर्यचनिविषै असज्ञीके कर्ण इद्रियकरि अधिक नवप्राण है। वहुरि सैनी पचेद्रियके मनकरि अधिक दशप्राण है। अव इद्रियनिकी गणनाका निश्चयके अर्थि सूत्र कहे है ।

पंचेन्द्रियाणि ॥१५॥

अर्थप्रकाशिका– इद्रियनिकी सख्या पाचही जाननी । केई अन्यमती हीनाधिक सख्या कहे सो अयुक्त है। वहुरि ए इद्रिय है ते अपने अपने विषयके ज्ञान उपजावनेविषै कोऊ किसीके आधीन नाही जुदे जुदे एक एक इद्रिय परकी अपेक्षारहित है। अहमिद्रनकी ज्यो आप आपके समस्तही स्वाधीन है ईश्वरताको धरे है। वहुरि अपने अपने विषयकू अगिकार करे है। अव इद्रियनका भेद कहनेकू सूत्र कहे है।

द्विविधानि ॥१६॥

अर्थप्रकाशिका– जे इद्रिय कहे ते द्रव्येद्रिय भावेद्रियकरि दोय प्रकार है अव द्रव्येद्रियका स्वरूपका ज्ञानके अर्थि सूत्र कहे है।

निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ॥१७॥

अर्थप्रकाशिका– निर्वृति अर उपकरण ऐसे द्रव्येद्रिय दोय प्रकार है। कर्मकरि जो रची गा [illegible] सो निर्वृती कहिए। सो निर्वृतिहू दोय प्रकार है। एक अभ्यतरनिर्वृति। एक वाह्यनिर्वृति। तिनमे उत्सेधागुलके असख्यातवे भागप्रमाण जे विशुद्ध आत्माके प्रदेश तिन [illegible] जो नेत्रदिक इद्रियनिका आकार वा प्रमाण वा स्थानरूप जो रचना सो अभ्यतर-निर्वृति है। वहुरि तिन आत्मप्रदेशनिके उपरि इद्रियनामका धारनेवाले प्रतिनियतस्थान लिए [illegible] इद्रियव्यवस्थाकू प्राप्त भया जो पुद्गलसमूह सो वाह्यनिर्वृत्ति है।

[illegible] - जैसे नेत्रइद्रियमे नेत्रइद्रियावरणकर्म अर वीर्यातरायकर्मका क्षयोपशमसहित [illegible] होय तिष्ठे है सो अभ्यतरनिर्वृत्ति है। अर तिस अभ्यतर

द्रियाकार परिणतिरूप आत्माप्रदेशविषैं नामकर्मका उदयकरि नेत्रइद्रियाकार पुद्गलसमूह तिष्ठे सो वाह्यनिर्वृत्ति है। ऐसेही कर्णइद्रियावरण अर वीर्यातरायका क्षयोपशमसहित आत्माके प्रदेश जवकी नालीके आकार होय तिष्ठे सो आत्मप्रदेशनिकी रचना अभ्यतरनिर्वृत्ति है। अर ताके उपरि नामकर्मके उदयते कर्णइद्रियका जवकी नालीके आकार होय पुद्गलसमूह तिष्ठे सो वाह्यनिर्वृत्ति है। वहुरि जो निर्वृत्तिका उपकार करनेवाला पुद्गलसमूह सो उपकरण है। ताकेहू वाह्य अभ्यतरकरि दोय भेद है। ऐसेही समस्त इद्रिनियके द्रव्येद्रियपणा जानना। अव भावइद्रियनिका स्वरूप कहनेकू सूत्र कहे है।

लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ॥१८॥

अर्थप्रकाशिका— लब्धि और उपयोग ऐसे भावेद्रियहू दोय प्रकार है। जाकू होतै आत्मा द्रव्येद्रियकी रचनाप्रति प्रवर्त्तनकरे ऐसा ज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशमविशेषताकू लब्धि कहिए। वहुरि कर्मका क्षयोपशमरूप लब्धिके निमित्तते आत्माका विषयप्रति परिणमन होना सो उपयोग हैं। जैसे किसी जीवके सुननेकी शक्ति है, परतु उपयोग जो चैतन्यका परिणमन सो अन्य हो जायगा, अन्यविषयनिमे लगि रह्या है तो सुने नाही। वहुरि कोऊ जान्या चाहे अर क्षयोपशमशक्ति नाही तो जानि नही सके, तातै लब्धि अर उपयोग दोऊ मिले विषयका ज्ञानकी सिद्धि होय हैं। आवरणकर्मका क्षयोपशमते जो आत्माके विशुद्धता सो शक्ति है। तिस क्षयोपशमशक्तिहीकू लब्धि कहिए है। अर आत्मा ज्ञेयपदार्थके सन्मुख होय तासू जुडै सो उपयोग है। ऐसे भावेद्रियका स्वरूप कह्या। अव कही जे इद्रिय तिनकी सज्ञा अर आनुपूर्वीके जनावनेकू सूत्र कहे है।

स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि ॥१९॥

अर्थप्रकाशिका— स्पर्शन। रसन। घ्राण। चक्षु। श्रोत्र। ए पाच इद्रियनके नाम है। वीर्यातराय मतिज्ञानावरणका क्षयोपशम अर अगोपागनामा नामककार्म उदयका लाभ वा आलवनतै आत्मा जाकरि विषयको स्पर्शै ताकूं स्पर्शन कहिए। ऐसेही जाकरि अपने विषयकों आस्वादे ताकू रसन कहिए। जाकरि गधग्रहण करे ताकू घ्राण कहिए। जाकरि अवलोकन करे ताकू चक्षु कहिए। जाकरि श्रवण करे ताकू श्रोत्र कहिए। ऐसे ए पाच इद्रिय है। इहां समस्तशरीरमे व्यापीपणातै स्पर्शनका आदिमे ग्रहण कीया। अथवा समस्त ससारनिके स्पर्शन-इद्रिय पाइए है तातै स्पर्शनका आदिमे ग्रहण कीया। तिन पाछै रसन घ्राण चक्षु इनका ग्रहण क्रमते कीया सो ए इद्रिय जीवनिके क्रमतेही होय है। जातै द्वेद्रियजीवके स्पर्शन रसनही होय अन्य दोय नही होय। त्रीद्रियके स्पर्शन रसन घ्राण एही तीन होय अन्य येरफेर नही होय। चौद्रियके स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु इन च्यारहीका ग्रहण होय अन्य नही होय। श्रोत्रइद्रिय पचेद्रियहीके होय अन्यके नही होय। इनि इद्रियनिमे श्रोत्रइद्रियके वहु उपकारीपणो है। जातै

श्रोत्रइंद्रियका बलतै उपदेश श्रवण करिकेही हितकी प्राप्ति अहितका त्यागके अर्थि आदर करिए है। बहुरि आत्मा पहली श्रोत्रइंद्रियद्वारे उपदेश श्रवण करिकेही वक्तापणाप्रति व्यापार करे है अब इन इंद्रियनका विषय दिखावनेकू सूत्र कहै है।

स्पर्शरसगन्धवर्णशद्बास्तदर्थाः ॥२०॥

अर्थप्रकाशिका– स्पर्शनइंद्रियका विषय स्पर्श है। रसनाइंद्रियका विषय रस है। घ्राणइंद्रियका विषय गध है। चक्षुइंद्रियका विषय वर्ण है। श्रोत्रइंद्रियका विषय शद्ब है। ऐसे पांच इंद्रियनिके पच विषय है। अपने अपने विषयकूही ग्रहण करे है अन्य इंद्रियका विषयकू अन्य इंद्रिय नही ग्रहण करे है। तहा जाकू स्पर्शिए अथवा जो स्पर्शन सो स्पर्श है। बहुरि जाको अस्वादीए अथवा जो स्वादमात्र सो रस है। बहुरि जाको सुघिए अथवा सूघना सो गध है। बहुरि जाकू देखिए सो वर्ण है। सुणीए अथवा शब्दरूप होय सो शब्द है। ए इंद्रियनके विषय जानने। अब इहा कोऊ कहे जो मन है ताका अवस्थान नाही तातै यो इंद्रिय नही है। ऐसे मनके इंद्रियपणाका निषेध कीया। परतु यो मन उपयोगकों उपकारक है वा नही है। तदि कहें जो, मन तो उपकारीही है। जातै मनविना इंद्रियनिका विषयनिमे अपना प्रयोजनरूप प्रवृत्तिका अभाव है। फिरी कोऊ कहे जो मनके इंद्रियनिका सहकारीपणामात्रही प्रयोजन है कि अन्यभी है। ऐसे पूछतैसते सूत्र कहे है।

श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥२१॥

अर्थप्रकाशिका– अनिंद्रिय जो मन ताका विषय श्रुत कहिए श्रुतज्ञानगोचर पदार्थ है सो विषय है। श्रुतज्ञानका विषय जो पदार्थ सो श्रुत है, सो श्रुत मनका विषय है। प्राप्त हुवा है श्रुतज्ञानावरणका क्षयोपशम जाके ऐसा आत्माके श्रवणकीए अर्थका विचारनेमें मनका अवलंबन-करि प्रवृत्ति होय है जातै कर्णइंद्रियकरि श्रवणमात्र कीया सो तो मतिज्ञान है। तिस पूर्वक पदार्थका विचार सो श्रुतज्ञान है। अब आदकेविषै ग्रहणकीया जो स्पर्शनइंद्रिय ताका स्वामी-पणाका निश्चयके अर्थि सूत्र कहे है।

वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥२२॥

अर्थप्रकाशिका– पृथ्वीकायकू आदि लेय वनस्पतिपर्यंतनिके एक स्पर्शनइंद्रियही है। अब अन्य इंद्रियनिका स्वामीपणा दिखावनेकू सूत्र कहे है।

कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥२३॥

अर्थप्रकाशिका– कृम्यादिकनिमे एकएक इंद्रिय वधती जानना। लट सख जोक इत्यादियनिके स्पर्शन रसन घ्राण ए तीन इंद्रिय है। बहुरि भ्रमर मक्षिका टीडी डास मछर

पतग इत्यादिकनिके स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु ए च्यार इद्रिय है। बहुरि मनुष्य मत्स्य गौ सर्प हस इत्यादिकनिके पाचूही इद्रिय हैं। ससारीजीव इद्रियद्वारे तो वर्णन कीया। अव मनद्वारे वर्णन करनेकू सूत्र कहे है।

संज्ञिनः समनस्काः ॥२४॥

अर्थप्रकाशिका— जे मनसहित जीव है ते सज्ञी है जाके ऐसा विचार होय जो यो हित है, यो अहित है इस हितकी प्राप्तिमे अर अहितका निषेधमे यो गुण है अर यो दोष है। वा शिक्षा क्रिया आलापका ग्रहण करनेरूप सज्ञा जाके होय सो सज्ञी है। ऐसे मनसहित सज्ञी हैही मन-रहितही है। अर पचेद्रियनिमे देव नारकी मनुष्य तो सज्ञीही है इनमे असंज्ञी नही होय है। अर पचेद्रिय तिर्यचनिमे जे मनसहित हैं ते सज्ञी है। अर जे मनरहित है ते असज्ञी है। यद्यपि सज्ञीनिमेहू गर्भअवस्थामे अडामे शयन कर ताकै मूर्छितकैं शिक्षा क्रिया आलापादिग्राहीपणा नही है तथापि मनका सद्भावते सज्ञीही होय है। अव कहे हैं, जाका पूर्वशरीका तो अभाव हो गया अर नवीन शरीरका ग्रहणके अर्थि सन्मुख जो मनरहित आत्मा ताकै कर्मका आस्रव काहेते होय। ऐसे पूछे सूत्र कहे है।

विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥२५॥

अर्थ— विग्रह जो नवीनदेह ताकै अर्थि जो गमन ताकै विषै कार्मणयोग है। विग्रह नाम देहका है ताके अर्थि जो परभवकू गमन करे ताकौ विग्रहगति कहिए। अथवा 'विरुद्धो ग्रह. विग्रह" । विग्रह नाम रोकनेकाहू है। याही ते पुद्गलका ग्रहण होतेहू नोकर्मपुद्गलनिके ग्रहणका निरोध है।

भावार्थ— जीव मरणकरि नवीन शरीर ग्रहण करनेकू गमन करे है तदि एक अथवा दोय तथा तीन समय काल लागे है। तिस कालमे कर्मपुद्गलनिका समयप्रबद्ध तो ग्रहण होय हैं। अर नोकर्मपुद्गल नही है ग्रहण होय हैं। बहुरि कार्मणशरीरको कर्म कहिए। तिस कार्मण-शरीरद्वारे आत्माके प्रदेशनिका सकप होना सो कार्मणयोग है। सो समस्तकर्म ग्रहण करनेका बीज है। अव कहे है जो जीव पुद्गल गमन करे सो आकाशके प्रदेशनिकी पक्तिका क्रमरूप गमन करे है कि और तरह करे है यातै सूत्र कहे है।

अनुश्रेणिगतिः ॥२६॥

अर्थप्रकाशिका— जीवनिका तथा पुद्गलनिका गमन आकाशके प्रदेशनिकी श्रेणीरूपही होय हैं। विदिशारूप गमन नही होय हैं। जीवनिके मरण होते जो नवीन शरीरके अर्थि गमन होय सो आकाशके प्रदेशनिकी श्रेणी पक्तिरूप उर्ध्व अध. वा तिर्यक् गमन होय है। आकाशके

प्रदेशनिकी सूधी विषैही गमन होय है। विदिशानिमे गमन नाही है। अर पुद्गलकी शुद्ध परमाणु अतिशीघ्र गमनकरि एक समयमे चोदहराजू गमन करे सो सूधाही गमन करे हैं।

इहा कोऊ पूछै, जो जीवका तो अधिकार है, इहा पुद्गलनिका ग्रहण कैसे कीया। ताका उत्तर। जो, इहा गमनका ग्रहण है सो गमन जीवकेभी है पुद्गलकेभी होय है, तातै दोऊनिका ग्रहण कीया है। इहा ऐसा विशेष जानना। जो मरण होतै नवीनशरीरकै अर्थि गमन करे, तिस कालमे आकाशके प्रदेशनिकी सूधी पक्ती रूपही गमन करनेका नियम हैं अन्य अवसरमे नही। अर पुद्गलनिकेहू जो लोकका अतपर्यंत गमन करनेका अवसरविषैही अनुश्रेणीगतिका नियम है अन्य अवसरमे श्रेणीरूप गमन करनेका नियम नही है। अब मुक्तजीवनिकी गति विशेष कहनेकू सूत्र कहे है।

अविग्रहा जीवस्य ॥२७॥

अर्थप्रकाशिका— मुक्तजीवनिकी गति व वक्रतारहित होय है। मुक्तजीव श्रेणीबद्ध गतकरि एक समयमे सूधा सातराजू ऊंच गमनकरि सिद्धक्षेत्रमै जाय तिष्ठै है इहा कोऊ कहै, सूत्रमे मुक्तजीवका नाम विनाकह्या मुक्तजीवका ग्रहण कैसे कीया। ताका उत्तर। अगिले सूत्रमे ससारीका ग्रहण हैं यातै इस सूत्रमे विनाकह्या मुक्तका ग्रहण करना। ससारीजीवका परलोकके अर्थि गमन मुक्तजीववत् सरलगति है कि मोडाकरि गमन है यातै सूत्र कहे है।

एकसमयाविग्रहा ॥२९॥

अर्थप्रकाशिका— नाही है मोडा जामे ऐसी अविग्रहगति है सो एकसमयका कालमात्र है। याहीकू ऋजुगति कहिए है। वहुरि जो पुद्गलपरमाणूहू सूधा गमन करे तो अधोलोकते ऊर्ध्वलोकपर्यंत एकसमयमे शीघ्र गमनकरि चोदह राजू पहूचै है। अब विग्रहगतिमे आहारक अनाहारकका नियमके अर्थि सूत्र कहे है।

एकं द्वौ त्रीन्वाऽनाहारकः ॥३०॥

अर्थप्रकाशिका— विग्रहगतिविषै एक समय वा दोय तथा तीन समय अनाहारक है। नोकर्मवर्गणाका आहार नाही है। तहा औदारिक वैक्रियिक आहारक ए तीन शरीर तथा छह पर्याप्तके योग्य पुद्गलवर्गणाका ग्रहण सो आहार है। अर शरीररके योग्य पुद्गलवर्गणाका नही ग्रहण करना सो अनाहारक है वहुरि कर्मवर्गणाका ग्रहण तो जेते कार्मणशरीर रहे तैसेहू वाही करे है। जो एक मोडा लेय उपजे सो एक समय अनाहारक है। वहुरि दोय मोडाकरि उपजै सो दोय समय अनाहारक है। अर जो तीन मोडा लेय उपजै सो तीन समय अनाहारक है। ऐसे गमनविशेषका निरूपण छह सूत्रनिकरि कीया। अव जो नवीन शरीर ग्रहण करे तिस शरीरकी रचनाका प्रकारके अर्थि सूत्र कहे है।

सन्मूर्छनगर्भोपपादा जन्म ॥३१॥

अर्थप्रकाशिका— जो नवीन शरीर धारे है ताका जन्म तीन प्रकार है। एक सन्मूर्छन जन्म। एक गर्भज जन्म। एक उत्पाद जन्म। तहा जो आपके योग्य द्रव्य क्षेत्र काल भावके विशेषतै तीन लोकमे उर्ध्व अध तिर्यक् सर्वतरफतैं पुद्गलनिका ग्रहणकरि देहके अवयवनिकी रचना होना देहका वनना सो सन्मूर्च्छन जन्म है। वहुरि जो स्त्रीके उदरविषै माताका रुधिर पिताका वीर्यका गरण कहिये मिश्रित होना मिलना सो गर्भ है। अथवा माताकरि ग्रहणकीया हुवा आहारका गरण कहिये अगीकार करना सो गर्भ है। वहुरि जाविषै प्राप्त होयकरि उपजे ऐसा देव नारकीनिके उपजनेका स्थान सो उपपाद है। ऐसे ससारीजीवनिके जन्मके तीन प्रकार कह्या। अव तीन प्रकार जन्मके उपजनेके योनि तिनका विकल्प कहनेकू सूत्र कहे है।

सचित्तशीलसंवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥३२॥

अर्थप्रकाशिका— सचित्त। शीत। सवृत। वहुरि इतर कहिए इनतै उलटा जे। अचित्त। उष्ण। विवृत। वहुरि तीनूहीका मिश्र ऐसे योनिके नव भेद है। तहा जो जीवके उपजनेका योनिरूप पुद्गलसमूह चेतनासहित होय सो सचित्तयोनि है।

अर जीवके उपजनेके अचेतनपुद्गल होय सो अचित्तयोनि है। वहुरि जीवकी पर्याय

उपजनेका सचित्त अचित्त दोऊरूप स्थान होय सो मिश्रयोनि है। वहुरि योनिके शीतस्पर्शरूप पुद्गल होय सो शीतयोनि है। वहुरि उष्ण पुद्गल उपजनेका होयसो उष्णयोनि है। वहुरि शीत उष्ण दोऊ मिले पुद्गलरूप योनि होय सो मिश्रयोनि है। वहुरि योनिके पुद्गल प्रकट नही दीपै ढके होय सो सवृतयोनि है। अर जिस योनिस्थानके पुद्गल उघडे हुए प्रकट होय सो विवृतयोनि है। वहुरि कुछ ढके कुछ उघडे होय सो मिश्रयोनि है।

इहा कोऊ पूछे योनि अर जन्मविषै भेद कहा है सो कहे है। आधारआधेयका भेदतै भेद है। इहा योनि तो आधार है अर जन्म आधेय है। जातै सचित्त आदि योनिके आधार आत्मा सन्मूर्छनादि जन्मकरि शरीर आहार इद्रियादिकके योग्य पुद्गल ग्रहण करे है। तहा देव नारकीनिके तो अचित्तयोनिही है। वहुरि गर्भजन्मविषै सचित्त अचित्त दोऊरूप मिश्रयोनि है। वहुरि सन्मूर्छनविषै सचित्त अचित्त अर मिश्र ए तीन प्रकार योनि होय है। वहुरि देव अर नारकीनिके सीत अर उष्ण ए दोय योनि है। वहुरि गर्भजन्मके भेदविषै अर सन्मूर्छनजन्मके भेदविषै सीत उष्ण मिश्र ए तीन योनि है। इहा और विशेप कहै है। जो तेजस्कायिक जीवनिविषै उष्णही योनि है। वहुरि देवनारकी एकेंद्रिय संवृतयोनिही है। विकलेंद्रिय विवृतयोनिही है। अर गर्भजनिके सवृत विवृत दोऊरूप मिश्रयोनि है। वहुरि सन्मूर्छन पचेद्रिय है ते विकलेद्रियवत् विवृत्तयोनिमे उपजै है। इहा ऐसा जानना। जो जीवनिके उपजनेका आधारभूत पुद्गलस्कधका नाम योनि है ताके सामान्यपने नव भेद है। विस्तारकरि तिसका चोरासीलक्ष भेद है। सो इन नवभेदनिहीके विशेप है ते प्रत्यक्षज्ञानीनिके ज्ञानरूप दिव्यचक्षुकरि दीखे है। अर अन्य छद्मस्थके आगमकरि जाननेमे आवे है। अव इनी नवयोनिके भेदनिमे तीन प्रकारका जन्मनिविपै प्राणीनिका उपजनेका नियम दिखावनेकू सूत्र कहे है।

जरायुजाण्डजपोतानां गर्भ ॥३३॥

अर्थप्रकाशिका-- जरायुज। अडज। पोत। ए तीन प्रकारके प्राणीनिके जन्म गर्भही है। जो जालकीज्यो प्राणीका आच्छादन जिसमे मास रुधिर व्याप्त होरह्या सो जरायु है। जरायुमे उपजे ते जरायुज है। वहुरि माताका रुधिर पिताका वीर्यही गोलसा होजाय ऊपरी कठिन नखकी त्वक्समान सो अड है। अर अडामे उपजै सो अडज है। जाके ऊपरी कुछहू आवरण नही। आवरणविनाही जाका परिपूर्ण अवयव होय योनितै निकसतैही चलनवलनादि सामर्थ्य होय सो पोत है।

वहुरि सूत्रमे जरायुजका आदिमे ग्रहण कीया सो जरायुज प्रधान है। जातै अडजनितै अर पोतनितै असाधारण भापा अर अध्ययनादिक जरायुजनिमे देखिए है। अर चक्रधर वासुदेवादि व महाप्रभाववानहू जरायुजनिमेही उपजें है। अर मोक्षभी जरायुजनिहीके होय है। मनुष्य गवादिक जरायुज है। हंस कपोतादिक अडज है। सिहव्याघ्रादिक पोत है। इन

तीनोनिके जन्म गर्भतेही है। अब उपपादजन्म कोनकोनके है यातै सूत्र कहे है।

देवनारकाणामुपपादः ॥३४॥

अर्थप्रकाशिका— देवनिके अर नारकीनिके उपपाद जन्म है। च्यार प्रकारके देवनिका अर नारकीनिका उपपाद जन्म कह्या सो देवनिके तो प्रसूतिस्थानमे शुद्ध सुगंध कोमल सपूटकै आकार शय्या है। तिसमे उत्पन्न होय अतर्मुहूर्त्तमे परिपूर्ण यौवनवान हुवा जैसे कोऊ शय्यामे सूता जागृत होय आनदसहित बैठिए होय है तैसे देवनिका उपपादजन्म होय है। अर नारकीनिके उत्पन्न होनेके विलनिकी छातिनिविषै मधुछताकी ज्यो अधोमुख उष्ट्रमुखादिकके आकार छोटेमुखनिके उत्पत्तिस्थान है तिनमे नारकी उपजि अधो मस्तक ऊचे पगतै महाउष्मादिक वेदनाते निकसि विलाप करता भूमिविषै पडे है। ऐसे देवनारकीनिके उत्पत्तिके स्थान उपपाद है तहा ही देवनारकीनिका जन्म है। अब अन्य जीवनिके कौन जन्म है याते सूत्र कहे है।

शेषाणां सन्मूर्च्छनम् ॥३५॥

अर्थप्रकाशिका— गर्भजन्मवाले मनुष्य तिर्यच अर अन्य उपपादजन्मवाले देवनारकी इनतै जे शेष एकेंद्रियादि जो इद्रिय ताई तथा केई पचेद्रिय तिर्यंच इनिके सन्मूर्छनजन्म है। अब तीन प्रकार जन्मके धारक जे प्राणी तिनके शुभ अशुभकर्मके फल भोगनेके आधार कौन शरीर है? ऐसे प्रश्न होतै सूत्र कहे है।

औदारिकवैक्रियिकाहारकतैजसकार्मणानि शरीरराणि ॥३६॥

अर्थप्रकाशिका— औदारिक। वैक्रियिक। आहारक। तैजस। कार्मण। ए पच प्रकार शरीर कर्मके फल भोगनेके आधार है। जो उदार कहिए स्थूल होय सो औदारिक है। वहुरि एक अनेक सूक्ष्म स्थूल हलका भारी इत्यादिक विकारके योग्य होय सो वैक्रियिकशरीर है। वहुरि जो सूक्ष्मपदार्थका निर्णयके अर्थि वा ऋद्धिविशेषका सद्भाव जाननेके अर्थि वा सयमके परिपालनके अर्थि प्रमत्तगुणस्थानधारी रचै सो आहारकशरीर है। वहुरि देहमे तेजका निमित्त सो तैजशरीर है। वहुरि ज्ञानावरणादिक अष्टकर्मनिका समूहरूप कार्मणशरीर है। ऐसे शरीरके भेद पाच कहे। अब कोऊ कहे जैसे जैसे औदारिकका ग्रहण इद्रियनिकरि होय है तैसे वैक्रियिकादिकनिका ग्रहण काहतै नही होय यातै सूत्र कहे है।

परं परं सूक्ष्मम् ॥३७॥

अर्थप्रकाशिका— औदारिकतै अगिले अगिले शरीर सूक्ष्म है। औदारिकशरीरतै वैक्रियिक सूक्ष्म है। यातै आहारक सूक्ष्म है। यातै तेजस सूक्ष्म है। यातै कार्मण सूक्ष्म। ऐसे उत्तरोत्तर सूक्ष्म है। इहां कोऊ कहे जो परैपरै सूक्ष्मशरीर कह्या तो परैपरै प्रदेशनिते हीन

होनेका प्रसग आया । इस दोषके दूरि करनेकू सूत्र कहे है ।

प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्रावतैजसात् ॥३८॥

अर्थप्रकाशिका— इहां प्रदेशशब्दका अर्थ परमाणू है । ए कहे जे शरीर ते तैजसतै पहलि कहे । ते असख्यात असख्यात गुणाकाररूप परमाणुका पिंड है । औदारिकशरीरके जेते परमाणू है तिनतै असख्यातगुणे वैक्रियिकशरीरविषै परमाणु हैं । वैक्रियिकके परमाणतै असख्यातगुणे असख्यातगुणे आहारकविषै है । इहा कोऊ आशका करे जो परैपरै शरीरनिम असख्यातगुणे परमाणु हैं तो परैपरै महान् स्थूलपणाका प्रसग आया, परैपरै सूक्ष्मपणा कहा रह्या ताकूं कहे है । जो, स्थूलपणा नाही आवै है । रईका समूह अर लोहका पिंडकी ज्यो बधनका विशेष है । यातै बहुत परमाणुपिडहू सूक्ष्म परिणमै है । अब पूछै है जो तैजस पहली तो ऐसा प्रमाण कह्या तो तैजस कार्मणका प्रदेश सन्मान है, कि कुछ विशष है यातै सूत्र कहे है ।

अनन्तगुणे परे ॥३९॥

अर्थप्रकाशिका— आहारकशरीरके परमाणुतै तैजसविषै अनंतगुणे परमाणु हैं । तेजसतै कार्मणविषै अननगुणे परमाणु है । इहा कोऊ कहे तेजसकार्मणदेहसहित आत्माका बहु कठोरतातै वाछितगमन जो अपने जानेयोग्य क्षेत्रप्रति गमन नही होता होयगा । शल्यकी ज्यो रुकता होइगा ताका निराकरण करनेकूं सूत्र कहे हैं ।

अप्रतिघाते ॥४०॥

अर्थप्रकाशिका— तैजस कार्मण ए दोऊ शरीर अन्य मूर्तिमान पुद्गलादिकनिकरी नही रुके है । जैसे अग्निके परमाणुनिका सूक्ष्म परिणमनतै लोहका पिंडहूमे प्रवेश हो जाय है । तैसे तैजस कार्मण दोऊ शरीर वज्रमय पटलादिकनिमेहू नही रुकै है । इहां कोऊ कहे की जो वैक्रियिक आहारकहू सूक्ष्म परिणमनतै काहू करि नही रुकै है । इनिहुकूं अप्रतिघात कहो। ताकू कहे है । ऐसे नही है । इहा सर्वलोकमे नही रुकनेकी अपेक्षा अप्रतिघात कह्या है । अर वैक्रियिक आहारक सर्व लोकक्षेत्रमे अप्रतिघात नाही । जातै आहारक शरीरका गमन तो अढाई द्वीपपर्यंतही है । अर मनुष्यनिकै ऋद्धितै प्राप्तभया वैक्रियिक मनुष्यलोकपर्यंतही गमन करिसकेहै। अर देवनिका वैक्रियिक शरीर है सो त्रसनालीपर्यंतही गमन करिसकै है । अधिक क्षेत्रमे गमन नाही है । तातैसर्व लोकमे अप्रतिघात तो तैजस कार्मणही है । इनि शरीरनिका औरहू विशेष [illegible] सूत्र कहे हैं ।

अनादिसम्बन्धे च ॥४१॥

अर्थप्रकाशिका– आत्माकै तैजस कार्मणका सबध अनादितै है। औदारिक वैक्रियिक आहारक जैसे कदाचित् सबधरूप होय है। कवही कोऊ शरीर होइ कबहू कोई होय तैसे नाही हैं। तैजस कार्मण ए दोऊ शरीर तो सर्व अवस्थामे ससारका क्षयपर्यत सदाही रहे है। इस सूत्रमे च शब्द है सो विकल्प अर्थमे है। तातै कथचित् सादिसबध है। तहा कार्यकारणरूप बधसतानकी अपेक्षा तो अनादिसबधरूप हैं। अर पुरातन अनत परमाणु समयसमय निर्जरै है अर नवीननवीन अनत परमाणु सचयरूप होय है। अैसे विशेषकी अपेक्षा सादि सबध है बीजवृक्षकी ज्यो जानना। जिनके मतमे शरीरका सबध सादिही है वा अनादिही है अैसा पक्षपाततै तिनके अनेक दोष आवे है।

जो आत्माकै शरीररका सबध सादिही मानै तो शरीरका सबंध पहली आत्मा अत्यत शुद्ध ठहऱ्या तव नवीन शरीरका सबधका निमित्त कोऊ नही रह्या तव विनानिमित्त कैसे होय। अर शुद्ध जीवकैहू निमित्तविनाही शरीरका सबध होइ तो मुक्तजीवनिके हू शरीरका सबध होनेका प्रसग आवै तव मुक्तात्माका अभावका प्रसग भया। वहुरि एकातकरि जीवकै शरीरका सबध अनादिही है ऐसी कल्पना करे तो ऐसेहू जाकै अनादिपणा हैं ताका अत नही होय है। आकाशकी ज्यो कार्यकारणका अभावतै मोक्ष होनेका अभावका प्रसग आवेगा। तातै शरीरका सबध कथचित् सादि है कथचित् अनादि है। अव इहा पुछै है जो तैजस कार्मण दोऊ शरीर कोऊ कोऊ जीवकैही होय है कि सर्वके होय है इस नियमके अर्थि सूत्र कहे हैं।

सर्वस्य ॥४२॥

अर्थप्रकाशिका– इहां सर्व शब्द निर्विशेषवाची है यातै तैजस शरीर अर कार्मण शरीर ए दोऊ समस्त ससारी जीवनिकै होय हैं। जो ए दोऊ शरीर नही होय तदि ससारीपणोही नही होय। अब औदारिकादिक शरीरनिकरि समस्त ससारीजीवनिके सबधका प्रसग आया। तातै जितने शरीर एककालविषै सभवै तिनके दिखावनेकू सूत्र कहे है।

तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥४३॥

अर्थप्रकाशिका– तिम तैजस कार्मण दोऊ शरीरनकू आदि देयकरि एक जीवके एक कालविषै दोय शरीरभी होय तीनभी होय च्यारिताई होय। अैसे भाज्यरूप करना एक कालविषै पच शरीर नही होय। तहा जीवकै विग्रहगतिमै तो तैजस कार्मण ए दोय शरीरही होय हैं। अर मनुष्य तिर्यंचनिकै विग्रहगतिविना अन्य अवसरमे औदारिक तेजस कार्मण ए तीन शरीर जानना। अर देव नारकीनिके वैक्रियिक तेजस कार्मण अैसे तीन शरीर जानना। अर कोऊ प्रमत्तगुणस्थानधारी मनुष्यके औदारिक आहारक तैजस कार्मण ए चार शरीर जानना। अथवा कोई मनुष्यके औदारिक वैक्रियिक तैजम कार्मण अैसेभी चार शरीर होय हैं। वैक्रियिक

अर आहारकके युगपत् सभवनेका असभव है याते युगपत् पच शरीर नही होय है। फेरिहू तिन शरीरिनका विशेष जनावनेकू सूत्र कहे है –

निरुपभोगमन्त्यम् ।।४४।।

अर्थप्रकाशिका– अतका कार्मण शरीर है सो उपभोगरहित है। तहा इद्रियद्वारकरि शब्दादिकका ग्रहण सो उपभोग है। उपभोगका अभाव सो निरुपभोग है। सो कार्मणशरीर निरुपभोग हैं। विग्रहगतिमे इद्रियकी उपलब्धि होतेहू द्रव्येद्रियकी रचनाको अभाव है याते शब्दादिक विषयका अनुभवका अभावतै कार्मण शरीर निरुपभोग है। इहा कोऊ तर्ककरे जो तेजसभी निरुपभोग है ताकूभी कह्या चाहिए। ताका समाधान। तैजस शरीर योगका निमित्तभी नही है याते तैजस शरीर निरुपभोग हैही यातै याकू सूत्रमे नही कह्या यो तो विनाकह्याहि निरुपभोग है। तैजस कार्मण शरीरकै अगोपागभी नाही है याते वचनका बोलना सुनना इत्यादिक नाही। तातै ए दोऊही शरीर निरुपभोग है अन्य शरीर उपभोगसहित है। ये जे पच शरीर कहे तिनका जन्मका नियम कैसे है यातै सूत्र कहे है –

गर्भसन्मूर्च्छनजमाद्यम् ।।४५।।

अर्थप्रकाशिका– सूत्रके क्रमतै जो आदिविषै कह्या औदारिक शरीर सो गर्भते उपजै तथा सन्मूर्च्छनजन्मतै उपजै है। जो गर्भते उपजे वा सन्मूर्च्छनतै उपजै सो सर्व औदारिक शरीर जानना। अव औदारिकके अनतर जो वैक्रियकशरीर ताके जन्मका नियम कहनेकू सूत्र कहे है –

औपपादि वैक्रियिकम्कं ।।४६।।

अर्थप्रकाशिका– वैक्रियिकशरीर है सो उपपादजन्मविषै उपजै है। देवनारकीनिकं वैक्रियिक शरीर है सो उपपाद जन्मविषैही उपजे है। अव इहा ऐसी आसका उपजै है जो औपपादिक जन्मविना वैक्रियिक शरीर नही उपजता होयगा। यातै सूत्र कहे है –

लब्धिप्रत्ययं च ।।४७।।

अर्थप्रकाशिका– वैक्रियिकशरीरके उपजनेकू ऋद्धिहू कारण है। तपका विशेषतै [illegible] प्राप्ति सो लब्धि है। लब्धि जाकू प्रत्यय कहिए कारण होय सो लब्धि प्रत्यय है सो [illegible] प्रभावतै उपपादिकनिविना मनुष्यनिकैहू होय है। अर तिर्यंच निहूकै विक्रिया होय है। अव [illegible] लब्धिप्रत्यय वैक्रियिकशरीरही है कि औरभी है ? यातै सूत्र कहे है –

तैजसमपि ।४८।।

अर्थप्रकाशिका— तैजसशरीरहू लब्धितै उपजै है। इहा अपि शब्दकरि लब्धि प्रत्ययका सबध करना सो तैजसभी लब्धिप्रत्यय होय है ऐसा जानना। इहा विशेष जो तैजसके दोय भेद है। एक नि सरणस्वरूप। दूसरा अनि सरणस्वरूप। तहा नि सरणतैजस शुभाशुभभेदकरि दोय प्रकार हैं। तिनमे जो तपश्चरणके धारक मुनिके कोऊ क्षेत्रमे रोग मारी दुर्भिक्षादिककरि लोकनिकू दु खी देखी जो करुणा अत्यत उपजि आवै तदि दक्षिणस्कधमैते तैजसपिंड नीकलिकरि द्वादश योजनप्रमाण क्षेत्रके जीवनिका दु ख मेटी आत्मामे प्रवेश करे सो शुभतैजस है। अर कोऊ क्षेत्रके लोकनि ऊपरि अत्यत क्रोधित होय तदि ऋद्धिके प्रभावतै वामस्कधतै सिदूरसमान रक्तवर्ण अग्निरूप आत्माका प्रदेश निकलै सो आदिमे तो सूच्यगुलकै असख्यातवै भाग प्रमाण अर अतपर्यंत क्रमतै वध्रता काहलकै आकार निकसि द्वादश योजनप्रमाण समस्त जीवपुद्गलनिकू भस्मकरि उलटा शरीरमै प्रवेशकरि मुनिकू दग्ध करे है सो मुनी तो नरककूं प्राप्त होय है। ऐसा तो नि सरणस्वरूप तैजसशरीर हैं। अर अनि सरणस्वरूप समस्तससारीजीवनिकै देहकी दीप्तिका कारण है सो लब्धि प्रत्यय नही है। अव वैक्रियिकके अनतर कह्या जो आहारक शरीर ताका स्वरूपका निर्द्धारके अर्थि सूत्र कहै है—

शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥४९॥

अर्थप्रकाशिका— यो आहारक शरीर है सो शुभ है, विशुद्ध है, व्याघातरहित है सो प्रमत्तसयतमुनिहीके होय हैं। चद्रकातमणिसमान श्वेतवर्ण एकहस्तप्रमाण उच्च समचतुरस्रसस्थान अतिसुदर अगोपागकू धरे, शुभरूप सप्तधातु उपघातुरहित परमनिर्मल आहारकशरीर हैं। आहारकशरीर अन्य पर्वत वज्रादिककरि रूके नही। अन्य किसीको आप रोके नही तातै अव्याघात है। आहारक शरीर प्रमत्तसयमीमुनीके उत्तमाग जो मस्तक तातै उत्पन्न होय है। सो कदाचित लब्धिविशेषका सद्भाव जाननेके अर्थि कदाचित् सूक्ष्मपदार्थका निर्णयके अर्थि तथा तीर्थगमन सयमकी रक्षाके अर्थि केवली भगवानके निकट जाय सूक्ष्मपदार्थका निर्णयकरि अतर्मुहुर्त्तमे उलटा वाहुडी सयमीका देहमे आत्मप्रदेश प्रवेश करे है। इहा ऐसा जानना जो आहारक शरीर रचनेकू प्रमत्त होय है प्रमत्तसयमी मुनीहीके होय है।

इहा इतना विशेष और जानना। जो देवनिके वैक्रियिकशरीर अनेक होय है। जो स्वर्ग लोकमे तो देव विद्यमान रहै अर विक्रियाकरि अन्यशरीर होय अन्य क्षेत्रमे जाय है। तथा तैजसशरीर द्वादश योजन जाय है। सो इनि शरीरमे आत्मा तो जिसका देहमेतै निकस्या सोही प्रमत्तसयतमे आहार शरीर दुरि क्षेत्र विदेहादिकनिमे जाय है तथा आत्मा है। जैसे कोई सामर्थ्यका धारक देव अपना एक हजार रूप कीए परतु उन हजार देहनिमे अपनेही आत्माके प्रदेश हैं। वीचीमे सुच्यगूलके असख्यातवे भागप्रमाण देवके अर वैक्रियकशरीरके तातूकीज्यो जोड वधि रह्या है। जातै आत्माका खड तो होय नही आत्माके असख्यात प्रदेश है

ते एक तरफ वा अनेक तरफ कार्मणशरीरसहित निकसे है जहा मूल शरीर है तहाताई सूक्ष्म प्रदेशनिका बन्या रहे है। वैक्रयिकशरीर मूल है ताका काल तो जघन्य दश हजार वर्ष है। उत्कृष्ट तेतीस सागर है। अपर्याप्त अवस्थाका अन्तर्मुहूर्तकालकरि ऊन है। अर उत्तर वैक्रियिक देहका काल जघन्य तथा उत्कृष्ट अर्मुहूर्तही है अर जो तीर्थकरके जन्ममे वा नदीश्वरादिकनिके जिनायतननिकी पूजाकू जाय है तहा वारवार विक्रिया कन्या करे है। ऐ चोदह सूत्रनकरि पच शरीरनिका निरूपण कीया। इनि पच शरीरनिके परस्पर सज्ञा स्वलक्षण स्वकारण स्वामित्व सामर्थ्य प्रमाण क्षेत्र स्पर्शन काल अतर सख्या प्रदेश भाव अल्प बहुत्व इत्यादिकनितै विशेष है सो आगमतै जानना। अब लिंगका नियमके अर्थि सूत्र कहे है–

नारकसम्मूर्च्छिनो नपुंसकानि ॥५०॥

अर्थप्रकाशिका– नारकी जीव तथा सन्मूर्च्छन जीव ए नपुसकलिगी ही होय है। अब जहां अत्यत नपुसकलिगका अभाव तिनका प्रतिपादनके अर्थि सूत्र कहे है–

न देवाः ॥५१॥

अर्थप्रकाशिका– देव है ते न नपुसकलिग नही है। देवगतिविषै पुरुषवेद तथा स्त्रीवेद दोय वेदही पाई है। इनमे नपुसक नही होय है। बहुरि इहा प्रसग पाइए तो विशेष अर और जानना। जो भोगभूमिमे उपजे तथा म्लेछखडके स्त्री पुरुष दोयही वेदनै धारण करे है इनिमें नपुसक नही उपजे है। अब अन्यजीवनिके अर्थि सूत्र कहे है–

शेषास्त्रिवेदाः ॥५२॥

अर्थप्रकाशिका– नारकी देव तथा सन्मूर्च्छन इन विना अवशेष रहे जे गर्भज तिर्यच और मनुष्य ए तीनू वेदसहित है। स्त्रीलिंग पुरुषलिंग नपुसकलिग ए तीन पाईए है। सो लिंग सामान्य दोय प्रकार है। एक द्रव्यलिंग एक भावलिंग तहा द्रव्यलिग तो नामकर्मका उदयतै भया ऐसा योनि स्तन तथा मेहन वा डाढी मुछ आदिक शरीरके आकार विशेष है। अर भाववेद है सो चारित्रमोहनीयका भेद जो नोकषाय नामा जो वेदकर्म ताके उदयते [illegible] आत्माका परिणाम है। इहा स्त्रीवेद तो अगारेकि अग्नीज्यौ कामकरि ल्हकल्हकाट [illegible] है। अर पुरुषवेद तृणानिकी अग्निज्यौ अतिमद कामकरि व्याप्त है। अर नपुसकवेद [illegible] अग्निज्यों [illegible] प्रज्वलित कामकी तीव्रतासहित है। अब ए चतुर्गति[illegible] अपना अपना पूर्वे आयु वधनकिया ताकू परिपूर्णा भोगिकरि नवीन शरीरकू [illegible] है तातै सूत्र कहे है–

औपपादिकचरमोत्तमदेहाः संख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥५३॥

अर्थप्रकाशिका— औपपादिक कहिए देव नारकी वहुरि चरमोत्तमदेह कहिए चरम-शरीरी अर उत्तम देहका धारी ऐसे तद्भवमोक्षगामी अर असख्यात वर्षनिका आयुका धारक भोगभूमिमे उपजे जीव ए सर्व अनपवर्त्यायु कहिए परिपूर्ण आयुकरि मरण करे हैं। इनका आयु विष शस्त्रादिकके निमित्ततै नही छीदे हैं। इनिका ए नेम है अन्यका नियम नाही है। सोही कहिए है। इनके सिवाय कर्मभूमिके मनुष्य तिर्यचनिकि आयुकी स्थिति घटैभी है। याका उदाहरण—जैसे कोऊ जीव मनुष्य आयुकी स्थिति सौवर्षप्रमाण पूर्वजन्ममे वाधी मनुष्य उपज्या। तहा जो पूर्वं आयुकर्मकी पुद्गलवर्गणाके जितने परमाणु बधनकीए थे ते समस्त सो वर्षके जितने समय होय है तितने समयनिमे गुणहानिके त्रिभागतै निषेक रचना भई सो मनुष्यपर्यायमे एक एक निषेक उदय आय निर्जरे है। सो क्रमतै जो एक एक समयमे आयुका निषेक निर्जरे तदि तो सौवर्षमे पूर्ण होय। परतु बावन वर्षपर्यत तो समयसमय एकएक निर्जऱ्या अर पाछे कोऊ अन्य सक्लिष्ट कर्मके उदयते तथा वाह्य विषभक्षणते तथा तीव्रवेदना शस्त्रघात रक्तक्षय अतिभय अन्नजलका अवरोध श्वासोच्छ्वासका निरोध इत्यादिक कारणतै अडतालीस वर्षके निषेक एकठे अन्तर्मुहूर्त्तमे निर्जरीजाय उदीरणा होय विनसी जाय। ऐसे कर्मभूमिके मनुष्य तिर्यचनिका भुज्यमान आयुका उदीरणा होय है। तदि आयुकी स्थिति छटी शीघ्र मरण होय है। जैसे आम्रफल वा फणसफळ पालविषे शीघ्र पकै, तथा आला वस्त्र घामके निमित्ततै शीघ्र सूकै तैसे जानना।

वहुरि च्यार प्रकारके देव अर नारकी अर उत्तम मध्यम जघन्य तीनू भोगभूमिके मनुष्य वा तिर्यंच वा कुभोगभूमिया इनिकी तथा तद्भवमोक्षगामी तीर्थंकर चक्रवर्त्यादिकनिकी भुज्यमान आयुकी स्थिति पूर्वोक्त कारणनकरि छिदै नाही। कोऊ पूछे जो पूर्वोक्त कर्मभूमिके मनुष्य तिर्यंचनिका आयु घटना होय है तैसे इहा आयुका वधनाभी होता होयगा। ताका समाधान। जो भुज्यमान आयुका वधना सभवे नही। जाते आयुवधै है सो पूर्वजन्मके त्रिभागमे ही आयुकर्मके परमाणूनिका आस्त्रव आय बध होनेका जिनागममे नियम है तातै भुज्यमान आयु वधे नही है।

ऐसे इस अध्यायमे जीवतत्वका निरूपण है। तहा प्रथमही जीवके उपशमकादि पाच भाव कहे तिनके त्रेपन भेद सात सूत्रमे कहे। आगे जीवका प्रसिद्ध धर्म देखि उपयोगको लक्षण कह्या ताके भेद कहे। आगे जीवके भेद कहे तहा ससारी अर मुक्त ससारीमे सज्ञी असंज्ञी त्रस स्थावर त्रसके भेद द्वीद्रियादिक पचेद्रियताई कहे। वहुरि पाच इद्रियके द्रव्येद्रिय भावेद्रियकरि भेद नाम विषय कहे। वहुरि एकेद्रियादिक जीवनिके इद्रिय पाइए तिनका निरूपण अर सज्ञीजीव कोन वहुरि परभवको जीव गमन करे ताका गमनका स्वरूप कह्या। आगे जन्मके भेद योनिके भेद अर गर्भज कैसे उपजै देव नारकी कैसे उपजे सन्मूर्छन कैसे उपजै ताका निर्णय है। आगे पच शरीरनिके नाम कहि अर तिनका सूक्ष्म स्थूलका स्वरूप कहि अर ए कैसे उपज

तिनका निरूपण कीया । आगे वेद जिनके जैसा होय ताको कहिकरि जिनके उदयमरण तथा उदीरणामरण होय तिनका नियम कह्या ।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

अर्थ– ऐसे तत्वार्थका है अधिगम जातै ऐसा दशाध्यायरूप जो मोक्षशास्त्र तामै दूसरा अध्याय पूर्ण भया ॥२॥

– दोहा –

है जातै तत्त्वार्थका । अधिगम सबसुखदाय ॥
मोक्षशात्र मंगलमय । नमो द्वितीय अध्याय ॥२॥

द्वितीय अध्याय समाप्तः

।। ॐ नमः सिद्धेभ्यः ।।

अथ तृतीयोऽध्यायः ।।

आगे तिसरा अध्यायका प्रारंभ करे है ।

— दोहा —

अधो मध्य ऊरध सकल । जीवनिवास सुदेखि ।
कह्यो बचन वृषपूर जिन । ज्ञानविरागविशेष ।।१।।

अब जीवतत्वका वर्णनमे जीवनिका आधारविशेषका प्रतिपादनमे अधोलोकका वर्णनके अर्थि सूत्र कहे है —

रत्नशर्करावालुकापंकधूमतमोमहातमःप्रभाभूमयो
घनाम्बुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ।।१।।

अर्थप्रकाशिका— रत्नप्रभा शर्कराप्रभा वालुकाप्रभा पकप्रभा धूमप्रभा तमःप्रभा महातमःप्रभा ए सात भूमि नीचे नीचे तीन वातवलय अर आकाश इनिके आश्रय तिष्ठे है तहा ते समस्त पृथ्वी तो घनोदधि वातवलयके आधार है । अर घनोदधिवातवलय है सो घनवातवलयके आधार है । अर घनवातवलय है सो तनुवातवलयके आधार है । अर तनुवातवलय है सो आकाशके आधार है । अर आकाश आपहीके आधार है । जातै आकाश सबतै वडा है याते याके अन्य आधारकी कल्पना नही है । वहुरि रत्नप्रभा नाम पृथ्वी है सो एक लक्ष ऐसी हजार योजनकी मोटी है । तिसके मोटाईके स्कंधमे तीन विभाग हैं । तिसमे सोलह हजार योजन मोटा उपरिका खरभाग है तिसमे चित्रा वज्रा वैडूर्य इत्यादिक हजार हजार योजनकी

मोटी सोलह पृथ्वी है। ऐसे सोलह हजार योजन मोटा ऊपरिका खरभाग वर्णन कीया।

वहुरि ताके नीचे पंकभाग है सो चोरासी हजार योजन मोटा है। अर ताके नीचे असी हजार योजनका मोटा अव्बहुल भाग है तिनमे खरपृथ्वीका उपरला नीचला एकएक हजार योजन छाडिकरि मध्यकी चोदह हजार मोटी अर एक रज्जुप्रमाण चौडी लवी पृथ्वीविषै तौ किंनर किंपुरुष महोरग गधर्व यक्ष भूत पिशाच इन सप्तप्रकार व्यतरदेवनिका अर नाग विद्युत् सुपर्ण अग्नि वात स्तनित उदधि द्वीप दिक्कुमार ऐसे नव प्रकारके भवन वासिनिके आवास है अर पकभागविषै असुर कुमार अर राक्षसनिके आवास हैं। अर अव्बहुल भागविषै प्रथम नरक है तिसमे नारकी दु खित हुए वसै है। ऐसे प्रथम पृथ्वीकी मोटाई एक लक्ष असी हजार योजनकी कही।

वहुरी एक रज्जुप्रमाण अतर छाडी नीचे दूसरी शर्करापृथ्वी है तिस दूसरी पृथ्वीकी मोटाई वत्तीस हजार योजनकी हैं। वहुरी एक राजू अतराल छोडी तीसरी पृथ्वी अठाईस हजार योजनकी मोटी हैं। वहुरी एक राजू प्रमाण अतराल छांडी चोवीस हजार योजन मोठी चोथी पृथ्वी है। वहुरी एक राजू प्रमाण अतराल छोडी वीस हजार योजन मोटी पचमी पृथ्वी है। वहुरी एक राजू अतराल छाडी सोलह हजार योजन मोठी छठी पृथ्वी है। वहुरी एक राजू अतराल छाडी आठ हजार योजन मोठी सप्तमी पृथ्वी है ऐसे पृथ्वी पृथ्वीप्रति सामान्यपने एकएक राजूका अतर है। ऐसे छह अतरालके छह राजू भए। वहुरि सप्तम पृथ्वीके एक राजू नीचे अधोलोकका अत है। वहुरि इन सातो पृथ्वीनिकी चोडाई लवाई लोकका अतपर्यंत जाननी। वहुरि जिस पृथ्वीका जैसा नाम है तैसीही ताकी प्रभा है। अव इहा जे सात पृथ्वी कही तिनमे नारकीनिका आवास सर्वत्र है कि कोऊ कोऊ स्थानमे है इसका निर्द्धार करनेकू सूत्र कहे है–

तासु त्रिंशत्पंचविंशतिपंचदशदशत्रिपंचोनैकनरकशतसहस्त्राणि पंच चैव यथाक्रमं ॥२॥

अर्थप्रकाशिका– तिन रत्नप्रभादिक भूमिनिविषै नरकनिकी इस प्रकार सख्या है। प्रथम पृथ्वीके अव्वहुलभागविषै तीस लाख नरक है। दूजी पृथ्वीविषै पचीस लक्ष अर तीसरी पृथ्वीविषै पंदरह लक्ष अर चौथी पृथ्वीविषै दश लक्ष अर पाचमी पृथ्वीविषे तीन लक्ष अर छट्ठी पृथ्वीविषै पांच घाटी एक लक्ष अर सातमी पृथ्वीविषै पाच। एते नरक कहिए विल है। अनुक्रमकरि सातो पृथ्वीनिका जोड चोरासी लाख विल है। तेई नरक है। ते विल गोल त्रिकोण चौकोन इत्यादिक अनेक आकार रूप केई विल सख्यात योजनके है। केई असख्यात योजनके चौडे लवे है। वहुरि विलनके परस्पर वरावर अतराल विषै तथा ऊपरी नीचे हरेक तरफ पृथ्वीस्कंध है। जैसे ढोल जामीनविषै गाडदे जव ढोलके सव तरफ पृथ्वी रहे। अर ढोलकी पोलागेसमान नारकीनिके विल है। तिन एकएक विलविषै सख्यात असख्यात नारकी वसे है।

प्रथम पृथ्वीका अब्बहुलभागविषै तेरह प्रस्तर है। अर दूजीपृथ्वीविषै ग्यारह प्रस्तर है। तीजी पृथ्वीविषै नव प्रस्तर है। चौथी पृथ्वीविषै सात प्रस्तर हैं। अर पचमी पृथ्वीविषै पच प्रस्तर हैं। अर छठ्ठी पृथ्वीविषै तीन प्रस्तर है। अर सातमी पृथ्वीविषै एकही प्रस्तर है। ते समस्त प्रस्तर नीचे नीचे है। तिन प्रस्तरनिविषै इद्रक। श्रेणीवद्ध। प्रकीर्णक। ऐसे तीन प्रकारके विल है। तहा प्रस्तरके मध्य तो एकएक इद्रकविल है। अर इद्रककी चार दिशा चार विदिशानिविषै पक्तिरूप विल है ते श्रेणीवद्ध है। वहुरि दिशाविदिशानिके आठ अंतरालविष जहा तहा विल है ते प्रकीर्णक है। ऐसे तीन प्रकार विल कहे। तहा प्रथम प्रस्तरके श्रेणीवद्ध विल चारो दिशानिविषै प्रत्येक उनचास उनचास है। अर चारो विदिशानिविषै प्रत्येक अडतालीस अडतालीस विल है। तहा प्रथम प्रस्तारके आठ दिशानिके श्रेणीवद्धका जोड तीनसे अठचासि विलनिका है। आगे नीचेनीचे एकएक प्रस्तारप्रति चारो दिशानिमे अर चार विदिशानिप्रति एकएक श्रेणीवद्ध विल घटते घटते है। यातै एकएक प्रस्तारप्रति आठआठ विल घटती होय है। ऐसे एकएक दिशाप्रति तथा विदिशाप्रति एकएक श्रेणीवद्ध विल घटतै गुणचासमा प्रस्तर सप्तम नरकका है। तामे दिशानिमे एकएक श्रेणीवद्ध विल विदिशामे विलका अभाव ऐसे पाचही विल है। अव इहा समस्त गुणचास प्रस्तरनिके श्रेणीवद्ध विलनिका जोड नव हजार छसे च्यारि होय है। अर इद्रक विलक गुणचासही है। अव शेष तीयासी लाख निवै हजार तीनसे सैतालीस प्रकीर्णक विल है।

वहुरि उनचास इद्रक कह्या ताका विस्तार ऐसा जानना। जो प्रथम इद्रक पैंतालीस लक्ष योजनके विस्तारकू धरे है। सो अढाई द्वीपकी वरावर सूधीमे नीचे है। आगे नीचे समान अनुक्रमकरि घटता अतका उनचासमा इद्रक एक लाख योजन चौडा है। ऐसे गुणचास इद्रक तो समस्त सख्यात योजनके हैं। अर श्रेणीवद्ध समस्त असख्यात योजनके हैं। वहुरि प्रकीर्णक विल केई सख्यात योजनके विस्तार लीए है। केई विल असख्यात योजनके विस्तारतै है। अव सीमातादिक नरकविषै पापकर्मके वशतै प्रगट होता प्राणीनिका कहा लक्षण है इस हेतूतै सूत्र कहे है--

नारका नित्याशुभतरलेश्याः परिणामदेहवेदनाविक्रियाः ॥३॥

अर्थप्रकाशिका-- इनि विलनिविषै नारकी जीव है ते सदा अशुभतर लेश्या अशुभपरिणाम अशुभदेह अशुभवेदना अशुभविक्रिया सहित है। नारकीनिके अशुभकर्मका उदयकरि अत्यत अशुभलेश्यादिकही पाइये है। पहिली दूजी पृथ्वीके नारकीनिके तो कापोतलेश्याही है। वहुरि तीजी पृथ्वीके नारकीनिके उपरले विलनिके नारकीनिके कापोत नीचलेनीके नील लेश्या है। चतुर्थ पृथ्वीके नारकीनिके नील लेश्या है। पाचमीवाले ऊपरलेनिके नील है। नीचलेनीकै कृष्ण है। छठ्ठीवालेनिके कृष्णही है। सातमी पृथ्वीवालेनिके परमकृष्ण है। ऐसे नीचेनीचे अधिक अशुभलेश्या है। अर नारकीनिका स्पर्श रस गध वर्ण शब्दनिका परिणमन

जे परिणाम तेहू क्षेत्रका विशेषतै अत्यत अशुभ है। अग उपाग वर्ण स्पर्श रस गध शब्द अशुभ हैं। हुडकसस्थानी हैं। जैसे कोऊ पक्षीका केश पाख उडीजाय तिस समान तिनके शरीरकी आकृति है। महाक्रूर भयके कारण जिनका दर्शन है। जिनकी वैक्रियिक शरीर है तोहू मल मूत्र कफ रुधिर नशा जाल राधि व मन सिडवा हुवा मास केश हाड चाम औदारिक देहसवधी है। तिनतैंहू अत्यत अशुभ नारकीनिके वैक्रियिक पुद्गल है।

प्रथमपृथ्वीविषै तेरवा पटलमे नारकीनिका देहकी ऊचाई सात धनुष्य तीन हाथ छ अगुळ प्रमाण है। वहुरि नीचेनीचे पृथ्वीपृथ्वीप्रति दुनादुना शरीरकी उचाईका प्रमाण जानना। ऐसे होने इनकी सप्तम पृथ्वीविषै शरीरकी उचाई पाचसे धनुष्य प्रमाण हो है। वहुरि तिनके अभ्यतर तो असाता वेदनीयका उदय अर वाह्य उष्ण शीतकी तीव्र वेदना है। तहा पहली पृथ्वीतै लेय चौथी पृथ्वीगिड्डापर्यत तो समस्त विल उष्णही हैं। वहुरि पाचमी पृथ्वीविषै तीन लक्ष विल है तिनका च्यार भाग कीजे तहा तीन भागके सवादोय लक्ष विल तो अति उष्णरूपही है। अर चौथा भागके पचेत्तर हजार विल अति शीतरूप है बहुरि छवी सातमी पृथ्वी विषै शीतही वेदना है। ऐसे तो शीतकी उष्णकी अतिवेदना है। वहुरि नानाप्रकारकी रोग वेदना तथा क्षुधा तृषाको वेदना है अर क्षेत्र महा दुर्गध है। ऐसे अतिवेदना है। तथा तिनकै क्रूर सिह व्याघ्रादिरूपही अशुभ विक्रिया होय है। ऐसे नारकीनिके लेश्या परिणाम देह वेदना विक्रिया नित्य अशुभही होय है। अव कहे है जो नारकी निकै शीतउष्णजनितही दु.ख है कि और प्रकारभी होय है यातै सूत्र कहे है–

अर्थप्रकाशिका— सक्लेशपरिणमन करि सहित जे असुरकुमार देव तेहू तीसरी पृथ्वी-पर्यतके नारकीनिके दु.खकी उदीरणा करावै है। केई अवा वरीष जातिके असुरकुमार देव ते तीजी पृथ्वी ताई जाय दु ख उपजावे है। नारकीनिमे परस्पर कलह उपजावै है। इहा कोऊ पूछे उनके कहा प्रयोजन है ताकू कहिए है। जैसे इहा कोई वलव्र मिढा भैसा कूकड तीतर इत्यादिकाने लडाय कलह देखि हर्ष माने है। तैसेही दुष्ट असुरके परिणाम जानने। तथा तप्त लोहमय रसका पावना अग्निरूप तप्तायमान लोहमय स्तभनितै अलिगन करावना कूट शाल्मलीवृक्ष उपरि चढावना उतारना लोहमय घनानिका घात करना वसोनितै छीलना तप्ततेल सीचना लोहमय कडाहोनिमे पकावना भाडमै भुसलना घाणीनिमै पीलना शूली चढावना शूलनिते वीधना करोतनिते चीरना अगारनिमे लोटना व्याघ्र सिह रीछ स्वान स्याल ल्याली मार्जार न्योल्या सर्प्प उनर काक गीध कक घूघू शिखरा इत्यादिकनिकरि बाधा करनेकरि तथा तप्तवालुकामे विचरण असिपत्रवनमे प्रवेशन वैतरणीनिमज्जनादिकरी महादु ख उपजावना इत्यादि परस्पर दु ख उपजावे है। परतु आयुका अतविना मरण नही होय है। अव नारकीनिका आयुका प्रमाण कहनेकू सूत्र कहे हे—

तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंशतित्रयस्त्रिंशसत्सागरापेमा सत्वानां परा स्थितिः ॥६॥

अर्थप्रकाशिका— नारकी जीवनिका आयु पहली पृथ्वीविषै एक सागरका है। दूजी पृथ्वीविषै तीन सागरका आयु है। तीजी पृथ्वीविषै सात सागरका आयु है। चौथी पृथ्वीविषै दश सागरका आयु है। पचमी पृथ्वीविषै सतरह सागरका आयु है। छठ्ठी पृथ्वीविषै बाईस सागरका आयु है। सप्तमी पृथ्वीविषै तेतीस सागरका आयु है। ऐसे सातो पृथ्वीविषै नारकीजीवनिकी उत्कृष्ट स्थिति है। अैसे पृथ्वीप्रति नारकीनिकी उत्कृष्टी स्थिति सामान्यकरि कही। बहुरि इन सात पृथ्वीनिविषै गुणचास प्रस्तर है। तहा प्रस्तरप्रस्तरप्रति नारकीनिका आयुका प्रमाण तथा प्रमाण तथा शरीरका प्रमाणका विशेप है। ते अन्य ग्रथनिते जानने। नारकीनिका उपजनेका विरहकाल अैसा जानना। प्रथम पृथ्वीमे उत्कृष्ट विरह चौईस मुहूर्त्तका। दूजी पृथ्वीविषै सप्त दिनरात्रीका। तीजीमे अेक पक्षका। चतुर्थमे अेक मासका। पचमीमे दोय महीनाका। छठ्ठीमे च्यारि मासका। सप्तमीमे छ मासका उपजनेका विरहकाल है। जेसे प्रथम पृथ्वीमे असख्यात नारकी है तिनमे नवा नारकीका जन्म चौईस मुहूर्तमे [illegible] होयही होय।

अब कौन पृथ्वीताई कौन जीवका उपजनेका नियम है सो कहे है। तहा असैनी पचेंद्रिय जीव जो नरकायु बांधे तो प्रथम पृथ्वीविषैही उपजै। द्वितीयादिकनिमे उपजने योग्य कर्म नही बाधे है। बहुरि सरीसृप है ते प्रथम द्वितीय दोय पृथ्वीपर्यंत जाय। भेरुडादिक पक्षी तीजी पृथ्वीपर्यंत जाय आगे नही जाय। [illegible]

नही जाय । सिंह पचमी पृथ्वीताई जाय उपजै मनुष्यिणी छट्ठी पृथ्वीपर्यतही जाय । अर मत्स्य अर मनुष्य सप्तम पृथ्वीपर्यंत उपजै । बहुरि नारकी देव भोगभूमिया अेकेन्द्रिय विकलत्रय अे जीव मरीकरी नरकमे नही उपजै अैसा नियम है । अव नरकतै निकसी कौन पर्यायमे जन्म पावे सो कहे है। नरकते निकस्या जीव मनुष्य तिर्यचगतिविषै कर्मभूमिका सैनी पचेंद्रिय पर्याप्त गर्भजही होय ।

भोगभूमीमे तथा असज्ञी लब्धिपर्याप्त सन्मूर्छनमे नही उपजै । तथा नरकते निकस्या जीव बलिभद्र नारायण प्रतिनारायण चक्रवर्ती इनका पद नही पावे । बहुरि तीसरी पृथ्वीताईका निकस्या केचित् तीर्थकरपदधारक होय तो होजाय । बहुरि चौथी पृथ्वीताईका निकस्या केचित निर्वाणगमन करै है । पाचमी ताईका निकस्या केचित महाव्रत धारण करे है मोक्षगमन होय है। छठ्ठी ताईका निकस्या केचित सयमासयम देशचारित्र ग्रहण करे है । अर सप्तमी पृथ्वीका निकस्या क्रूर तिर्यंचही होय मनुष्य नही होय ऐसे सप्तभूमिका विस्तारकू धरे जो अधोलोक ताका वर्णन तो किया । अब तिर्यग्लोक कह्या चाहिए यातैं स्वयभूरमणसमुद्रपर्यत तिर्यक्प्रचयरूप अवस्थित असख्याते द्वीपसमुद्र है तिनका नामनिर्देशादिके अर्थि सूत्र कहे है—

जम्बूद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥७॥

अर्थप्रकाशिका— जबूद्वीपादिक द्वीप अर लवणोदादिक समुद्र ए शुभनामके धारक असख्यात द्वीप समुद्र है । तहा प्रथम तो जबूद्वीप अर लवणसमुद्र । अर दूजा धातकीखडद्वीप कालोदधिसमुद्र । तीजा पुष्करवरद्वीप पुष्करवरसमुद्र । आगे जैसा द्वीपका नाम तैसा समुद्रका नाम जानना । चौथा वारुणीवर द्वीप । पाचमा क्षीरवरद्वीप छठ्ठा घृतवर । सातमा क्षौद्रवर । आठमा नदीश्वरवर । नवमा अरुणवर । दशमा अरुणभासवर । ग्यारमा कुडलवर । तेरमा रुचकवर । चौदमा भुजगवर । पद्रमा कुशवर । सोलमा क्रौचवर । इत्यादि स्वयभूरमणपर्यंत दूणादूणे विस्तारमे अढाई उद्धारसागरप्रमाणके जते समय होय तितने असख्याते द्वीपसमुद्र है। अब इन द्वीपसमुद्रनिका विस्तार रचना सस्थान इत्यादिकका विशेषका प्रतिपादनके अर्थि सूत्र कहे है—

असख्यातही समुद्र है । वहुरि जबूद्वीपको लवणोदधि समुद्र वेढे है । लवणोदधिकू धातकीखडद्वीप वेढे है । धातकीद्वीपको कालोदधि समुद्र घेरे है ऐसे समस्त द्वीपसमुद्रनिकी रचना है । आगे पूछे है जबूद्वीपका ठिकाना आकार विस्तारका परिणाम कह्या चाहिए जातै आगिले द्वीपसमुद्रनिकाभी विस्तारादिकका ज्ञान होय है । ऐसे पूछे सूत्र कहे हैं–

तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥९॥

अर्थप्रकाशिका– पूर्वें कहे जे द्वीपसमुद्र तिनके बीच जबूद्वीप है सो सूयमडलके आकार है । ताकै बीचि नाभिकीज्यो मेरुपर्वत है । अर एकलक्ष योजन प्रमाण चौडा है । अर तीन लक्ष सोला हजार दोयसे सत्ताईस योजन तीन कोस एकसो अठाईस धनुष्य साडा तेरह अगुल कुछ अधिक प्रमाण परिधि जबूद्वीपकी है । वहुरि इस जबूद्वीपके चौगिरद अष्ट योजन ऊची अर अर्ध योजनकी नीवसहित वेदी है सो नीचे वारा योजन मध्यमे अष्ट योजन उपरि चार योजन चौडी है वज्रमय मूलमे वैडूर्यमणिमय है अत जाका अर सर्वरत्नमय है मध्य जाका ऐसी वेदी है । ताके पूर्वादिक चार दिशानिमे विजय वैजयत जयत अपराजित नामधारक च्यार महान द्वार है । ते द्वार च्यार योजन चौडे लबे है अष्ट योजन ऊचे है । तिनमे विजय वैजयत द्वारके गुण्यासी हजार वावन योजन पोगाच्यार कोश वतीस धनुष्य सवातीन अगुल कुछ अधिक अतराल है । ऐसेही अन्यद्वारनकेहू परस्पर अतर है । वहुरि यो जबूद्वीप है सो जबूवृक्षसहित है । उत्तरकुरु भोगभूमिमे ईसानकोणमे अनादिनिधन पृथ्वीकायरूप अकृत्रिम परिवारके वृक्षनि सहित जबूवृक्ष है । अर तैसेही देवकुरु भोगभूमिमे नैऋतकोणाविषै शालमलीवृक्ष है । अब इस जबुद्वीपविषै षट्कुलाचलनिकरि विभागने प्राप्त भए सप्तक्षेत्र तिनके नाम कहे है–

भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥१०॥

अर्थप्रकाशिका– तिस जबूद्वीपविषै भरत । हैमवत । हरि । विदेह रम्यक । हैरण्यवत । ऐरावत ए सप्तक्षेत्र है । तिनमे हिमवान् पर्वतके अर पूर्व दक्षिण पश्चिम इन तीन वोडी समुद्रके मध्य भरतक्षेत्र जानना योग्य है । तिस भरतक्षेत्रके मध्य पूर्वपश्चिमलवा विजयार्द्धपर्वत है । सो पचीस योजन ऊचा अर पचास योजन चौडा अर सवाछह योजन नीवको धरे है । अर श्वेतवर्ण है । अर पूर्वपश्चिम अपनी कोटी तिनकरि पूर्वपश्चिमका समुद्रकू स्पर्शे है याने समुद्रपर्यंत लबा है । वहुरि इस पर्वतके भूमिसु दशयोजन ऊचा जाइए तदि दश योजन चौडी पर्वतसमान लबी दोय विद्याधरनिके वसनेकी श्रेणी है । तिनमे दक्षिणश्रेणीविषै तो रथनूपुरादिक पचास नगरी है । अर उत्तरश्रेणीविषै चक्रवालादिक साठी नगरी है । तिन नगरीनिमे प्रज्ञप्त्यादिक विद्याके धारक विद्याधर वसै है । तहासे दश योजन ऊचा जाईए तहा दश योजन चौडी पर्वतसमान लबी दोय श्रेणी है । तिनमे व्यतरदेव वसे है । तनके सोम यम वरुण वैश्रवण नाम लोकपालनिके

आभियोग्य व्यतरदेवनिके निवास है ।

बहुरि पच योजन ऊचा जाईए तहां पर्वतका शिखरतल है सो दश योजन चौडा पर्वतसमान लबा है तिस उपरि सवाछह योजन ऊचा पूर्वदिशामे सिद्धायतन कूट है तिस सिद्धायतन कूटपरि पद्मवेदिकाकरि वेष्टित उत्तरदक्षिण एक कोश लबा अर पूर्वपश्चिम आधा कोश चोडा कुछ घाटि ए कोशप्रमाण उचा अरहत भगवानका आयतन मदिर है। पूर्व उत्तर दक्षिण तीन द्वारनकरि युक्त है। तिस सिद्धायतनकूटतै पश्चिमकी तरफ अष्ट अन्य कूट है। तिनकीहू ऊचाई चौडाई सिद्धायतनकूटसमान है। तिनमे व्यनरादिदेवनिके निवास है। अर इस विजयार्द्ध पर्वतके दोऊ तरफ भूमिऊपरि अनेक फल फूलनिकरि मडित पद्मवेदीकरि सयुक्त वनखड है। तिस पर्वतके नीचे तमिस्रा अर खडप्रपाता नामसहित दोय गुफा है। दक्षिण उत्तर पर्वतकी चौडाईसमान पचास पचास योजन लबी है। अर पूर्वपश्चिम द्वादश योजन चौडी अष्टयोजन ऊची है अर तिन गुफानिके सवाछह योजन चौडा एक कोश मोटा अष्टयोजन उचा वज्रमय कपाटयुगल है। अर हिमवान्पर्वततै पडी जे गंगा सिंधू नदी ते इनही गुफाद्वारकी देहलीनीचे होय निकसि करिके दक्षिण भरतमे आय भरतक्षेत्रका छह विभाग करि समुद्रमे प्रवेश करे है। विजयार्द्धके उत्तर तीन खड अर दक्षिण तीन खड हैं। तहा दक्षिणके तीन खडनिका मध्य एक आर्यखड है। अन्य पच म्लेच्छखड है। अर विजयार्द्धके उत्तरका मध्यखडके मध्यप्रदेशमे एक वृषभाचल नाम पर्वत है सो योजन ऊचा गोल आकार है। या ऊपरि चक्रवर्ती अपना नाम लिखे है। या प्रकार छह खड रूप भरतक्षेत्र है। बहुरि तैसेही यथासभव ऐरावत क्षेत्र जानना।

[illegible]मवत, हरि, रम्यक, हैरण्यवत, इन च्यारो क्षेत्रनिमे एकएक नाभिगिरि [illegible] उचे एक हजार योजन है। तहा क्षेत्रके मध्यप्रदेशमे नाभिज्यो जानने। कहे। अब निषध अर नील कुलाचलके मध्य विदेहक्षेत्र है जिस विषै योगीश्वर [illegible]रहित होय है, तातै विदेह ऐसा सार्थक नाम है। इस क्षेत्रमे सास्वतो है। नाका विशेषज्ञानको हेतु क्षेत्रनिका विभागादि लिखिए है। तहा ऐसा सुदर्शन मेरु है सो भद्रसालवनके मध्यविषै है। सो भद्रसालवन पूर्व [illegible]जार योजन लबा है। तिसके बीच दश हजार योजन चौडा गोल मेरु है। ताकी पूर्वदिशामे अर पश्चिमदिशामे बाईस बाईस हजार भद्रसाल नाम वन है। ताहीकी पूर्वदिशामे पूर्वविदेह है अर ताकी पश्चिम-[illegible] विदेह है। तहा पूर्वविदेहके मध्य होय सीतानदी पूर्वसमुद्रकू जाय है। तिसकरि [illegible] पूर्वविदेहमै दोय भाग भए। तिन दोऊ दीशामैही रचना समान है। [illegible] दक्षिणके विदेहनके अतमे निषध नामा कुलाचल है। अर उत्तरमे

अब सीता नदीकी उत्तरकी तरफकी रचना कहिए है। भद्रसालकी वेदीतैं लेय देवरण्यकी वेदीताई पूर्वविदेहका क्षेत्र है। तहा च्यार वक्षार पर्वत है ते नीलकुलाचलतैं लेय सीतानदीके तटकौ प्राप्त ऐसे उत्तर दक्षिण लबे है। इन वक्षारगिरिनिकी उचाई कुलाचलके निकट च्यारसे योजन अर क्रमते वधती सीताके तटकने पाचसे योजन है तहा सीताकी तरफही याउपरि जिनभवन हैं। या प्रकार च्यार वक्षारगिरि जानने। तिन वक्षारगिरनिके बीचबीच तीन विभगानदी है। ते विभगानदी नीलकुलाचलतैं निकसी सीताविषे जाय मिली है। ऐसेही सीतानदीकी दक्षणकी तरफहू च्यार वक्षार तीन विभगानदी अर दोऊ तरफ अतविषैं वेदी इन नवनिकैं बीच आठ विदेह क्षेत्र है। अर सोही दिखाईए है। पूर्व भद्रसालकी वेदी ताके आगे विदेह ताकैं आगे वक्षार ताके आगे विदेह ताके आगे विभगा ताकै आगे विदेह ताके आगे वक्षार ताके आगे विदेह ताके आगे विभगा ताके आगे विदेह ताके आगे वक्षार ताके आगे विदेह ताके आगे विभगा ताकै आग विदेह ताके आगे वक्षार ताके आगे विदेह ताके आगे देवरण्यकी वेदी ऐसे चार वक्षार तीन विभगा एक भद्रसालवनकी वेदी एक देवारण्यकी वेदी इनि नवनिके बीची आठ विदेह ऐसे सीतानदीके दोऊ तटसबधी सोलह विदेह छह विभगानदी आठ वक्षार गिरि जानने। अब इनका प्रमाण ऐसे। तीन विभगानदी प्रत्येक सवासे सवासे योजन चौडी। अर वक्षार गिरि चार प्रत्येक पाचसे पाचसे योजन चौडा। अर आठ विदेहक्षेत्र प्रत्येक बाईससे वारह योजन साढातीन कोश प्रमाण चोडे है। इनि सवनिका जोड वीस हजार अठहतरि योजन होय है। भद्रसाल्की वेदीतैं लेय देवारण्यकी वेदीताई एता पूर्वविदेह है।

वहुरि पश्चिमकी रचनाभी पूर्ववत् जाननी। तहा सीतोदानदी पश्चिमविदेहके वीचि होइ पश्चिमसमुद्रमे जाय है। ताकरि सीतोदाके उत्तर दक्षिण रूप पश्चिमविदेहमे दोय भाग भए। तहा दोऊ दीस रचना समान है। इनिका प्रमाणभी पूर्ववत् है। तीन विभगानदी चार वक्षारगिरि आठ विदेह क्षेत्र। इनि सवनिका जोड वीस हजार आठहतरि योजन हैं। तहा पश्चिम भद्रसालकी वेदीते लेय भूतारण्यकी वेदीताई एता पश्चिमविदेह है। अर जैसा पूर्वविदेहका अतमे समुद्रमे उनतीससे वाईस योजनका देवारण्य वन है। तैसेही पश्चिम विदेहका अतमे उनतीससे वाईस योजनप्रमाण भूतारण्य नामा वन है। वहुरि भद्रसाल्वन मेरुसहित अर दोऊ तरफका विदेह अर देवारण्य भूतारण्य ए दोऊ वन इन सवनिका जोड एक लक्ष योजनाप्रमाण जानना। वहुरि सोलह तो पूर्वविदेह अर सोलह पश्चिम विदेह ऐसे सव वत्तीस विदेहक्षेत्र है। तहा क्षेत्रनके मध्य पूर्वपश्चिम लवा एकएक विजयार्द्धपर्वत है।

वहुरि नीलाचल निषधाचलते निकसी एकएक विदेहमे दोयदोय नदी विजयार्द्धपर्वतके नीचे होय सीतासीतोदामे जाय मिले है। तातैं एकएक विदेहमे छहछह खड भए है। तहां कुलाचलकी तरफ तीन खडनिके मध्य वीचले खडमे वृषभाचल है वहुरि सीता वा सीतोदाके तरफ तीन खडनिके मध्य वीचला आर्यखड है अन्य पाच म्लेच्छखड है। वत्तीस विदेह-

क्षेत्रनिमे चोसठी नदी है। तिनमे नीलाचल तै निकसी वत्तीस नदी तो गगासिधु ऐसे नामकू धारे है। अर निषधकुलाचलतै निकसी वत्तीस नदी रक्ता रक्तोदा नामकूं धारे हैं। या प्रकार विदेहक्षेत्र है।

वहुरि इहा अन्य विशेष लिखिए है। सुदर्शन मेरुकी च्यार विदिशपिविषै च्यार गजदंत पर्वत है। तहा ईशानदिशाविषै मौल्यवान् गजदतपर्वत है। ताका वैडूर्यमणीकासा वर्ण है। अर अग्निविदिशाविषै श्वेत रूपाके वर्ण सौमनस गजदतपर्वत है। अर नैऋत्यविषै तप्तसुवर्ण विद्युतत्प्रभगजदत है। अर वायुविदिशाविषै सुवर्णवर्ण गधमादन गजदतपर्वत है। ते गजदत मेरुते लेय नीलाचल निपधाचलते जाय लगे हैं तीस हजार दोयसे नव योजन कुछ अधिक इनिकी लवाई है। अर इनकी उचाई मेरुके निकट पाचसे योजन उचा है। अर कुला-चलनके निकट चारसे योजन प्रमाण है। ऐसे मेरुते चार विदिशानिविषै चार गजदतपर्वत कहे।

वहुरि सुदर्शनमेरु है सो चित्रापृथ्वीविषै हजार योजन याकी नीव है तहां तो दश हजार निवे योजन अर दश योजनके ग्यारवे भागप्रमाण चौडा है। वहुरि अनुक्रमते घटता घटता समभूमीविषै दश हजार योजन चौडा है। अर अतविषै एक हजार योजन चोडा है महामोनायमान एक लक्ष योजनप्रमाण उचा है। तहा एक हजार योजन तो चित्रा पृथ्वीविषै नीव है। अर समभूमीविषै चोगिरद जो भद्रसालवन तातै अनुक्रमतै घटता पाचसे योजन उचा चढी चारो तरफ पाचसे योजन चौडी कटना है। तिस कटनीविषै चारों तरफ नदनवन है। वहुरि ताके उपरि ग्यारह हजार योजन तो समान चौडाई लिए पर्वत उचा गया है। अर ग्यारह हजार योजन उपरि साढा इक्यावन हजार योजनक्रमतै घटता घटता साढा वासठी हजार योजन उचा चढीए, तहा पाचसे योजन सर्व तरफ चोगिरद कटनी है। तिस कटनीविषै सर्व तरफ सौमनस नामा वन है। वहुरि तहातै ग्यारह हजार योजन उचा समान प्रमाण लीए है वहुरि समने पचीस हजार योजन घटाय है। सो छत्तीस हजार योजन ऊचा चढिए तहा च्यारसे चौराणवे योजन चौडा चोगिरद कटनी है तिस विषै पाडु नाम वन है। तिसके बीची नीचे वारह योजन चौडी ऊपरि क्रमते घटी च्यार योजन चौडी रही ऐसी च्यालीस योजन ऊची वैडूर्य मणिमयी चूलिका है। ऐसे च्यार वन मेरुके है तिनकी दिशाविषै च्यारि जिनमदिर है सो च्यारों वननिविषै सोलह जिनमदिर है।

अव कीछु अन्य विशेष लिखिए है। मेरुपर्वत है सो समस्त क्षेत्रतैं उत्तरदिशामे है। जातैं आगमविषैं सूर्यको उदयकी अपेक्षा पूर्वादिकदिशा कही है। पूर्वविदेह क्षेत्रमे सूर्यका उदय नीलाचल ऊपरि दीखै है। अर निषधाचलऊपरि अस्त होता दीखे है। तातैं पूर्वदिशामे नील-पर्वत है। अर पश्चिम दिशामे निषधपर्वत है। अर दक्षिणमे समुद्र है। उत्तरमे मेरु है। वहुरि पश्चिमविदेहमे निषधपर्वततें सूर्यका उदय है। अर नीलपर्वत उपरि अस्त होय है। तातैं निषधाचल तो पूर्व है। अर नील पश्चिम है। अर दक्षिणमे समुद्र है। अर उत्तरमे मेरु है। वहुरि उत्तरकुरुभोगभूमीमे गंधमादन गजदंत ऊपरि सूर्यका उदय है। अर माल्यवान् गजदंत-उपरि अस्त होय है। वहुरि देवकुरु भोगभूमिमे सौमनस गजदंत ऊपरि सूर्यका उदय है। अर विद्युत्प्रभ गजदंतउपरि सूर्यका अस्त है। तातैं सौमनस पूर्व है। अर विद्युत्प्रभ पश्चिम है। अर निषध दक्षिण है। अर मेरु उत्तर है। या प्रकार च्यारो तरफते मेरुगिरि उत्तरमे जानना। सो इनका विस्तारकथन तथा विदेहक्षेत्रका अनेक विशेषवर्णन राजवार्तिकग्रंथतैं जानना। अव जिन क्षेत्रनिका विभाग भया वे कौन है अर कैसे तिष्ठे है इस हेतुते सूत्र कहे है-

तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनीलरुक्मिशिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥११॥

अर्थप्रकाशिका- तीन भरतादिक क्षेत्रनिके विभाग करनेवाले पूर्वपश्चिम लंबे ऐसे हिमवान् महाहिमवान् निषध नील रुक्मी शिखर ए छह कुलाचल पर्वत क्षेत्रनिका विभाग धारण करे है। तातैं इनकी वर्षधर संज्ञा है। भरतक्षेत्र अर हैमवत क्षेत्र अर इन दोऊनिकी सीमा-विषं पूर्वपश्चिम समुद्रपर्यंत लंवा सौ योजन ऊंचा पचीस योजन भूमीविषैं नींव जाकी ऐसा हिमवान नामा पर्वत है। सो भरतक्षेत्रकी चौडाईतें दूणा एक हजार वावन योजय अर एक योजनका उगणीसभागमे वारह भाग प्रमाण चौडा है। वहुरि तिस हिमवान पर्वतके पैलीतरफ पूर्वपश्चिम लंवा दक्षिणउत्तर चौडा हैमवत क्षेत्र है। सो इकवीसमे पांच योजन पांच कलाका चौडा है। इस विषैं मनुष्यनिका शरीर एक कोश ऊंचा दोय होय है एक दिनके अंतरालैं आवला प्रमाण आहार करे है। कल्पवृक्षनिके दोय नानाप्रकारके भोग भोगवे है विनयवान मंदकषाय है।

वहुरि यातैं परे महाहिमवान पर्वत है सो पूर्वपश्चिम समुद्रपर्यंत लंवा है। याका वियालीसे दश योजन दश कला प्रमाण चौडा विस्तार है। दोयसे योजन ऊंचे है। यातैं परे हरिक्षेत्र चौरासीसे इकवीस योजन एक कलाका चौडा है। पश्चिमसमुद्रपर्यंत लंवा है। इस विषैं मनुष्यनिका दोय कोश प्रमाण ऊंचा काय है दोय पल्यका आयु है। दोय दिन व्यतीत भए वहेडा प्रमाण आहार ले है। याते परे सोलह हजार आठसे बीयालीस योजन दोय कला प्रमाण चौडा पूर्वपश्चिम समुद्रपर्यंत लंवा च्यारिसे योजन ऊंच निषधपर्वत है याते परे तेतीस हजार

छसै चोरासी योजन च्यार कला प्रमाण विदेहक्षेत्र हैं। पूर्वपश्चिम समुद्रपर्यंत लंवा है। याते परे सोलह हजार आठसे बीयालीस योजन दोयकला प्रमाण चौडा पूर्वपश्चिमसमुद्रपर्यंत लवा च्यारिसे योजन ऊचा नीलपर्वत है। याते परे आठ हजार च्यारसे इकईस योजन एककला प्रमाण चौडा पूर्वपश्चिम समुद्रपर्यत लवा रम्यकक्षेत्र है। यामे मनुष्यनकी हरिक्षेत्रवत रचना है। याते परे च्यार हजार दोयसे दस योजन दश कलाका चौडा पूर्वपश्चिम समुद्रपर्यंत लवा दोयसे योजन ऊचा रुक्मी पर्वत है। याते परे दोय हजार एकसो पाच योजन पाच कलाप्रमाण चौडा पूर्वपश्चिम समुद्रपर्यत लवा हैरण्यवत नाम क्षेत्र हैं। यामे मनुष्यनिकी हिमवतक्षेत्रवत रचना हैं। याते परे एक हजार बावन योजन बारह कला प्रमाण चौडा सौ योजन ऊचा पूर्वपश्चिम समुद्रपर्यत लवा शिखरीपर्वत है। याते परे ऐरावत नामा क्षेत्र भरत-क्षेत्रवत है। ऐसे षट्कुलाचलनकरि क्षेत्रनिका सात विभाग होय है। तिन षट्कुलाचलनिका वर्णविशेष प्रतिपादनके अर्थि सूत्र कहे है—

हेमार्जुनतपनीयवैडूर्यरजतहेममयाः ॥१२॥

अर्थप्रकाशिका— हिमवान पर्वत सुवर्णमय कहिये पीतवर्णका है। महाहिमवान पर्वत रूप्यमय है। निषधपर्वत तरुणसूर्यके समान तप्तसुवर्णमय हैं। नीलपर्वत नीलवर्णका है। रुक्मिपर्वत रजतमय कहिये शुक्लवर्ण है अर शिखरीपर्वत हेममय कहिये पीतवर्णका है ऐसा जानना। अव इन पर्वतनिका औरभी विशेष स्वरूप कहनेकू सूत्र कहे हैं—

मणिविचित्रपार्श्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥१३॥

अर्थप्रकाशिका— नानाप्रकारके वर्ण अर प्रभावादिकनिकरि सहित जे मणि तिनकरि इन कुलाचलनिके पसवाडे विचित्र है। वहुरि मूलते लेय ऊपरिताई समान चौडे है। वहुरि सुगंधपुष्पादिकनिके धारक नानाप्रकारके उत्तम वृक्षनिकरि सोभासहित है। सर्वही पर्वतनिके दोऊ पार्श्वनिविषै वेदी है। अव इन पर्वतनिके ऊपरि तिष्ठते ह्रदनिके कहनेकू सूत्र कहे है—

पद्ममहापद्मतिगछकेसरिमहापुण्डरीकपुण्डरीका ह्रदास्तेषामुपरि ॥१४॥

अर्थप्रकाशिका— हिमवान कुलाचल उपरि पद्म ह्रद है। महाहिमवान उपरि महा-[illegible]। निषध उपरि तिगछ ह्रद है। नीलउपरि केसरि ह्रद है। रुक्मी उपरि महापुडरीक [illegible]। शिखरी उपरि पुडरीक ह्रद है। ऐसे छह कुलाचलनि ऊपरि छह ह्रद कहे। अब [illegible] आकारविशेष कहनेकूं सूत्र कहे है—

प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्द्धविष्कम्भो ह्रदः ॥१५॥

[illegible]— इनमे प्रथम जो पद्म नामा ह्रद है सो पूर्वपश्चिम एक हजार

योजन लवा है। अर दक्षिण उत्तर पाचसे योजन चौडा है। वज्रमय याका तल है। वहुरि अनेक प्रकारके मणि तथा सुवर्ण तथा रजत तिनकरि विचित्र इनका तट है। वहुरि च्यार द्वारनकरि सहित ऱ्हदसमान लबी चौडी अर्द्धयोजन ऊची पाचसे धनुष चौडी रूपमयी याके वेदी है। च्यारूतरफ वनखडकरि मडित है। स्फटिकमणिसमान स्वच्छ गभीर अक्षय जलकरि भन्या है अव तिसका ऊडापना कहनेकू सूत्र कहे है–

दशयोजनावगाहः ॥१६॥

अर्थप्रकाशिका– पद्मऱ्हदकी ऊडाई दशयोजनकी है।

तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥१७॥

अर्थप्रकाशिका– तिस पद्मऱ्हदमे एक योजनप्रमाण चौडा लवा कमल है। ताके एक कोस लबो पत्र हैं। अर दोय कोश चौडी बीचिमे कर्णिका है। अर जलतलते दोय कोश ऊचा याका नाल है। अर दोय कोश मोटे पत्र है। याका वज्रमय मूल है। अरिष्टमणिमय कद है। रजतमणिमय मृणाल है। वैडूर्यमणिमय नाल है। सुवर्णसमान पत्र है। तप्तसुवर्ण-समान केसर है। नानामणिकरि विचित्र सुवर्णमय कर्णिकायुक्त कमल है। तिस कमलकी ऊचाईते अर्द्धउच्चताके धारक एकलक्ष चाळीम हजार पद्रह याके परिवारके कमल है। तिन परिवारके कमलनिमे श्रीदेवीके परिवारके देवनिके वसनेके महेल मकान हैं। अव अन्य ऱ्हदनिका प्रमाण तथा कमलनिका प्रमाण कहनेकू सूत्र कहे है–

तद्द्विगुणाद्विगुणा ऱ्हदाः पुष्कराणि च ॥१८।

अर्थप्रकाशिका– पहिले ऱ्हदते तथा कमलते दूनेदूने लवाई चोडाईरूप अगिले अगिले ऱ्हद तथा कमल जानने। तहा पद्मऱ्हदते सर्वप्रकार दूना महापद्म ऱ्हद है। अर महापद्म ऱ्हदते दूना तिगछ ऱ्हद है। ऐसे तीन ऱ्हद कहे तैसेही प्रमाण लीए उत्तरके तीन ऱ्हद हैं। इन ऱ्हदनिकी लवाई चोडाई ऊडाई दक्षिणके तीन ऱ्हदनीके समान उत्तरकेनिके जाननी। अर इनि ऱ्हदनिमे जे कमल है तेहू दूणा प्रमाणकू लीए है। पद्म ऱ्हदमे एक योजनका कमल कह्या तातै दूणा महापद्म ऱ्हदमे कमल है सो जलतलतै दोय कोश ऊचा है। अर दोय कोश लवा पत्र है। अर एक योजन मोटा पत्र है। अर एक योजनकी कमलके बीचि कर्णिका है। अर ताके परिवारके कमल पद्मऱ्हदसमानही एक लाख चालीस हजार पनरा है। विस्तार दूणा है। यातै तिगंछ ऱ्हदका प्रमाण तथा कमल विस्तार दूणा है। अर उत्तरका इन तीन ऱ्हदनिके तुल्य है। अव इनि ऱ्हदनिके बीचि कमलनिमे निवास करनेवाली देवी है तिनके नाम आयु परिवारके जनावनेकू सूत्र कहे है–

तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः ॥१९॥

अर्थप्रकाशिका– जे ह्रदनिविषै कमल कहे तिनमे छह देवी क्रमते वसनेवाली है। तिन ह्रदनिमें कमल है ते वनस्पतिकाय नही है। पृथ्वीकाय रत्नमय है। कमलनिके आकार है। तिन कमलनिकी कर्णिकाके मध्य अतिनिर्मल उज्वल महल हैं। तिन महलनिमे निवास करनेवाली अनुक्रमते श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी है नाम जिनके ऐसी देवी वसे है। तिनका एकएक पल्यका आयु है। अर तिस वडे कमलके परिवारके कमल है तिन विषै तिन देवीनिके सामानिक जातिके परिषद जातिके देव वसे है। अव जिन नदीनिकरि क्षेत्रनिमे विभाग भया तिनके नाम कहनेकू सूत्र कहे है–

गंगासिन्धूरोहिद्रोहितास्या हरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्तासुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥२०॥

अर्थप्रकाशिका– इनि छहो ह्रदनिते निकसि सप्तक्षेत्रनिविविषै गमन करे ऐसी चोदह महानदी है। तिनके नाम गगा सिंधु रोहित रोहितास्या हरित हरितकाता सीता सीतोदा नारी नरकाता सुवर्णकला रूप्यकूला रक्त रक्तोदा। ए चोदह नदी छहो ह्रदनिते निकसी है तहा पहला पद्मह्रद अर छवा पुडरीक ह्रद इनतै तीनतीन नदी निकसी है। अर च्यार ह्रदनिते दोयदोय नदी निकसी है। अव इन नदीनिका दिशाप्रति गमनका नियम कहे है।

द्वयोर्द्वयो पूर्वा पूर्वगा ॥२१॥

अर्थप्रकाशिका– दोयदोयमैते जे पहिले नामकरि कहि ते पूर्वसमद्रकू जाय है। एक एक क्षेत्रविषै दोयदोय नदी अनुक्रमते गई है। तहा दोयदोयमे जे पहिले नामकरि कहि जे गगा रोहित हरित सीता नारी सुवर्णकूला रक्ता ए सात नदी पूर्वसमुद्र प्रति गमन करे है। अन्य सप्तनदीनिका गमन जणावनेकू सूत्र कहे है–

योजनतै कुछ अधिकप्रमाण हिमवान् पर्वततै गोमुख सियाका प्रनालिकातै हिमवान् पर्वततै पचीश योजन परै दश योजन मोटी काहलाकार धारा भरतक्षेत्रमे पडी सो तहा एकसाठी योजन चौडा लवा गगा नाम कुड है ।

ताकी दशयोजनप्रमाण ऊडाई है वज्रमय जाका तल है तिस कुडमे साढादश योजन ऊचा अष्ट योजन चौडा लवा एक द्वीप है तिस द्वीपऊपरि श्रीदेवीका गृहप्रमाण महलकरि मडित श्री श्रीदेवीका मदिर है तिम मदिर ऊपरि कमलासन सिहासन ऊपरि परमशातस्वरूप जिनेद्रका प्रतिविव विराजे है तिस प्रतिविव ऊपरि हिमवान पर्वतते पडिकरि तिस कुडके दक्षिणतोरणद्वारकरिके निकसि सो सवाछह योजन चौडी अर्ध योजन ऊडी क्रमकरि विस्तारकू प्राप्त होती भुजगवत कुटिलगामिनी खडप्रपातनाम विजयार्द्धकी गुफाकरि विजयार्द्धकै नीचै गमन करि विजयार्द्धकू व्यतीतकरि दक्षिणसन्मुख होय दक्षिणभरतका मध्यमे जाय पूर्वसन्मुख मोडा खाय सवा योजन ऊडी साडावासठि योजन चौडा विस्तारकरि मागधद्वारकरि लवणसमुद्रमे प्रवेश करे है ।

वहुरि तिसही पद्मन्हदके पश्चिम तोरणद्वारकरि निकसि गगाकी ज्यो पाचसे योजन हिमवान् पर्वत ऊपरी सूधी जाय सिधूकूटते दक्षिणसन्मुख मुडी गगाकी ज्यो सिंधूकुडमे पडि तामिस्रागुफाकरि विजयार्द्धकू छाडि पश्चिमसन्मुख होय दक्षिणभरतके अर्द्धतै प्रभासतीर्थद्वारकरि लवणसमुद्रमे प्रवेश करै है । याका कुडादिककी स्वामिनी सिंधूदेवी है । वहुरि तिसही पद्मन्हदके उत्तरतोरणद्वारकरि रोहितास्या नाम नदी निकसी सो दोयसे छिहत्तरी योजन अर छह कला ता उत्तरके सन्मुख हिमवान् पर्वतऊपरी गई फेरि साढा द्वादश योजन विस्तार अर एक योजन ऊडी सौ योजन कुछ अधिक लबी हिमवत् क्षेत्रमे एक सौ वीस योजनप्रमाण विस्तीर्ण अर वीस योजन ऊडा वज्रमय तलसहित कुड है, तामे सोल्ह योजन चौडालवा साढा वारह योजन ऊचा द्वीप है ता ऊपरि श्रीदेवीका ग्रहप्रमाण मदिर ताविषै जिनप्रतिविव ऊपरि रोहितास्या नामा नदी पडिकरि तिस कुडका उत्तरतोरणद्वारतै निकर्सा उत्तरसन्मुख शब्दवद्वैताढ्यपर्वतकी अर्द्ध प्रदक्षिणा देय अर अर्द्धयोजनपरेसू मूडि पश्चिमसन्मुख जाय पश्चिमलवणसमुद्रमे प्रवेश करे है। सो या नदीनिकसी तहा तो साढा वारा योजन चौडी एक कोश ऊडी है। अर समुद्रमे प्रवेश कीया है तहा एकसो पचीस योजन चौडी अर अढाईयोजन ऊडी है । ऐसे ए तीन नदी हिमवान् पर्वततै निकसी है ।

वहुरि ऐसेही महापद्म न्हदके दक्षिणतोरणाद्वारतै निकसी रोहित नदी सो सुधा दक्षिण-सन्मुख होय हैमवत् क्षेत्रमे पडी पूर्वसमुद्रको जाय है । वहुरि महापद्म न्हदके उत्तरद्वारतै निकसी हरिकातानदी हरिक्षेत्रमे होय पश्चिमसमुद्रमे प्रवेश करे है । वहुरि तिगछ न्हदके दक्षिणतोरण द्वारतै निकसी हरित् नदी हरिक्षेत्रमे होय पूर्वसमुद्रको जाय है । वहुरि तिगछ न्हदके उत्तर-

तोरणद्वारतैं निकसी सीतोदा नाम नदी सो देवकुरुक्षेत्रमे पडी मेरूके सन्मुख जाय दोय कोशतैं ही मेरु टली मेरुकी अर्द्ध प्रदक्षिणा देय विद्युत्प्रभ गजदतकी गुफामे प्रवेशकरि पश्चिमविदेहके मध्य होय पश्चिम समुद्रमे गमन करे है। वहुरि फेरि न्हदके दक्षिणतोरणद्वारतैं निकसी सीता नाम नदी उत्तरकुरुभोगभूमिमे पडि मेरुके सन्मुख जाय आधयोजनतैं मेरुकी अर्द्धप्रदक्षिणा देय माल्यवान गजदतके नीचे होय पूर्वविदेहमे होय पूर्वसमुद्रमे प्रवेश करे है। वहुरि फेरी न्हदके उत्तरतोरणद्वारतैं निकसी नरकाता नदी रम्यकक्षेत्रके मध्य होय पश्चिम समुद्रमे जाय है।

वहुरि महापुडरीक न्हदके दक्षिणतोरणद्वारतैं निकसी नारी नाम नदी रम्यकक्षेत्रमे होय पूर्वसमुद्रमे प्रवेश करै हैं। वहुरि महापुडरीक न्हदके उत्तरतोरणद्वारतैं निकमी रूप्य-कूलानदी है सो हैरण्वतक्षेत्रमे होय पश्चिमसमुद्रको जाय है। अर पुडरीक न्हदके दक्षिण-तोरणद्वारतैं निकसी सुवर्णकूलानदी हैरण्यवतक्षेत्रमे होय पूर्वसमुद्रको जाय है। वहुरि सोही पुडरीक न्हदके पूर्वतोरणद्वारतैं निकसी रक्ता नाम नदी सो शिखरीपर्वतऊपरी पाचसे योजन सुधी जाय वहुरि उत्तर सन्मुख होय ऐरावतक्षेत्रमे पडी गगानदीकीज्यो पूर्वसमुद्रमे गमनकरे हैं। वहुरि पुडरीक न्हदके पश्चिमतोरणद्वारकरि निकसी रक्तोदा नाम नदी सिन्धुनदीकीज्यो पश्चिमसमुद्रमे प्रवेश करे है।

इन सर्वनदीके दोऊ तटानिविषैं सुदर फलपुष्पादियुक्त नानाप्रकारे वृक्षनिका वन है। अत्र इन नदीनिका निकसना अर परनाली होय पडना अर चौडाई ऊडाई अर तिनकुडनिके द्वीपनऊपरि पडी तिन कुडनिका द्वीपनका विस्तार अर मूलतैं निकसी तहाका विस्तार ऊडाई अर समुद्रमे मिली तहाकी चौडाई ऊडाईका विस्तार विदेहके मध्य प्राप्तहुई सीतासीतोदा नदी-पर्यंत दूनादूना जानना। इहा जुदाजुदा तथा और विशेषवर्णन ग्रथ वधनेके भयते नही लिखा है। ऐसे सात क्षेत्रनिमे चोदह नदी है। तहा हिमवत। हरि। रम्यक। हैरण्यवत। इनि च्यार क्षेत्रनके मध्यविषैं च्यार नाभिगिरि है। अर विदेहक्षेत्रके मध्यमेरुही नाभिगिरि है। जिन क्षेत्रनमे दोयदोय नदी है ते तो नाभिगिरिके सन्मुखजाय आधआध योजन उरे तैं मुडी नाभिगिरिकी तथा मेरुकी अर्द्धप्रदक्षिणा देय समुद्रमे गमन करे है। ऐसे पाच क्षेत्रसबधी दश नदी जाननी अर [illegible] नाभिगिरि नाही है। तहा सबधी च्यार नदीनिका प्रवाहादिक समान है। [illegible] नदीनिका परिवार कहनेकू सूत्र कहे है

भरत षड्विंशतिपंचयोजनशतविस्तारः षड्चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥२४॥

अर्थप्रकाशिका- भरतक्षेत्र है सो पांचसे छबीस योजन अर एक योजनका उगणीस भागमे छह भागप्रमाण दक्षिण उत्तर विस्तार है । अन्य क्षेत्रानिका विस्तार विशेषकी प्रतिपत्तिके अर्थि कहे है ।

तद्द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः ॥२५॥

अर्थप्रकाशिका- तिस भरतक्षेत्रतै कुलाचल तथा क्षेत्र दूनादूना विस्ताररूप विदेह-क्षेत्रपर्यंत हैं । तहा भरतक्षेत्रतै दूना चौडा एक हजार बावन योजन बारहकलाका हिमवान् पर्वत है । हैमवतक्षेत्र इकईससै पाच कला है । महाहिमवान् कुलाचल च्यार हजार दोयसै दश योजन दश कलाका है । हरिक्षेत्र आठ हजार च्यारसे इकईस योजन एक कला है । निषध-कुलाचल सोलह हजार आठसै बीयालीस योजन दोय कला है । विदेहक्षेत्र तेतीस हजार छसै चोरासी योजन च्यार कला है । ऐसे विदेहपर्यंत दूनादूना विस्तार है । आगे उत्तरके कुलाचल क्षेत्रादिकनिका प्रमाण कहनेकू सूत्र कहे है-

उत्तरा दक्षिणतुल्या ॥२६॥

अर्थप्रकाशिका- उत्तरके ऐरावतादिक नीलपर्यंत भरतादिक दक्षिणके क्षेत्रनकरि तुल्य जानने योग्य है । अब कहे है जो भरतादिक क्षेत्रनिमें मनुष्यादिकनिके सुखदुखानिकनिका अनुभवादिक तुल्य है कि कुछ विशेष है । यातै सूत्र कहे है ।

भरतैरावतयोर्वृद्धिन्हासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥२७॥

अर्थप्रकाशिका- भरत ऐरावत इन दोय क्षेत्रनिविषै उत्सर्प्पण जो वढना अर अवसर्पण जो घटना इनि रूप जो छह काल तिनकरि मनुष्यादिकनिके आयुका प्रमाण कायका प्रमाण भोग उपभोग सम्पदा वीर्य बुद्ध्यादिकनिका वढना घटना होय है । उत्सर्पिणीमें दिनदिन वधे है । अवसर्पिणीमे घटे है । तहा अवसर्पिणी तो सुखसुखमा १, सुखमा २, सुखमदुखमा ३, दुखम-सुखमा ४, दुखमा ५, अतिदुखमा ६, ऐसे छह प्रकार है । अर उत्सर्पिणीहु अतिदुखमा १, दुखमा २, दुःखमसुखमा ३, सुखमदुखमा ४, सुखमा ५, सुखमसुखमा ६, ऐसे छह प्रकार है । अवसर्पिणीका प्रमाण दशकोडाकोडीसागरका है । सोही उत्सर्पिणीका प्रमाण दश-कोडाकोडीसागरका है । ए दोऊ मिले हुये कल्पकाल है । तहा सुखमसुखमा च्यार कोडाकोडीसागरप्रमाणका है इसकी आदिमे मनुष्य उत्तरकुरुभोगभूमिका मनुष्यकै तुल्य है । तिसकी क्रमतै हानी होतै दूजा काल सुखमा नामा तीन कोडाकोडीसागरका प्रवर्ते है । तिस कालकी आदिमे मनुष्य हरिवर्षके मनुष्यसमान हैं । मध्यभोगभूमिका रचना इस कालमे है ।

तिसकी क्रमतै हानी होतै सुखमदुःखम नामा तीजा काल दोय कोडाकोडीसागरका प्रवर्त्तै है। तिस कालकी आदिमे मनुष्य जघन्यभोगभूमिकीज्यो हैमवतक्षेत्र ताके मनुष्यनिकरि तुल्य होय है। तिस कालकी क्रमतै हानी होतै दुःखमसुखमा नामा चौथा काल प्रवर्त्ते है। याका बीयालीस हजार वर्ष घाटी एक कोडाकोडीसागर प्रमाण काल है। तिसकी आदिमे मनुष्य विदेहनिके मनुष्यनिके तुल्य है। तिसकालकीहू क्रमतै हानी होतै दुःखमा नामा पचम काल इकईस हजार वर्षका प्रवर्त्ते है। इस कालकू क्रमतै व्यतीत होतै अतिदुःखमा नामा इकईस हजार वर्षका प्रवर्त्ते है।

प्रथम कालकी आदीमे मनुष्यनिका आयु तीन पल्यका अनुक्रमतै घटता अतमे दोय पल्यका है। द्वीतीय कालका आदिमे आयु दोय पल्यका अतमे अनुक्रमते घटतै एक पल्यका है। तृतीय कालकी आदिमे आयु एक पल्यका अतमे घटतै घटतै एक कोटी पूर्वका है। चतुर्थ कालकी आदिमे एक कोटी पूर्वका अतमे अनुक्रमते एकसोवीस वर्षका पचमकालकी आदिमे मनुष्यनिका आयु एकसोवीस वर्षका अतमे क्रमते घटता वीस वर्षका है। छठ्ठा कालकी आदिमे मनुष्यनिका आयु वीस वर्षका अतमे क्रमतै घटता पनहरवर्षका है। ऐसे मनुष्यनिका छह कालसबधी उत्कृष्ट आयु कह्या।

वहुरि मनुष्यनिका शरीरकी ऊचाई प्रथमकालकी आदिमे तीन कोस अतमे दोय कोस। द्वितीयकालकी आदिमे दोय कोश अतम एक कोश। तृतीय कालकी आदिमे एक कोश अतमे पाचसे धनुष्य ऊचा है। चतुर्थ कालकी आदिमे पाचसे धनुष्य अतमे सप्त हस्त ऊचा है। पचमकालकी आदिमे सप्त हात ऊचा अतमे दो हस्त ऊचा है। छठा कालकी आदिमे दोय हस्त ऊचा अतमे एक हस्त ऊचा है। ऐसे छह कालमे शरीरकी उचता कही। प्रथम कालमे मनुष्यनका वर्ण ऊगता सूर्य समान हैं। दूजामे पूर्णमासीके चद्रमासमान है। तृतीय कालमे हरित श्यामवर्ण है। चतुर्थकालमे पचवर्ण है। पचमकालमे कातिहीन मिश्र पचवर्ण है। छठामे धूमवत श्यामवर्ण है। ए छह कालमे शरीरका वर्ण कह्या।

अव इनके आहार कहे हैं। प्रथम कालमे तीन दिन गए चौथे दिन वदरीफलके प्रमाण आहार ग्रहण करे है। द्वितीय कालमें दोय दिन गए पीछै वहडा प्रमाण आहार ग्रहण करे है। अर तृतीय कालमे एक दिन गया पछै आवला प्रमाण भोजन करे है। अर चतुर्थकालने रोजीना एकवार। पचम कालमे वहुतवार अर छठा कालने अतिप्रचुरवृत्तिकरि भोजन करे है। ऐसे मनुष्यनिके छह कालमे आहारको क्रम कह्यो।

अर तीजा कालताई इस भरतक्षेत्रमे भोगभूमि प्रवर्त्ते है। अर चतुर्थ पचम कालमे कर्मभूमि प्रवर्त्तै है। अर अवसर्प्पिणीका पचमकलाका तीन वर्ष साढा आठ महीना अवशेष [illegible] निमित्ततै प्रभातकालमे धर्मका नाश होयगा मध्यान्ह कालमै राजाका नाश [illegible] अर अपराह्न कालमे अग्निका नाश होयगा। तीठा पाछै छठा कालमे मनुष्य नग्न

रहेगे मत्स्यादिकनिका आहार करेगे। जातै पुद्गलनिका लूखापणातै तो अग्निका नाश होयगा। अर मुनि श्रावकादिकका अभावतै धर्मका नाश होयगा। अर असुरपतिका कोपतै राजाका नाश होयगा। ऐसे दुखम जो पचमा काल ताका स्वरूप कह्या।

अब अतिदुखमा नाम छठा काल एकवीस हजारपर्यंत प्रवर्त्तैका। इस कालमे मनुष्य नरकतिर्यंच गतीके आएही उपजै है। अर नरक तिर्यंचगतिहीमे जाय उपजै है। अर इस छठे कालमे मनुष्य मत्स्यादिकनिका आहार करे है नग्न रहे है। तिस छठा कालका अतमे आर्यखडमे सवर्त्तक नाम पवन चलै है। सो पवन पर्वत वृक्ष भूम्यादिकको चूर्ण करतो दिशाका अततांई आर्यखडमे परिभ्रमण करे हैं। तिस पवन करि आर्यखडके जीव मरणको प्राप्त होय है। अर कितनेक विजयार्द्धके वा गगासिंधुकी वेदीके निकटवर्त्ती मनुष्य तिर्यंच जीव विजयार्द्धके वा गगासिंधूकी वेदीके क्षुद्रविलनिमे प्रवेश करे है। अर कितनेक देव विद्याधर दयावान होय मनुष्य युगलादि वहुत जिवनितै बिल गुफादिकनिमे प्रवेश करावे है। ऐसे छठा कालका अतमे सात सात दिन पर्यंत पवन अतिशीतल क्षार विष कठोर अग्निरज धूम इनकी उणचास दिनपर्यंत वृष्टि होय हैं। तदि तिन वर्षानिकरि अवशेष जन नष्ट होय है। अर विषकी अर अग्निकी वर्षाकरि पृथ्वी एकयोजनपर्यंत नीचातांई कालका प्रभावतै चूर्ण होय है। इसकू प्रलयकाल कहे है। और जो एकाती महाप्रलय माने है सो नही जानना।

वहुरि उत्सर्पिणीकालका प्रवेश होय है। तिसका प्रथमकालकी आदिमे मेघवर्षे है। ते सातसात दिन पर्यंत जल दुग्ध घृत अमृत रसानै वर्षै है। तदि तिन वर्षानिकरी भूमि उष्णता छाडि सचिक्कणता कातिमानतातै धारण करे है। अर वल्ली वृक्ष औषधादिक प्रगट होय है तदि नदीतीर गुफादिकमे तिष्ठते जीव भूमिका शीतल सुगधगुणकरि खैंचे हुए निकसिकरि क्रमतै भूमिविषै विचरैंगे ते नग्न रहेग मृत्तिकाका आहार करेगे। ऐसे उत्सर्पिणीका प्रथमकाल इकईस हजार वर्ष प्रमाण व्यतीत होय चुके तदि उत्सर्पिणीका दुखमा नाम द्वितीय काल इकईस हजार वर्षका प्रवर्त्तै हैं। तिस द्वितीय कालका एक हजार वर्ष बाकी रहे सोलह कुलकर होय है। ते कुलकर कुलका आचार अग्निसे अन्नादिक पकावना इत्यादिक क्रिया प्रगट करै है। वहुरि वियालीस हजार वर्ष घाटि एक कोडाकोडीसागरप्रमाण तीसरा काल प्रवर्त्तै है। तिसमे तीर्थंकरादिक तरेसठिशलाका पुरुष प्रगट होय है। वहुरि उत्सर्पिणीका चौथा कालमे जघन्यभोगभूमि, पाचमामे मध्यभोगभूमि, छठामे उत्कृष्टभोगभूमि ऐसे उत्सर्पिणीका छह काल। वहुरि अवसर्पिणीका पहला दूजा तीजामे भोगभूमि, चोथामै, पाचमामे कर्मभूमि, छठामे प्रलय ऐसे शुक्लपक्ष कृष्णपक्षकीज्यौ निरतर प्रवर्त्तै है। अब कहे है अन्य भूमिविषै कैसी अवस्थिति है यातै सूत्र कहे है--

ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥२८॥

अर्थप्रकाशिका-- तिन भरत ऐरावत क्षेत्रनतै अन्य जे क्षेत्र है ते अवस्थित है।

जैसीकी तैसीही रचना रहे है। जैसे भरत ऐरावत क्षेत्रमें काल पलटै है। आयुकायादिक घटै वधे है। तैसे नही घटे वधै है। अव अन्यक्षेत्रनिमे आयु अवस्थित कैसे रहे है यातै सूत्र कहे है–

एकद्वित्रिपल्योपमस्थितयो हैमवतकहारिवर्षकदैवकुरुवकाः ॥२९॥

अर्थप्रकाशिका– हैमवत क्षेत्रनिका मनुष्यनिका एक पल्यका हैं। हरिक्षेत्रके मनुष्यनिका आयु दोय पल्यका है। देवकुरुके मनुष्यनका आयु तीन पल्यका है। इन तीन भोगभूमिमे कायका प्रमाण एक कोश दोय कोश तीन कोश ऊचा है। अर आहार जघन्य भोगभूमिमे एकदिनके अतर। मध्यमे दोय दिनके अतर। उत्कृष्टमे तीन दिनके अतर है। इनिके मल मूत्र पसेवादिक नही है। रोग नही मरणके अवसरमे वेदना नही। पुरुषकू उवासी स्त्रीकू छिंक मरणसमयमे आवे है। अन्य वेदना नही होय है। वालवृद्धपणाका क्लेश नही है। व्रतसयम नही है। केईकनिकै सम्यक्त्व होय है। कलहादिक दुख नही है। पृथक्त्व अपृथक्त्व दोऊ प्रकारकी विक्रिया करे है। मरण भए पछे देह कपूरवत विलाय जाय है। मरे पीछे सम्यग्दृष्टी तो सौधर्म ईशान स्वर्गमे देव होय है। मिथ्यादृष्टि भवनत्रिकमेहू उपजै है। परस्पर ईर्षा वैरभावरहित है। तिर्यंच है ते च्यार अगुल ऊचे महामिष्ट तृण अमृत समान भक्षण करे है। जहा जाडा शीत गरमी आताप नही। मणिमयी भूमिका है। वर्षा नही होय है। जहा स्वामी सेवक नही। छह कर्मके क्लेशकरि जीविका नही है। कल्पवृक्षनिके दीए मनोवाछित भोजन वस्त्र आभरण वाहन महल पात्र वादित्र समस्त भोग उपभोग सामग्री भोगै है। व्यभिचारादिक अधर्म जहा नही है। विकलत्रयादिक जीव नही है। जहा तिर्यंच महाभद्रपरिणामी वैरविरोध रहित स्थलचर नभचरहि है। जलचर नही है। ऐसे भोगभूमिका वर्णन कीया। अव उत्तरक्षेत्रनिकी अवस्थितिनिकै अर्थि सूत्र कहे है–

तथोत्तराः ॥३०॥

अर्थप्रकाशिका– जैसे दक्षिणके क्षेत्रनिकी रचना है तैसेही उत्तरके क्षेत्रनिमे है। तहा हैरण्यवतकी रचना हैमवतक्षेत्रकै तुल्य है। अर रम्यक्षेत्रकी रचना हरिक्षेत्रके तुल्य है। अर उत्तरकुरुकी रचना देवकुरुके तुल्य है। ऐसे उत्कृष्ट मध्यम अर जघन्य इन तीन भोगभूमिका [illegible] है। [illegible] है। पचमेरुसबधी तीस भोगभूमी है। अव विदेहकी अवस्थिति कहनेकू

अतर्मुहूर्तका है। इहा पूर्वका प्रमाण ऐसा जानना। चोरासी लक्ष वर्षका एक पूर्वांग होय है। चोरासी लाख पूर्वांगका एक पूर्व होय है। सो कर्मभूमिमै उत्कृष्ट आयु कोडीपूर्वकी है। अब आगे कह्या जो भरतक्षेत्रका विस्तार ताकू प्रकारातरकरि कहे है।

भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥३२॥

अप्रर्थकाशिका— जम्बूद्वीप एकलक्ष योजन प्रमाण है ताका एकसौ निवै भागकी जेतामें एकभागमात्र भरतक्षेत्रका विस्तार है। पूर्वे जो भरतक्षेत्रका पाचसौ छवीस योजन छ कला प्रमाण विस्तार कह्या सो जम्बूद्वीपका लक्ष योजन क्षेत्रमे ऐसे बटवारा है। भरतकी एक शलाका। हिमवानपर्वतका विस्तार दोय शलाकामें है हिमवन क्षेत्रका च्यार। महाहिमवतका आठ। हरिक्षेत्र सोलह भागमै है निषधाचल बत्तीस भागमें है। विदेही चोसठि भागमे है। नीलाचल पर्वत बत्तीसमे। रम्यक सोलहमे रुक्मीपर्वत आठ भागमे। हैरण्यवत क्षेत्र चारि भागमे शिखरीपर्वत दोय भागमे। ऐरावतक्षेत्र एकभागमे। ऐसे एकसोनिवै विभाग जानने।

अव इस जबूद्वीपकू वेढे लवणनामा समुद्र है। सो समभूमिविषै है। याका विस्तार दोय लाख योजनका सर्वतरफ है। अर इस समुद्रकी ऊडाई दोऊ तटनिविषै तो माशीकी परसमान है। फिर अनुक्रमतै ऊडाई बधी है सो पिच्याणवे अगुल गए एक अगुलकी ऊडाई है। अर पिच्याणवै हस्त गए एक हस्तप्रमाण ऊडा है। पच्याणवे योजन गये एक योजन ऊडा है। ऐसेही तटतै पच्याणवं हजार योजन दूरि गये एक हजार योजनका ऊडा है। जहा हजार योजन ऊडा है तहा दश हजार योजनके विस्ताररूप रह्या तितनीही जलकी चौडाई है। ऐसे तौ नीचे क्रमते दोऊ तटनीतै ऊडाई वधी हैं सो दोऊ तटनितै पचाणवे हजार योजन गए हजार योजनका ऊडा है तहा दश हजार योजनकी चौडाई है।

वहुरि समभूमितै दोऊतरफ जलकी उचाई वधी है। सो दोऊ तटनितै पच्याणवे हजार योजन गए सोलह हजार योजन ऊचा है। जल है तहा दश हजार योजनकी चौडाई है। यवनिकी राशीकी ज्यो याका ऊचा जल है। यातै लवणसमुद्रका मृदगका सस्थान है। जैसे मृदगका एक विभाग लंबा ऊचा होय एक विभाग छोटा होय है। अर जैसे मृदग वीचिमैतै चौडा होय नीचे उपरि दोऊ तरफ क्रमतै घटताघटता होय दोऊ मुखकी चौडाई समान होय। तैसे समुद्रहू बीचि दोय लक्ष योजन प्रमाण चौडा अर नीचे क्रमते घटता हजार योजन ऊडा गया तहा दश हजार योजनका चौडा हैं। अर ऐसेही उपरि क्रमते घटता घटता सोलह हजार योजन उचा समभूमितै गया तहा जल दश हजार योजनका चौडा है। सो पूर्णमासीके दिन तो समभूमितै जल सोलह हजार योजन उचा होय है। अर उपरि दश हजार योजन चौडा विस्तार होय हैं। फिर पडिवाके दिनतै लगाय दिनदिनप्रति तीनसे तेतीस योजन अर एक

योजनका तीजा भाग प्रमाण उच्चताकरि घटता जाय है सो अमावसीके दिन ग्यारह हजार योजन समभूमिते ऊचा जल रहिजाय है। इस सीवाय घटैनही तहां जलकी चौडाईका प्रमाण गुणहतरि हजार तीनसे पचैनरि योजनप्रमाण रहे है। फिर शुक्लपक्षकी पडिवाते जलकी ऊचाई तीनसे तेतीस योजन, एक योजनका तीजा भाग नित्य वधै है। सो पूर्णिमा पर्यंत पद्रह दिनमे पाच हजार योजन वधै तदि सोलह हजार योजन उचा होय है। अर उपरि दश हजार चौडाई होय है। सो इहा जलके घटने वधनेका ऐसा हेतु जानना। जो लवणसमुद्रके मध्यभागका परिधिके अभ्यतर पृथ्वीमे खाडेसमान एक हजार आठ पातालकलश है तहा चारो दिशानिमे एक एक लक्ष योजनके ऊडे च्यार पाताल कलश है। तिनकी ऊडाई रत्नप्रभा पृथ्वीका पकभागताई है। वहुरि च्यारो विदिशानिविषे दश हजार योजन ऊडा च्यार अन्य कलश है। वहुरि इन आठो कलशनिके आठ अतराल, तिन एक एक अतरालविपे एकसो पचीस एकसो पचीस अन्य छोटे कलश है। ऐसे आठ अतरालनिके एक हजार कलश है। ते एक हजार योजनकी ऊडाई लिए है। ऐसे समस्त कलश एक हजार आठ है।

वज्रमय इन पातालनिकी सर्व तरफ भीति है। तिन भितनिकी मोटाई दिशानिके पातालनिकी पाचसे योजनकी। विदिशानिकेकी पचास योजनकी अतरालके हजारकी पाच पाच योजन मोटी है मृदगके आकार है। सो इनकी उचाईके प्रमाण मध्यस्थानकी चौडाई है। अर पींदा अर मुख अपनी उचाईके दशवे भाग है। दिशानिके चार कलशनिकी उचाई अर मध्यकी चौडाई लक्ष लक्ष योजनकी है। अर मध्यमेसू अनुक्रमतैं नीचे उपरि दोऊ तरफ घटता गया है सो पींदा अर मुख प्रत्येक दश हजार योजनका चौडा है। अर विदिशाके चार प्रत्येक उचे दश हजार योजन है अर मध्यमे उदरहू दश हजार योजनका है। वहुरि मध्यते नीचे वा उपरि क्रमते घटता एक हजार योजन चौड है। अर आठ अतरालनमे तिष्ठते एक हजार [illegible], एक हजार योजन ऊडे अर मध्यमे चौडे है। अर मध्यते उपरि नीचे घटे है सो पींदा अर मुख एकसो योजन प्रमाण है। वहुरि इन समस्त एक हजार आठ कलशनिकी अपनी अपनी उचाईका तीन तीन भाग करिए तहा नीचला त्रिभागविषै तो पवन है। अर मध्यका त्रिभागविषै जल अर पवन दोऊ है। अर उपरला त्रिभागविषे केवल जलही भऱ्या है। तहा [illegible] तो पातालनिका मध्यभागविपे पवन वधे है सो दिनप्रति जल ऊचा वधै है। अर [illegible] पवन नीचे बैठे है ताते जल दिनप्रति घटि है। ऐसे लवणसमुद्रका वर्णन है।

नदिराका रसरूप है। पाचमा क्षीरवरसमुद्र दुग्धके स्वादरूप है। अर छठा घृतवार घृतके वादरूप है। ऐसे सात समुद्र तो भिन्न स्वादरूप कहे। अर इनतै अन्य असख्यात समुद्रहै तिनके ाल इक्षुरसके समान स्वाद है। वहुरि कच्छमच्छादिक जलचर जीव है ते लवणसमुद्र अर ालोदधिसमुद्र अर स्वयभूरमण इन तीन समुद्रनिमेही है। अन्य असख्यात समूद्रनिमे नही है। ार समस्तसमुद्र हजार योजनप्रमाण समान ऊडे है। अव आगे लवणोदधिके अनतर धातकीखड ाम दूसरा द्वीप है तहा सबधी रचना कहनेकू सूत्र कहे है।

द्विर्धातकीखण्डे ॥ ३३ ॥

अर्थप्रकाशिका— धातकीखडद्वीपविषै भरतादिक्षेत्र दोयदोय हैं। धातकीखड नाम ्सरा द्वीप है सो लवणसमुद्रतै कडाकीज्यौ वेढीकरि च्यार योजन चौडा तिष्ठे है। जो जम्बूद्वीप-ामान खड करिए तो लवणसमुद्रका चोईस होय धातकीखडका १४४, कालोदधिका ६७२, ुष्करका २८८०, ऐसे विस्तार जानना। ताकी दक्षिणउत्तरदिशामे दोय इष्वाकार पर्वत है। ीपप्रमाण च्यारि लाख योजन लबे है। ते लवणोदधि कालोदधिकी वेदीकू स्पर्शे है। ते ़ष्वाकार च्यारसे योजन ऊचे है। सौ योजन ऊडे हैं। एक हजार चोडे है। तिनकरि द्वीपमे ोय भाग भया। तहा पूर्वभागके मध्य विदेहविषै अचल मेरु है। सो इन मेरुगिरिनिकी प्रत्येक ्क हजार योजन नीव अर चौरासी हजार योजन उच्चता है। तहा समभूमिविषै तो भद्रसाल ान है। तातै पाचसे योजन ऊपरि नंदनवन अर साढे पचपन हजार योजन ऊपरि सोमनसवन ार अठाईस हजार योजन ऊपरि पाडुक वन ऐसे च्यार वन है। ऐसे दोय मेरुपर्वत इनकी ्रूलिका चालीस योजन ऊचीपनाके वर्णे है।

वहुरि इन दक्षिण इष्वाकारते लगाय दोय तरफ भरतक्षेत्र है। वहुरि हिमवान्पर्वत ़त्यादि ऐरावतक्षेत्र है। ऐसे चोदह क्षेत्र वारह कुलाचल है। इनकी रचनाका दृष्टात ऐसा है ैसे पृथ्वी ऊपरि गाडीकी पह्या धरि देखिए तिस पह्याका आरसमान कुलाचल पर्वत तिष्ठै ै। ते पर्वत दोउ तरफ सर्वत्र समान चोडे है। अभ्यतर लवणोदधिके निकट अल्प चोडे है। ऐसे तहा क्षेत्र कुलाचल तिष्ठै है। वहुरि तहा भरतक्षेत्रका मध्यविस्तार वारह हजार पाचसे इक्याशी योजन अर एके योजनका दोयसे वारह कला करिए तिनमे छत्तीस कला प्रमाण है। अर आगे हैमवत हरि विदेह पर्यत क्षेत्रनिका चोगुणाचोगुणा विस्तार है। वहुरि उत्तरके क्षेत्र कुलाचल है ते दक्षिणकेनिके समान हैं। ऐसे धातकी खड नामा दूसरा द्वीप है। तामे उत्तरके कुरुक्षेत्रविषै परिवारके वृक्षनिसहित धातकीवृक्ष है तातरि सोभित है।

पुष्करार्द्धे च ॥ ३४ ॥

अर च्यारसे योजन ऊचे है। अर आठ लाख योजन लबे है। कालोदधि अर मानुषोत्तरकी वेदीताई है तातैं द्वीपमे दोय भाग भया तहा पूर्व तो मदरमेरु है। अर पश्चिम विद्युन्माली मेरु है। दोऊ तरफ क्षेत्र कुलाचलनिकी रचना है। पुष्करार्द्धके भरतक्षेत्रका मध्यविस्तार त्रेपन हजार पाचसे वारह योजन अर एक योजनका दोयसे वारह भाग करिए तिनमे एकसो निव्याणवे भाग अधिक है। वहुरि इन च्यार मेरुगिरनिका प्रमाण समानरूप है। वहुरि कुलाचल तथा वक्षारगिरि तथा नदी है तिनकी चौडाई जबुद्वीपतै दूनी धातकीद्वीपविषैं है। अर धातकीद्वीपतैं दूनी चौडाई लीए पुष्करार्द्ध विषै हैं। परतु ए समस्त पर्वत उच्चताकरि जम्बूद्वीपके पर्वतनिकी ऊचाईकरि समान है, अधिक उच नाही। वहुरि धातकीसे पुष्करार्द्धमे क्षेत्रनिकी वाह्य चौडाई अभ्यतर चौडाईते अधिक है। याहीते तहाके गजदन्त पर्वत है ते दोय अधिक लवे है। अर दोय अल्प लबे है। ऐसे प्रत्येक च्यारो मेरुसबधी जानने। धातकीद्वीप तथा पुष्करार्द्धविषै प्रत्येक चौदह क्षेत्र वारह कुलाचल दोय इष्वाकार सहित अठाईस स्थान रूप च्यारो तरफ रचना है। सो सर्वस्थाननिके चौडाईका अक जोडी द्वीपकी परिधि जानिजाय है। वहुरि इस पुष्करार्द्धमे उत्तर कुरुक्षेत्र विषे परिवारवृक्षनिसहित पुष्कर नामा वृक्ष है सो अपने परिवारके वृक्षनिकरि शोभित है। याहीतैं पुष्करार्द्ध ऐसी सार्थक सज्ञा हैं। वहुरि पुष्करार्द्धद्वीपके वीचही वीचि वलयावृत्तिरूप चौफेर सुवर्णवर्ण मानुषोत्तर नामा पर्वत है सो सतरहसे इकईस योजन उचा है। अर एक हजार वाईस योजन मूलविषै चौडा है। अर चारसे तेतीस योजन एक कोश याकी पृथ्वीविषै नीव हे। सातसे तेईस योजन याका मध्यविस्तार हैं। चारसे चोईस योजन याका ऊपरि विस्तार है। अर मनुष्यलोककी तरफ भीतिसमान सपाट सूधा है। अर वाहिरकी तरफ मूलतैं उपरि उपरि क्रमहानिकरि अल्प चौडा है। सो याकी कृति अर्द्ध यवराशीके समान है। वहुरि पुष्करार्द्धकी चौदह नदी निकसनेकी पर्वतके नीचे गुफा है। इस पुष्करार्द्धके मध्यविषै मानुषोत्तर पर्वतका पतनकरि अर्द्धद्वीप वाह्य रह्या तातैं पुष्करार्द्ध ऐसी सज्ञा कहिए है। जो क्षेत्र पर्वतादिकनिकी रचना है सो अर्द्धपुष्करद्वीपमेही है, समस्त पुष्करद्वीपमे नही है यातैं सूत्र कहे है—

इस द्वीपका अतिमध्यभागविषै च्यारै दिशानिविषै च्यार अजनगिरीनाम पर्वत है। अजनवर्ण श्याम है। सो एक हजार योजन तिनकी भूमिविषै नीव हैं। अर समभूमितै चौरासी हजार योजन उचे है। अर तिनका मूलमे मध्यमे अर अग्रभागमे समालविस्तार लीए चौरासी हजार योजनही उच्चता के समान चौडे है। ढोल के आकार है। तिनकी च्यारो दिशानिमे एक लक्ष योजन क्षेत्र छाडि एक एक अजनगिरिकी च्यार दिशामे च्यार बावडी है। ते एक लक्ष योजन लबी अर चौडी अर हजार योजन ऊडी चोकोर है। ऐसे च्यार अजनगिरि सबधी सोलह बावडी हैं। इनि बावडीके च्योगिरद चार वन है। अशोकवन, सप्तपर्णवन, चपकवन, आम्रवन, ते च्यारो वन वावडीसमान एक लक्ष योजन लबे है। अर पचास हजार योजन चौडे है। वहुरि तिन बावडीनिके मध्यविषै एक एक दधिमुख नाम पर्वत है। ते हजार योजन भूमिमे नीवसहित है। अर दश हजार योजन ऊचा तथा मूलमे मध्यमे ऊपरि समान विस्तार लिए दश हजार योजनका चौडा है। गोल है ढोलके आकार है। सुवर्णमय है। तिनके उपरिम भाग श्वेत रूपामय है। याहीतै इनिकू दधिमुख सज्ञाकरि कहिए है।

ऐसे सोलह दधिमुख पर्वत है। बहुरि इन एकएक वावडीकी च्यारो कोणनिकै समीप च्यारि रतिकर पर्वत है। ते एक हजार ऊचे अर मूलमे मध्यमे उपरिम भागविषै सर्वत्र एक हजार योजनके विस्तार चौडे है। अढाईसे यौजनकी पृथ्वीविषै नीव है। ढोलके आकार है। सुवर्णमणिरूप है। ऐसे चोसठी रतिकर हैं। तिनमे अभ्यतर कोणमे तिष्ठतै वत्तीस रतिकर पर्वतविषै देवनिके क्रीडा करनेके स्थान हैं। अर बाह्य दोयदोय कोणनिमे तिष्ठते तिनि उपरि अरिहंत भगवानके आयतन है। ऐसेही च्यार दिशानिके च्यार अंजनगिरि अर सोलह दधिमुख अर वत्तीस रतिकरनिके उपरि मध्यभागविषै जिनमदिर है। ऐसे नदीश्वरद्वीपमे वावन जिनमदिर हैं।

आगे नवमा अरुणवर अर दशमा अरुणभास द्वीपसमुद्र है। वहुरि ग्यारमा कुडलवर-द्वीप है। ताका मध्यविषै कुडलगिरि पर्वत चौफेर द्वीपका अर्द्धभागकू वेढे वलयाकार सुवर्णवर्ण पचहत्तरी हजार योजन ऊचा है। मूलमे दश हजार दोयसे बीस योजन चौडा है। ऊपरि च्यार हजार दोयसे चालीस योजन चौडा है, ताकी च्यारो दिशामे च्यार जिनमदिर है, कुडलवर-द्वीपको वेढे कुडलवर समुद्र है। बहुरि वारमा सखवर नामा द्वीपसमुद्र है। आगे तेरमा रुचकवर नाम द्वीप है। ताका मध्यविषै वलयाकार चौगिरद रुचक नामा पर्वत है सो सुवर्णवर्ण है चोरासी हजार योजन ऊचा है। चोरासी हजार योजनही नीचे ऊपर मध्यमे वरावर समान चौडा है। तिस गिरिके ऊपरि च्यारों दिशानिमे च्यार जिनमदिर है। वहुरि इस पर्वत ऊपरि अनेक कूट है। तिनमे अनेक देवीनिका निवास हैं। ते देवी तीर्थंकरप्रभूनको गर्भजन्मकल्याणकमे माताकी अनेक प्रकारकरि सेवा करे है। आगे कहे जे मानुपोत्तरके अभ्यतर मनुष्य ते दोय प्रकार है यातै सूत्र कहे है—

आर्या म्लेंछाश्च ॥३६॥

अर्थप्रकाशिका– आर्य अर म्लेच्छ इस भेदतैं दोय प्रकार मनुष्य है। ते आर्य दोय प्रकार है। ऋद्धिप्राप्त आर्य अनृद्धिप्राप्त आर्य। तिनमे ऋद्धिप्राप्त आर्य तो जिनकै अष्टप्रकार ऋद्धिनिमंते कोऊ ऋद्धि ऊपजी ते ऋद्धिप्राप्त आर्य हैं। अर जिनको ऋद्धि नही उपजी ते अनृद्धिप्राप्त आर्य है।

तिनमे अनृद्धिप्राप्त आर्यके पच भेद है। १ क्षेत्रआर्य २ जातिआर्य ३ कर्मआर्य ४ चारित्रआर्य ५ दर्शनआर्य। तहा काशी कोसलादि आर्यदशनिविषै उपजे ते क्षेत्रआर्य है। इक्ष्वाकुवश भोजवशादिकविषै उपजे ते जातिआर्य है। वहुरि कर्मआर्य तीन प्रकार है। सावद्यकर्म आर्य। अल्पसावद्यकर्म आर्य। असावद्यकर्म आर्य तहा सावद्यकर्मार्य छह प्रकार है। असि, मसि, कृषि, विद्या. शिल्प, वाणिज्य, जे खड्गादिक आयुध धारणकरि जीविका करे सो असिकर्म आर्य है। वहुरि द्रव्यका आवदि अर खरच लिखनेमे निपुण ते मसिकर्म आर्य है। आलेख्य गणितादिक वहत्तरि कलामे प्रवीण ते विद्याकर्मार्य है। वहुरि धोवी, नाई, कुभार, लुहार, सुनार, इत्यादिक शिल्पकर्म आर्य है। वहुरि चदनादि गध घृतादि रस धान्य कर्पासवस्त्रादिक मुक्ताफल मणिक्यादिक नानाप्रकार द्रव्यनिके सग्रह करनेवाले वहुत प्रकार वाणिकर्म आर्य है। ए छहू अविरतमे समर्थपणातैं सावद्यकर्म आर्य है। अर विरताविरतपरिणत जे श्रावक ते अल्पसावद्य कमार्य है। अर सकलसयमी जे साधु ते असावद्यकर्म आर्य है।

वहुरि चारित्र आर्य दोय प्रकार है। अभिगतचारित्रार्य। अनभिगतचारित्रार्य। विना-उपदेशही चारित्रमोहका उपशम क्षय क्षयोपशमतैं आत्माकी उज्वलतातैंही चारित्रपरिमाणकू ग्रहण करे ऐसे उपशातकषायगुणस्थान धारनेवाले तथा क्षीणकषायी ते अभिगतचारित्रार्य है। वहुरि अतरगमैं चारित्रमोहके क्षयोपशमतैं वाह्यके उपदेशके निमित्तते सयमरूप परिणाम धारे सो तो अनभिगत चारित्रार्य है। वहुरि दर्शनआर्य दशप्रकार है। तिनका आज्ञामार्गादि दश भेद है। ऐसे तो अनृद्धिप्राप्तार्य पचप्रकार कह्या

ाननाा सो वीजवुद्धिऋद्धि हैं। वहुरि जैसे कोष्ठाध्यक्षकरि कोष्ठमें स्थापे स्थारिल्यारे प्रचुरधान्य जादिक ते वहुतकालतक जितनेके तितने धरे रहे हैं घटै वढे नही परस्पर मिले नहीं जिस लमे सभाले तिसकालमे तैसेही पावे तैसेही परके उपदेशकरि ग्रहण कीए जे वहुत शब्द अर्थ ज तिनका वुद्धिमे जैसेके तैसे अवस्थान रहे। एक अक्षर तथा अर्थ घटै वधै नही आगे छै अक्षर होय नही सो कोष्ठवुद्धिऋद्धि हैं।

वहुरि जो ग्रथकी आदिका वा मध्यका वा अतका एकपदपरतै श्रवणकरि समस्तग्रथ । अर्थका निश्चय करना सो पदानुसारित्वर्द्धि है।६। वहुरि चक्रवर्त्तीका कटक वारह ाजन लवा नव योजन चौडा पडे है। तिस विषै गज घोडा उट वल धनुष्यादिकनिके नाना-कारके अक्षर अनक्षरात्मक एके काल जानै युगपत् उपजें शब्दनिकू तपोविशेषके वलका लाभतै त्रे जीवके प्रदेशविषै श्रोत्रेद्रियावरणकर्मका क्षयोपशम होय तातै भिन्नभिन्न श्रवण करे सो भिन्न श्रोतृत्व नाम ऋद्धि है।७। वहुरि तपके विशेषकरि प्रकट भया जो असाधारण सनेद्रिय श्रुतज्ञानावरणवीर्यातरायके क्षयोपशम अगोपागनामकर्मका जाके उदय ऐसा मुनिके सनाका विषय नव योजनप्रमाण ताके वाह्यतै रसका स्वादके जाननेका सामर्थ्य सो दूरा-वादनसामर्थ्य नाम ऋद्धि है। ऐसेही स्पर्शनेद्रिय तथा घ्राणेद्रिय चक्षुरिद्रिय श्रोत्रेद्रिय इनके षयके क्षेत्रतै वाह्य वहुत क्षेत्रके गध स्पर्श शब्दके जाननेका सामर्थ्य होय सो ऋद्धि है तातै पाच द्रियसवधी पाच ऋध्दिए भई।१२। वहुरि महारोहिणि आदिक विद्यादेवता तीनवार आवे र प्रत्येक अपना अपना स्वरूप सामर्थ्य प्रकट करे ऐसी वेगवान विद्यादेवतानिका लोभादिककरि ानका चारित्र चलायमान न होय ते दशपूर्वरूप दुस्तरसमुद्रके पार प्राप्त होय तिनके दशपूर्वित्व-ऋध्दि है।१३। अर सपूर्ण श्रुतकेवलीपणो सो चतुर्दशपूर्वित्वर्‍ध्दि है।

वहुरि अतरिक्ष भौम अग स्वर व्यजन लक्षण छिन्न स्वप्न नाम धारक अष्टागनिमित्त-ान है। वहुरि सूर्य चद्रमा ग्रह नक्षत्रनिका उदय अस्तादिक देखि अतीत अनागत फलका कहना ो अतरिक्ष नामा निमित्तज्ञान है। वहुरि पृथ्वीकी कठोरता कोमलता सच्चिक्कणता रूक्षतादिक खि विचार करवेकरि वा पूर्वादिकदिशामे सूत्र पडते देखिकरि हानिवृद्धि जयपराजय इत्यादिक ाानना। तथा भूमिमे तिष्ठते सुर्वण रूप्यादिकका प्रकट जानना सो भौम नामा निमित्तज्ञान है। हुरि अग उपगादिकके दर्शन स्पर्शनादिक करि त्रिकालभावी सुखदुखादिकका जानना सो ाग नाम निमित्तज्ञान है। अर अक्षर अनक्षररूप तथा शुभ अशुभके श्रवणकरि इष्टानिष्ट-लका प्रकट करना सो स्वर नामा निमित्तज्ञान हैं। वहुरि शिर मुख ग्रीवादिक विषे तिल ुसल सण इत्यादि लक्षण के देखनेकरि त्रिकालसबधी हिताहितका जानना सो व्यजन नामा निमित्तज्ञान है। वहुरि श्रीवृक्ष स्वस्तिक भृगार कलश आदि चिन्ह शरीरविषे देखनेते तीन कालके विषे पुरूषके स्थान मान ऐश्वर्यादिक विशेषकू जाने सो लक्षण नाम निमित्तज्ञान है। वहुरि वस्त्र शस्त्र छत्र उपानत् अशन शयनादिकविषे देव मनुष्य राक्षसादिककरि तथा शस्त्रक-

टकमुखी आदिककरि छेदे गए होय तिनके देखनेतै त्रिकाल सबधी लाभ अलाभ सुख दुःखका जानना सो छिन्ननिमित्तज्ञान है। वहुरि वात पित्त श्लेष्म दोषकरि रहित पुरुषके पश्चिमरात्रिविषै चद्रमा सूर्य पृथ्वी पर्वत समुद्रका मुखमे प्रवेशादि करे सो तो शुभस्वप्न है। अर घृत तैलकरि अपना देहके लिप्तता तथा खर उष्ट ऊपरि चढि दक्षिणदिशामे गमन इत्यादिक अशुभस्वप्न तिनका दर्शनतै आगामी कालमे जीवन मरण सुख दुःखादिकका प्रकट करनेवाला स्वप्न नामा निमित्तज्ञान है। ए अष्टप्रकार निमित्तज्ञानका ज्ञाता होय सो अष्टागनिमित्तज्ञ नामा ऋद्धि है। १५।

वहुरि कोऊ अतिसूक्ष्म अर्थका स्वरूपका विचार जैसा होय तिसमे चौदह पूर्वके धारिही निरूपण करि सके अन्य नही करि सके ऐसे सूक्ष्म अर्थका जो सदेहरहित निरूपण करै सो प्रकृष्टश्रुतज्ञानावरण अर वीर्यातरायके क्षयोपशमतै प्रकट भई जो प्रज्ञाशक्ति तातै प्रज्ञाश्रमणत्व ऋद्धिका धारक है। १६। वहुरि परके उपदेशविनाही अपने शक्तिके विशेषतै ज्ञानसयमके विधानविषै निपुणता होय सो प्रत्येकबुद्धता है।१७।

वहुरि इद्रभी आय वाद करे तो ताकू निरुत्तर करदे अर आप नही रुकै वादिके छिद्रकू जाणि ले सो वादित्वर्द्धि होय है। ऐसे अठारह प्रकार बुद्धिऋद्धि है। वहुरि विक्रियर्द्धि दोय प्रकार है। एक आकाशगामित्व, एक चारण, तहा चारणर्द्धि अनेक प्रकार है। तहा जलऊपरि भूमिकीज्यो चरणनिका उठावना मेलना इत्यादिककरि जलकायकै जीवनिकै वाधा नही उपजै सो जलचारण है। वहुरि भूमितै च्यार अगुल ऊचे आकाशविषै जघा उठाय शीघ्रनालै बहुत सैकडा योजन गमन करनेमे समर्थ सो जघाचारण है। ऐसेही ततुचारण [illegible]चारण पत्रचारण श्रेणीचारण अग्निशिखाचारण इत्यादिक चारणर्द्धि है। ते पुष्पफलादिक [illegible] गमन करतेहू पुष्प फल अकुर पत्र अग्नि इत्यादिकनिके जीवनकै वाधा नही होय ते [illegible] चारणर्द्धि है। वहुरि पर्यंकासन वैठा कायोत्सर्गकरि खडेतै पगके उठावने मेलने विना [illegible]आकाशमें गमन करनेमें कुशल ते आकाशगामित्वऋद्धिके धारक है।

७, बहुरि देव दानव मनुष्यादिकनिके वशीकरण करनेका सामर्थ्य सो वशित्व ऋध्दि हैं–८ हुरि पर्वतादिकनिके मध्य आकाशकीज्यौं गमनागमन करनेका सामर्थ्य सो अप्रतिघात नामा ट्रध्दि है–९, अदृश्य होनेकी सामर्थ्य सो अतर्धान ऋध्दि है–१०, बहुरि युगपत अनेक आकार प करनेका सामर्थ्य सो कामरूपित्व ऋध्दि है। ऐसे अनेक प्रकार विक्रियर्द्धि है।

बहुरि सप्त प्रकार शुध्दि है। तहा जो एक उपवास वा वेला तेला पचोपवास क्षोपवासादिकनिमैते कोऊ योगका आरभ भया तो मरणपर्यंत उतना उपवासनतै हीन पारणा ही करै। बहुरि कोऊ कारणतै अधिक उपवास होजाय तो वातै मरणपर्यंत कमती उपवासकरि ारणा नही करे। ऐसा सामर्थ्य प्रकट होना सो उग्रतत ऋध्दि है–१, बहुरि महान उप- ासादि करतैहू मन बचन कायका बल वधताही रहै। दुर्गधरहित मुख रहै। अर कमलादिककी ुगधवत् सुगध निस्वास नीसरै। अर शरीरकी महान दीप्ति होजाय सो दीप्तितप ऋध्दि है–२ बहुरि तप्तायमान लोहके कडाहमे पडा जलके कणकीज्यौ आहार सूकी जाय मल रुधिरादिक रूप नाही परिणमे ऐसे आहार करतैहू जिनकै निहार नही होय सो तप्तऋध्दि है–३, बहुरि सिंहनिक्रीडितादि महानतपके करनेमे तत्पर सो महातप ऋध्दि है–४, बहुरि वात पित्त श्लेष्म सन्निपाततै उपज्या ज्वर कास स्वास नेत्रशूल कोढ प्रमेहादिक अनेक प्रकारके रोग तिनकरि सतापित है देह जिनका तोभी अनशन कायक्लेशादिक तपतै नही छूटते अर भयानक स्मशान पर्वतके शिखर गुफा दराडा कदरा शून्यग्रामादिकविषै दुष्ट यक्ष राक्षस पिशाचनिके प्रवर्त्ते वेतालरूप विकार होतैहू अर कठोर स्थालनिनीके रुदन तथा निरतर सिंह व्याघ्रादिक दुष्ट जीवनिके भयानक शद्व जहा निरतर प्रवर्त्तै ऐसे भयकर स्थाननिविषै निर्भय भए वसे सो घोरतप ऋद्धिका प्रभाव है–५, बहुरि पूर्वे कहे रोग तिनकरि युक्त हुए अर अतिभयकर स्थानमें वसतेहू तपके योग वधावनेमै तत्पर सो घोरपराक्रम ऋद्धिके धारक है।६। बहुरि बहुत कालतै ब्रह्मचर्यके धारक मुनिनकै अतिशय रूप चारित्रमोहनीय कर्मका क्षयोपशमतै नष्ट भए है खोटे स्वप्न जिनके ते घोरब्रह्मचर्य ऋद्धिके धारक है।७। ऐसे सप्त प्रकार तपशुद्धि है। इनिके स्मरणमात्रतै कोटय विघ्न विनाशनै प्राप्त होय अप्रमाण शक्तिके धारक होय है।

बहुरि पचमी मन वचन कायके भेदकरि वलर्द्धि तीन प्रकार है। बहुरि मन श्रुतज्ञाना- वरण वीर्यातरायका क्षयोपशमका प्रकर्ष होतै अतर्मुहूर्त्तमे समस्त श्रुतका अर्थका चितवनका सामर्थ्य जिनकै होय ते मनोवलर्द्धिके धारक है। बहुरि मनइद्रियावरण अर जिन्हाश्रुतावरण वीर्यांतरायके क्षयोशमके अतिशय होतै अतर्मुहूर्त्तमे सकलश्रुतके उच्चारण करनेका सामर्थ्य होय वा निरतर उच्च स्वरतै उच्चारण करतेह स्वेद नही उपजै अर कठ स्वरभंग नही होय सो वचन- बल ऋद्धि है।२। बहुरि वीर्यातरायका क्षयोपशमतै असाधारण कायका वल प्रकट होतै मासिक चातुर्मासिक वार्षिक प्रतिमायोग धारतैहू शरीर खेदरूप नही होय सो कायवल ऋद्धि है।३। ऐसे तीन प्रकार वलर्द्धि कही।

पाचसे योजन परै द्वीप है ते पचावन योजनके विस्तार है। अर आठ दिशानके अंतरालके द्वीप है ते लवणसमुद्रकी वेदीतै पाचसे पचास योजन परै जाइए तहां पचास योजनकै विस्तार है। अर पर्वतके अतके अष्ट द्वीप है ते लवणसमुद्रकी वेदीतै छसै योजन दूर है। अर पचीस योजनके विस्तार है। तिनमे पूर्वदिशाके द्वीपमे एक जंघावाले एकटगे ऊपजै है। पश्चिम दिशाके द्वीपमे पूछवाले मनुष्य उपजै है। उत्तर दिशाके द्वीपविषै वचनरहित गूगा उपजे है। दक्षिणदिशाविषै सिंगवाले मनुष्य उपजै है। च्यार विदिशाके द्वीपनिविषै क्रमतै सूसासमान कर्णवाले अर शाकल-समान कर्णवाले अर कर्णप्रावरण कहिए एककानकू विछायले एक कानकू ओढी ले ऐसे अर लवकर्ण ऐसे ऊपजै है।

वहुरि अष्ट अतर्दिशानिमे घोडाकासा मुख सिहकासा मुख भैसाकासा मुख सूरकासा मुख व्याघ्रसारिसा मुख घुगूसारिसा मुख वानरसारिसा मुख ऐसे मनूष्य उपजै है। वहुरि शिखरीपर्वतके अतकै सन्मुख द्वीपनमे मेघसारिसे विजुलीसारिसे है। अर हिमवानपर्वतके दोऊ अंतविषै मत्स्यमुख कालमुख मनुष्य है। वहुरि विजयार्द्धपर्वतके दोऊ अतविषै हस्तीसमान मुख अर दर्पण समान मुखवाले मनुष्य है। वहुरि दक्षिणविजयार्द्धके उभय अतरविषै गौसमान मुख अर मीटासमान मुखके धारक है। वहुरि इनमे एक जघावाले इकटगे हैं ते मृत्तिका जो मांटी ताका आहार करे है। अर गुफानमे वसैहै। अर अन्य है ते वृक्षनके फल फूलनका आहार करे है। अर वृक्षनिकैं नीचे बसै है। अर समस्त अतर्द्वीपके मनुष्यनिका एक पल्यका आयु हैं। वहुरि ते चोवीस अतर्द्वीप जलतै एक योजन ऊंचे है। जैसे लवणसमुद्रमे अतर्द्वीप अडतालीस हैं दोऊ तटसंबधी तैसेही कालोदधिसमुद्रमे अडतालीस जानना। ऐसे समस्त छिनवै अतर्द्वीपनिमे कुभोगभूमिया मनुष्य है। वहुरि कर्मभूमिके म्लेछ शक यवन शवर पुलिंदादिक अनेक जाति है। वहुरि एकसो सत्तरि कर्मभूमिके क्षेत्र है तिनमै एकसो सत्तरी तो आर्यखंड है। अर आठसै पचास म्लेछखड हैं तिनके निवासी म्लेछही है। अव कर्मभूमि कौन है इस प्रश्नतै सूत्र कहे है—

भरतैवरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः ॥३७॥

अर्थप्रकाशिका— पाच भरतक्षेत्र पाच ऐरावतक्षेत्र अर देवकुरु उत्तरकुरु विना पांच विदेहक्षेत्र इनिमै कर्मभूमि है। जातै पचमेरुसवधी पच भरत पच ऐरावत अर पंच विदेह हैं। तिनमे विदेहके एक मेरुसबधी वत्तीस भेद है तातै विदेहसहित एकसो साठि क्षेत्र है। ऐसे सव मिलि कर्मभूमिके एकसो सत्तरी क्षेत्र है। अर एक मेरुसवधी हिमवत् हरिक्षेत्र रम्यकक्षेत्र हैरण्यवतक्षेत्र अर देवकुरु उत्तरकुरु ऐसें छह भोगभूमि है। सव भोग-भूमि पचमेरु सबंधी तीस हैं तिनमे दश जघन्य दश मध्यम दश उत्कृष्ट है। तिनमें दशप्रकारके कल्पवृक्षनिकरि दीए भोगभोगते सुखरूप तिष्ठे है। अव कोऊ पूछे जो कर्म-

भूमिके एकसो सत्तरी क्षेत्र कहे सो कर्मका आश्रय तो तीन लोकका क्षेत्र है इनिकूही कर्मभूमिका क्षेत्र कैसे कह्या। ताकू कहिए है। जो सप्तम नरक पहूचनेका पापकर्म अर सर्वार्थसिद्धि जावनेका शुभकर्म इनक्षेत्रविषै ही उपार्जन होय है। तथा असि मषि कृपि शिल्प वाणिज्य पशुपालन ए छह कर्मभी इनि क्षेत्रनिविषैही है तथा देवपूजा गुरुउपासना स्वाध्याय सयम तप दान ए छह प्रकार प्रशस्तकर्म इनि क्षेत्रनिविषैही है। तातै इनकू कर्मभूमि कहिए है। अब समस्तभूमिविषै मनुष्यनिकी स्थितिके जनावनेकू सूत्र कहे है—

नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते ॥३८॥

अर्थप्रकाशिका— मनुष्यनिकी उत्कृष्ट स्थिती तीन पल्यकी हैं जघन्य अतर्मुहूर्त्तकी है। मध्यके अनेक भेद है। मुहूर्त्तका प्रमाण दोय घडीका है। अर दोय घडीके अभ्यतर होय सो अतर्मुहूर्त्त है। अब पल्यका कहा प्रमाण है तातै प्रकरण पाय प्रमाणकी विधका परूपण करे है। तहा प्रमाण दोय प्रकार है। एक लौकिक दूजा अलौकिक। तहा लौकिक मान छह प्रकार है। मान, उन्मान, अवमान, गणितमान, प्रतिमान, तत्प्रतिमान, ऐसे छह प्रकार है। तिनका दृष्टात कहिए है। पाईमाणि इत्यादिकरि अन्नादिकका प्रमाण करिए सो पाईमाणीकू मान कहिए। बहुरि तुला जो काटा ताखडी इत्यादिककरि प्रमाण करिए ताकू उन्मान कहिए। बहुरि हस्तकी चलू इत्यादिकरि प्रमाण करिए सो अवमान है। बहुरि एक दोय तीन च्यार इत्यादिकरि प्रमाण करिए सो गणितमान हैं। बहुरि गुंज रती मासा तोला इनिकूं प्रतिमान कहिए। बहुरि तुरग घोडादिकनिका मोल सो तत्प्रतिमान कहिए। ऐसे लौकिक मान छह प्रकार कह्या। बहुरि लौकिकमानकू अन्य प्रकारहू कहे है। तिनमे गज हस्तमापा इत्यादिकनिकू करि मापा अवमान है।

केवलज्ञान हैं अर जघन्य अर उत्कृष्टके मध्य बीचके जितने भेद है तितने मध्यममानके है।

वहुरि द्रव्यमान दोय प्रकार है। एक सख्यामान अर दूजा उपमामान। तिनमे सख्यामान के तीन भेद है। सख्यात, असख्यात, अनत। तिनमे सख्यात तो एक प्रकार अर असख्यात तीन प्रकार है। १ परितासख्यात, २ युक्तासख्यात, ३ असख्यातासख्यात। वहुरि अनतहू तीन प्रकार है। १ परीतानत, २ युक्तानत, ३ अनतानत। ऐसे सप्त भये। इनके प्रत्येत जघन्य मध्य उत्कृष्ट भेद करिये तब इकईस भेद सख्याप्रमाणके भये। तहा सख्यातका प्रमाण जाननेके अर्थि जम्बूद्वीपप्रमाण लक्ष योजन चौडे लबे अर गोल अर एक हजार योजन ऊडे ऐसे च्यार कुड कल्पना करिये। तिनके नाम ऐसे है। १ अनवस्थाकुड, २ शलाकाकुड, ३ प्रतिशलाकाकुंड ४ महाशलाकाकुड। तिनमे अनवस्थाकुडकू सिरसूनिकरि भरीये अर उपरि शिखा चढाईए। तिस शिखासहित कुडमे केती सरसू मावै सो प्रमाण कहे है। लक्षयोजन प्रमाण कुडका जो एक योजन ऊडा एक योजन चौडा एक योजन लवा चौकोर खड करिए तो ७५०००००००००००० सात लाख पचास हजार कोटी खड होय। सो इस लक्ष योजनके कुडमे सरसु भरिये तो केती मावै सो कहे है। इस एक योजनके पाचसे व्यवहार योजन होय है। अर एक योजनके चार कोश होय है। एक कोशके दोय हजार धनुष्य होय हैं। एक धनुष्यके च्यार हजार हात होय है। एक हस्तके चोईस अगुल होय। एक अगुलके आठ यव होय एक यवकी आठ चौकोर सरस्यू होय। ए समस्त राशि धनरूप है सो इनका तीन तीन जायगा माडि परस्पर गुणाकार करना। जैसे जो क्षेत्र च्यार कोश लवा च्यार कोश चोडा च्यार कोश उचा होय ताका एक कोश चोडा एक कोश लवा एक कोश ऊचा खड करिये तो च्यारके अक्षरको तीन जायगा माडि परस्पर गुणिये तो चोसठी खड होय। ऐसे तीन तीन जायगा माडि परस्पर गुणाकार कीये चौकोर सिरसू होय तिस नव चौकोर सरस्यूकी गोल सोलह सिरसू होय है।

ऐसे करतै जम्बूद्वीपसमान जो कुड ताकौ विषै इतने अकप्रमाण सिरसू मावे है। १९७९१२०९२९९९६८००००००००००००००००००००००००००००००००। वहुरि इस कुड उपरि जो शिखा जाय है सो परधिके ग्यारवे भाग प्रमाण ऊची जाय है। तिस शिखाकी सिरसूका प्रमाण ऐसा जानना। १७९९२००७४५४५१६३२३६३६३५३५३५३५३५३५३५३-५३५३५३५३५३६ $\frac{४}{११}$ अव कुडकी सिरसूका प्रमाण अर शिखाकी सिरसूका प्रमाण मिलाइए है सो एता होय है। १९९७११२९३८४५१३१६३६३६३६३६३६३६३६३६३६३६३६३ ६३६३६३६ एता प्रमाण अनवस्थाकुडकी सिरसूका भया।

एकवार अनवस्थाकुड पूर्ण भऱ्या तव अेक सिरसू शलाका नाम दूसरा कुडविषै क्षेपी। वहुरि तिस अनवस्थाकुडके मध्यवर्ती जे समस्त सिरसू तिनकौ मति कहिये। बुद्धिका विचार तेहकरि गृहण करे अथवा देव ग्रहण करिकै अेक द्वीपविषै अेक समुद्रविषै वहुरि अेक द्वीपविषै अेक समुद्रविषै ऐसे सरसो क्षेपतै जहा परिपूर्ण होय तिह द्वीपसो वा समुद्रसो लगाय पहिली

भये जे द्वीप वा समुद्र जम्बूद्वीपपर्यंत तिन सवनिका प्रमाणके समान अर ऊडा हजार योजनका ऐसा कुड करना सो कुड तिन पूर्वोक्तप्रकार गोल सिरसूनिकरि भरना तदि शलाका कुडमे एक सिरसू और नाखणी। फिर उस अनवस्थकुडकीहू सिरसू आगले द्वीपसमुद्रनिमे अेक अेक क्षेपतै उस कुडकी सिरसूंभी जिस द्वीप वा समुद्रमें पूर्ण होजाय तितना द्वीपसमुद्रप्रमाण कुंड अेक हजार योजन ऊडा फिर शिखासहित सिरसूकरि भरना तदि तीजी सिरसू शलाका कुडमे फेर क्षेपिये ऐसे करते करते अनवस्थाकुडका प्रमाण वधता वधता जाय अर अेक अेक अनवस्थाकुड भरणेकी समस्यारूप अेक अेक सिरसूनिका प्रमाण कह्याथा तितने कोश लवा च्यार कोश चौडा च्यार कोश ऊचा होय ताका अेक कोश चौडा अेक अनवस्था कुंड होजाय तदि शलाकाकुड शिखासहित भरिजाय तदि अेक सिरसों प्रति शलाकाकुडविषै क्षेपिये। वहुरि तिस शलाकाकुडकू रीता करी पूर्वोक्तप्रकार करिही वधता वधता व्यासकौ लीयें अनवस्थाकुंड करीकरी भरीयें तव अेक अेक सिरसो शलाकाकुडविषै गेरियें ऐसे करते करते दुसरी वारभी शलाकाकुड भरै तव अेक सिरसो और प्रतिशलाका कुडमे तिक्षेपण करना। ऐसेही अेक अेक वार शलाकाकुड रीता करी करी भरीयें तव अेक सिरसो प्रति शलाकाकुडविषै क्षेपते जाईये ऐसे प्रतिशलाकाकुडभी भरीजाय तव अेक सिरसों महाशलाकाकुडमे क्षेपिये।

वहुरि तिस प्रतिशलाकाकुडकू रीताकरी पूर्वोक्तप्रकार अनवस्थाकुडनिके भरणकरी तो शलाकाकुंडकौ अर शलाकाकुडनिके भरणकरी प्रतिशलाकाकुडकौ अेक अेक वार भरी अेक अेक सिरसों महाशलाकाकुडमे गेरते जाईये ऐसे जव महाशलाकाकुड भरीजाय तिह कालविषै च्यारोही कुंड भरिजाय है। तहा जो अतका अनवस्थितकुडविषै जेते प्रमाण लीयें सिरसो शिखासहित भरे गये तिह प्रमाण जघन्यपरीतासंख्यात जानना। इसमे अेक घटाय उत्कृष्ट सख्यातका प्रमाण जानना। अव जघन्य परीतासख्यातकौ अेक अेक करी विरलन नाम जुदा जुदा विखेरीयें। अर तिस परीता सख्यातकौ अेकअेक उपरी देय परस्पर गुणन करीये जो महाराशी उपजै सो जघन्य युक्तासख्यातका प्रमाण उपजै है। जैसे च्यारको विरलन करिये तव च्यार जायगा माडिये। १, १, १, १। तिसके ऊपरी च्यारकौ दीजिये। ४/१, ४/१, ४/१, ४/१। इनकौ परस्पर गुणन करिये नव दोयसे छपन होय। ऐसेही जहा जघन्य परीतासख्यातकौ अेकअेक जुदा करियें अर तितनेही प्रमाण जघन्य परीता सख्यातकी राशिकौ परस्पर गूणे जो महाराशि होय सो जघन्य युक्ता-सख्यातका प्रमाण होय है। यहुही आवलीका प्रमाण है।

जातै जघन्य युक्तासख्यात समयनिके समूहकू आवली कहे है। इसमे एक घटाईये यह उत्कृष्ट परीतासख्यात जानना। वहुरि जघन्ययुक्तासख्यातके प्रमाणकौ जघन्य परीतासख्यात वर्गीत गुणीये तदि जघन्य असख्यातासख्यात जानना। इसमे अेक घटाईये सो उत्कृष्ट युक्ता-सख्यातका प्रमाण है।

अब जघन्य असख्यातासख्यातकी तीन राशिरूप स्थापन करिये तहा विरलनराशिकू तौ

ेक अेक भिन्न भिन्न वखेरिये अर तिस अेक अेक ऊपरी दोय राशी माडी परस्पर गुणन करिये ाव समस्त राशिका गुणन ह्रो चुके तदि शलाका राशिमहसू अेक घटादीजिअे। जैसे च्यारि ामाणराशिकौ शलाका विरलन देय तीन जायगा स्थापन करिये तहा विरलन राशिकौ अेकअेक ाखेरिए उपरि देय राशिकौ- ४, ४, ४, ४ च्यार जायगा विरलन तथा ताकै ऊपरि देय ारस्पर गुणिए तव दोयसे छपन्न होय। तदि शलाका राशि च्यारिकीमैंतै एक घटाइए तदि ालाकामे तीन रह्या। वहुरि दोयसै छपन्नकौ दोयसे छपन्न जायगा वखेरिए अर दोयसे छपन्न ोयसे छपन्न जायगा परस्पर गुणि तव जो महाराशि उपजै तदि शलाकाराशिमैं ते एक ओर ाटाइए। तदि शलाकाराशिमें दोय रहे। फेरि जो महाराशि उपजी ताकौ विरलन करि ीतनीही जायगा तिस महाराशिको परस्पर गुणन करिए तदि जो महाराशि उपजै तदि ालाकाराशि दोय था तामै एक ओर घटाइए शलाका राशिमे एक रह्या। अर जो महाराशि उपजै ताको विरलन करि ताकै ऊपरि तितनीही देय राशिस्थापन करि परस्पर गुणन कीए ो महाराशि होय सो च्यारकी राशिका शलाकात्रयका प्रमाण होय है। ऐसे जघन्य असख्या- ासख्यातकौ शलाका विरलन देय रूप स्थापन करि विरलन देयका अनुक्रमकरि शलाकाराशि ापूर्ण होजाय जव जोक्यू महाराशि उपजै ताको फेरि शलाका विरलनदेय रूप स्थापनकरि ेरलनकू वखेरी देयराशिकू देयशलाकाराशिमैतै एकएक घटाता जाइए तदि दूजीवारहू शलाका ूर्ण होजाय तदि जो महाराशि आवै सो तिस प्रमाण तीसरा शलाका विरलनदेयका क्रमकरि ालाका पूर्ण होय। ऐसे शलाकात्रय निष्ठापन हुवा पाछै जो क्यू महाराशि उपजै मध्यम असख्यातासख्यातप्रमाण तिस विषै धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य एक जीवद्रव्य अलोकाकाश लोकाकाश इन च्यारौनिका प्रदेशनिका प्रमाण अर लोकाकाशके प्रदेशनिका प्रमाणतैं असख्यातगुणा अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतिजीवनिका प्रमाण वहुरि तातैंहू असख्यात गुणा प्रत्येकवनस्पति- जीवनिका प्रमाण ऐसे छह राशि मध्य असख्यातासख्यातप्रमाणविषै मिलाइ दीजिए तिनकू मिलाए जो असख्यातासख्यातरूप प्रमाण होय ताका फिर शलाकात्रय स्थापन करना।

ऐसे एकवार वा दोय वार वा तीन वार शलाका विरलनदेयके क्रमकरि शलाकात्रय पूर्ण होजाय तदि जो मध्यम असख्यातासख्यातको जो महाराशि उपजै तिस विषै उत्सर्पिणी अवसर्प्पिणी मिलकरि भया जो कल्पकाल ताका समय अर तातै असख्यात लोकगुणा स्थिति- बधाध्यवसायस्थान तातैं असख्यात लोक गुणा अनुभागबधाध्यवसायस्थान तातै असख्यातलोकगुणा योगनिके उत्कृष्ट अविभागप्रतिच्छेद ए च्यार राशि प्रक्षेपण करिए। अव एहू च्यार राशिको मिलाए जो प्रमाण भया ताकौ पूर्वोक्त प्रकार शलाकात्रय निष्ठापन करिए ऐसे करतै जो प्रमाण होय सो जघन्यपरीतानत जानना। यामै एक घटाइए सो उत्कृष्ट असख्यातासख्यातका प्रमाण जानना। वहुरि तिस परीतानतकौ एकएक करि विरलन करि एकएक प्रति तिसही जघन्य- परीतानतकौ देइ तिनकौ परस्पर गुणं जो महाप्रमाण होय सो जघन्य युक्तानत जानना सो यहू

अभव्यसमान है। अभव्यजीवनिका एता प्रमाण है यामै एक घटाए उत्कृष्ट परीतानत होय है।

वहुरि जघन्य युक्तानतका वर्ग करिए जघन्य युक्तानतको जघन्य युक्तानतकरि गुणिए तदि जघन्य अनतानत होय है यामै एक घटाय उत्कृष्ट युक्तानत होय है। वहुरि जघन्य अनंतानतके प्रमाणकौ पूर्वोक्त शलाकात्रय नष्टापक करिए। विरलन देयके अनुक्रमकरि एक शलाका दोय शलाका वा तीन शलाका पूर्ण करि जो मध्य अनतानतरूप महाराशिएभया तिसमें ओ तीन राशिका प्रक्षेप करिए। जीवराशिकै अनतवै भाग सिद्धराशिका प्रमाण अर तातै अनतगुणा पृथिव्यादिचतुष्टय अर प्रत्येकवनस्पति अर त्रसराशि इन तीन राशिकरि न्यून समारीजीवनिकी राशि सोही निगोदराशि है। अर तातै प्रत्येक वनस्पतिकरि अधिक जो निगोदराशि सोही वनस्पतिराशि। वहुरि जीवराशितै अनतगुणा पुद्गलराशि अर तातै अनतगुणा कालके समयनिका प्रमाणरूप कालराशि। तातै अनतगुणा अलोकाकाशके प्रदेशनिका प्रमाण रुप अलोकाकाशराशि। ओ छह् अनत रूपराशि मिलावना। इनि छहों राशिकौ मिलाये जो राशि भया ताकौ पूर्वोक्तप्रकार शलाकाविरलनदेयके क्रमकरि वर्गित सवर्गित करि वहुरि दूजा तीजा शलाका पूर्ण करि जो मध्य अनतानत प्रमाण भया तामै धर्मद्रव्य अर अधर्मद्रव्यके अगुरुलघुगुणके अविभागप्रतिच्छेद मिलाये।

वहुरि इस राशिकौ शलाकात्रय पूर्ववत् निष्टापन करिये जो कोऊ मध्य अनतानत प्रमाण भया तिमकू केवलज्ञानके अविभागप्रतिच्छेदनिमे घटाये जो केवलज्ञानके अविभागप्रतिच्छेद रहे तिनमे ज्यूका त्यू पूर्वोक्तराशि मिलाइये सो उत्कृष्ट अनतानत है। यामै अेक घटेनाऊ मध्य अनतानत है। जातै उत्कृष्ट अनतानत केवलज्ञानप्रमाण है। अर जो केवलज्ञानके विभागप्रतिच्छेदनिमे पूर्वोक्तराशि घटाये विना मिला दीजिये तो केवलज्ञानतै अधिकप्रमाण होजाय सो है नाही तातै घटाय मिलाया है। ऐसे सख्याप्रमाणके इकवीस भेद वर्णन कीये। इहा और जानना।

ाया $\frac{१९}{६}$ ऐसे इस अेक योजनप्रमाण कुडका सूक्ष्म परिधिका प्रमाण होय है । बहुरि विष्कभका ौथाभागतै परिधिकौ गुणे क्षेत्रफळ भया $\frac{१९}{२४}$ बहुरि याके वेधनो ऊडाई एक योजनप्रमाण ाहकरि गुणेभी तितनाही भया ऐसे इस कुडका घनरूप समस्त सूक्ष्मक्षेत्रफळ उगणीसका ोवीसमा भाग प्रमाण भया ।

बहुरि बहु कह्या जो प्रमाणयोजनरूप सूक्ष्मक्षेत्रफळ ताके व्यवहारयोजनादि कैसे ारने सो कहे है । एक प्रमाण योजनरूप क्षेत्र ताके पाचसे व्यवहारयोजन होय है । इहा घनरूप ेत्रका गुणाकार भागहारहू घनरूपही होय है । जातै एक प्रमाणयोजनकी लबाईमे पाचसे खड ाया । अर लबा एक एक खडका पाचसे चौडाईमे खड भया बहुरि इन खडनिका एकएकका ाचसे पाचसे ऊचाईमे खड भया । यातै तीन जायगा माडिए तदि गणोहुए व्यवहार योजन होय ।

बहुरि एक व्यवहारयोजनका सात लाख अडसठि हजार अगुल अर एक अगुलके आठ ाव अर एक यवके आठ तिल एक तिलके आठ लीख एक लीखके आठ कर्मभूमीयाके रोम एक ार्मभूमियाके रोम एक कर्मभूमियाके रोमका आठ जघन्यभोगभूमियाके रोम एक जघन्यभोग-भूमियाके रोमके आठ मध्यभोगभूमियाके रोम मध्यभोगभूमियाके एक रोमका आठ उत्तमभोग भूमियाके रोम । इनका त्रैराशिक करिए घनरूप राशि हैं । तातै सबनिकू तीनतीन वार माडि परस्पर गुणिए ।

$\frac{१९}{२४}$ ५०० । ५००, ५००, ७६८०००, ७६८०००, ७६८०००, ८ । इन सबनिकौ परस्पर गुणिए ते पैतालीस अक्षर प्रमाण व्यवहारपल्यके होय है । ४१३४५२६३०३०८२०३१७७७४९५१२-१९२००००००००००००००००० । इस व्यवहारपल्यके रोमनिकौ एकसौ वर्ष एकसौ वर्ष गए अेकअेक रोम तिन रोमनिमै सो ग्रहण करिए । अैसे ग्रहण करतै सर्व रोम समाप्त जितने कालकरि होय तावन्मात्र कालके जेते समय होय सो व्यवहापल्यके समयनिकी सख्या होय है । सो अेक रोमका ग्रहणविषै सौ वर्ष होय पूर्वोक्त रोमनिके ग्रहणविषै केते वर्ष होय । अैसे त्रैरा-शिक करि बहुरि अेकवर्षके तीनसै साठि दिन अेक दिनके तीस मुहूर्त अर मुहूर्तके तीन हजार सातसै तिहैत्तरि उच्छ्वासकी एक उच्छ्वासकी सख्यात आवली अेक आवलीके जघन्ययुक्तासंख्यात-प्रमाण समय होय तितना व्यवहारपल्यका काल है ।

आगे उद्धारपल्यके कालको दिखावे है । जो व्यवहारपल्यविषै जे रोम कहे तिनविषै अेकअेक रोमके असख्यात वर्षके समयनिकै समान खडरूप कीजिये तब उद्धारपल्यके रोमनिका प्रमाण होय । तिन रोमखडनिके अेकअेकको अेकअेकसमयमे ग्रहण करतै सर्व रोमखड जेते कालकरि समाप्त होय सो उद्धारपल्यका काल जानना । उद्धारपल्यके कहे जे रोम तिनको असख्यातवर्षनिके समयनिका गुणाकार दीजिए जेता प्रमाण होय तेता प्रमाण अद्धापल्यके

समयनिका जानना। इहा असख्यात वर्षके समय कह्या सो मध्यम असख्यातका भेद सर्वज्ञदृष्ट है। ऐसा जानना जो व्यवहारपल्यकरि तो रोमनिकी सख्या वर्णन करी है। अर उद्धारपल्यकरि द्वीपसमुद्रनिकी सख्याका वर्णन है। जातै पचीस कोडाकोडी उद्धारपल्यके जैते समय है तेते जबूद्वीपकू आदि लेय स्वयभूरमणपर्यंत द्वीपसमुद्र जानना। बहुरि अद्धापल्यकरिकेही समस्त-कर्मनिकी स्थितिका वर्णन जानना। औरभी पल्यकरि जिनका प्रमाण कह्या ते अद्धापल्यते है। बहुरि दशकोडी उद्धारपल्यका उद्धारसागर है। अढाई उद्धारसागर प्रमाण द्वीपसमुद्र है। उद्धारसागरका द्वीपसमुद्रकी गिणतीहीमे प्रयोजन है। अर दशकोडाकोडी अद्धापल्यका अेक अद्धासागर है।

बहुरि अद्धापल्यके जेते अर्द्धच्छेद होय तितनी जायगां अद्धापल्यके प्रमाणको माडी परस्पर गुणीये सो सूच्यगुलके प्रदेशनिका प्रमाण है। अेक अगुल लबे अेक प्रदेश चौडे अेक प्रदेश ऊचे क्षेत्रप्रमाण है। अर सूच्यगुलके प्रदेशके प्रमाणका वर्ग करिये सो प्रतरागुलके प्रदेशनिका प्रमाण है। सो अेक अगुल चौडे अेक अगुल लबे अेक प्रदेश ऊंचे क्षेत्रका प्रमाण है। अर प्रतरागुलके प्रदेशनिकू सूच्यगलके प्रदेशनिकरि गुणीये ते घनागुलके प्रदेशनिका प्रमाण है। सो अेक अगुल लंबे अेक अगुल चौडे अेक अगुल ऊचे प्रदेशनिका प्रमाण है। बहुरि पल्यका अर्द्धच्छेदका असख्यातवा भागप्रमाण घनागुल माडी परस्पर गुणीये सो जगतश्रेणी होय है। सो सात राजूप्रमाणलबे अर अेक प्रदेश चौडे ऊचे आकाशके प्रदेशनकी पक्तीकू जगतश्रणी कहिए है। बहुरि जगतश्रेणीका वर्गकू जगत्प्रतर कहिए है। सो सात राजू लवा चौडा क्षेत्रके प्रदेशनिका प्रमाण जानना। बहुरि सातराजू लबे चौंडे ऊचे क्षेत्रकू जगतघन कहिए वा घनलोक कहिए है। ऐसे उपमाप्रमाण अष्टप्रकार कह्या। जो विशेष जाणनेका इच्छक होय सो त्रिलोक-सारादिकनितै जानहु। तथा इनका अनेकस्थान अल्पवहुत्व चौदहधारानितै जानहु। ऐसे प्रसग पाय प्रमाणका वर्णन कीया।

जानना। वहुरि छह अंगुलका एक पाद होय वारह अगुलका एक वितस्ति होय। दोय वितस्तिका एक हस्त होय। दोय हातका एक इषु होय गज होय। दोय गजका एक धनुष्य होय। दोय हजार धनुष्यका एक कोश होय। च्यार कोशका अेक योजन होय। अैसे लौकिक अलौकिक मान कह्या। तेसैं उत्कृष्ट मध्य जघन्य स्थिति मनुष्यनिकी कही तैसेही तिर्यंचनिकी आयु कहे है।

तिर्यग्योनिजानां च ॥३९॥

अर्थप्रकाशिका— तिर्यच जीवनिकीभी आयुकी उत्कृष्ट स्थिती तीन पल्यकी अर जघन्य स्थिती अतमुहूर्त है। मध्यके नानाभेद है। इहा विशेष कहे है। शुद्ध पृथ्वीकाय जीवनिकी वारह हजार वर्षका आयु है। अर कठोर पृथ्वीकायका वाईस हजार वर्षका आयु है। जलकायके जीवनिका सात हजार वर्षका आयु है। वायुकायके जीवनिका तीन हजार वर्षका आयु है। अग्निकायके जीवनिका तीन दिन रात्रिका आयु है। ऐसे एकेद्रिय जीवनिका उत्कृष्ट आयु कह्या। वहुरि बेद्रिय जीवनीका आयु उत्कृष्ट द्वादशवर्षप्रमाण है। त्रीद्रीयजीवनिका उत्कृष्ट आयु गुणचास दिनका है। चतुरिंद्रियका आयु छ महीनाका उत्कृष्ट है। पचेद्रीय जलचर तिर्यंचनिका आयु उत्कृष्ट कोटीपूर्वका हैं। बहुरि सरीसृप जे गोधा नकुलादिकनिका नवपूर्वागका-आयु हैं। वहुरि उरग जे सर्प्प तिनका उत्कृष्ट आयु बीयालीस हजार वर्षका है। पक्षीनिका उत्कृष्ट आयु वहत्तरि हजार वर्षका है। चतुष्पदनिका उत्कृष्ट आयु तीन पल्यका है। अर समस्त तिर्यचनिका जघन्य आयु अतर्मुहूर्तका है। ऐसे तीसरा अध्यायमे अधोलोकका वर्णन तथा मध्य-लोकमध्ये द्वीपसमुद्रादिकनिका वर्णन कीया।

अव इहा कोई अन्यवादी ऐसे कहे है जो इस जगतका कोऊ ईश्वर कर्त्ता है। जाते कर्त्ताविना कोऊही सत् रूप वस्तु होय नही। ताकू पूछिए। ईश्वरकू कौन कीया। ईश्वरहू सत् वस्तु है याका कर्त्ताहू कह्या चाहिए। अर जो कहोगे याका कर्त्ताहू अन्य है। तो वाकू कौन कीया। ऐसे अनवस्था नामा दोष आवेगा। वहुरि और पूछे है जो पहली सृष्टी रचना नही थी। तो सृष्टी वाहिर ईश्वर कहा था अर कोन स्थानमे बैठी जगत्कू रच्या अर ईश्वर आप जगत्विना निराधार अर वहोत कालसे विद्यमान आप तो कहा तिष्ठता अर इस जगतकू रची कहां स्थापन कीया। अर किसीके आधार कहोगे, तो वह कौनके आधार, उसका अन्य आधार कहोगे तो उस अन्यका कोन आधार ऐसे अनवस्था नाम दोष आवेगा। अर जो या कहोगे निराधारमे अनादिनिधनमे तर्क नही तो सृष्टीका कर्त्तापनां कहना वर्न नही। जैसी तो समस्त पदार्थनिकूही अनादिनिधन कहे है जाके मतमे सृष्टीकू करी हुई माने ताके मतमेही दोप आवेगा। वहुरि ईश्वर अेक जगत् नानात्मक, सो अेक होय नानात्मक जगतकी रचनामे कैसे समर्थ होय। वहुरि ईश्वर शरीररहित अमूर्तिक तातै शरीरादिक मूर्तिक उत्पन्न होनेयोग्य नही। अमूर्तिकतै मूर्तिक कैसे होय।

वहुरि अन्य करणादि सामग्रीविना लोककू कैसे रच्या। जातै उपादानकारणविना कोऊ वस्तुकी रचना नही देखिये है। जैसे मृत्तिकाविना समर्थ कुभकार घटकी रचना करनेकू नही समर्थ है। अर जो या कहोगे पहली सामग्री वनाय पाछै जगतकू रच्या तो पूछिए उस सामग्रीकू काहेते रची। अर सामग्रीकू अन्य सामग्रीकरि रची कहोगे तो अन्य सामग्रीकों काहेतै रची ऐसै अनवस्था दोष आवेगा। अर जो या कहोगे जगतके रचनेयोग्य सामग्री तो स्वभावहीतै सिद्ध है तो लोकहू स्वत सिद्ध माननेका प्रसग आवेगा। वहुरि जैसे लोकका कर्त्ताकौ स्वतैसिद्ध मान्या तैसे लोककैहू स्वत.सिद्ध माननेका प्रसग आये है। वहुरि या कहोगे ईश्वर समर्थ है सो सामग्रीविनाही इच्छामात्रकरि लोककू रचे है। तो ऐसे इच्छामात्र युक्तिरहित तुमारा कहना कौनके श्रद्धान करनेयोग्य है। इच्छामात्र करनेकी कल्पना औरहू करो कौन रोके है। इच्छामात्र कह्या तहा विचार काहेका रह्या।

वहुरि ईश्वर कृतार्थ है कृतकृत्य है कि अकृतार्थ है। जो कृतार्थ कहिए करनेयोग्य अर्थ करी लीया अन्य कुछ करनेयोग्य वाकी जाकै नही रह्या ऐसाकू कृतार्थ कहिए है। तो जगतको रचनेकी इच्छा ईश्वरके कैसे उपजी। अर जो अकृतार्थ कहोगे तो अकृतार्थ होयगा सो समस्तजगतकू रचनेको कुभकारकीज्यौं समर्थ नही होय। जातै अकृतार्थ कुभकार एक घटकू रची कृतार्थपणा अपने मानों समस्त जगतकू करना तो अकृतार्थके वनैगा नही। तैसे ईश्वरकू अकृतार्थही मानोहो तो अकृतार्थपना होतै तो एकएक वस्तुकरि खेदित क्लेशित होता अनत पदार्थनिकू कैसे पूर्ण करेगा। तातैहू जगतका कर्त्तापणा ईश्वरके नही संभवे है।

वहुरि ईश्वरकू अमूर्त्तिक कहे है। अर निष्क्रिय कहे है। अर व्यापी कहे है सो ऐसा ईश्वर जगत्कू कैसे रचै। जातै अमूर्त्तिकतै तो मूर्त्तिक उत्पन्न होय नही। अर जो नि.क्रिय कहिए क्रियारहित होय ताके रचनेकी क्रिया कैसे वनै। वहुरि जो व्यापी समस्तमे व्याप रह्या ताकै लोकका रचना कैसे वनै समस्तमे अनादिहीका व्याप्त होरह्या। वहुरि ईश्वरकू विक्रिया-रहित निर्विकार कहै ताकै रचनेकै अर्थि विकारी होना नही सभवे। वहुरि ईश्वर सृष्टिकू कहा फल चाहता रची। ईश्वर तो कृतकृत्य है ताकै धर्म अर्थ काम मोक्ष इन च्यारो पदार्थनिमे कुछ करना वाकी नही रह्या तदि सृष्टिकू रची कहा। फल चाह्या प्रयोजनविना तो मूर्खहू नही प्रवर्त्ते है। अर जो या कहोगे ईश्वरके सृष्टि रचनेमे कुछ प्रयोजन तो नही परतु विनाप्रयो-जनही रचै है तो अनर्थरूप कार्य करनेका प्रसग आया। अर जो कहोगे ईश्वरके या क्रीडा है तो वडा मोहका सतान आया। क्रीडा तो अज्ञानी मोही वालक करे है। वा दु खित हुवा [illegible] दिन व्यतीत करे है।

वहुरि और पूछै है। जो ईश्वर जगतहू रच्या तो सुखरूप उज्वल रूपवान मनोहर [illegible] समस्त पदार्थनिको क्यो नही रचे। जगतमे केई दरिद्रि रोगी कुरुप निंद्य नीच जाति ऐसे [illegible] कीटकादिक काहेतै वनाए। तथा दुष्ट भील चाडाल म्लेच्छ क्यो रचे

जगतमैंभी देखिए हैं । जो महाबुद्धिवान चतुर होय सो वहोत सुदरही बनाया चाहै । अपना कीया कार्यकू विगाडते नही चाहै । यातै ईश्वर है सो बुद्धिवान अर समर्थ होय ग्लानिरूप भयानक विडरूप रचना कैसे करी सो कहे । अर जो या कहोगे प्राणी जैसे कर्म उपार्ज्जन कीए तैसे उनके शरीरादिक रचे तो वाकै ईश्वरपणा कहा रह्या जैसे कोलीकू मही सुत दिया महीमा वणि दिया मोटा दीया मोटा वणि दिया ईश्वरपणा नही रह्या । फिर और पूछै है । प्राणिनितै भले खोटे कर्म कीए ते ईश्वरके अभिप्रायतै कीए की ईश्वरतै निराले जवर होय कीए सो कहो । जो ईश्वरके अभिप्रायतै कीए तो ईश्वर होयकरि अपनी प्रजातै खोटे कृत्य कैसे कराए । अर जो ईश्वरकी इच्छाविनाही कीए तो ईश्वरके ईश्वरपणा कर्त्तापना कहा रह्या । जगत स्वयही कर्मादिककार्यके कर्त्ता भए । वहुरि कहोगे कार्य तो होय है सो जैसा कर्म कीया तैसाही होय है । परंतु ईश्वरके निमित्ततै होय है । तो ऐसे सिद्धवस्तुके विनाकारण ईश्वरका कीयापणा क्यौ पोखोहो । असत्यत असतद्रू रचे है तो आकाशका फूलका रचना समान अवस्तु ठहऱ्या ।

वहुरि जो ईश्वरकू मुक्त कहोहो तो उदासीन वह सृष्टीकू कैसे रचे । अर जो ईश्वरससारी है तो आपणेसमान है उसका कीया समस्त जगत् कैसे रचनारूप होय । तातै तुमारा सृष्टीवाद कहना कुछ नही रह्या । वहुरि पहली तो जगतकू रच्या अर पाछे सहार कीया सो प्रजाकू रची अर सहार करे ताके महान् अधर्म भया । अर जो कहोगे दैत्यादिक दुष्ट इकठे भए तिनके मारनेकू प्रलयकालमे सहार करे है । तो दैत्यादिक दुष्ट पहली रचे कैसे । अर पहली ठीक नही था तो ईश्वरके अज्ञानीपणा भया । अर दुखिया भया जो नई रचना करवो करे अर चूकी खणिजाय जदि मारता फिरे हेरता फिरे । ऐसे तो ईश्वरके वहुत अज्ञान रागद्वेषादिक क्लेश वहुत दोष आए । अर इसही ईश्वरकू सदाशिव कहे है । सदाकाल मुक्त माने है । वहुरि केई ऐसा कहे है ।

जो जगत् कुछ वस्तु नही है । एक ब्रह्मही नानाजगतरूप दीखे है । ब्रह्मतै दूजा पदार्थ अन्य है ही नही । जैसे सूर्य तो एक है । अर सूर्यका प्रतिविव अनेक जलके भाजननिमे देखिये है । ताकू कहिये है । जो भाजन अर सूर्य तो दोय वस्तु भया तैसे ब्रह्म जर जगत दोय भया तव तुमारा अद्वैत ब्रह्मका मानना तो नहा रह्या ।

वहुरि जैसे सूर्य अेक है तो ताका प्रतिविव अनेक पात्रनिमें सदृशही दीखै हैं । जिस दिन ग्रहण होयगा अर सूर्यकी कोर दक्षिणदिशाकी लुप्त भई होयगी तो समस्त पात्रनमें दक्षिणकी कोरही लुप्त भई भासेगी अन्य प्रकार नही दीखे । तैसे ब्रम्ह एकही है तो समस्त-पदार्थनिमे अेकरूपही दीख्या चाहीए । जगत तो मनुप्य पशु पक्षी वा केई दु खी केई सुखी केई रक केई राजा केई जड केई चेतन ऐसे नाना रूप कैसे भासे है । जो एक ब्रह्मस्वरूपही होय तो चडाल अर ब्राह्मणादिकनिका भेद नही रहेगा । वहुरि जो समस्त जगत ब्रह्मरूपही है तो जप ध्यान आराधन दर्शन कौनका अर ध्यानादिक करनेवाला कोन रह्या । अेक ब्रह्मही रह्या तव

दीक्षा शिक्षा गुरुशिष्यादिकका भेदका लोप भया। वहुरिकहोगे जो ए भेद दीखे है सो अविद्या है। तो पूछे है या अविद्या ब्रह्मसे जुदी जुदी है कि अेक है। जो अविद्याकू वा मायाकू जुदी कहेगा तो ब्रह्म अर अविद्या दोय ठह्ऱ्या तदि ब्रम्हके अद्वैतपणा कहा रह्या। ब्रह्म सो अेक कहेगा तो ब्रह्म अविद्यारूप भया मायारूप भया असत्य भया। वहुरि अविद्याकू अवस्तु कहोहो जो अविद्या तो कुछ वस्तूही नही। तो यहु कैसे कहो जो अविद्याते जगत नानारूप दीखे है ब्रह्म सिवाय कुछ नही। अवस्तूके कार्यकारणपणा कैसे भया। वहुरि सव जगत ब्रह्मही है तो अविद्या अर माया ए कौनके भया ब्रह्महीकै भया तव ब्रह्म कहना मानना तुमारे अभिप्रायतेही असत्य भया। वहुरि अद्वैतशब्दही द्वैतपनाविना होय नही। जातै कोऊ वस्तू होयगा ताका निषेधभी होयगा द्वैत-विना ही द्वैतपनाका निषेध कीया। अर जो कहोगे हम तो समझायवेकी अद्वैत कह्या है जातै जगतमे जीव भ्रमतै द्वैत मानि राख्या है इनिका निषेधकू कह्या है जो द्वैतका निषेध करोहो सो सत्का करोहो कि असत्का करोहो जो सत् करो तो झूठा भया। अर असत्का निषेध सभवे नही। ऐसे इनिका विधिनिषेध श्लोकवार्तिकमे तथा अष्टसहस्रीमे है। अर ईश्वरवादकाहु आप्तपरीक्षादिक ग्रथनिमे है तहातै जानना। इहा तो प्रकरण पाय दिग्मात्र दिखाया है। ऐसे सप्तभूमि विल लेश्या आयु द्वीप समुद्र पर्वत ऱ्हद नदी मनुष्य तिर्यचनिका आयु इत्यादिक वर्णनकरि तीसरा अध्याय समाप्त कीया।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

अर्थ— ऐसे तत्वार्थका है अधिगम जातै ऐसा दशाध्यायरूप जो मोक्षशास्त्र तामैं तिसरा अध्याय पूर्ण भया ॥३॥

— दोहा —

है जातै तत्त्वार्थका। अधिगम सबसुखदाय ॥
मोक्षशात्र मंगलमय। नमो तृतीय अध्याय ॥३॥

तृतीय अध्याय समाप्तः

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः ॥

आगे चौथा अध्यायका प्रारंभ करे है।

– दोहा –

वंदनकरि पद आप्तका । मुनि आगम उपदेश ॥
स्वस्वरूपके कथनमें । रहै न भ्रमतमलेश ॥१॥

केई प्रकरणमे देवशद्ब कह्या परतु यह नही जाण्या जो देव कितने है कौन है इसके निश्चयके अर्थि सूत्र कहे है–

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥१॥

अर्थप्रकाशिका– देवगतिनामकर्मके उदयते देवनिका च्यारि निकाय है। निकाय नाम समूहका है। भवनवासी, व्यतर, ज्योतिष्क, वैमानिक ऐसे देवनिके च्यार समूह है। अव इनके लेश्याका जाननेकू सूत्र कहे हैं–

आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥२॥

अर्थप्रकाशिका– आदितैं लेय भवनवासी व्यंतर ज्योतिष्क इन तीन निकायनिविषे पीतपर्यंत लेश्या है। कृष्ण नील कापोत पीत ए च्यार लेश्या है। अव तिन देवनिके अतर्भेद दिखावनेकू सूत्र कहे है–

दशाष्टपंचद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यंताः ॥३॥

अर्थप्रकाशिका– भवनवासीनिके दश भेद व्यंतरनिके अष्ट भेद। ज्योतिष्कदेवनिके पाच भेद। कल्पवासिनिके द्वादश भेद ऐसे कल्पोपन्न जे स्वर्गनिवासी तिन पर्यंत भेद है। अव इन देवनिमे विशेष है तिनके जाननेकू सूत्र कहे हैं–

इंद्रसामानिकत्रायस्त्रिंशत्पारिषदात्मरक्षलोकपालानीक-प्रकीर्णकाभियोग्यकिल्विषिकाश्चैकशः ॥४॥

अर्थप्रकाशिका– देवनिमे अेक अेक निकायमे दश दश भेद है। इद्र, सामानिक, त्रायत्रिशत्, पारिषद, आत्मरक्ष, लोकपाल, अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य, किल्विषिक ऐसे भेद है। तहा अन्य देवनिविषै नही पाइये ऐसी अणिमा महिमादिक अनेक ऋद्धिनिकरि परम ऐश्वर्यकू प्राप्त होय इद्र है। जैसे इहा राजा आज्ञा ऐश्वर्यकरि प्रवर्ते। वहुरि जिनका स्थान आयु वीर्य परिवार भोगादिक इद्रके समान होय एक आज्ञा ऐश्वर्य नही होय जातै आज्ञा ऐश्वर्य तो इद्रकाही होय है ते सामानिक देव है। इद्र इनकू पिता उपाध्याय तुल्य वडे गिणे है। वहुरि मत्री पुरोहित समान तो शिक्षा करनेवाले अर पुत्रसमान प्रीतीका पात्र जिनकू देखनेकरि वचनालापकरि पुत्रसमान इद्रके मनकै आनद उपजावै ऐसे तेतीस देव ते त्रायत्रिशत है। वहुरि जे इद्रकी वाह्य अभ्यतर मध्य जे तीन प्रकारकी सभा तिनमे तिष्ठनेयोग्य सभानिवासी देव है ते पारिषद देव है। वहुरि जे इद्रकी सभामे पाछै खडे रहनेवाले शस्त्रधारण कीये जे देव है ते आत्मरक्षक है। यद्यपि देवनिकै किछु घातादिक नही हैं तथापि ऋद्धिविभवकी महिमाके अर्थि है। वहूरि कोट्टपालतुल्य होय अमार्गकी प्रवृत्तिका निषेधक लोकपाल है। वहुरि पयादा अश्व वृषभ रथ हस्ती गधर्व नर्त्तकी ए सात प्रकार इद्रकी सेनाके देव ते अनीक कहिये। वहुरि नगरनिवासी समान प्रीतिका कारण प्रकीर्णक देव है। वहुरि दासादिकनिके समान हस्ती घोडादिक वाहन वणि सेवा करै ते आभियोग्य देव है। वहुरि दूर तिष्ठनेवाले इद्रादिकनिकी सन्मानादिकके अधिकारी नही वाहीर दूरीही रहे है ते किल्विषिक देव है। इस सूत्रमे "एकश" कहने करि अेक अेक निकायमे दश दश भेद है। परतु व्यतर ज्योतिषीनिमे आठ आठही भेद है। याते सूत्र कहे है–

त्रायस्त्रिशल्लोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ॥५॥

अर्थप्रकाशिका– व्यतर अर ज्योतिष्क देवनिमे त्रायस्त्रिशत् अर लोकपाल ए दोय भेद नही है आठही है। अव इद्रनिका नियम कहै है–

पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥६॥

अर्थप्रकाशिका– पहली दोय निकायनिके भेदनिमे दोयदोय इद्र है। दशप्रकारका

भवनवासीनिमें चमर वैरोचनादिक दोयदोय इद्र है यातैं वीस इद्र है । व्यंतरनिके अष्टभेदनिमे किन्नर किपुरुषादिक षोडश इंद्र है । अव देवनिकै काम सेवनका नियम कहे है–

कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ।।७।।

अर्थप्रकाशिका– इहा प्रवीचार नाम मैथुनसेवनका है । भवनवासी व्यतर ज्योतिष्क अर सौधर्म ईशान स्वर्गके देव अर इनिकी अगना इनिके मनुष्यनिके समान सक्लेशकर्मकरि कायथकी मैथुनसेवन है । अव उपरिके देवनिके कैसे है सो कहे है–

शेषाः स्पर्शरूपशब्दमनःप्रवीचाराः ।।८।।

अर्थप्रकाशिका– पहिले सूत्रमें कहे देव तिनतै अवशेष रहे जे सनत्कुमारादिक देव-तिनकै स्पर्श रूप शद्व मनके विषैही मैथून है । सनत्कुमार माहेद्रके देवनिकै मैथुनकी इच्छा उत्पन्न भई जाणि देवी नजीक प्राप्त होय है । तहा देवीनिका अगका स्पर्शमात्रतेंही प्रीतिनैं प्राप्त होय है अर कामकी इच्छा मीटि जाय है । अर देवीनिकैंहू तृप्ति होय है । बहुरि ब्रह्म ब्रह्मोत्तर लातव कापिष्ठ इन च्यार स्वर्गनिके देवनिके देवागनानिके स्वभावतेही सुदरश्रृगार आकार विलास चतुर मनोज्ञ वेषरूप लावण्य इनिके अवलोकमात्रतेंही परमसुख होय हैं । वहुरि शुक्र महाशुक्र सतार सहस्रारके देव है ते देवागनानीके मधुरगीत कोमलहास्य कोमलवचन भूषणनिके शद्वश्रवणादि रूप अमृतपानकरि परमप्रीतिकू प्राप्त होय है । बहुरि आनत प्राणत आरण अच्युत इन च्यार स्वर्गनिविषे देव है ते अपनी देवागनानिका मनविषै ही सकल्पमात्र करनेतै परमसुखकू प्राप्त होय है । अब सोलह स्वर्ग ऊपरि अहमिंद्रनिके कैसे सुख है इसके निश्चयके अर्थि सूत्र कहे है–

परे प्रवीचाराः ।।९।।

अर्थप्रकाशिका– इहा पर शद्वके कहनेकरि कल्पातीत समस्त देवनिका सग्रह भया । यातैं अच्युत स्वर्गके उपरि नवग्रैवेयिकनिके तीनसे नव ३०९ विमान अर नव अनुदिश विमान अर पच अनुत्तर विमान इनमे वसनेवाले अहमिद्र है तिनकै कामसेवन नाही । तहा देवागना नाही । विषयवेदनाके अभावतैं वेदनारहित स्वाभाविक परमसुख निरतर भोगे हैं । अव भवनवासी देवनिकी विशेष सज्ञा कहनेकू सूत्र कहे हैं–

भवनवासिनोऽसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमाराः ।।१०।।

अर्थप्रकाशिका– भवननिमें वसेहै तातैं इनकू भवनवासी कहिए है । भवनवासीनिमें असुरकुमार नागकुमार विद्युत्कुमार सुपर्णकुमार अग्निकुमार वातकुमार स्तनितकुमार उदधि-

कुमार द्वीपकुमार दिक्कुमार ऐसे दश विशेषसंज्ञा नामकर्मकरि कीनी जानना। वहुरि कोऊ स्वेतावरादिक कहे जो देवनिकरि "अस्यति" कहिए युद्ध करै प्रहारकरै ते असुर है ऐसे कहैं सो नही। ए कहना तो देवाको अवर्णवाद है इसमै मिथ्यात्वका वध होय है। ते सौधर्मादिकनिके देव महाप्रभाववान है। इनकै ऊपरि हीनदेव मनकरिकेहू प्रतिकूलपणा नही विचारै है। जो एता विशेष है। जो चमरेद्र अर वैरोचन ए इद्र अपनी ऐश्वर्यसपदाकरि परिणाममै ऐसा मद करै है जो हमारे सौधर्म ईशान इद्रसौ कौनसी सपदा घटैहै हमभी उनकी तुल्यही है।

ऐसी परिणामनिमै ईर्षा है सो अभिमानकी अधिक्यतातै ऐसी ईर्षा करैही है। वहुरि सौधर्मादिक देवनिके विशिष्ट शुभकर्मका उदयकरि विभव है। सो अरहनपूजा तथा भोगानुभवन इत्यादिकमै लीन है। इनकै परकी दारा हरणादिक वैरका कारणही नही। तातै असुर है ते सुरनकरि युद्ध नाही करै है। वहुरि समस्त देवनिके वाल यौवनादिक अवस्था नही पलटै है। उपज्या जिस अवसरतै मरणपर्यंत एकसि थिर अवस्था रहे है। तातै अवस्थाकरि कुमार नहीहै। इनिके कुमार समान उद्धतवेष भापा आभरण आयुध वस्त्र गमन वाहन राग क्रीडन है तातै कुमार कहिए है।

अव इनका भवन कहा है सो कहे है। इस जवूद्वीपकी दक्षिणदिशामै असख्यात द्वीप-समुद्रनिकू व्यतीतकरी रत्नप्रभापृथ्वीका पकभागविषै असरकुमारनिका चमर नाम इद्रके चौतीस [illegible] भवन है। अर चौसठि हजार सामानिक देव है। तेतीस त्रायस्त्रिशत देव है। वहुरि सोम यम वरुण कुबेर ए च्यार लोकपाल है। तीन सभा है तिनमे पहली सभामे अठाईस हजार देव है। मध्यकी सभामे तीस हजार वाह्य सभामे वत्तीस हजार देव है। अर सात सेना है। महिपनिकी घोडेनिकी रथनिकी हातीनिकि पयादनिकी गधर्वनिकी नृत्यकारिणीनिकी। तिन एकएक सेनामे सातसात कक्षा है। पहिली कक्षा चोसठि हजार देवनिकी दूजी यातै दूणी तीजी यातै दूणी ऐसे सप्त जायगा दूणीदूणीकी इक्यासी लाख अठाईस हजार प्रमाण महिषनिकी सेना भई। इनिकू सप्तकरि गुणोए तदि पाच कोटि अडसठी लाख छिनवै हजार देव सातौ सेनाके भए। ऐसेहि वैरोचनादिक इद्रनिके सेनाका प्रमाण जानना। इनि सात प्रकारकी सेनामे एकएक सेनाधिपति महत्तर देव है। नृत्यकारणीकि सेनामे महत्तरी देवी है। अर प्रकीर्णक देव नगरनिवासी समान प्रीतिके पात्र असख्यात है।

वहुरि छपन्न हजार देवी है तिनमे सोलह हजार वल्लभिका अर पांच पट्टदेवी है। अर पट्टदेवी आठ हजार विक्रिया करे है। ऐसेहि वैरोचनादि इद्रनिके समस्त दश भेदनिमे भवन परिवारादिक त्रिलोकसारादिग्रथनितै जानना। बहुरि रत्नप्रभा पृथ्वीका पकभागविषै असुरकुमारनिके भवन है अर नागकुमारादिक नव जातिके भवन खरभागविषै है। बहुरि केई भवन जघन्य है ते तो सख्यातकोटी योजनके है। उत्कृष्ट भवन असख्यात योजनके विस्ताररूप है [illegible] है। तिनमे योजनकी ऊचाई लीए है। भवनकि भूमिसू लेय छातीपर्यत तीनसे योजनकी

ऊंचाई है । अर एकएक भवनके मध्यविषै एक योजन ऊंचा पर्वत है तिस पर्वत ऊपरि जिनेंद्र-मंदिर हैं । ऐसै दश जातिके भवनवासीनिके सात कोटी वहत्तरी लाख भवन है । अर सात कोटी वहत्तरी लाखही जिनचैत्यालय है । अष्टगुणरूप ऋद्धिनिकरि सहित है । नानामणिमय भूषणनिकरि जिनका दीप्तिसयुक्त अग हैं । अर दशप्रकारके चैत्यवृक्ष जिनप्रतिमाकरि विराजित हैं । अपने तपकें प्रभावकरि सुखरूप भोग भोगते तिष्ठै है । तिनमे असुरकुमार देवनिके एक हजार वर्ष गए आहारकि इच्छा उपजै सो मानसिक आहार मन चलतप्रमाण कन्ठमे अमृत गरै हैं । वेदना व्यापै नाहि । अर पद्रह दिन व्यतीत भए उच्छ्वास है । अर अन्य नागकुमार सुपर्णकुमार द्वीपकुमार इन तीननिके आहारकी इच्छा साढावारह दिन गए होय । अर साढा बारा मुहूर्त्त गए उच्छ्वास होय अर उदधि कुमार विद्युत्कुमार स्तनितकुमार इन तिनके वारह दिन गए आहारकी इच्छा । अर वारह मुहूर्त्त गए उच्छ्वास होय है अर दिक्कुमार अग्निकुमार अर वातकुमार इन तीनके आहारकि इच्छा साढा सात दिनमे अर उच्छ्वास साढा सात मुहूर्तनिमे होय है । वहुरि देहकि उचाई असुरकुमारनिके पचीस धनुष्यकी । अन्य नव जातिनिके दश धनुष्य है । समस्त भवन महासुगध महारमणीक महा उद्योतरूप है । अव व्यतरनकी संज्ञा कहनेकू सूत्र कहे है—

व्यन्तराः किन्नरकिम्पुरुषमहोरगगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचा ॥११॥

अर्थप्रकाशिका— विविध कहिए नानादिशांतरनिमै इनका निवास तातै व्यतर कहिए हैं। सो सामान्यसज्ञा है । अर नानाकर्मके उदयकरि इनकि ए आठ विशेषसज्ञा है । ते किन्नर, किपुरुष, महोरग, गधर्व, यक्ष, राक्षस, भूत, पिशाच ऐसे आठ है । कितने अज्ञानी कहे है जो, "**किन्नरान् कामयते इति किन्नरा । किंपुरुषान् कामयते इति किंपुरुष । पिशिताशनात् पिशाचाः ।**" ऐसै निरुक्तिकरि ऐसा विपरीत अर्थ करे । जो कुत्सित नरनकू इच्छा करे ते किन्नर कहिए अर कुत्सित पुरुषाते कामसेवन करे ते किंपुरुष है । अर पिशित जो मास ताके भक्षणतै पिशाच है । सो ऐसा कहनादेवनिका अवर्णवाद हैं । मिथ्यादर्शनके बधका कारण है । पवित्र वैक्रियक देहका धारक देव कदाचित्‌ही अशुचि औदारिक मनुष्यनिका देहते कामसेवन नही करे अर मासभक्षण देवनिके कदाचित् नही है । देवनिके मानसिक आहार है कवलाहार नही है । अर लोकिकमे प्रवृत्ति सुनिए देखिए है सो पूर्वजन्मके सस्कारतै क्रीडा सुखकै निमित्त है पूर्वजन्मका सस्कार खोटा होय तातै खोटी क्रीडामे प्रवृत्ति है । तिनमे किंनरनिका हरितवर्ण है । किंपुरुषनिका धवलवर्ण है । महोरगनिका श्यामवर्ण है । गधर्वनिका हेमवर्ण है । यक्षनिका श्यामवर्ण है । राक्षस भूत पिशाच श्यामवर्ण है । इनिकै जिनप्रतिमाकरि सहित अष्टप्रकारके चैत्यवृक्ष है ते मानस्तंभादिक सहित है ।

वहुरि इन अष्टभेदनिमे दोयदोय इद्र है । एकएक इद्रकै च्यार हजार सामानिक देव है । च्यार पट्टदेवी है । सोलह हजार अंगरक्षक है । तीन सभा हैं । अभ्यतरसभामें आठसे देव ।

मध्यममे हजार देव। वाह्यमे बारासे देव। अर एकएक इंद्रके सातसात प्रकार सेना है। हस्ती, घोडा, पयादा, रथ, गधर्व, नृत्यकारिणी, वृषभ, एकएकमे सातसात कक्षा है। पहली कक्षा अठ्ठाईस हजारकी फिर दूणीदूणी सातमी कक्षामे हस्ती सतरालाख वाणवै हजार भया। सात कक्षानिका मिल्या हुवा पैंतीस लाख छपन्न हजार हस्ती भया। ऐसेही प्रमाण लीया घोडा पयादा रथादिकनिकी सेना हैं। ऐसें इनके समस्त इद्र सोलह तिनके सेनादिक ऋद्धि जाननी।

वहुरि इनका आवास इस जबूद्वीपतै तिर्यक दक्षिणदिशाविषै असख्यात द्वीपसमुद्रनिकू उल्लघन करिके अर खरपृथ्वीका भागविषै किनरेद्रका असख्यात हजार नगर है। ऐसेही उत्तरदिशाविषै किंपुरुष इद्रका विभवपरिवार है। ऐसेही सत्पुरुष गीत रतिपूर्ण भद्रस्वरूप काल नामभद्रका दक्षिणभागमे आवास है। तैसेही महापुरुष महाकाय गीत यशमणि भद्र अप्रतिरूप महाकाल। ए उत्तरके अधिपति तिनका उत्तरमे निवास है तथा पकभागविषै दक्षिणदिशामे राक्षसनिका इद्र भीम नामका असख्यात नगर है। वहुरि उत्तरदिशाविषै महाभीम नाम राक्षसेद्रका असख्यात नगर है। वहुरि इन व्यतरनिके नगर अनेक पृथ्वीऊपरि वहुत द्वीपनिमें है। जवूद्वीपप्रमाण वडे है। अनेक वन उपवन महल मदिर दरवाजे कोट पडकोटनि-सहित अनेक रचना है। वहुरि व्यतरनिका आवास पृथ्वीउपरि द्वीप पर्वत समुद्र देश ग्राम नगर त्रिक चोहटा गृहागण रस्ता गली जलके निवाण बाग वन देवकुलादिकविषै असख्यात विचरै है। अव तृतीयनिकायकी संज्ञा कहनेकू सूत्र कहे है—

ज्योतिष्का सूर्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥१२॥

अर्थप्रकाशिका— १ सूर्य, २ चद्र, ३ ग्रह, ४ नक्षत्र, ५ प्रकीर्णकतारा, ऐसें पचप्रकार ज्योतिष्क देव है। इनिको ज्योति उद्योतरूप स्वभाव है यातै ज्योतिष्क ऐसी सामान्यसज्ञा है। सूर्य चद्रमा ग्रह नक्षत्र प्रकीर्णकतारा ए विशेषसज्ञा है। इहा सूर्यचद्रमासौं इनिकी भिन्नभिन्न [illegible] इनका प्रधानपणा जणाया है। इनिकै प्रभावादिक विशेष हैं। सूर्यका पहली [illegible] पणाते है। जिस शद्बमे स्वर अल्प होय सो पहली कह्या जाय है जैनेद्रमें वाकी [illegible] है। इनिमे चद्रमा इद्र है सूर्य प्रतीद्र है। इनिके आवास मध्यलोकमे है। इस सम-भूमिभागतै सातसे नवे योजन ऊपरि समस्त ज्योतिषीनिके नीचे तारा विचरै है। तिन [illegible] ऊचे सूर्यजातिके देव है। अर सूर्यनितै असी योजन ऊचा जाई चद्रमा [illegible]। चद्रमातै तीन योजन ऊपरि नक्षत्र है। तिनतै तीन योजन ऊचे जाय बुधदेव है। [illegible] ऊचे शुक्रदेव है। तिनतै तीनयोजन ऊचे वृहस्पति है। तिनतै च्यारयोजन ऊचे [illegible] है। [illegible] च्यारि योजन ऊचे शनैश्चर है। ऐसे यो ज्योतिर्गणनिका विषयरूप आकाश [illegible] ज्योतिर्मे है। जातै समभूमितै सातसेनिवै योजनके ऊपरै नवसे योजनपर्यंत [illegible] ज्योतिषी देवनिका पटल है। अर तिर्यंक असख्यात द्वीपसमुद्र प्रमाण

चौडालवा घनोदधिपवनपर्यंत तिष्ठै है। वहुरि एक योजनका इकसठि भागकी जेतीमे छप्पन्न भागप्रमाण चंद्रमाका विमान है । अर एक योजनका इकसठिभागकी जेतीमे अडतालीस भाग प्रमाण सूर्यका विमान है। शुक्रका विमानका व्यास एककोशप्रमाण है। बृहस्पतीका किंचित न्यून अेक कोशप्रमाण है। अर बुध मगल शनैश्चरका विमान अर्द्धकोश विस्तार है। बहुरि तारानिका विमान जघन्य है सो तो एक कोशका चतुर्थभाग प्रमाण विस्तार है। अर उत्कृष्ट एककोशका तारानिका तथा नक्षत्रनिका विमानका विस्तार है। अर ए समस्त विमाननिका आकार जैसे कोऊ गोला सर्वतरफतै घटता जानना सो लोहादिकनिका गोला वीचिमे चीरिये तब उपरि विस्ताररूप अर नीचे क्रमते घटता होयही। अर विमाननिका विस्तारतै आध ऊचाईका प्रमाण है। अर विस्तारतै तीगुणीतै कुछ अधिक परिधि है।

वहुरि राहुको विमान चद्रमाका विमानके नीचे गमन करे है। अर केतुको सूर्यविमानके नीचे गमन करे है। अर राहुकेतुका विमान किंचित न्यून एक योजनके विस्तार है। बहुरि राहुका विमानका ध्वजादडके ऊपरि च्यारि प्रमाणागुलका अतर छाडि चद्रमाका विमान है। अर केतुका विमानका ध्वजादडके ऊपरि च्यार प्रमाणागुलका अतर छाडि सूर्यका विमान है। चद्रमाका विमान दिनप्रति अपना विस्तारके मोलमे भाग कृष्ण वा शुक्ल होय हैं। सो राहुका विमानकी गति विशेष होय हैं। दक्षिणदिशामे हस्तीके आकार च्यार हजार देव है। पश्चिममे वृषभके आकार च्यार हजार देव है। उत्तरमे तुरगाकार च्यार हजार देव वसे है। वहुरि अन्य ग्रहनिके विमानका वाहक आठ हजार देव है। नक्षत्रविमानके च्यार हजार देव है। ताराविमानके दोय हजार देव विमानकू वहनेवाले हैं। वहुरि सूर्यके वारह हजार किरण कठोर है। चद्रमाके शीतल वारह हजार किरण है। शुक्रके अढाई हजार किरण है प्रकाशकरि उज्वल है। और ग्रहादिक मंदकिरण है मदप्रकाशसहित है। वहुरि इहा कोऊ कहै ज्योतिषीदेवनिके गमनका कारणविना गमन कैसे। ताका उत्तर गौतस रत आभियोग्य देव है तिनके कर्म गमनकरिकेही रचे हैं। कर्मकी विचित्रता है तप्तायमान सुवर्णवर्ण सूर्यविमान है। निर्मल कमलततुके वर्ण चद्रविमान है रूपावर्ण शुक्राका विमान है। मोतीसमान बृहस्पवितनि है। कनकमय बुधविमान है। तप्तायमान सुवर्णवर्ण शनैश्चर विमान है। ताया सुवर्णसमान मगल विमान है। ज्योतिषीनिका गमनविशेष जनावनेकू सूत्र कहे है–

मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥१३॥

अर्थप्रकाशिका– ज्योतिषी देव मेरुकी प्रदक्षिणारूप निरंतर मनुष्यलोकमे गमन करे है। मेरुकू ग्यारह इकईस योजन तिर्यक् छाडिकरि तारांगणादिक विचरे है। अढाई द्वीपमे अर दोय समुद्रमे मनुष्य निका क्षेत्र है। तिनमे जम्बूद्वीपमे दोय चद्रमा, लवणसमुद्रमे च्यार है। धातकी द्वीपमे वारा है, कालोदधिमे बीयालीस है, पुष्करार्द्धमे वहत्तरी है। ऐसे पचस्थान

उपरी एकसो वत्तीस चद्रमा भये। इतनेही सूर्य है। वहुरि जम्बूद्वीपमें छत्तीस ध्रुवतारा हैं। लवणसमुद्र उपरी एकसो गुणतालीस, धातकीमे अेक हजार दश, कालीदधि उपरी इकतालीस हजार अेकसो वीस, पुष्करार्ध उपरि त्रेपन हजार दोयसे तीस ध्रुवतारा है। वहुरि एक असी योजन घटाये गुणचास हजार आठसे बीस योजनप्रमाण तो अभ्यंतर वीथी मेरुगिरिका मध्य-पर्यंत उत्तरदिशाविषै आताप फैले है।

वहुरि लवणसमुद्रका व्यास दोय लाख योजनका ताका छवा भाग तेतीस हजार तीनसे तेतीस योजन अर एकका तिसरा भागप्रमाण यामै द्वीपका चार क्षेत्र एकसो असी योजन मिलाए तेतीस हजार पाचसे तेरह योजन अर एकका तिसरा भागप्रमाण दक्षिणदिशा विषै आताप फैले है। ऐसेही अन्य वीथीनिविषै जानना। बहुरि नीचे अठारहसें योजन चित्रापृथ्वी-पर्यन्त फैले है। वहुरि उपरि सौ योजनपर्यंत आताप फैले है। वहुरि चद्रमाका आयु एक पल्य अर एक लक्ष वर्षका हैं। सूर्यका आयु हजार वर्ष अधिक पल्यका अर शुक्रका आयु सौ वर्पसहित पल्यका। अर बृहस्पतिका आयु एक पल्यका। बुध मगल शनैश्चरका आध पल्यका। अर तारानिका आयु अर नक्षत्रनिका उत्कृष्ट आयु पाव पल्यका अर जघन्य आयु पल्यका अष्टम भागप्रमाण है। वहुरि चद्रमा अर सूर्य इनिके चारचार पट्टराणी है। अर एकएक पट्टदेवीके चारचार हजार परिवारकी देवी है। अर एकएकके एतीही विक्रिया है। अर ज्योतिपीनिकी देवागनाका आयु अपनेअपने स्वामी देवकी आयुतै अर्द्धप्रमाण हैं। गतिमान् ज्योतिपीनिकरिही कालका विभाग है ऐसें दिखावनेकू सूत्र कहे हैं—

तत्कृतः कालविभागः ॥१४॥

अर्थप्रकाशिका— तिन ज्योतिषी देवनिके गमनकरि कीया कालका विभाग है। लव, पल, घडी, मूहूर्त, दिनरात्री, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, सत्सवरादिक कालका विभाग ज्योतिर्पीदेवनिकरी कीया प्रकट होय है, काल हैं सो दोय प्रकार है। निश्चयकाल, व्यवहारकाल। तो निश्चयकाल तो पचम अध्यायमे वर्णन करसीही निश्चयकालका जनावने वारा व्यवहारकाल है। अव मनुष्यक्षेत्र जो अढाईद्वीपवारे ज्योतिपी देवनिका स्थिरपणाका नियम करे है—

एक वलय है। अर वलयवलयप्रति चारचार चद्रमा अधिक है। ऐसे बाह्य पुष्करार्द्ध द्वीपविषै आठ वलय कहिए परिधि है। तहा चद्रमा सूर्यपरिवार अवस्थित है। बहुरि पुष्करवर समुद्रविषै वेदीतै पाचसौ हजार योजनपरे जाय प्रथम वलय है। सो प्रथमवलयविषै दोचद्रमा-संबधी एकसूर्य अर अठासी ग्रह अठाईस नक्षत्र अर छासठिहजार नवसे पिचहत्तरी कोडाकोडी तारा है। एता परिवारसहित समस्त चद्रमा जानना। जहा जे जबूद्वीपविषै दोय सूर्य दोय चद्रमा इनका गमन करनेका क्षेत्रकूं चार क्षेत्र कहिए है। तहा एकसौ असी योजन तो द्वीपविषै अर तीनसौ तीस योजन अर सूर्यका विवका प्रमाणकरि अधिक लवणसमुद्रविषै गमनका क्षेत्र है। ऐसे पाचसौ दश योजन साधिक इनका चार क्षेत्र है।

यामै सूर्यके गमन करनेकी अेकसो चौरासी गैली है। तहा विब प्रमाण तो अेक अेक गैलीकी चौडाई है। अर गैलीप्रती दोय दोय योजनका अतर अैसे एकसो तीयासी अतर जानने। इनका गमनकी जम्बूद्वीपमे अभ्यतर परिधिमे गमन करे सो प्रथम गैली कहिये। अर लवणसमुद्रमे तीनसे तीस योजन परे जो गैली सो अतकी वाह्य परिधि है। प्रथम अभ्यतर वीथीविषै तिष्ठता सूर्यके दक्षिणायनका प्रारभ है। अर अतर्बाह्य वीथी विषै तिश्ठता सुर्यके उत्तरायणका प्रारभ होय है। बहुरि कर्कराशीविषै सूर्य प्राप्न होय तव अभ्यतर वीथीविषै भ्रमण करे है। अर राशिविषै सूर्य प्राप्न होय तव वाह्यवीथीविषै भ्रमण करै है। सूर्य ज्यौं ज्यौ वाह्यवीथीकू प्राप्त होय ज्यौ ज्यौ शीघ्र गमन करे है। अर जैसे जैसे अभ्यतरवीथीकू प्राप्त होय तैसे तैसे मद गमन करे है। जब अभ्यतर परिधिमै गमनका प्रारभ करे है। तदि अठारह मुहुर्तका दिन वारह मुहूर्तकी रात्री होय है। अर वाह्य परिधिमै भ्रमण करे है। तदि वार मुहूर्तका दिन अठारह मुहूर्तकी रात्रि होय है।

वहुरि चद्रमाकी वीथी पद्रह है। वहुरि इहा इनके गमनका चार क्षेत्रकी चौडाई पाचसौ दस योजन प्रमाण कह्या तिसमै एकसौ चौरासी वीथी सूर्यका है। तिनमै जबूद्वीपसवधी चार क्षेत्र एकसौ असी योजनमे जबूद्वीपकी वेदीका व्यास च्यार योजनका है। तातै द्वीप उपरि एकसौ छिहत्तरी योजन अर वेदी उपरि च्यार योजन लवणसमुद्रके ऊपरि तीनसौ तीस योजन है। तिनमे सूर्यका विंव तो अडतालीस योजनका इकसठवा भागविषै अर दोय योजनको अतराल इनकू मिलाय एकसौ सत्तरिका इकसठिवा भागप्रमाण दिनप्रति परिधिको अतराल जाननी सो द्वीप ऊपरि वासठि उदय है अर वेदीसबधी दोय अर लवणसमुद्रसबधी एकसौ अठार है। ऐसे एकसौ चौरासी उदय कहे। वहुरि भरतक्षेत्रके निवासीनिकू त्रेसठी उदय तो निषधपर्वत उपरि दीसे है। अर चोसठिवी पैसठीवी वीथीविषै तिष्ठता सूर्य हरि क्षेत्र उपरी उदय दीखे है। अर छासठिवीतै लगाय अतपर्यंत वीथीविषै तिष्ठता सुर्य लवणसमुद्रके उपरी उदय होता भरतक्षेत्रके निवासीनिकू दीखे है। वहुरि मेरुगिरिके मध्यतै लगाय यावत लवण-समुद्रका छठा भागपर्यत सूर्यका आताप फैले है। जवूद्वीपका आधा क्षेत्र पचास हजार योजन

नामें द्वीप चार क्षेत्र एकसौ अठासी चद्रमा है। आगे एक लाख योजनपरै जाय दूसरा वलय है तहा दोयसौ वाणवे चद्रमा है। ऐसे एकएक लाख योजनपरै जाय एकएक वलय है। एकएक वलयप्रति च्यार चद्रमा अधिक है। ऐसे पुष्करवरसमुद्रविषै वत्तीस वलय है। वहुरि तातै दूना वारुणीवर द्वीपविषै चोसठिवलय है तहा वेदीतै पचास हजार योजनपरै जाय पहला वलय है। सो पहला वलयविषै पाचसे छीहत्तरी चद्रमा है। आगे एकएक लाख योजन क्षेत्रपरै जाय एकएक वलय है अर वलयप्रति च्यार चद्रमा अधिक है। समस्त वलयविषै चद्रमा सूर्य अपने परिवारसहित तिष्ठै है अवस्थित है। इहा ऐसा। जो पुष्करवरसमुद्रमे वत्तीस वलय है। तातै वारुणीवर द्वीपविषै दूणा वलय है चोसठि है। पुष्करवर समुद्रके पहले वलयविषै दोयसे अठ्यासी चद्रमा तातै दूणा वारुणीवर द्वीपके पहले वलयविषै पाचसे छीहत्तरी चंद्रमा है। ऐसेही वारुणीवर समुद्र तथा क्षीरवर द्वीपादिक विषै दूनादूना वलय अर याही अनुक्रमकरि चद्रमा सूर्यकी सख्याकी वधतीका परिणामादिक लोकका अतमे स्वयभूरमणसमुद्रपर्यत ज्योतिलोक स्थिर तिष्ठैहै। ऐसे ज्योतिषीनिका वर्णनपर्यत तीन निकायका वर्णन कीया। अव चतुर्थ निकायकी सामान्यसज्ञा कहने सूत्र कहे है–

वैमानिकाः ॥१६॥

प्रकाशिका– जिनमै तिष्ठते जीवनिकू पुण्यवत विशेषपणाकरि मानै सत्कार करे ते विमाननिमे उत्पन्न भए ते देव वैमानिक है। ते विमान चौरासी लाख सत्याणवे ... । अर एकएक विमान वहुत योजनके विस्तार है। तहा विमान तीन प्रकार है। ... श्रेणीवद्ध, ३ प्रकीर्णक। तिनमे श्रेणीवद्ध विमान तो एकएक असख्यात योजनकाही है। ... सख्यात योजननिकेही हैं। अर प्रकीर्णक केई असख्यात योजनके केई सख्यात योजनके है। तिनमे उत्तर मदिर कल्पवृक्ष वन वाग वावडी नगरादिक अनेक रचना पाईए है। ... विमानमें तिष्ठना इद्रकविमान है। अर पूर्वादि च्यारों दिशानिविषै पक्तिरूप तिष्ठै है ... है। वहुरि च्यारो दिशानिके वीची अतरालरूप विदिशानिविषै जहा तहा ... तिष्ठै ते प्रकीर्णक विमान है। अव वैमानिकनिमे भेद दिखावनेकू

उपर्युपरि ॥१८॥

अर्थप्रकाशिका– कल्पनिके जुगल तथा पटल वहुरि नवग्रैवेयक अर नव अनुदिश पच अनुत्तर। ए समस्त ऊपरिऊपरि है। अव कल्पादिकनिका नाम कहे है तिनमे देव वसे है–

सौधर्मैशानसनत्कुमारमाहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्ठशुक्र-महाशुक्रसतारसहस्रारेष्वानतप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसुग्रैवे-यकेषु विजयवैजयन्तजयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥१९॥

अर्थप्रकाशिका– सौधर्म, ईशान, अर सनत्कुमार, माहेद्र, अर ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, अर लांतव, कापिष्ठ, अर शुक्र, महाशुक्र, अर सतार, सहस्रार, अर आनत, प्राणत, अर आरण, अच्युत ऐसे अष्ट युगलके षोडस स्वर्ग हैं। तिनके वावन पटल है। ऊपरि नव ग्रैवेयकनिके नव पटल है। उपरि अनुदिश विमाननिका एक पटल हैं। ऊपरि विजय, वैजयत, जयत, अपराजित, सर्वार्थसिद्धि इनि पचविमाननिका एक पटल है। ऐसे समस्त त्रेसठि पटल है। इहा ऐसा विशेष जानना। इस भूमितलतै निव्याणवै हजार च्यालीस योजन ऊच्या जाय सौधर्म ईशान दोय कल्प है। तिनका प्रथम पटलका अत्यत अत्यत मध्यमे ऋतुनामा इद्रक विमान है। सो ऋतुनामा इद्रक मेरुकी चूलिकाके ऊपरि एक वालका अग्र समान अतरकरि तिष्ठै है सो अढाई द्वीप समान पैतालीस लक्ष योजनके विस्तार सहित है। तिसके च्यार दिशानिमे बासठि बासठि सुधी पक्तिरूप श्रेणीवद्ध विमान है। अर दिशानिके श्रेणीवद्धनिके वीचि वहुत प्रकीर्णक विमान है।

वहुरि इसकै उपरि असख्यात योजनका अतराल छाडि दुसरा पटल है। तिसकै मध्य चद्रनाम इद्रक है। अर च्यारो दिशानिमे इकसट इकसट श्रेणीवद्ध है। अर तिनके वीचि प्रकीर्णक है। वहुरि असंख्यात योजननिका अतराल छाडि तीजा पटल है। तिसके वीचि विमल नामा इद्रकविमान है। अर च्यार दिशामै साठिसाठि श्रेणीवद्ध विमान हैं। अर दिशानिके अंतलेनिमे प्रकीर्णक विमान है। ऐसे असख्यात असख्यात योजनका अतराल छाडि ड्योढ राजूकी उचाईमे इकतीस पटल है। अर पटलपटल प्रति एकएक दिशाप्रति एकएक श्रेणीवद्ध घटता गया है। सो तहा इकतीसमा पटलमे दिशानिके श्रेणीवद्ध वत्तीसवत्तीस रहेहै। अर इद्रकविमानका विस्तारहू पटलपटलप्रति सत्तरी हजार नवसे सडसठी योजन अर तेईस योजनका इकतीसमा भागप्रमाण उपरि घटता घटता है।

भावार्थ– सौधर्मका प्रथम इद्रक पैतालीस लक्ष योजनका है। अर त्रेसठिमा पटल अनुत्तरविमान सर्वार्थसिद्धिनामा इद्रक एक लक्ष योजनप्रमाण विस्तारतै लीया है। तातै चवालीस लक्ष योजन वासठि स्थाननिमे क्रमतै घटा है। तातै पटलप्रति सत्तरि हजार नवसे

सत्महि योजन अर तेईस योजनका इकतीसवा भागप्रमाण इद्रक प्रति हानि चय है। ऐसे डयोढ राजूकी उचाईमे इकतीस पटलरूप सौधर्म ईशान कल्प है। तहा पटल पटल प्रति तीन दिशाके श्रेणीवद्ध अर इद्रक अर पूर्व दक्षिण दिशाके श्रेणीवद्धनिके बीचि अर दक्षिण पश्चिम इन दोहू तरफके श्रेणीवद्धनिके वीचि जे प्रकीर्णक इनमे तो सौधर्म इद्रकी आज्ञा प्रवर्ते है। अर उत्तरदिशाका श्रेणीवद्ध अर पश्चिम उत्तर बीचि अर उत्तर पूर्वके बीचि जे प्रकीर्णक तिनमे ईशान इद्रकी आज्ञा प्रवर्ते है। ऐसे इकतीस पटलके पूर्ण दक्षिण पश्चिमका श्रेणीवद्ध अर इद्रक अर दोय दिशाके प्रकीर्णकनिमे सौधर्मकी आज्ञा है। अर उत्तरके श्रेणीवद्ध अर प्रकीर्णकनिमे ईशान इद्रकी आज्ञा है। सौधर्म इद्रके वत्तीस लाख विमान है। तिनमे इकतीस इद्र कहे। अर तेतालीस इकहत्तरी श्रेणीवद्ध है। अर इकतीस लाख पिचाणवे हजार पाचसे अठाणवे प्रकीर्णक है। अर ईशान स्वर्गके इद्रके चोदहसे सत्तावन श्रेणीवद्ध अर सत्ताईस लाख अठाणवे हजार पाचसे तेतालीस प्रकीर्णक है ऐसे समस्त अठाईस लाख विमाननिमे ईशानेद्रकी आज्ञा प्रवर्ते है।

अव इद्र कहा वैसे है सो कहे है। तिस सौधर्म स्वर्गका इकतीसमा पटलकै मध्य प्रभा नामा इद्रक विमान है तिनकी दक्षिणदिशासबधी वत्तीस श्रेणीवद्ध विमानिकी पक्ति तिस विषै अठारमो श्रेणीवद्ध विमान है। तिसकै स्वस्तिक वर्द्धमान विश्रुत नाम धारक तीन कोट है। तिनमे वाह्य कोटमे वसनेवाली सेना है। अर सभानिवासी देव है। अर मध्यम प्राकारमे निवास करनेवाला त्रायस्त्रिंशत् देव है। अभ्यतर प्राकारमे निवास करनेवाला देवनिका राजा सौधर्मेद्र है। तिसके विमानके च्यारी दिशानिमे च्यार नगर है। तिनका काचन अशोक मदिम स्तार गल्व ए नाम है। अर तेतीस त्रायस्त्रिंशदेव है। चोरासी हजार आतमरक्षक देव है। तीन सभा है। सप्त सेना है। चोरासी हजार सामानिक देव है। च्यार लोकपाल है। अष्ट पट्टदेवी है। चालीस हजार वल्लभिका देवी है। पट्टदेवी ... देवी प्रत्येक पाचपल्यका आयुकू धारे है। अर एकएक देवी सोलह हजार परि... देवीनिकरि वेष्टित है। अर एक एक पट्टदेवी अर एकएक वल्लभिकासोलह हजार ... विक्रिया करनेकू समर्थ है। तिनमे सौधर्मेद्रकी अभ्यतर समिता नामा सभा ... देवनिकी है। तिनका पच पल्यका आयु है। अर चद्रा नामा मध्यमकी-सभा ... देवनिकी है। तिनका च्यार पल्यका आयु है। अर जातुनामा वाह्यसभा तिनमे ... है। तिनका तीन पल्यका आयु है। अभ्यतर सभाके देवनिके एकएकके ... है। तिनका अढाई पल्यका आयु है। अर मध्यकी सभाका एकएक देवके छैसौ ... तिनका ... पल्यका आयु है। वाह्य सभाके एकएक देवके पाचसौ देवी है। तिनका ... है। अर तिनहीही देवीनिका रूप विक्रिया करनेकू समर्थ है।

... अर ... देवीनिके अभ्यतर सभामे सातसौ देवी मध्यममे छेसौ, अर वाह्य... है। ... सभाकी समस्त देवी अढाई पल्यकी आयुकू धरे है। वहुरि

पयादा अश्व गज वृषभ रथ नृत्यकी गधर्व नाम धारक सप्त सेना है। तिन सेनाके देवनिका एक पल्यका आयु है। अर इन सेनामे एकएक महत्तरी है। तिनकाहू आयु एक पल्यका है। तिनमे वायु नामा पयादनिकी सेनाका महत्तरी है। सप्त कक्षानिकरि सहित पयादनिकी सेना है। तहा पहली कक्षामे चौरासी लाख पयादा है। दूसरीमे यातै दूणा तीसरीमे यातै दूणा ऐसे सप्त कक्षा दूणीदूणी जाननी। ऐसेही सप्त सेनाका प्रमाण सप्तकक्षासहित जानना।

हरिनाम घोडाकी सेनाको महत्तर है। ऐरावत नाम हस्तीनिकी सेनाको महत्तर है। दामयष्टि वृषभाकी सेनाको महत्तर है। माथली नाम रथानीको महत्तर है। नीलाजना गणिकानिकी सेनाकी महत्तरी है अरिष्टयशस्क नाम गधर्वसेनाको महत्तर है। सो या सख्या विक्रियाकरी होय है। इद्रकी लार विक्रियातै इतना रूपकरि सेवा करे है। अर स्वाभाविक तो इन एकएक सेनाके देवनिके छेसौ छेसौ देवी है। अर एकएक देवी छह देवीनिके रूपकी विक्रिया करनेकू समर्थ है। अर आधपल्यका आयु है। अर चोरासी हजार आत्मरक्षक देव है। तिनका एकएक पल्यका आयु है। अर तिन एकएकके दोयसै देवी है। अर एकएक देवी विक्रियाकरि अपना छह रूप करनेकू समर्थ है। अर्द्धपल्यकी जिनकी आयु है। बहुरि इद्रके बालक नाम आभियोग्य देव है। ताको एक पल्यका आयु है। अर जबूद्वीप प्रमाण वाहन विमान रूप विक्रिया करनेकू समर्थ है। तिसके छेसौ देवी है। एकएक देवी छेसौ रूपविक्रिया करनेकू समर्थ है। अर्द्धपल्यका जिनका आयु है। बहुरि पूर्वदिशामे स्वयप्रभविमानविषै सोमनाम लोकपाल है। ताका अढाई पल्यका आयु है। अर ताकै चार हजार सामानिक देव है। तिनका अढाई पल्यका आयु है। अर ताकै चार हजार देवी है। तिनका अढाई पल्यका आयु है। अन च्यारोही लोकपालनिके च्यारच्यार महापट्टदेवी है। तिनका अढाई पल्यका आयु है। अर सोमके अभ्यतर ईशान नामा पाचसौ देवनिकी सभा है। तिनका सवापल्यका आयु है। अर दृढानाम मध्यकी सभा च्यारिसै देवनिकी है। तिनका सवापल्यका आयु है। चतुरत नाम वाह्य सभा पाचसौ देवनिकी है। तिनका सवापल्यका आयु है। वहुरि दक्षिणदिशाविषै वरज्येष्ठ विमान यम नाम लोकपाल है। ताकै सामानिकादि समस्त विभव सोमतुल्य है। वहुरि पश्चिम दिशाविषै अजनविमानविषै वरुण नाम लोकपाल है। ताका पोणा तीन पल्यका आयु है। इसके ईषा नाम अभ्यतर सभामे साठि देव है। तिनको ड्योढ पल्यका आयु है। अर दृढा नाम मध्यकी सभा पाचसौ देवनिकी हैं। तिनकी देशोन ड्योढ पल्यकी आयु है। अर चतुरग वाह्य सभा छसे देवनिकी है। तिनका कुछ अधिक ड्योढ पल्यकी आयु हैं। इन तीनूही सभाके देवनिकी देवीनिकी आयु अपने भर्तारतै अर्द्धप्रमाण है। और इनकी विभूति सोमतुल्य है। बहुरि उत्तर दिशाविषै वलगु विमानमे वैश्रवण लोकपाल है। तीन पल्यका जाका आयु है। इसकी अभ्यतर सभाके सत्तरी देव है। मध्यसभा छसे देवनिकी। अर वाह्य सभा सातसे देवनिकी। तिनकी सवापल्यकी आयु हैं इनकी देवीनिकी अर्द्धप्रमाण आयु है। और विभव सोमलोकपालतुल्य है। अर इन चारि लोकपालनिके एकएकके साढातीन कोटी अप्सरा है।

सौधर्म इंद्रकानृत्य गान वादित्रका वडा समाज है। ऐसे राजवार्तिकजीतैं लिख्या है।

वहुरि सौधर्मादिकनिके एकएक विमानमे एकएक जिनमदिर कोटीनविभूतिकरि संयुक्त है। वहुरि इद्रका नगरके वाह्य अशोकवन सप्तच्छदवन चंपकवन आम्रवन है। एक हजार योजन लवा पाचसे योजन चौडा तिन वननिमे एक चैत्यवृक्ष है। तिनकी च्यारो दिशानिमे पल्यकासन जिनेद्रकी प्रतिमा है। तिनको मैं वदना करूहू। वहुरि अमरावती पुरके मध्य इद्रका आवासगृहकी ईशानदिशामै सुधर्मा नाम इद्रका आस्थानमडप है। सो आस्थानमडप सौ योजन लवा पचास योजन चौडा पचेतरी योजन ऊचा है तिस सुधर्मा नाम आस्थानमडप जो सभागृह ताके पूर्व उत्तर दक्षिण दिशाविषै द्वार है तिन द्वारनिका अष्ट योजन विस्तार है। अर अर षोडश योजन ऊचे है। तिस सभाके वीच इद्रके बैठनेका सिहासन है। तिसही सिहासनके अग्रभागविषै अष्ट महादेवीनिका आसन है।

तिन देवीनिका आसनतै वाह्य पूर्वादिदिशाविषै सोम यम वरुण कुबेर इनके आसन है। वहुरि इद्रका सिहासनतै अग्नि दक्षिण नैऋत्य दिशाविषै त्रायस्त्रिशत देवनिके तेतीस आसन है। वहुरि पश्चिमदिशाविषै सेनापतिनिके सात आसन है। वहुरि चौरासी हजार सामानिक देवनिमे बियालीस हजारके आसन तो वायुदिशामे हैं। अर बीयालीस हजारके आसन ईशान दिशा विषै है। इनतै वाह्य आत्मरक्षक [illegible]

ते जानना। वहुरि इकतीसमा पटलमे जो प्रभाविमानतै उत्तरश्रेणीविषै वत्तीस विमानरूप रश्रेणीका आठमा विमान तामे ऐशान नाम इद्र वसैहै तिसके परिवार वर्णन सौधर्मवत् नना। ईशान इद्रके अठाईस लाख विमान है। तेतीस त्रायस्त्रिशदेव हैं। बहुरि असी हजार ानिक देव है। तीन सभा है। सप्त अनीक कहिए सेना है। असी हजार आत्मरक्षक है। र लोकपाल हैं।

वहुरि श्रीमती सुसीमा वसुमित्रा वसुधरा जया जयसेना अमला प्रभा ए अष्टमहा- ा हैं। तिनकी सप्तपल्योपम आयु है। वहुरि वत्तिस हजार वल्लभिका है। तिनका ापल्यका आयु है। अभ्यतर समिता नाम सभा दश हजार देवनिकी हैं। तिनका सप्त- यका आयु है। चद्रमा नाम मध्यम सभा वारह हजार देवनिकी है। तिनका छह पल्यका ु है। जातु नाम वाह्यसभा तामे चोदह हजार देव है। तिनका पच पल्यका आयु है। पराक्रम नाम पयादनिकी सेनाको महत्तर है। अमितगति नाम अश्वनिकी सेनाको महत्तर है। कात नामा वृषभानीक महत्तर है। पुष्पदत नामा गजनिकी सेनाका महत्तर है। ग्रर नामा रथानीक महत्तर है। गीतयश नामा गधर्वसेनाका महत्तर है। श्वेता नाम नर्त्तकी- की सेनाकी महत्तरी है। तहा पयादनिकी सेनामे सात कक्षा। तिनमे पहली असी हजार निकी, दूजी यातै दूणी, तीजी यातै दूणी। ऐसे सप्तकक्षापर्यत दुगण दुगण एकएक सेना है। समस्त सेनाके देव अर इनका महत्तरनिकी कुछ अधिक एकपल्यका आयु है।

ऐशान इद्रके पश्चिमदिशाविपै समनाम विमानविषै सोम नाम लोकपाल है। तिसका ाच्यार पल्यका आयु है। तिसके अभ्यतरसभा साठि देवनिके है। मध्यसभा पाचसै देवनिकी है। वाह्यसभा छसै सात देवनिकी है। दक्षिणदिशाविषै सर्वतोभद्र विमाननिपै यम नाम कपाल है। साढाच्यार पल्यका आयु है। और सोमवत रचना है। वहुरि उत्तरदिशाविषै ाद्रविमानविषै वरुण नाम लोकपाल है। तिनका पच पल्यका आयु है। ताके अभ्यतरसभा सी देवनिकी है। मध्यसभा सातसे देवनिकी है। वाह्यसभा आठसे देवनिकी है। वहुरि दिशाविषै अमित नाम विमानविषै वैश्रवण नाम लोकपाल है। पोणापाच पल्यका आयु है। सके अभ्यंतर सभा सत्तरी देवनिकी है। मध्यम छसै देवनिकी है। वाह्यसभा सातसे निकी है। ऐशान इद्रकै पुष्पक नाम आभियोग्य देव है। वालकदेव सौधर्मकाकै तुल्य हैं। जबूद्वीपप्रमाण विमान वाहन करनेकू समर्थ है। और रचना सौधर्मइद्रवत जानना। ऐसे रश्रेणी अर पुष्पप्रकीर्णकनिका स्वामी ईशानेद्र है। अव इम प्रभाविमानतै ऊपरि असख्यात जन जाइए तहा सनत्कुमार माहेद्र कल्प है। तिनमे सप्त पटल है। इत्यादिक रचना स्तारसहित राजवार्त्तिकतै जानना इहा लिख्ये कथन वहुत होजाता तातै विस्तार वधनेके ातै इहा नही लिख्या है। इहा अन्य विशेष जानना।

मेरुका तलते चित्रापृथ्वीते डचोढ राजू ऊचा सौर्धम ईशान युगल है। ताके ऊपरि

ड्योढ राजूविषे सनत्कुमार माहेंद्र स्वर्गयुगल है। आगे ऊपरिऊपरि आधआध राजूविषे छह युगल क्रमकरि है। ऐसें छह राजूनिविषे सोलह स्वर्ग हैं। वहुरि तिनके ऊपरि एक राजूविषे नव ग्रैवेयक अर अनुदिश पच अनुत्तर विमान क्रमते है। वहुरि प्रथम स्वर्गके विषे वत्तीस लाख विमान है। ईशानविषे अठाईस लाख है सनत्कुमारविषें वारह लाख है। माहेंद्रविषे आठ लाख विमान है। ब्रह्मब्रह्मोत्तर युगलविषे च्यारि लाख। लातव कापिष्ठमे पचास हजार है। शुक्र महाशुक्रमे चालीस हजार। शतार सहस्त्रारविषे छह हजार है। वहुरि आनतादि च्यार कल्पनि विषे सातसे है। तीन अधोग्रैवेयकविषे एकसो ग्यारह विमान है। अर तीन मध्यमग्रैवेयकविषे एकसो सात विमान है। अर तीन उर्ध्वग्रैवेयिकनि विषे इक्याणवे विमान है। वहुरि नव अनुदशविषे नव विमान है अर अनुत्तरविषे पच विमान है। वहुरि सौधर्मयुग्मविषे इकतीस पटल अर इकतीसही इंद्रक हैं। सनत्कुमारयुगलविषे सात इद्रक अर सात पटल है। ब्रह्मयुगलविषे च्यारि इद्रक है च्यारिही पटल है। लातवयुग्मविशे दोय इद्रक है दोय पटल है। शुक्रयुग्मविषे एक इद्रक है एकही पटल है। आनतादि च्यार कल्पनिविषे छह इद्रक है छह पटल है। अधस्तनादि तीन प्रकार ग्रैवेयकविषे तीन तीन पटल है। अर तीन तीनही इद्रक है। अर नव अनुदशविषे एक पटल है एक इद्रक है। पच अनुत्तरविषे एक पटल हैं एक इद्रकहै। शतारयुग्मविषे एक इद्रकहैं एक पटल है। ऐसे त्रेसठि पटल है तिनमे त्रेसठिही इद्रक विमानहै।

वहुरि इहा एता सक्षेप और है। सौधर्मस्वर्गविषे अंतका इकतीसमा पटलका इद्रक विमानते अठारमा दक्षिणदिशका विमानमे सौधर्मेद्र वसे है। उत्तरदिशाका अठारमा श्रेणीवद्धविमानमे ईशानेद्र वसे है। सनत्कुमारका अतका पटलका सोलमा श्रेणीवद्ध है। तामे सनत्कुमार इद्र वसे हैं। उत्तरश्रेणीवद्धमे माहेद्र इद्र वसे है। ब्रह्मयुगलका अतपटलका चोदमा दक्षिणश्रेणीवद्धविषे ब्रह्मेद्र वसे है। लातवयुग्मका अत पटलका वारमा उत्तरश्रेणीवद्धविषे लातवेद्र वसे है। शुक्रयुगलका अत पटलका दशम दक्षिणश्रेणीबद्धविषै शुक्रेद्र वसे है। शतारयुगलका अत पटलका आठमा उत्तरश्रेणीवद्धविषै शतारेद्र वसे है। आनतयुगलका अत पटलका दक्षिणश्रेणीवद्धविषै आनतेद्र उत्तरश्रैणीवद्धविषै प्राणतेद्र वसे है। आरणयुगलका अतका चौथा [illegible]वद्धविषै आरणेद्र अर उत्तरश्रेणीवद्धविषै अच्युतेद्र वसे है। दक्षिणदिशामे छह इद्र वसे। १ सौधर्ममे, २ सनत्कुमारमे, ३ ब्रह्ममे, ४ शुक्रमे ५ आनतमे, ६ आरणमे। उत्तरके इद्र १ ईशानमे, २ माहेंद्रमे, ३ लातवमे, ४ शतारमे, ५ प्राणतमे, ६ अच्युतमे। मेरुगिरकी [illegible] ऊपरि बालका अग्रभाग प्रमाण अतराल छोडि पहला ऋतुनाम इद्रकविमान तिष्ठे [illegible] ऊपरि [illegible] अंतका इद्रकका ध्वजादड है सो कल्पसवंधी पृथ्वीका अंत जानना।

[illegible] पटलनिविषै जे वत्तीस लाख अठाईस लाख इत्यादिक प्रमाण लीए [illegible] भाग प्रमाण तो सख्यातयोजनके विस्तारकू धरे है। अर शेष विमान [illegible] धरे है। वहुरि अधोग्रैवेयकविषै तीन मध्यग्रैवेयकविषै अठारह

रिग्रैवेयकविषै सत्रह । नव अनुदिशनिविषै एक पच अनुत्तरविषै एक सख्यातरूप योजनके
्तारस्रूप है । वहुरि सौधर्म ईशानविषै विमान पचवर्ण है । सनत्कुमार माहेद्रविषै कृष्णविना
ारि वर्ण है । ब्रह्मादि च्यारि कल्पनि विशै नीलभी नाही तीन वर्ण है । शुक्रादि च्यार
ंनिविशै रक्तभी नाही तातै दोय वर्ण है । तातै परै आनतादि अनुत्तरपर्यंत समस्त विमान-
वेशै शुक्लवर्णही है । ऐसे विमाननिका रग जानना ।

वहुरि सौधर्मयुगलके विमान तो जलरूप पुद्गलस्कधनिकौ आधारकरि ऊपरि तिष्ठै है।
रि सनत्कुमार माहेद्रके विमान पवनके आधार तिष्ठै है । बहुरि ब्रह्मादिक आठ स्वर्गके
मान जलरूप वा पवनरूप परणए पुद्गलस्कधनिकै ऊपरि तिष्ठै है । बहुरि आनतादि अनु-
रपर्यंतके विमान पुद्ललस्कधनिका आधाररहित आकाशके आधार तिष्ठै है । बहुरि विमान-
की भूमिकी मोटाई ऐसे है । सौधर्मादिक छह युगलनिके छह स्थान अर अवशेष आनतादि
पनिका एक स्थान अर तीनतीन अधोग्रैवेयकादिकनिका एक स्थान तातै तीन स्थान अनुदिश
ुत्तरका एक स्थान ऐसे इन ग्यारह स्थानकनिविषै विमाननिकी भूमिकी मोटाई सो आदि-
शै ग्यारहसौ इकईस योजन प्रमाण अर ऊपरि दश स्थानविषै क्रमते निव्याणवे निव्याणवे
जन प्रमाण घाटी घाटी है । याहीतै अनुदिश अनुत्तरकी एकसौ इकतिस योजन भूमिकी
टाई रही । वहुरि दक्षिण उत्तर स्वर्गसबधी सोलमा स्वर्गपर्यंतका देवी सौधर्म ईशान स्वर्ग-
षैही उपजै है उपरि नही उपजै है । जिनविमाननिविषै कोऊ देव नही उपजै केवल देवागनाही
ज्ञ उपजै ऐसे सौधर्मविषैं छह लाख विमान है । अर ईशानविषै च्यारि लाख विमान हैं ।
ज्ञ सौधर्म वा ईशानविषै ऊपजे पोछे ऊपरले स्वर्गनिके जिन देवनिकी नियोगिनी होय ते देव
नने अपने ठिकाने लेजाय है । अर अन्य सौधर्मके छविस लाख विमान अर ईशानके चोईस
ाख विमान तिनमे देवदेवी उपजै है। सनत्कुमारादिक स्वर्गके विमाननिमे देवागनाका
त्पादही नही है केवल देवनिहीकी उत्पत्ती है ।

वहुरि अधोदिशाविषै जहा पर्यन्त गमनादिक विक्रियाकी शक्ति है तहापर्यंत अवधि-
ानकरि पदार्थ जाननेकी शक्ति है । सौधर्म ईशानके देवप्रथम पृथ्वी पर्यंत गमन शक्ति है ।
ाय स्वर्गविषै दूसरी नरक पृथ्वी पर्यत हैं । च्यारि स्वर्गनिमे तीसरी पर्यंत। च्यारिमें चौथी पर्यंत
ारमे पाचमीपर्यंत नवग्रैवेयकविषे छठी पर्यत । अनुदिश अनुत्तर चौदह विमानके देवनिके
ातवी नरक पृथ्वी पर्यत गमनशक्ति अर अवधिज्ञानशक्ति है । वहुरि जन्ममरणका अतर ऐसे
ानना । जे ते काल किसीहीका तहा जन्म नही होय सो जन्मका अतर है । अर जे ते काल
िसीहीका तहा मरण नही होय सो मरणांतर है । सो ए दोऊ उत्कृष्टपने सौधर्मादि दोय
र्गनिविषै च्यार मास अवशेण ग्रैवेयकादिक छह मास विर्षप्रमाण जानना । वहुरि उत्कृष्ट
रह कहिए है । उत्कृष्टपणे मरण भए पीछै तिहकी जायगा अन्य जीव आय यावत् काल नही
वतरै तिस कालका प्रमाण कहे है । इद्र अर इद्रकी महादेवी अर लोकपाल इनका विरहकाल

छह मास हैं। वहुरि त्रायस्त्रिशदेव अर अगरक्षक अर सामानिक अर परिषद इनका च्यार मास अतर जानना। बहुरि इद्रनकी अपेक्षा कल्प सख्या ऐसे है। ब्रह्मब्रह्मोत्तरमे एक ब्रह्म नाम इद्र है। अर लांतव कापिष्ठमे एक लातव नाम इद्र है। अर शुक्र महाशुक्रमे एक शुक्र नाम इद्र हैं। शतार सहस्रारविषै एक शतार नाम इद्र है। अन्य आठ स्वर्गनिविषै भिन्न भिन्न आठ इद्र है। ऐसे वैमानिकनिका वर्णन कीया। विशेष जाननेका इच्छुक राजवार्तिकतै जानहू। अब वैमानिक देवनिकै परस्पर विशेष जनावनेकूं सूत्र कहे हैं—

स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्याविशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोऽधिका ॥२०॥

अर्थप्रकाशिका— वैमानिक देव ते स्थिति प्रभाव सुख द्युति लेश्याकी विशुद्धिता इद्रयिनिका विषय अवधिका विषय इनकरि ऊपरि ऊपरि अधिक अधिक है। अपना आयुकर्मका उदयतै जिस भवमे रहना सो स्थिति हैं। वहुरि परके उपकार तथा निग्रह करनेकी शक्ति सो प्रभाव कहिए है। वहुरि साता वेदनीका उदयतैं इद्रियनिके इष्टविषयनिकूं भोगना सो सुख कहिए। वहुरि शरीरकी तथा वस्त्र आभरण बलकी दीप्ति सो द्युति कहिए। वहुरि लेश्याकी उज्वलता सो विशुद्धिता कहिए। वहुरि इंद्रियनिकरी विषयका जानना वहुरि अवधिकरि विषयका जानना इनकरि अधिकाधिक है।

भावार्थ— स्वर्गनिके पटलपटलप्रति नीचेके देवनितै उपरले देवनिके स्थिति प्रभावादिक अधिक अधिक जानना। सौधर्मादिकनिकै निग्रह अनुग्रह विक्रिया परके योगतै ऊपरिऊपरि वहुत गुणे है तोहू मद अभिमानकरि अल्पसक्लेशकरि प्रवर्त्तनमैं नही आवे है। जैसे स्थित्यादिककरि अधिक है तैसे गमनादिककरि अधिक नही सूत्र कहे है।

गतिशरीरपरिग्रहाभिमानतो हीनाः ॥२१॥

अर्थप्रकाशिका— वैमानिक देव है ते गमन अर शरीरकी ऊचाई अर परिग्रह अभिमान इनकरि ऊपरिऊपरि हीन है घाटि घाटि है। एकदेश छाडि अन्यक्षेत्रमे जावना सो गमन हैं। अर शरीरका विस्तार सो शरीर है। अर लोभकषायका उदयतै ममता परिणाम सो परिग्रह है। मानकषायके उदयते अहकार सो अभिमान है।

इहा कोऊ आशका करे। जो ऊपरिके देवनिके विक्रियाकी अधिकतातै गमन वधता है गनि घाटि कैसे कही। ताका समाधान। जो गमनकी शक्ति तो ऊपरि ऊपरि वधती वधती है परन्तु अन्यक्षेत्रनिमे गमनकार्यका परिणाम अधिक नही तातै घाटि है। जैसे सौधर्म ईशानके देव क्रीडादिककै निमित्त महान विषयानुरागतै वारवार अनेक क्षेत्रनिमै गमन करे है तैसे ऊपरिके देवनिकै विषयनिकी उत्कट वाछाका अभाव है तातै गतिकरि हीन है। बहुरि सौधर्म ईशानके

देवनिका शरीर सात हात ऊचा है। सनत्कुमार माहेंद्रमे छह हस्तप्रमाण है। ब्रह्मब्रह्मोत्तर लांतवकापिष्ठमे पचहस्तप्रमाण हैं। शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रारमे च्यार हस्त ऊचा हैं। आनत प्राणत साढा तीन हाथ ऊचा है। आरण अच्युतमे तीन हाथ ऊचा है। अधोग्रैवेयकमे अढाई हाथ। मध्यमे दोय हाथ उपरिमग्रैवेयक अर नव अनुदिशमे ड्योढ हाथ। अर पचो-त्तरनिमे एक हस्तप्रमाण ऊचा है। वहुरि विमान परिवारादिक लक्षण परिग्रहहू ऊपरि घाटि घाटि है। अर कषायनिका मदपणातै अवधिज्ञानादिकमे विशुद्धता वधती है तातै अभिमान घटि जाय है। जातै इहा जिनके मदकषाय है तेही ऊपरि ऊपरि उपजे हैं। तातै ऊपरि ऊपरि कषाय मद हैं। पूर्वला सस्कारप्रमाण होय हैं। अव इहा ऐसा विशेष जानना। असैनी पचेद्रिय पर्याप्त तिर्यंच शुभपरिणामनके वसतै पुण्यवधकरी भवनवासीनीमे तथा व्यतरनीमे उपजे हैं। अर सैनी पर्याप्त कर्मभूमिका तिर्यंच मिथ्यादृष्टि वा सासादान सम्यग्दृष्टि वारमा स्वर्गपर्यंत उपजे है। अर तेही सम्यग्दृष्टि सौधर्मादिक अच्युत स्वर्गपर्यंत उपजे है। अर भोगभूमिका मनुष्य तिर्यच मिथ्यादृष्टि सासादन सम्यदृष्टि ज्योतिषीनिंमे उपजे हैं। अर तापसीहू ज्योतिषीनिमे उपजै हैं। अर भोगभूमिके मनुष्य तिर्यंच सम्यग्दृष्टी सौधर्म ईशानमे जन्म धारे हैं। अर कर्मभूम्रिका मनुष्य मिथ्यादृष्टि अर सासादन सम्यग्दृष्टि भावनवासीकू आदि लेय उपरिम ग्रैवेयकपर्यंत उपजै हैं। जिनके द्रव्यतो जिनलिंग होय भावमिथ्यात्व सासादन होय तो ग्रैवेयकताई जावे है। अर अभव्य मिथ्यादृष्टि निग्रथलिग धारणकरि महान शमभाव अर तपके प्रभावतै उपरिम ग्रैवेयकपर्यंत उपजे है।

वहुरि परिव्राजक तापसीनिका उत्कृष्ट उपपाद ब्रह्मस्वर्गपर्यंत है। आजीवक काजिका आहारि इनीका वारमा स्वर्गपर्यंत उपपाद है। अन्य लिगिनिका उपरि उपपाद नही है। अर निर्ग्रथ लिगके धारक मिथ्यादृष्टि उत्कृष्ट तपकरि मदकषायके प्रभावतै उपरिम ग्रैवेयकपर्यंत जाय है। वहुरि सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रकी प्रकीर्षताके योगतै श्रावकनिका साधर्मादि अच्युत-स्वर्गपर्यंत उत्पादनीचेहू नही उपजे अर उपरिमी नही जाय। अर भावलिंगी निग्रथनिका सर्वार्थसिद्धिपर्यंत उत्पाद है। वहुरि अणुव्रतधारी तिर्यचनिका सौधर्मकू आदि लेय वारमा स्वर्गपर्यत गमन है।

वहुरि एकेद्रिय विकलत्रय तथा देव अर नारकी ए मरणकरि देव नही उपजे है। अर अभव्य जीव निर्ग्रथ लिंग धारि भवनत्रिकादि उपरिम ग्रैवेयकपर्यंत उपजे है वहुरि पचमेरुसबधी तीस भोगभूमिके मनुष्य तिर्यच मिथ्यादृष्टि तो भवनत्रिकमें उपजै हैं। सम्यग्दृष्टि सौधर्म ईशानमे उपजे है। वहुरि छाणवे कुभोगभूमिके अर मानुषोत्तर स्वयप्रभाचल पर्वतके वीचि जे असख्यात द्वीप तिनके उपजे तिर्यंच भवनत्रिकविषैंही उपजे हैं। ऐसे देवनिका उपपाद कह्या।

वहुरि देव चय कौन पर्याय धारे है सो कहे हैं। भवनत्रिक देव अर सौधर्म ईशान स्वर्गके देव चयकरि एकेद्रिय वादर पर्याप्त ऐसे पृथ्वीकाय अपकाय प्रत्येकवनस्पतिमे तथा

मनुष्यनिमे पचेंद्रिय तिर्यंचनिमे उपजे है। सनत्कुमारादिकनिका आया स्थावर नही होय है। वहुरि वारमा स्वर्गपर्यतका देव चय पचेंद्रिय पशु तथा मनुष्यमे आय उपजे है। सौधर्मकू आदि लेय नवग्रैवेयकपर्यंतके आये देव त्रेसठिशलाका पुरुषभी उपजै है। वहुरि अनुदिश अनुत्तरके आये तीर्थंकर तथा चक्रवर्ती वलिभद्र तो आय उपजे हैं। परंतु अर्द्धचक्री नही होय है। वहुरि भवनत्रिक देवतै आये त्रैसठिशलाका पुरुष नही उपजै है। तथा विकलत्रयमे असैनीमैं अपर्याप्तमे नही उपजै है। तथा भोगभूमिमे नही उपजे है। अव वैमानिक देवनिके लेश्याका नियम कहनेकू सूत्र कहे है–

पीतपद्मशुक्ललेश्या द्वित्रिशेषेषु ॥२२॥

अर्थप्रकाशिका– सौधर्म ईशान स्वर्गमे देवनिके पीतलेश्या है। अर सनत्कुमार माहेंद्रके देवनिमे पीत पद्म दोऊ लेश्या हैं। वहुरि ब्रह्मादि तीन युगलनिमे पद्मलेशा कही सो ब्रह्म ब्रह्मोत्तर लातव कापिष्ठ इनमे तो पद्मलेश्या है। अर शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार इनि च्यारनिमे पद्म शुक्ल दोऊ लेश्या जानने योग्य है। आनतादिक शेष कल्पनिविषे शुक्ललेश्या है तहाहू अनुदिश अनुत्तर सज्ञक चोदह विमाननिमे परम शुक्ल लेश्या है। वहुरि कल्प कौन है याते सूत्र कहै है–

प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥२३॥

अर्थप्रकशिका– सौधर्मकू आदि लेय ग्रैवेयकनिते पहली अच्युतस्वर्गपर्यत कल्पसज्ञा हैं। जिनमे इंद्रादिक कल्पना पाईए तातै कल्प सज्ञा है। अर नव ग्रैवेयक नव अनुदिश पच अनुत्तर विमान इनिमे इद्रादिक कल्पना नाही है तातै इनकी कल्पातीत सज्ञा है। इन कल्पातीत विमानिमे समस्त अहमिंद्र समानसुख धारे है। अव कौन कल्पविषे लौकांतिक देव है याते सूत्र कहे है–

ब्रह्मलोकालया लौकातिकाः ॥२४॥

अर्थप्रकशिका– ब्रह्मलोक है आलय कहिये निवासस्थान जिनका ऐसे लोकातिक देव है। ब्रह्मलोक जो पचम स्वर्ग तिसकें अतविषे है निवास जिनका ऐसे लौकातिक देव है। अथवा लोक जो ससार ताका अत जाके भया ते लौकांतिक हैं। जातै एकवार गर्भवासमे मनुष्य जन्म लेय निर्वाण प्राप्त होय है तातै लौकातिक है। अव इनके भेद कहनेकू सूत्र कहे है–

सारस्वतादित्यवन्ह्यरुणगर्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥२५॥

अर्थप्रकाशिका– सारस्वत, आदित्य, वन्हि अरुण, गर्दतोय, तुषित, अव्यावाध,

रेष्ट । ए अष्टप्रकारके देव ब्रह्म देवलोककी पूर्वादिक अष्टदिशानिमे वसे हैं । इहां
[विशेष जानना । जो अरुण नाम समुद्रमेतैं सख्यात योजनका मूलमे विस्ताररूप
द्रवत् वलयाकार अधकारका रामूह उत्पन्न भया है । सो अतितीव्र अंध कारमय परिणम्या
सौ ऊपरि अनुक्रमकरि वृद्धीकू प्राप्तहोय मध्यमे अर अतमे सख्यात योजनका मोटा है ।
ब्रह्मस्वर्गका पहला पटलका अरिष्ट नाम विमानका अधोभागकू प्राप्तहोय कुर्कटकी कुटीवत्
स्थित होय तिसके ऊपरि अरिष्ट नाम इद्रक विमानके परिधिरूप च्यारि दिशानिमे दोय दोय
कारकी पक्ति निर्यकलोकका अतपर्यंत गई हैं । तिन पक्तिनके अतरालनिमे सारस्वतादिक
वसैं है । ईशान पूर्व इत्यादिक आठ दिशानि विषैं अनुक्रमते आठ लोकातिक देव जानने ।

वहुरि च शद्वतैं इनके विमाननिके आठ अतरालविषैं अग्न्याभ, सूर्याभ, चद्राभ,
ाभ, श्रेयस्कर, क्षेमकर, वृषभ, कामवर; निर्माणरज, दिगतरक्षित, आत्मरक्षित, सर्वरक्षित,
स्तु, अश्व, विश्व ए षोडश देवगण दोयदोय वसैंहै । ऐसे सर्व चोईस प्रकार है । ते समस्त
ोस प्रकारके लौकातिक देव च्यार लाख सात हजार आठसे वीस है । ए समस्तही एक
धारि निर्वाण पावे है । समस्तही चतुर्दश पूर्वके धारक है । स्वाधीन है । हीनता, अधिकता,
त है । अर विषयनितैं विरक्त है । तातैं अन्यदेवनिकरि वदनीक देवर्षि है । निरतर ज्ञान-
नामे लीन हैं मन जिनका अर ससारतैं नित्य भयभीत है विरक्त है । अनित्य अशरणादि
ेक्षानिमे जिनका मन लीन है । अतिविशुद्ध सम्यग्दर्शनके धारक है । तीर्थकरनिको तप
ाणके प्रतिबोधनमें तत्पर है । ब्रह्मचारी हैं इनके स्त्रीनिका प्रसग नही है । अव जे मनुष्यके
दोय भव धारणकरि निर्वाण जाय दोय भव शिवाय भवधारण नही करे तिन देवनिका
म कहनेकू सूत्र कहे हैं—

विजयादिषु द्विचरमाः ॥२६॥

अर्थप्रकाशिका— विजयादिक च्यार विमानवाले अहमिंद्र दोय भव मनुष्यका लेय
ाण जाय है । इहा आदि शद्व प्रकारार्थमे है । तातैं विजय वैजवत जयत अपराजित तथा
अनुत्तर विमान इष्ट है तिनका ग्रहण है । जातैं इन विषैं सम्यदृष्टीहीका उत्पाद हैं । इहा
कहे आदि शद्वकरि तो सर्वार्थसिद्धिकाभी ग्रहण होय है ताकू कहिए है । सर्वार्थसिद्धिके
रम उत्कृष्ट है । तातैं इनकी सज्ञाही सार्थक है एक भव लेय मोक्ष पावे है । अर
यादिकनितैं आय जीव एक जन्मभी लेवे अर जो दोय जन्मभी मनुष्यके लेवे हैं ।
ऐसे अर्थ है जो विजयादिकनितैं चयकरि मनुष्य दोय वहुरि सयम आराधि फेरि
यादिकनिमे उपजे तहातैं चय मनुष्य होय मोक्ष जाय है । ऐसे द्विचरम देहपना है । ऐसे
देश अर च्यार अनुत्तरके देव तो दोय भवभी धारे एकभी धारे । अर सर्वार्थसिद्धिके
अर दक्षिण, इद्र अर सौधर्मके लोकपाल अर सौधर्मकी शची नाम इंद्राणी एक जन्म

मनुष्यका लेय निर्वाण होय है। ऐसे ग्यारह सूत्रकरि वैमानिक देवनिका वर्णन कीया। अव तिर्यंचयोनि धारकनिके जनावनेकू सूत्र कहे है—

औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ॥२७॥

अर्थ प्रकाशिका— औपपादिक कहिए नारकी अर मनुष्य इन सिवाय वाकी रहे जे ससारी ते तिर्यंच है। देव नारकी मनुष्य इनिकू पूर्वे कहे। इनितै अन्य समस्त संसारी जीव तिर्यंच है। तिनमे सूक्ष्म एकेद्रिय तो समस्त लोकमे व्याप्त है। लोकका प्रदेशहू सूक्ष्मविना नही। अर वादर एकेद्रिय पृथ्वीव्यादिकनिके आधार है। अर विकलत्रय अर सैनीपचेंद्रिय त्रसनालीमे कहूकहू पावे है सर्वत्र नही है। अब देवनिकी आयुकी स्थिति कहनेकू सूत्र कहे है-

स्थितिरसुरनागसुपर्णद्वीपशेषाणां सागरोपमत्रिपल्योपमार्द्धहीनमिता ॥२८॥

अर्थप्रकाशिका— असुरकुमारनिको आयु एकसागरका है। अर नागकुमारनिका तीन पल्य आयु है। सुपर्णकुमारनिका अढाई पल्य है। अर द्वीपकुमारनिका दोय पल्य है। अर अवशेप रहे जे छह कुमार तिनकी प्रत्येक ड्योढ पल्यकी आयु है। अैसे भवनवासीनिका उत्कृष्ट आयु कहि अव सौधर्म ईशानका आयु कहे है—

सौधर्मेशानयोः सागरोपमेऽधिके ॥२९॥

अर्थप्रकाशिका— सौधर्म ईशानके देवनिका आयुका प्रमाण दोय सागरतै कुछ अधिक है। जातै सौधर्म ईशानमे उत्कृष्ट आयु दोय सागरहीका है। परतु सम्यग्दृष्टि होय अर घातायुष्क होय तो तिस जीवकै आयु उत्कृष्ट आयुत आध सागर अधिक होय और दोय सागर आयु पावे तो घातायुष्क अढाई सागर अतर्मुहूर्त घाटि पावे मो वारमा देवलोकपर्यत घातायुष्कवाला उत्पाद है। आगेकू नाही।

भावार्थ— पूर्वभवविपै किसी जीवने विशुद्धपरिणामनितै आयुका बंध बांधा कीया था पीछै सक्लेशपरिणामनके वसतै आयु घटाय थोडा आणि राख्या तिस [illegible] घातायुष्क कहिए। जैसे कोऊ मनुष्य ब्रह्मब्रह्मोत्तर स्वर्गका आयु दश सागर प्रमाण बंध बांधा फिर उसही मनुष्यभवमे सक्लेश परिणामनिके वधनेते आयुकी स्थितिका घात [illegible] सौधर्म ईशानमे जाय उपज्या सो घातायुष्क है सो अन्य देवनिकी दोय सागर प्रमाण [illegible] आध सागर अधिक आयु पावे है। सो वध्याहुवा देवआयुका घातकरि पूर्वले मनुष्य [illegible] सक्लेशपरिणामनितै होय सो घातायुष्क नामकरि कह्या है। अर देवनिकै [illegible] आयुका घात नही है। जातै आयुका घात दोय प्रकार है। एक अपवर्त्तनघात दूजा [illegible] है। [illegible] बध्यमान आयुका घटावना सो अपवर्त्तनघात है। अर भुज्यमान आयुका

टावना कदलीघात है । सो देवनिमे कदलीघात सम्भवे नही तातैं अपवर्त्तनघात है । अब अन्य-
वर्गनिमे आयुका प्रमाण कहे है ।

सनत्कुमारमाहेद्रन्यो· सप्त ॥३०॥

अर्थप्रकाशिका– सनत्कुमार माहेद्रमे देवनिका आयु उत्कृष्ट सात सागर हैं । घाता-
ष्कका आधा सागर अधिक है । अब उपरले स्वर्गनिमे आयु कहनेकू सूत्र कहे है–

त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपंचदशभिरधिकानि तु ॥३१॥

अर्थकाशिका– तीन सात नव ग्यारह तेरह पद्रह इन करि सात सागरमे मिलाए
नुक्रमते छह युगलनिविषे आयु जानना । सोही कहिये है। ब्रह्मब्रह्मोतरमे दश सागर
छ अधिकप्रमाण उत्कृष्ट आयु है । लातवकापिष्टविषै चोदह सागर प्रमाण कुछ अधिक है ।
क्रमहाशुक्रस्वर्गमे सोलह सागर कुछ अधिक है । शतार सहस्रार स्वर्गविषै अठारह सागर कुछ
धिक है । आनतप्राणत स्वर्गविषै बीससागर प्रमाण आयु हैं । आरण अच्युत दोय स्वर्गके
वनिका आयु वावीस सागर प्रमाण है । इहा सूत्रमे तु शब्द है सो सहस्त्रारपर्यंत कछु अधिक
हित जानना । आगे अधिक प्रमाण नही है । आगे कल्पातीतकी स्थिति कहनेकू सूत्र कहे है–

आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥३२॥

अर्थप्रकाशिका– आरण अच्युत स्वर्गके ऊपरि प्रथम ग्रैवेयकविषै तेईस सागर प्रमाण
ायु है । वहुरि ऊपरिऊपरि ग्रैवेयकविषै एकएक सागरप्रमाण आयु वधे है सो नव ग्रैवेयकमे
कतीस सागर प्रमाण आयु है । अर अनुदिशविमाननिमे वत्तीस सागर आयु है । अर विजया-
दिक अनुत्तरविमाननिमें तेतीस सागर आयु है । इहा सर्वार्थसिद्धिमे उत्कृष्टही आयु है जघन्य
ायु नही हैं । देवनिका उत्कृष्ट आयु तो कह्या अब जघन्य आयु कहनेकू सूत्र कहे हैं–

अपरा पल्योपममधिकम् ॥३३॥

अर्थप्रकाशिका– सौधर्म ईशानके देवनिका जघन्य आयु एक पल्यतें कुछ अधिक है ।
ाव याके ऊपरि जघन्य स्थिति कहनेकू सूत्र कहे हैं–

परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तराः ॥३४॥

अर्थप्रकाशिका– पूर्वले पूर्वले स्थानमे जो उत्कृष्ट आयु है सो ऊपरके ऊपरके स्थान-
षै जघन्य आयु है । सौधर्म ईशानविषै जो दोय सागरतैं अधिक आयु है सो सनत्कुमार माहेंद्रमे
घन्य आयु है । अर सात सागर अधिक उत्कृष्ट आयु है । सोही ब्रह्मब्रह्मोत्तरमे जघन्य है ।
से ऊपरि समस्त स्थाननिमे जानना । इहां प्रसगपाय एता विशेष और जानना । जो जहां जेता

सागरका आयु होय है तितना हजार वरस व्यतीत भए आहार मानसिक ग्रहणकी इच्छा उपजै है। अर जेता सागरकी आयु होय तितना पक्ष गया उच्छ्वास होय हैं । जैसे सौधर्म ईशानमे दोय सागरका आयु है । अर दोय हजार वरस गए मानसिक आहार होय है । अर दोय पक्ष व्यतीत भए श्वासोच्छ्वास होय है । आगे नारकीनिकी उत्कृष्ट स्थिति तो कहीथी अब जघन्य-स्थिति कहनेकू सूत्र कहे है । इहा नारकीनिका प्रकरण नही है तोहू इहा थोरे अक्षरनकरि कह्या जाय यातें कहे है–

नारकाणां च द्वितीयदिषु ॥३५॥

अर्थप्रकाशिका– नारकीनिकीहू द्वितीयादिक पृथ्वीमें ऐसेही च शब्दकरि स्थिति जाननी। जो रत्नप्रभमें नारकीनिकी उत्कृष्टस्थिति एक सागरकी है । सो वालुकाप्रभामे तीन सागर जघन्यस्थिति जाननी। ऐसे सप्त पृथ्वीपर्यंत जाननी। अब प्रथम पृथ्वीके नारकीनकी जघन्य स्थिति कहनेकू सूत्र कहे है–

दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥३६॥

अर्थप्रकाशिका– प्रथमपृथ्वी जो रत्नप्रभा तिस विषे नारकीनिका जघन्य आयु दश हजार वर्षका है। अब भवनवासीनिकी जघन्यस्थिति कहनेकू सूत्र कहे है–

भवनेषु च ॥३७॥

अर्थप्रकाशिका– भवनवासीनिविषेहू जघन्यस्थिति दश हजार वर्षकी है। अब व्यतरनिहूका जघन्य आयु कहे है–

व्यंतराणां च ॥३८॥

अर्थप्रकाशिका– व्यतरदेवनिकाहू जघन्य आयु दश हजार वर्षका है । अब व्यतरनिका उत्कृष्ट आयु कहा है सो कहे है–

परा पल्योपममधिकम् ॥३९॥

अर्थप्रकाशिका– व्यतरनिका उत्कृष्ट आयु एक पल्य कछु अधिक है । अब ज्योति-ष्कनिका आयु कहनेकू सूत्र कहे है–

ज्योतिष्काणां च ॥४०॥

अर्थप्रकाशिका– ज्योतिषी देवनिका उत्कृष्ट आयु एक पल्य कछु अधिक है। अब ज्योतिषीनिकी जघन्यस्थिति कहे है–

तदष्टभागोऽपरा ॥४१॥

अर्थप्रकाशिका– ज्योतिषी देवनिका जघन्य आयु पल्यके अष्टम भागप्रमाण है। [illegible] इतना विशेष जानना। चद्रमाका आयु एक पल्य एक लाख वर्षका है। सूर्यका आयु [illegible] हजार वर्षकरि अधिक एक पल्यका है। शुक्रका आयु सौ वर्ष अधिक एक पल्यका

है। बृहस्पतिका आयु एक पल्यप्रमाण है। शेष जे बुधादिक ग्रह तिनका उत्कृष्ट आयु अर्द्ध-पल्यका है। नक्षत्रनिका उत्कृष्ट आयु अर्द्धपल्यका है। तारकानिका आयुका प्रमाण पल्यका चतुर्थ भाग है। अर नक्षत्रनिका अर तारकानिका जघन्य आयु पल्यके अष्टम भागप्रमाण है। और सूर्यादिकनिका जघन्य आयु पल्यके चौथे भागप्रमाण है।

लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥४२॥

अर्थप्रकशिका– बहुरि समस्त लौकांतिक देवनिका आयु अष्टसागरप्रमाण है। ते समस्त शुक्ल लेश्याके धारक है पंच हस्तप्रमाण ऊंचा शरीर है। ऐसे इहा च्यार निकायनिके देवनिका वर्णन कीया। सो ए देव अति उत्तम है इन सबनिका उत्तम ,मनुष्यनिकासा आकार है। एक मस्तक दोय नेत्र दोय कर्ण एक नासिका एक मुख दोय हस्त एक हृदय दोय पग समस्त अति सुंदर आकार अंग उपांग अतिमनोहर उत्तम संस्थानके धारक मल मूत्र हाड मास चाम रूधिरादिक सप्त धातु सप्त उपधातु रहित महा सुगंध वैक्रियिक शरीर अणिमा महिमादि अनेक शक्तिनिकरि युक्त रोगरहित पसेवरहित मलरहित जिनका शरीर है। अर केश वधनेका संस्काररहित वा फणी भवरा मस्तकके केशादिक चाहियें तहा स्वयमेव स्याम पुद्गल परिणमे हूए केशनिके आकारकू धारण करे है केशनिका वधना घटना नही है। आहारकी इच्छा मनमेही उपजे है। जब कंठाविषै अमृत श्रवै है तातै तत्काल तृप्त होय है। कवलाहार नही है। मानसिक आहारही चारि निकायके देवनिके है। ऐसे च्यारि अध्यायमे जीवतत्वका वर्णन कीया। सो जीव एकरूपहू है। अर अनेक रूपहू है सो इसका कथन राजवार्तिक श्लोकवार्तिकतै जानना इहा जो सामान्य लिखियें तो संशय दूरि होय नही। अर विशेष लिखिये तो ग्रंथ वधिजाय अर मंदज्ञानी जे है ते नही समझैं तिनको वडा कठिण है जाई। तदि वाचनेमै मंदता रहि जाय यातै जहा जैसा प्रयोजन आवेगा तहा तैसा लिख्या जायगा।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

अर्थ– ऐसे तत्वार्थका है अधिगम जातै ऐसा दशाध्यायरूप जो मोक्षशास्त्र तामै चौथा अध्याय पूर्ण भया ॥४॥

– दोहा –

है जातै तत्त्वार्थका। अधिगम सबसुखदाय ॥
मोक्षशात्र मंगलमय। नमो चतुर्थ अध्याय ॥४॥

चतुर्थ अध्याय समाप्तः

अर्थ प्रकाशिका

(तत्वार्थ टीका)

पं. सदासुखदास विरचित

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्य ॥

अथ पंचमोऽध्यायः ॥

आगे पचम अध्यायका प्रारंभ करे है।

– दोहा –

रहै अजीव प्रपंचतै सदा स्वच्छंद अफंद ॥
गहि आपापर नही चहै नमो आप्त निर्द्वंद्व ॥१॥

अब सम्यग्दर्शनका विषयपणाकरि कहे जे जीवादिक पदार्थ तिमे अब अजीव पदार्थके वेचारका अवसर आया तोकी भेदसज्ञा कहनेकू सूत्र कहे है–

अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ॥१॥

अर्थप्रकाशिका– धर्म अधर्म आकाश पुद्गल ए चार अजीव ऐसे काय है। इनि च्यारि द्रव्यनिके अजीवपणा अर कायपणा दोऊरूप पावै हैं। जातै द्रव्य छह है। तिनमे आत्माके तो कायपणा है परंतु अजीवपणा नही। अर कालनाम द्रव्य है ताकै अजीवपणा है अर कायपणा नही। अर धर्म अधर्म काकाश पुद्गलके अजीवपणा अर कायपणा दोऊ है। जिस द्रव्यमे चेतनपणा नही तिसकै अजीवपणा कहिये है। अर धर्म अधर्म काल इनकै चेतनपणा नही तातै अजीव है। अर प्रदेशनिका वहुतपणातै इन च्यारि द्रव्यनिकै कायपणा है। अर जीवद्रव्यभी वहुप्रदेशी है यातै जीवकैभी कायपणा है परंतु अजीवपणा नही। तातै अजीव ऐसे काय तो च्यारिही द्रव्य है। यहा जो अवयवसहितपणा सोही कायपणा है। अर कालद्रव्य अेकअेक प्रदेश-रूप भिन्न भिन्न है। तातै कायपणा नही है। बहुरि गमनरूप परणमते जीव पुद्गल तिनको एक

के काल गमनकू सहकारीकारण धर्मद्रव्य है। वहुरि स्थिति रहते जीव पुद्गल तिनको स्थिति रहनेकू कारण अधर्मद्रव्य सहकारीकारण है। वहुरि समस्त द्रव्यनिकू अवकाश देनेकू कारण आकाशद्रव्य है। वहुरि तीन कालविषै अनेक परमाणूनिका मिलन विछुरन शक्तियुक्त पुद्गल द्रव्य है। अव इनिका विशेष कहे है–

द्रव्याणि ॥२॥

अर्थप्रकाशिका– धर्मादिक कहे ते द्रव्य है। त्रिकालविषै अपने गुणपर्यायनिको द्रवै प्राप्त होय तातै द्रव्य कहिये। जातै द्रव्यका लक्षण तीन प्रकार करि परमागमविषै कह्या है। एक तो द्रव्यका लक्षण सत् है। जातै सत्ताके अर द्रव्यके भिन्नपणा नही है तातै सत्स्वरूपही द्रव्यका लक्षण है। अर एक उत्पाद व्यय ध्रौव्य द्रव्यका लक्षण है। द्रव्य है सो उत्पाद व्यय ध्रौव्य रूप है। जो एकजातिमे विरोधरहित क्रमतै होती जो भावनिकी परिपाटी तिस विषै पूर्वस्वभावको जो विनाश सो समुच्छेद है। अर उत्तरस्वभावका प्रगट होना सो उत्पाद है अर पूर्वभावको उच्छेद होते अर उत्तरभावका उत्पाद होतैकू जो अपनी जातिका नही छोडना सो ध्रौव्य है। सो समस्त द्रव्यनिमे उत्पाद विनाश ध्रुवपना पाईये है।

कोऊ द्रव्यहू काहू समयमैहू उत्पाद व्यय विनानही है समयसमय परिणति है। पूर्व परिणतिका अभाव होना सोही उत्तर परिणतिका उत्पाद है। जातै पुर्वकी परिणतिका नाश विना उत्तर परिणति होय नही अर उत्तर परिणतीका उत्पादविना पूर्व परिणतिका विनाश नही। अर पूर्व उत्तर दोऊ परिणति होतैहू द्रव्यका नाश भया नही अर नवीन उपजा नही तातै द्रव्य ध्रौव्य है शाश्वत है। तातै द्रव्यका उत्पाद व्यय ध्रौव्य लक्षण है। अर गुणपर्यायवान्‌पणाहू द्रव्यका लक्षण है। द्रव्यकू कदाचित् कोऊ पर्यायमैहू नही छाडै द्रव्यका स्वभाव रूप गुण है अर क्रमतै होय ते पर्याय है। गुण अर पर्याय दोऊ द्रव्यकौ नही छाडै है। द्रव्य है सो गुणपर्यायरूप है। अव जीवकैहू द्रव्यपणा है सो कहे है–

जिवाश्च ॥३॥

अर्थप्रकाशिका– जीव है तेभी द्रव्य है। जीवभी गुणपर्यायमान् है तातै जीव है तेहू द्रव्य है वहुरि पूर्वे कहे जे धर्म अधर्म आकाश पुद्गल अर आगे कहेगे जे काल ए पाचो अजीवद्रव्य है। अर इहा कह्या जीवद्रव्य कालकरि सहित ए छह द्रव्य जानने। अव इन द्रव्यनिहीकै विशेष कहनेकू सूत्र कहे है–

नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥४॥

अर्थप्रकाशिका– ए कहे जे धर्मादिक द्रव्य ते नित्य हैं अर अवस्थित है अर अरूपी है। ए धर्मादिक द्रव्य है तिनका गति हेत्वादिक तो विशेषलक्षण है। अर अस्तित्वादि सामान्यलक्षण है। ते द्रव्यार्थिकनयकरि किसही कालमे विनाशकू प्राप्त नही होयगे तातै नित्य

। जिस स्वभाकरि द्रव्य तिष्ठै है तिस स्वभावका नाश नही है तातै नित्य है। ए धर्मादिक व्य हैं ते अपनी छहकी सख्याकू नाही छांडै है पाच नहीं होय सात नही होय तातै अवस्थित । अथवा धर्म अधर्म लोकाकाश अर एक जीव इनके तुल्य असख्यात प्रदेश है। अर लोका-ाशके अर पुद्गलके अनंतप्रदेशीपणा है। अर कालके एकप्रदेशीपणा है सो अपने प्रदेशनिकी ख्याकू नही छांडै है तातैंहू अवस्थित है। द्रव्यविषै विशेषलक्षण है ताकू द्रव्य छाडै नही। तन है ते अचेतन नही होय है। अचेतन है ते चेतन नही होय है। अमूर्तिक है ते अमूर्तिक ही होय हैं। तातै अवस्थित है। वहुरि अरूपी कहिए रूपादिरहित है अमूर्तिक है। इहां पके निषेधतै ताके सहचारि जे रस गध स्पर्श इनकाहू निषेध जानना ऐसे धर्मादिक द्रव्य रूपी है ऐसे कहनेतै पुद्गलकेभी अरूपीपनाका प्रसग आवे है ताके निषेधके अर्थि विशेष त्र कहे हैं—

रूपिणः पुद्गलाः ॥५॥

अर्थप्रकाशिका— पुद्गलद्रव्य है ते रूपी है। यद्यपि रूप शद्बके अनेक अर्थ है तोहू इहा ःमागमकरि कह्या मूर्तिक द्रव्यकूं रूपी जानना। इहां रूपी कहनेकरि जे रूपते अविनाभावी स्पर्श रस गंध तिनकरि सहिताहू ग्रहण करना। वहुरि इहा "पुद्गला" ऐसा वहुवचन है । पुद्गलके अणुस्कधादि भेदकरि वहुतप्रकारता जणावै है। अव कोऊ पुद्गलकी ज्यो धर्मादिक व्यनिकैहू वहुतपणा जाणे तो ताके निषेधकू सूत्र कहे है—

आ आकाशादकद्रव्याणि ॥६॥

अर्थप्रकाशिका— धर्म अधर्म आकाश ए एकएक द्रव्य है। इहा धर्म अधर्म आकाश । तीन द्रव्यनिकौ एकएक कहनेतैंही जीव पुद्गल काल इन तीन द्रव्यनिकै अनेकपना आया। । आगमकै अनूकूल जीवद्रव्य अनतानत है। तिनतै अनतगुणे पुद्गलद्रव्य है। कालद्रव्य अस-ात है। धर्म अधर्म आकाश द्रव्यकी अपेक्षा एकएकही है। क्षेत्र अपेक्षा भाव अपेक्षा असख्यात अनत हैं। अव कहे जे एकद्रव्य तिनका विशेषके अर्थि सूत्र कहे है—

निष्क्रियाणि च ॥७॥

अर्थप्रकाशिका— धर्म अधर्म आकाश ए तीन द्रव्य हलन चलन क्रियाकरि रहित है। ह्य अभ्यतर निमित्तके वशतै जो एक क्षेत्रकौ त्यागि अन्य क्षेत्रमे गमन करे सो क्रिया है। । अभ्यतर तो द्रव्यमे क्रियारूप परिणमनशक्ति अर वाह्य अन्य पदार्थनिका घात प्रेरणा इन ऊ कारणनितै पदार्थका क्षेत्रांतरमे गमन तथा प्रदेशनिका सकपपना रूप क्रिया होय है सो र्म अधर्म आकाश तथा आगै कहेगे कालद्रव्य ए च्यारोही निष्क्रिय है। अर इनके निष्क्रि-यणा कहनेतै द्रव्यनिके जीव पुद्गलके क्रियावनपणा जानना कौऊ कहे है जो " अजीवकाया "

इसप्रकार कहनेतै द्रव्यनिके प्रदेशनिका अस्तित्वमात्रपणा तो जान्या परतु संख्या नही जानी। यातै प्रदेशनिकी सख्या जनावनेकू सूत्र कहे है —

असंख्येयाः प्रदेशा धर्माधर्मैकजीवानाम् ॥८॥

अर्थप्रकाशिका— धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य अर एक जीवद्रव्य इनके एकएकके असंख्यात प्रदेश है ते समान है। जेता क्षेत्रकू अविभागी पुद्गलपरिमाणु रोकिकरि तिष्ठै है तितना क्षेत्रकू रोके सो प्रदेश हैं। ऐसे व्यवहार करिए है। तिनमे धर्मद्रव्य अर अधर्मद्रव्य ए दोऊ निष्क्रिय है सो आकाशका अत्यतमध्यमै असख्यात प्रदेशनिकू व्यापकरि निश्चल तिष्ठै है। अर जिस अवसरमे केवली होय लोकपूरण समुद्घात करे है तिस मेरुगिरके निचे चित्रा अर वज्राका पटलनिके बीचि आत्माका मध्य अष्टप्रदेश तिष्ठै हैं। अर अन्य समस्त असख्याते प्रदेश उपरि नीचे तिर्यक् समस्त लोकाकाशकु व्याप्त होय है। आकाशके प्रदेशनिकी संख्या कहनेकू सूत्र कहे है—

आकाशस्यानन्ताः ॥९॥

अर्थप्रकाशिका— आकाशद्रव्यकै अनंतप्रदेश है जेता आकाश क्षेत्रकू अविभागी पुद्गल परमाणु रोकै ताकू एकप्रदेश कहिए है। यद्यपि आकाश अखड एकद्रव्य है तोहू परमाणूकरि मापिए तो अनतपरमाणू होय है याहीतै अनतप्रदेशी कहिए है। अर केई अन्यमती आकाशक्षेत्रकू सर्वथा निरशही माने सो अयुक्त है जातै आकाशक्षेत्रमे अनेकपदार्थ भिन्नभिन्न तिष्ठे हैं। जैसे यह ग्राम है यातै मठ आगे हैं। वापीका याकै पाछै है ऐसा देशविभाग प्रत्यक्ष हैही तातै आकाशमे विभाग कैसे नही मान्या जाय। इहा अनत कह्या सो अलौकिकप्रमाण विशेष है। अर अनत ऐसा प्रमाणकू सर्वमतके माने है। केई लोक धातुकू अनत माने है। केई प्रकृतिके अर पुरूषकै अनतपना कहे है। केई दिशाकू कालकू आत्माकू आकाशकू अनतमाने है। तातै अनंत हैही। वहुरि स्याद्वादमतमे आकाशकू द्रव्यअपेक्षा एक कहे है तोई विभाग कल्पनाकरि आत्मसहित हैही। अव पुद्गलनिके प्रदेशप्रमाण कहे है—

सङ्ख्येयासङ्ख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥१०॥

अर्थप्रकाशिका— पुद्गलद्रव्यके प्रदेश सख्यातहू है असख्यातहू है च शब्दकरि अनतभी है। जातै शुद्ध पुद्गलद्रव्य तो अविभागी एक परमाणु है। परतु पुद्गलपरमाणुनिमे मिलन विछुरन शक्ति है तातै केई स्कध दोय परमाणुका केई तीन च्यार इत्यादिक सख्यातका कोऊ असख्यातका कोऊ अनत परमाणुका स्कध है। अव इहा कोऊ अशका करै जो लोक तो असख्यातप्रदेशी है यामै अनतानत परमाणुका स्कध कैसे तिष्ठे है। ताकू उत्तर कहे हैं। सूक्ष्म परिणमनतै अर अवगाहनासामर्थ्यतै यो दोष नही आवे है। परमाण्वादिक सूक्ष्मभावकरि

परिणमे हुए एकएक आकाशका प्रदेशसे अनतानंत तिष्ठे है यातै विरोध नही है । ऐसा एकात नही है जो अल्प आधारविषै महान द्रव्य नही तिष्ठै। प्रचयका विशेषतै अल्पक्षेत्रविषै वहुतनिका अवस्थान देखिए है । जैसे चपाका पुष्पकी डोडी तो अल्प है । अर तामे सूक्ष्मसचयरूप परि- णमनतै गंधका अवयव एते निकसे है तिनकरि समस्त दिशा व्याप्त होजाय है । ऐसेही केतकीका पुष्प तो अल्प है अर तामे सुगध परमाणु एते निकसै है तिनकरि कोशन पर्यंत सुगध चलीजाय । तथा विलका फल तथा छाणा तथा आला काष्ठ इन विषै प्रचयविशेषतै एते पुद्गलस्कध है जो अग्निकरि वालिए तो धूमधूप होय समस्त दिशानिमे भरिजाय तैसे अल्पहू लोकाकाशमे अनतानत जीव अनतानत पुद्गलनिका अवस्थान है यामे विरोध नही है । अव पुद्गलके प्रदेशवर्णन कीए तो परमाणूहू पुद्गल है याकेहू प्रदेशका प्रसग आया यातै परमाणुकै प्रदेशका निषेधके अर्थि सूत्र कहे है–

नाणोः ॥११॥

अर्थप्रकाशिका– अणु जो परमाणु ताकै प्रदेश नही है । जातै परमाणुके प्रदेशमात्र- पणोही है । ऐसे आकाशका एक प्रदेशके भेदको अभाव है यातै अप्रदेशपणो है । तैसे परमाणुकेहू प्रदेशमात्रपणातै प्रदेशभेदको अभाव है । वहुरि परमाणुतै अन्य कोऊ सूक्ष्म पदार्थ नाही तातै परमाणुके प्रदेशनिका भेद करिए तातै स्वयमेव परमाणु अप्रदेशी है । अर जो अणुकेहू प्रदेश होय तो याके अणुपणा नही होय । अव इहा कोऊ कहे जो अणुके अप्रदेशपणातै गधाका सिगकीज्यो अभाव आया सो अभाव नही है । जातै प्रदेशमात्र है परमाणुकू गधाका सिंगिकीज्यो अप्रदेश नही कह्या है । अव कोऊ या कहै जो परमाणुके आदि मध्य अत है की नही है । जो है तो प्रदेशवान्पणा परमाणुकै आया । अर जो आदि अत मध्य नही तो गधाका सीगज्यो अभाव आया । सो नही है । जैसे विज्ञानके आदि मध्य अत नही है तोहू विज्ञानका अस्तित्व हैही तैसे परमाणुका अस्तित्वभी हैही । अव धर्मादिक द्रव्यनिका आधार जनावनेकू सूत्र कहे है–

लोकाकाशेऽवगाहः ॥१२॥

अर्थप्रकाशिका– धर्मादिक द्रव्यनिको लोककाशमे अवगाह है आकाश नाम द्रव्य सर्वतरफ अनतानत है । तिसके मध्यविषै जितना आकाशमे धर्मादिक द्रव्य पाईए सो लोका- काश है । जहा छहू द्रव्य अवलोकन कीए सो लोकाकाश है । अर वाहिर सर्वतरफ अनतानत केवल आकाश है ताकू अलोकाकाश कहिए है । अर लोकका क्षेत्र तीनसे तीयालीस राजूप्रमाण असख्यात है । सो यो लोकाकाश धर्मादिक द्रव्यनिका आधार है । अव कोऊ आशका करै । जो धर्मादिकनिका लोकाकाश आधार है तो आकाशका अन्य कौन आधार है । ताकू उत्तर कहे है । जो आकाशद्रव्यके अन्य आधार नही, यो तो आपके आधारही आप है । इसतै

अन्य कोऊ वडा महान् द्रव्य नाही, ताके आधार आकाश तिष्ठै। तातै सर्वतरफ अतरहित आकाश सो आपके आधारही आप है। अर जो आकाश आपके आधार आप नही होय तो अनवस्था दोष आवे।

वहुरि एवभूतनयकी अपेक्षा करि तो अव इहा कोऊ आशंका करे। जो आकाशकू आधेय कह्या अर ताके आधार धर्मादिक द्रव्य कह्या तव कूंडेमे ओरकीज्यों पूर्व आकाश तिष्ठैथा पछै धर्मादिक याके आधार तिष्ठे। तदि इनके संयुक्त कोई लोकमे तिष्ठनेते अनादिपणाका अभाव आया नवीन ससर्ग ठह्र्या तातै आधाराधेयपना कहना सदोप भया। ताका उत्तर। जो तुम दोष दीया सो नही हैं। जो संयुक्त होय सिद्ध नहीं भए तिनकेहू आधाराधेयपणा देखिए है। जैसे शरीर अर हस्त इनकी युगपत् उत्पत्ति होतेहू हस्तके आधार शरीर है। जातै शरीरके अर हस्तके उत्पत्ति पहली, पाछै नही हैं अर पहली अन्य अन्य थे, पछै युक्त होय सिद्ध भए नही है। तोहू शरीरके आधार हस्त है हस्तके आधार अगुली है अगुलीके आधार नख है। तैसे आकाश अर धर्मादिक द्रव्य इनके अनादिपरिणामिक यौगपद्यताकी सिद्धि होतै पहली पछै ऐसा भेद नही होतैहू आकाशके अर धर्मादिक द्रव्यनिके आधाराधेयपणा सिद्धि है, तातै यो एकात नही है, जो युतसिद्धकेही आधाराधेयपणा होय अर अयुतसिद्धके नही होय। अयुतसिद्ध तो जैसे स्तभमे सार अर युतसिद्ध जैसे कुडेमे ओर दोऊनिके आधाराधेयपणा प्रगट देखिए है तातै अनेकातके प्रभावतै यो उलाहनो नही है। अव धर्म अधर्म द्रव्यका अवगाह लोकमे कैसे है यातै सूत्र कहे है–

धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥१३॥

अर्थप्रकाशिका– धर्मद्रव्य अर अधर्मद्रव्य ए दोय द्रव्य समस्त लोकाकाशके प्रदेशनिमे व्याप्यकरि तिष्ठे है। जैसे तिलनिमे तेल व्यापि रह्या है तैसे धर्म अधर्म दोऊ द्रव्य लोकाकाशके समस्त प्रदेशनिमे व्याप्यकरि तिष्ठै है तातै इनके अभिव्यापक आधार है। जैसे गृहका एक देशमे घट तिष्ठै, तैसे इनका लोकमे अवस्थान नही है।

वहुरि कोऊ कहे। जो लोकाकाशका प्रदेशनिमे धर्म अधर्म द्रव्यका प्रदेश विरोध रहित तिष्ठै है। एक प्रदेशमे तिनके प्रदेश कैसे समावे हैं। ताका उत्तर। जो जल भस्म खाड इत्यादिक मूर्तिक द्रव्यही एक क्षेत्रमे विरोधरहित तिष्ठै है तो अमूर्त्तिक धर्म अधर्म आकाश इनीके विरोध होय।

भावार्थ– एक घडा जल करिके भर्‍या हुवा तामे भस्म क्षपिए तो एकघट भस्म माजाय वा खाडका घडा माजाय वहुरि लोहको सूई माजाय ऐसा देखिए है। जो स्थूल मूर्तिक इत्यादि परस्पर अवकाशदान दे हैं तो अमूर्तिक अवकाशदान कैसे नहि देवे। वहुरि भेदसघातपूर्वक

आदिसहित जिनके संबंध होय ऐसे अतिस्थूल स्कध तिनमे केईकनिके प्रदेशनिके तिष्ठनेमे विरोध है। अर धर्मादिक द्रव्यनिके तो आदिनाम सबधी नहि पारिणामिक अनादिसबध हैं इनिके कैसे परस्पर विरोध होय। अब पुद्गलनिके अवगाहनविशेषके जाननेकू सूत्र कहे है-

एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥१४॥

अर्थप्रकाशिका- लोकाकाशका एकप्रदेशतै लगाय असख्यातप्रदेशनिपर्यंत अनेकप्रकार पुद्गलनिका अवगाह है। एक परमाणुको एक आकाश प्रदेशविषै अवगाह है। अर दोय परमाणु खुलीवा बधीको एकप्रदेशमे अवगाह वा दोय प्रदेशमे अवगाह है। तीन परमाणु खुलीवा बधीको एकप्रदेशमे अवगाह है वा दोयमे वा तीनमे अवगाह है। ऐसे सख्यात असख्यात अनत प्रदेशनिका स्कधका एक लोकाकाशका प्रदेशमैभी अवगाह है। अर दोय तीन इत्यादि सख्यात असख्यात प्रदेशनिमैंहू अवगाह जानना। द्रव्यनिमे यह अवगाहनशक्ति है तातै परस्पर अवकाश दान देहै। जैसे एक घरमे अनेक प्रकाश वर्त्तैहै तहा क्षेत्रका विभाग नही है। अर एकक्षेत्रमे अवगाह होनितै तिन प्रकाशनिके एकपणाहू नही है। तैसे एक लोकाकाशका प्रदेशमे अनत पुद्गलपरमाणूनिका स्कध सूक्ष्मपरिणमनशक्तितै तिष्ठे है अर एक नही होजाय है। बहुरि द्रव्यनिका स्वभाव है सो प्रेरणा नही कीया जाय है जो ऐसे होहु ऐसे मति होहु। यातै अवगाहन स्वभावपणाते एक द्रव्य प्रदेशविषै बहुत स्कधनिका तिष्ठना विरोधकू नही प्राप्त होय है। बहुरि आर्ष जो परमागम तामेभी ऐसे कह्या है।

उगाढगाढणिचिदो। पोग्गलकाएहिं सव्वदो लोगो ॥
सुहुमेहिं बादरोहिं अणताणतेहिं विविहेहिं ॥१॥

अर्थ- यो लोक समस्त सर्वतरफते सूक्ष्म अर बादर नानाप्रकारकें अनतनत पुद्गलकायकरि गाढा गाढा भर्‍या है। तातै आगमप्रमाणतैहू निश्चय करना योग्य है। अब जीवनिका अवगाह कैसे है यातै सूत्र कहे है-

असंख्येयभागादिषु जीवानाम् ॥१५॥

अर्थप्रकाशिका- लोकका असख्यातभागादिमे जीवनिका अवगाह हैं। इहा लोकशद्बकी पूर्वसूत्रते अनुवृत्ति है। तिस लोकाकाशका असख्यातभाग कीजे सो एक असंख्यातवा भागहू असख्यातप्रदेशप्रमाण है। तिस एक असख्यातवा भागमे एक जीवकी अवगाहना तिष्ठैहै वा दोय असख्येय भाग मे वा तीन च्यार इत्यादिक असख्येय भागमे एक जीवकी अवगाहना है जातै जघन्य अवगाहनाका धारक सूक्ष्मनिगोद या लब्धपर्याप्तक जीव ताका शरीरहू असख्यात प्रदेश प्रमाण अवगाहनाकू धारे है तातै लोकका असख्येय भागादिकमे एक जीवकी अवगाहना कही यद्यपि अवगाहना नाना जीवनिकी जघन्यते लेय उत्कृष्टपर्यत एकएक प्रदेश अधिक पाइए है

तोहू वे लोकके असंख्यातवे भागही कहावे है। अर नाना जीव तो समस्त लोकमें है कोऊ प्रदेश जीवविना नही है। अव कोऊ कहे जो एक जीवकी अवगाहना लोकाकाशका असंख्यातवा भागमें कैसे है एक जीवका लोकप्रमाण प्रदेश है तातैं सर्व लोकमें व्याप्त चाहिए ताकू उत्तररूप सूत्र कहे है–

प्रदेशसंहारविसर्प्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥१६॥

अर्थप्रकाशिका– जीवका प्रदेश लोकाकाशकैं समान है तोहू दीपककीज्यो संकोच विस्तार होनेते जैसा आधार होय तिस प्रमाण होय तिष्ठैहै। यद्यपि आत्माका अमूर्तिक स्वभाव है अर लोकाकाश तुल्य प्रदेशी है तोहू अनादिकालतैं कर्मतै एकक्षेत्रावगाहरूप होय कथंचित् मूर्तिकपणाको धारण करैहै। तातैं कर्मके वशतैं ग्रहणकीया जो छोटा वडा शरीरमैं वसैहै जैसा शरीरका आधार होय तैसें संकोच विस्तारकू प्राप्त होयहै। जैसैं दीपक छोटे वडे भाजनमे धरिए तिस प्रमाणही प्रकाश संकोच विस्तारकू प्राप्त होयहै। छोटे वडे शरीरमैं तिष्ठता आत्माका लोकप्रमाण प्रदेश है ते घटै वधै नाहीहै। अव कोऊ कहै जो आत्माका प्रदेश संकोच होतैं कहांताई सकुचै। ताकू कहेहै। सूक्ष्म निगोद लब्धपर्याप्तक जीवके अंगुलकै असंख्यातवैं भाग अवगाहना है ताकेभी असंख्यातप्रदेश है तिस प्रमाणतै घटै नाहीहै। अव कोऊ कहे है जो धर्मादिक द्रव्यनिके नानापणौ मति कहो जातैं देश संस्थान काल दर्शन स्पर्शन अवगाहनादिक करि अन्यद्रव्यनितैं अभेद है। सोही कहेहै। जिस देशमे धर्मद्रव्य तिष्ठै तिस क्षेत्रमैंही अन्यद्रव्य तिष्ठैहै तातैं देश भिन्न नहीहै। अर जो धर्मको संस्थान आकार सोही अन्यद्रव्यनिको है तातैं संस्थान भिन्न नहीहै। अर तीन कालमै धर्मादिक समस्त द्रव्यनिकी तुल्य प्रवृत्ति है तातैं कालहू अभिन्न है अर प्रत्यक्षज्ञानी भगवान् जिस क्षेत्रमैं धर्मद्रव्य देख्या तिसहीमैं अन्यद्रव्य देखे तातैं दर्शन अभिन्न है। अर धर्मादिक समस्त द्रव्य सर्वात्मस्वरूप करि परस्पर स्पर्शनहू करैहै तातैं अवगाहनभी अभिन्न है सर्वगतपणातैं अर अरूपीपणो द्रव्यपणो क्षेत्रपणों इन करि भी भिन्न नहीहै। तोहू धर्मादित पल्टी परस्पर एक होजाय है प्रदेशनिकरि भेद है स्वभावकरि भेद है लक्षणही करि भेद है। यातैं जैसै रूप रसादिकनिको तुल्य आधार होतैहू लक्षणका भेदतैं भेद है। तैसै भिन्न लक्षण कहनेकू सूत्र कहेहै–

गतिस्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरूपकारः ॥१७॥

अर्थप्रकाशिका– जीव पुद्गलनीकैं गति उपकार धर्मद्रव्यकृत है अर स्थिति उपकार [illegible]न है। जीव पुद्गल एक क्षेत्रमैं अन्य क्षेत्रमैं गमनक्रिया करैहैं। तहा गमन करनेकी [illegible] नो जीव पुद्गलहीकी है सो तो अंतरंग कारण है। अर वहिरंगसहकारी अविनाभूतकारण [illegible] है। जो जीव पुद्गल गमन करै तो धर्मद्रव्य सहकारीकारण है अर नही गमन करं तो [illegible]। परन्तु धर्मद्रव्यका सहायविना गमन नही होय सकै तातैं अविनाभूत सहकारी-

कारण है जैसे मच्छिके गमन करनेकी शक्ती तो आपहीमैं है। परतु बहिरग सहकारी अविना-भूत कारण जल है। यद्यपि मच्छि गमन नहि करै तो जल प्रेरणा नही करै है तथापी जलका सहायविना गमन नही करी सकै तातै मच्छीनिकै गमन करनेकू जल सहकारीकारण है। ऐसैं धर्मद्रव्य जीव पुद्‌गलके गमनकू सहकारीकारण है। बहुरि ऐसैंही गमनपूर्वक स्थिति रहते जीव पुद्‌गल तिनिकू अधर्मद्रव्य अविनाभूतसहकारीकारण है। जैसै ग्रीष्ममैं गमन करते पथिककै वृक्षकी छाया सहकारी अविनाभूतकरण है। इहां पूछैहै। जो भूमि जलादि पदार्थही गति स्थिति रूप उपकारविषै समर्थ है धर्म अधर्म द्रव्यनिका कहा प्रयोजन है। तहा कहिए है। भूमिजलादिक तो कोई कोई द्रव्यको एक एक प्रयोजनविषै अनुक्रमते गमनादि उपकार करनेमैं समर्थ हैं। अर धर्म अधर्मद्रव्य है ते समस्तही जीवपुद्‌गलनिकौ एकैकाल गति स्थितिको साधारण आश्रय है बहुरि एककार्यको अनेककारण साधैहैं तहा दोष नाही। इहा तर्क। जो धर्म अधर्म द्रव्य काहुके देखनेमैं आए नही तातै धर्म अधर्म द्रव्यही नहीहै। ताका समाधान। जो इनका नेत्रनिकरि देखना नही यातै अभाव मति कहो। ए परोक्ष पदार्थ है। नेत्रादिन इद्रियनिके ग्रहणमैं नही आवनेतैं अभाव कैसै कहोहो। सर्वही मतमैं प्रत्यक्षपदार्थ परोक्षपदार्थ मानिए है। जो इद्रिय-निका ग्रहणमैं नही आवनेतै अभाव मानोगे तो समस्त स्वर्ग नरक परलोक पुण्यपाप ईश्वरादिक समस्तका अभाव मान्याजायगा। बहुरी हमारे स्याद्वादीनिके मतमैं भगवान सर्वज्ञ वीतराग प्रत्यक्ष देखि करि कह्या है तातै सर्वज्ञकै प्रत्यक्ष होनेतै धर्मादिक द्रव्य प्रत्यक्षभी हैही तिनके सत्यार्थ प्रमाणभूत उपदेशतै परोक्षज्ञानीहू अगीकार करैहै। बहुरी ए धर्म अधर्म द्रव्य परोक्ष है अमूर्तिक है। तिनका उपकारके सबध करि अस्तित्व निश्चय कीजिए है। जीव पुद्‌गलके गति स्थितिकू ए निमित्त है। बहुरी क्षणक्षणविषै तिनके गती आदिका भेद है ताते तिनके हेतुकेभी भिन्नपणा मानिए है। इस सूत्रका विशेष जाननेका इच्छक है ते राजवार्तिक श्लोकावर्त्तिकते जानहु। अब आकाशद्रव्यका उपकार दिखावनेकू सूत्र कहे है—

अकाशस्यावगाहः ॥१८॥

अर्थप्रकशिका— सर्वद्रव्यनिको अवकाशदान देना आकाशद्रव्य उपकार है। इहां उपकार शब्दकी पूर्वके सूत्रते अनुवृत्ति जाननी। जीवादिक अवकाश देनेयोग्य द्रव्यनिको अवकाशदान देना आकाशद्रव्यका उपकार है। इहां तर्क। जे जीवपुद्‌गलादिक क्रियावान है तिनको तो अवकाशदान देना युक्त है परतु धर्मादिक द्रव्य तो नित्यसबधरूप है नि.क्रिय है तिनको अवकाशदान देना आकाशकैं कैसे सभवे। ताका समाधान। जो गति स्थिति क्र्यासहित जे जीवपुद्‌गल द्रव्य है तिनकी अपेक्षा तो आकाशके अवकाश देना मुख्य उप-कार है। अर धर्मादिकनिकी अपेक्षा गौण है उपचारते अवकाशदान देना सिद्ध है। बहुरि तर्क। जो आकाशका अवकाशदान देना गुण है तो मूर्त्तिक द्रव्यनिकै परस्पर प्रतिघात होना अयुक्त है अर परस्पर घात देखिए है। वज्रपातादिकनिकरि पाषाणादिकनिका घात-

देखिए है। भितिकरि गवादिकनिका घात देखिए है तातै आकाशके अवकाशदान देना कैसे वने। ताका उत्तर। पुद्‌गलनिका परिणमन स्थूलसूक्ष्मादि अनेक प्रकार है। तिनमे स्थूल पुद्‌गलनिके परस्पर प्रतिघात है ते स्थूलपुद्‌गल परस्पर अभिघात करे है सूक्ष्म नही करे है सूक्ष्मके परस्पर प्रवेशिका सामर्थ है स्थूलपुद्‌गल परस्पर रोके है। यामे आकाशका दोष नही है। रुकना भिडना परस्पर पुद्‌गलनिका सामर्थ्य है। सूक्ष्मपुद्‌गल है ते परस्पर अवकाशदान देवेहि है। वहुरि इहा ऐसा जो अवगाह गुण तो समस्तद्रव्यनिमेही है तथापी आकाश सवतै भरा है तातै प्रधानपने अवकाश दान देना याहीका गुण है। सर्व पदार्थनिको साधारण युगपत अवकाश देहै। वहूरी इहा कोऊ कहे। अलोकाकाशविपे अवगाह करनेवाला कोऊ द्रव्य है नाही तहा अवकाशदानभी नाही सो तहा आकाशके अवकाश देना कैसे कहिए ताका उत्तर। तहा कोई अवगाह करनेवाला नाही तो अवकाशका कहा दोप, आकाशका अवगाह देना तो गुण विगडा नही। जो द्रव्यका स्वभाव है ताकू द्रव्य छाडे नही हैं जैसे अहगाह करनेवाला हसका अभाव होतेभी जलका अवगाह्यपणाका अभाव नही होय है तैसे अलोकाकाशके अवकाशदान सामर्थ्यकी हानि नहीहै। पुद्‌गलकृत उपकार दिखावनेकू सूत्र कहेहै—

शरीरवाङ्मनःप्राणापानाः पुद्‌गलानाम् ॥१९॥

अर्थप्रकाशिका— शरीर वचन मन प्राणापान कहिए उछ्वासनिश्वास ए पुद्‌लकृत उपकार जीवनीके है। शरीर है सो समस्त वचनादिकका आधार है तातै प्रथम कह्या। औदारिकादि शरीर है सो तो पुद्‌गलमय हैही—

इहा कोऊ कहे। शरीरनिकौ पौद्‌गलिक कह्या सो तो ठीक परंतु कार्मणशरीर तो निराकार है सो निराकारकै पुद्‌गलपणो कैसे होय? आकारवान औदारिकादि शरीरनिकैही पुद्‌गलपणो युक्त है। ताकू कहेहै। जो कार्मणशरीरहू निराकार नहीहै आकारवानही है सूक्ष्म पुद्‌गमयही है तातै नेत्रादिकनिके ग्रहणमे नही आवनेतै निराकार नहीहैं मूर्तिमान है यातै पौद्‌गलिकही है। जातै मूर्तिक पदार्थके निमित्ततै कर्मनिका उदय आवना देखिए है। जैसे गुड धोर भटीकी मदिरा वनै है सो मदिरा मूर्तिक है ताकै पीवनेतै चित्रके भ्रमरूप ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय कर्मका उदय आवेहै। तथा निव भक्षण करनेतै असातावेदनीय उदय आवेहै काटा चुभनेतै असाता उदय होय है। इत्यादि मूर्तिक द्रव्यनिके सबधतै उदय होते देखिए है तातै कार्मणशरीरहू मूर्तिक पुद्‌गलमयही है ऐसा निश्चय करना। बहुरी वचन दोय प्रकार है। एक भाववचन एक द्रव्यवचन। मतिश्रुतज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशम होतै अर अगोपाग नाम कर्मके लाभका निमित्ततै आत्माके वोलनेकी शक्ती होई सो भाववचन है। सो पुद्‌गलकर्मके निमित्ततै भया तातै पौद्गलिक है। वहुरि तिस वोलनेका सामर्थ्य सहित आत्माके कठ तालु जिव्हा [illegible] स्थाननिकरि प्रेरे जे शब्दरूप पुद्‌गलस्कध सो द्रव्यवचन है सोहू पुद्‌गलते उपज्या [illegible] है। श्रोत्रेंद्रियके विपय है तातै पुद्‌गलतै अन्य नही—

वहुरि जिस पदार्थका जो रूप है तिस रूपकी सत्ता तिस पदार्थहीमे है अन्यमे नही
तै एक रूपपणा सविश्वरूपका प्रतिपक्षी है। वहुरि एकएक वस्तुके अनत पर्याय है तिनमे
एक पर्यायप्रति सत्ताका जुदाजुदा नियम है। यातैंही पर्यायनिके भिन्नता है तातै कथचित्
पर्यायपणा अनतपर्यायिका प्रतिपक्षी जानना। ऐसे सामान्यविशेषस्वरूपका प्ररूपणमे समर्थ
ो दोऊ नयनिके आधीन समस्त कथन निर्दोष है। नयनिकू जानेविना वस्तुका यथावत्
नना नही होय तदि एकातग्रहणकरि विपरीतताकू प्राप्त होय है। अब सत्का लक्षण
नेकू सूत्र कहे है–

उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥३०॥

अर्थप्रकाशिका– उत्पाद व्यय ध्रौव्य तीनपणाकरि युक्त है सो सत् है। अपनी
तिको नाही छाडते जे चेतन अचेतन द्रव्य तिनके बाह्य अभ्यतर निमित्तके वशतै एक परण-
ो अन्य परणतिको प्राप्त होना सो उत्पाद है। जैसे मृत्तिका द्रव्यविषै पिंडपर्यायिका नाश
ा अर घटपर्यायिका उपजना ऐसे उत्पाद जानना। तथा एक जातिमे विरोधरहित क्रमते
ा जो भावनिका सतान ताके विषै पूर्वभावका अभाव होना सो विनाश है ताहिकू समुच्छेद
हुए है। व्यय कहिए है। अर उत्तर भावका प्रगट होना सो उत्पाद है। अर पूर्वभावका
ा अर उत्तर भावका उत्पाद होतैंकू आपनी जातिका नाही छाडना सो ध्रौव्य है। ए उत्पाद
ा ध्रौव्य सामान्य तो अभिन्न है वोही एकद्रव्य है द्रव्यतै भिन्न नही है। अर विशेषकी
क्षा समस्तपर्यायिक्रमवर्ती जुदीजुदी है परस्पर मिलैनही तिस करि भिन्न है। द्रव्यविषै तीनो
युगपत् एककालमे पाइए है द्रव्यका स्वभाव है याहीतै द्रव्यका लक्षण है। जातै जो उत्तर-
यका उपजना सोही पूर्वपर्यायिका नाश होना है अर जो पूर्वपर्यायिका नाश होना सोही उत्तर
यका उत्पाद है अर द्रव्य है सो उत्पादमे हूवैंही द्रव्य है अरव्ययमे हुवैंही द्रव्य है अन्य
ो भया अर उत्पाद व्ययद्रव्यमे समयसमय होइ है जातै सर्वद्रव्य परिणामी है परिणमनविना
क समयमैहू द्रव्य नही है। तातै जो सत् लक्षण द्रव्य है सो उत्पाद व्यय ध्रौव्य स्वरूप ही है।

वहुरि ए तीनो द्रव्यमे परस्पर सापेक्षही है। इनके जो परस्पर अपेक्षा नही होइ तो
ही सिद्ध नही होइ। जो केवल उत्पादही मानिए तो नवीन वस्तुका उपजना ठहरे सो
त असत् ताका उपजना सभवै नही पुर्वे जो वस्तु सत्रूप होयगा ताकेही अन्य पर्यायका
जना होयगा अर जो पूर्वै सर्वथा असत् था अर फिर नवीन उपज्या मानिए तो मृत्तिकविना
का उत्पाद अर सुवर्णविना कुडलका उपजना होयगा सो सर्वथा अवस्तुका उत्पाद होना
है। पर्याय नवीन उपजै है अर विनसै है द्रव्यस्वभावकरि उत्पाद विनाश नही है।

वहुरि सर्वथा वतुस्का विनाशही मानिए तो तिसका फेर उपजना नही ठहरेगा केवल
का प्रसग आवेगा। घटका विनाश होतै माटिका विनाश अर कुंडलका विनाश होतै

सुवर्णका नाश ऐसे प्रत्यक्ष दोष आवे । अर जो एकातकरि ध्रौव्यहीं मानिए तो वस्तुमे उत्पाद विनाश प्रत्यक्ष देखिएहै तिस समस्त व्यवहारके असत्पना आवै तब व्यवहारका लोप होय। तथा उत्पाद व्यय रूपहीकू एकांतकरि सत् कहिए तो पूर्वापरका जोड रूप नित्यभावविना वस्तुका अभाव भया तदि उत्पाद व्यय कौनमै होय समस्तव्यवहारका लोप होय तातै सत् है सो उत्पाद व्यय ध्रौव्यात्मक है । अथवा आगे सूत्र कहेगे जो गुण पर्याय द्रव्यका लक्षण है। अनेकान्तस्वरूप वस्तुके अन्वयी जोडरूप तो गुण है । अर व्यतिरेकी पर्याय है जैसे मृत्तिकाविषै स्पर्श रस गध रूप ये तो गुण है । अर पिंड घट कपाल खड शर्करादिक पर्याय है । स्पर्श रस गध वर्ण गुण है ते तो मृत्तिकाकी साथिही घट कपाल खडादिक समस्त पर्यायनिमे पाईए है तातै स्पर्शादिक गुण अन्वयी है । अर घट कपालादिक पर्याय भिन्नभिन्न कालमे पाइए है जिस कालमे पिंडपर्याय है तिस कालमे घटादिक अन्य पर्याय नही अर घटपर्याय है तिसमे पिंडादिक पर्याय नही तातै पर्याय व्यतिरेकी हैं । अर द्रव्यतै गुण पर्याय भिन्न नही गुण पर्यायात्मकही द्रव्य है। गुण है ते तो द्रव्यमे युगपत् प्रवर्त्तै है। पर्याय है ते क्रमकरि प्रवर्तै है तातै गुण पर्याय है ते द्रव्यका स्वभावभूत है तातै द्रव्यका लक्षणपणाकू धारण करे है ऐसे द्रव्यके तीन लक्षण कहे।

एक द्रव्यका लक्षण सत् कह्या । एक उत्पाद व्यय ध्रौव्य युक्तपणा कह्या। एक गुणपर्यायवान्पणा कह्या । इन तीन लक्षणनिके मध्य एककू कहते सते अन्य दोय लक्षण अर्थतही आजाय है । जो सत् लक्षण कहिए तो उत्पाद व्यय ध्रौव्यवान्पणा अर गुणपर्यायवान्पणा स्वयमेव आवे है अर उत्पादव्ययध्रौव्यवान् कहिए तहां सत्पणा अर गुणपर्यायवान्पणा स्वयमेव आवै है । अर गुणपर्यायवान्पणा तहा सत्पणा अर उत्पादव्ययध्रौव्यपणा आपेही आवे है। जो द्रव्य है सो नित्यानित्य स्वभाव है यातै ध्रुवपणा अर उत्पादव्ययपणाकू प्रगट करे है ।

विनाशहू नही। अर पर्यायार्थिकनयकरि उत्पादसहित अर विनाशसहित द्रव्यकू जानना व है। बहुरि कथचित् द्रव्यके अर पर्यायके भेद नही है द्रव्यपर्याय एकही है। जैसे दुग्ध र नवनित घृत इनि पर्यायनिविना गोरस नाम द्रव्य कोऊ कहावे नही है गोरस होयगा सो। दधि नवनीत घृत इनि पर्यायनिमैंही होयगा इन विना कहू नही तैसे पर्यायविना द्रव्य है नही। बहुरि जैसे गोरसविना दुग्ध दधि नवनीत घृत कहू है नाही तैसे द्रव्य विना पर्याय कहू नाही। तातै द्रव्यके अर पर्यायनिके नयके वशतै कथचित् भेद होतैहू द्रव्य अर पर्यायका तत्व भिन्न नही है अस्तित्व एकही है। यातै द्रव्यके अर पर्यायके वस्तुपणाकरि भेद नही। एकही है। ऐसेही द्रव्यके अर गुणनिकू भेद नही है। जैसे पुद्गलद्रव्यते भिन्न स्पर्श रस वर्ण नही है तैसे द्रव्य विना गुण नही है। अर जैसे स्पर्श रस गंध वर्णतै जुदा पुद्गलद्रव्य। न सभवै है तैसे गुणविना द्रव्य नही सभवे है। तातै द्रव्यके अर गुणनिके कथचित् भेद हू अस्तित्व एकका नियम है तातै वस्तुपणाकरि अभेद हैं। यहा द्रव्यके नयका वशतै कही भगी है।

स्यादस्ति द्रव्य। स्यान्नास्ति द्रव्य। स्यादस्ति च नास्ति च द्रव्य। स्यादवक्तव्य च र्य। स्यादस्ति ववतव्य च द्रव्य। स्यान्नास्ति च वक्तव्यं च द्रव्य। स्यादस्ति च नास्ति च तव्य च द्रव्य। ऐसे द्रव्यविषै सप्तभंग कहै। इहा स्यात् शब्दका अर्थ तो सर्वथापनाका निषेध नेवाला है अर अनेकांतका उद्योतक है। कथचित् अर्थमै स्यात् शब्दका निपात है। तहा ने द्रव्य क्षेत्र काल भाव करि कहिए तदि तो द्रव्य अस्तिस्वरूप है। अर परद्रव्य क्षेत्र काल व करि कह्या हुवा द्रव्य नास्तिस्वरूप है अर स्वद्रव्य क्षेत्र काल भाव करिकै अर परद्रव्य त्र काल भाव करिकै क्रमते कह्याहुवा द्रव्य अस्तिनास्तिरूप है। बहुरि स्वद्रव्य क्षेत्र काल व अर परद्रव्य क्षेत्र काल भाव करि युगपत्कह्या द्रव्य अवक्तव्य है। बहुरि स्वद्रव्य क्षेत्रकाल व करिके अर युगपत् स्वपरद्रव्य क्षेत्र काल भाव करिकै कह्या द्रव्य अस्तिअवक्तव्य है। रि परद्रव्य क्षेत्र काल भाव करिकै अर युगपत् स्वपरद्रव्य क्षेत्र काल भाव करि कह्या हुवा य नास्तिअवक्तव्य हैं।

बहुरि स्वद्रव्य क्षेत्र काल भाव करिकै अर परद्रव्य क्षेत्र काल भाव करिकै अर युगपत् परद्रव्य क्षेत्र काल भाव करि कह्याहुवा द्रव्य अस्तिनास्ति अवक्तव्यरूप है। ऐसे नयवि-गतै भग जानना। बहुरि जो सत्रूप द्रव्य है ताका द्रव्यपणाकरि नाश नाही है। अर मत् जो अभावरूप अन्यद्रव्यका द्रव्यपणा करि उत्पाद नहीहै।

जातै जो सत्वस्तु है ताका सर्वथा अभाव कदाचित् नही होयहै। अर असत् जो भाव सो कहातै उपजे ? नही उपजै। यातै द्रव्य है ते सत्का उच्छेद अर असत्का उत्पाद-नाही गुण पर्यायनिमें विनाश अर उत्पादकू आरभ है। जैसे घृतकी उत्पत्तिविषै विद्यमान रसका नाश नहीहै अर गोरसविना अन्य सत्अर्थका उत्पाद नहीहै। तो कहाहै। सत्का

उच्छेद अर असत्का उत्पादकू नही प्राप्त होता जो गोरस ताकै स्पर्श रस गध वर्णादिक परिणामी गुणानिकै विषै पूर्वअवस्थाकरि विनसता अर उत्तरअवस्थाकरि प्रगट होतामै वनीन पर्याय विनसेहै अर घृत पर्याय उपजैहै । गोरस तो उपजै नही अर विनसै नही । ऐसे समस्तद्रव्यनिमै जानना ।

वहुरि जीवादिक तो द्रव्य है । अर चेतनादिक गुण है । अर सुर नर नारक तिर्यंचादिक जीवकी वहुत प्रकार पर्याय है । तहा अगुरुलघु गणकी हानिवृद्धिकरि रचीहुई तो शुद्धपर्याय हैं । अर जीवकै सुर नर नारक तिर्यक् लक्षण जे पर्याय हैं ते परद्रव्य जो पुद्‌गलकर्म तिसके सयोगतै रची अशुद्धपर्याय है । समयसमयप्रति सभवती जो अगुरुलघुगुणकी हानिवृद्धिकरि रची स्वभावपर्यायकी परिपाटीकू नही विच्छेद करनेवाली ऐसी कर्मकी उपाधिसहित मनुष्यपर्यायकरि तो जीव विनसेहै । अर उपाधिसहित देवादिक पर्यायकरि उपजेहै । तहा मनुष्यपणाकरि नाश होतै जीवपणाकरि नाश नही होय है । अर देवादिपर्यायकरि उत्पन्न होतै जीवपणाकरि नही उपजैहै सत्का नाशविना अर असत्का उत्पादविनाही पर्याय तैसे प्रवर्तै है । जो पूर्वपर्यायका नाश अर उत्तरपर्यायका उत्पादरूप दोऊ अवस्थाकू अगीकार करता जीव द्रव्य उपजता विनशता देखिए हैं परतु उत्पाद विनाश दोऊ अवस्थामे व्यापी अपना एक स्वभाव तिसकरी विनसै नहीहै अर उत्पन्न नही होय है । अर द्रव्य हैं सो पूर्वपूर्व पर्यायका नाश अर उत्तरउत्तर पर्यायका उत्पाद ऐसे विनाश उत्पाद दोऊधर्म धारेहै । परतु द्रव्यतै भिन्न नहीहै तातै पर्यायनिकरि सहित एकवस्तुपणातै जीवद्रव्य उपजैहै अर विनसेहै तोहू सर्वकालमै जीवद्रव्य अविनष्ट है अर उनुत्पन्न है । अर देव मनुष्यादिक पर्याय है ते क्रमवर्ति हैं । तातै अपना समय व्यतीतकरि विनसेहै अर उपजैहै । यातै सत्का विनाश नहीहै अर असत्का उत्पाद नहीहै । अर जो ऐसा होइ जो मरै है सो ही उपजैहै अर जो उपजैहै सोही मरेहै तदि तो सत्का विनाश होय अर असत्का उत्पाद होय । अर जो देव उपजे है अर मनुष्य मरेहै ऐसा कहिए तो अपने कालकी मर्याद प्रमाण देव मनुष्यादिक पर्यायकू रचनेवाला देव मनुष्य गतिनामा नामकर्मकै तितना प्रमाणमात्रपणा है तातै विरोध नहीहै । जैसे एक वडा वासविषै अपने प्रमाणकी लिए अनेक पेली अदनाअदना स्थानविषै तो सभ्दावकू धरेहै । अर अन्य पेलीविषै आप नही प्राप्त होती । परस्थानमे अपना अभावकू धारेहै । अर वास हैं सो समस्त पेलीनिमै अपना सभ्दावकू धारै है तोहू अन्य पेलीका सबधकरी अन्य पेलीमै सबधका अभावतै अभावकूभी धारण करेहै ।

तैसे अमर्यादरूप त्रिकालमै तिष्ठता एक जीवद्रव्यकै क्रमतै वर्त्तती अनेक मनुष्यत्वादि [illegible] है । ते पर्याय अपनेअपने प्रमाणकू लीए है यातै अन्यपर्यायमे नही गमन करती अपने-[illegible] स्थानमे तो सद्भावकू धारेहै अर परस्थानविषै अभावकू धारेहै । अर जीवद्रव्य है सो

मस्तपर्यायनिविषैं अपना सद्भावकू धारेहै तोहू अन्यपर्यायिका सबंधकरि अन्यपर्यायमै सबधको भाव है यातै भावकू धारण करेहै–

भावार्थ– जैसे एक जीवके मनुष्य देव नारक तिर्यक् अनेकपर्याय होय है तिन समस्त ायिनिमे जीव एक प्रवर्ते है। परन्तु मनुष्य पर्यायमे तो देव नारकादिपर्यायिका अभाव है। र देव नारकादिकनिमे मनुष्यपर्यायिका अभाव है। मनुष्यपणाकरि देवपर्यायमे नही ।पर्यायिकरि मनुष्यपर्यमि नही। ऐसे कथचित् सद्भाव कथंचित् असद्भाव जानना।

अव सिद्धपर्याय कैसे है कहे है। जैसे थोरे काल है सबध जाका ऐसा नामकर्मका र जो देवगत्यादिकर्म तिसकरि रची जो जीवके देवत्वादिक पर्याय होई है अर जव देवगति-म कर्मका उदय होय चुके तदि पूर्वे कहे नही भई। ऐसी मनुष्यादिक पर्याय उपजे तो असत् की उत्पत्ति तो नही भई। जीव तो वोही है नविन नही उपज्या। ाही दीर्घ काल है सवध जाका ऐसा ज्ञानावरणादिक कर्मसामान्यका उदयकरि रची ससारी-ाकी पर्याय जीवके अनादितै है। अव किसही भव्य जीवके ससारीपणाका कारण टकर्मका उदय नाशकू प्राप्तभया तदि ससारीपणाकी पर्याय नष्ट भई अर पूर्वे नही भईथी ी सिद्धत्व पर्याय उत्पन्न भई। सो असत्की उत्पत्ति नही है पूर्वे जो जीव अष्टकर्मकरि प्त था सो ससारी था सोही जीव अष्टकर्मका अभाव कीया तदी सिद्ध भया है। वहुरि व है सो सदाकाल विनसे नही हैं अर उत्पन्न नहि होय है तातै जीवके द्रव्यरूपकरि नित्यपणा ग्रा हैं। अर देवादिपर्यायिकरि प्रगट होतै तिसही जीवके भावका कर्तापणा कह्या। अर ष्यादि पर्यायिकरि विनसता तिसही जीवके अभावका कर्तापणा कह्या। अर विद्यमान देवादि यिका उच्छेदकू आरभ करता तिसही जीवके सद्भावका अभावको कर्तापणो उत्पन्न होय अर तिसही जीवके अविद्यमान जो मनुष्यादिक पर्यायिका उत्पादका आरभ कर्त्ताके अभावके त्रका कर्तापणा कह्या। ऐसे यह समस्त कहना निर्दोष है। द्रव्यपर्यायनिके मध्य एककू ग एककू मुख्यकरि व्याख्यान सिद्धातमें है यातै सोही कहिए है। जिस अवसरमे पर्यायकू तो ग करिए अर द्रव्यकु मुख्यकरी कहिए तहा तो जीव उपजैहू नही है अर विनसैहू नही है। जिस अवसरमे द्रव्यको गौण करिए अर पर्यायकू मुख्य करिए तदि प्रगटभी होय है। अर सिहू हैं। ऐसे यो समस्त प्रसाद अनेकातको है जो ऐसा विरोधहू विरोधकू नही प्राप्त र है। अव नित्यपणा कहनेकू सूत्र कहे है–

तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥३१॥

अर्थप्रकाशिका– तद्भावकरि अव्ययरूप है सो नित्य है। जो पहीले समय था सोही रे कालमे होय सो तद्भाव है ताहिकू नित्य कहिए। जो पूर्वे था सोही यह वर्तमानमे है ऐसा द्रूप जो वस्तुमे भाव सो तद्भाव है। याहीकू प्रत्यभिज्ञान कहिए। जो तद्भावकरि अव्यय

कहिए अविनाशी सो नित्य जानना। सर्वथा नित्य कहे तो सर्वथा नित्य कूटस्थ ठहरे। कूटस्थके पर्याय पलटनेका अभाव है। तदि ससार तथा ससारके अभावका कारणके विधा-नमे विरोध आवे। इहा तर्क। जो सोही वस्तु नित्य सोही अनित्य ऐसे कहनेमे तो विरोध है। ऐसे विरोधके अभाव करनेकू सूत्र कहे है–

अर्पितानर्पितसिद्धेः ॥३२॥

अर्थप्रकशिका– जाकू मुख्य करिए ताकू अर्पित कहिए। अर जाकू गौण करिए ताकू अनर्पित कहिए। इनि दोऊ नयनिकरि अनेक धर्मस्वरूप वस्तुका कथन सिद्ध होय है। वस्तूमे अनेक धर्म है। तहा वक्ता जिस धर्मको प्रयोजनके वसतै प्रधानकरि कहे सो अर्पित हैं। अर प्रयोजनविना जिस धर्मकी कहनेकी इच्छा नही करे सो अनर्पित है। वहुरि ऐसे नाही जो वस्तुमे धर्मही नही है। वस्तु तो अनेकधर्मस्वरूप हैही। परतु किसीकी धर्मकू कहनेकी प्रधानता किसीकी अप्रधानता दोऊनिकरि सिद्धी होय है। जैसे एक पुरुषमे पिता पुत्र भ्राता मामा भैणजा इत्यादिक अनेक सबध है ते अपेक्षाते सिद्ध होय है। पुत्रकी अपेक्षा पिता कहिए पिताकी अपेक्षा पुत्र कहिए। भईकी अपेक्षा भाई कहिए भैणजाकी अपेक्षा मामा कहिए मामा की अपेक्षा भैणजा कहिए। ऐसे एकही पुरूषमे अनेक सवध कहते कुछ विरोध नाही। तैसेही वस्तुकू सामान्य अर्प्पिणाते नित्य कहिए विशेष अर्पिणाते अनित्य कहिए यामै विरोध नाही। वहुरि जे सामान्य विशेष है ते कथचित् भेद अभेद कर व्यवहारके कारण होय है। इहा सत् असत् एक अनेक नित्य अनित्य भेद अभेद तत् अतत् इत्यादि अनेक धर्मात्मक वस्तुके कहनेमे अन्यमती विरोधादि दूषण बतावे है। ते वस्तुको स्वरूप जान्यो नही ते सर्वथा एकाती है।

सर्वथा एकातका सामर्थ्यतै अनेकातरुप वस्तु कैसे सधै ? एकाती जैसे कहै तैसे दूषण आवै। निर्दोष वस्तुका स्वरूप नही साधि सकै। स्याद्वाद वडा महिमा लायक है वलवान् है यामै विरोधादि दूपणका अवकाश नही है। निर्बाध वस्तूके रूपकू साधै है। अव इहा कोऊ कहे है। सत् है ताके अनेक व्यवहारके आधीनपणा है यातै सत्रूप पुद्गलस्कधनिकी जो उत्पत्ती सो भेद सघातते है। परतु इहा ऐसा सदेह है। जो द्वचणुकादिक लक्षण जो स्कध सो सघात जो सयोग तातैही होय है की और किछु विशेष निश्चयकरिए है। तहा कहोगे। जो पुद्गलनिका सयोग होते जो एकत्व परिणमन होना योही जो बध तातै सघात उपजै है। तो और पूछे है। तो अनेक पुद्गलनिका सयोग होतेहू केइकनिके तो बध होय है केईक भिन्नही रहे है। तिनके बध होनेका कारण कहनेकू सूत्र कहे है।

स्निग्धरूक्षत्वाद्बन्धः ॥३३॥

अर्थप्रकाशिका– स्निग्ध कहिए सचिक्कणपणा तथा रूक्षपणातेही परस्पर बध होय

है। दोय आदि सख्यात असख्यात अनत परिमाणुनिका स्कध होय है। इहा ऐसा जानना पुद्-गलनिमे रूक्ष तथा सचिक्कण गुण होय है तहा केई परमाणु रूक्षरूप है केई सचिक्कणरूप है। तहा सचिक्कणपणाका अर रूक्षपणाका अविभागपरिच्छेद केई परमाणुमे किसी अवसरमे अधिक हो जाय है किसी अवसरमे घटि जाय है। षट्गुणी हानिवृध्दिका क्रमकरि रूक्षपणा सचिक्कण-पणाकी अधिकता हीनता निरंतर होय है।

इहा सचिक्कणपणाका वा रूक्षपणाका अविभागपरिच्छेद है तिनहीकू गुण कहै है। परमाणुमे सचिक्कणपणाका एक विभागपरिच्छेदसे लेय अनतपर्यत वढै है। अर एक परमाणुमें अनत अविभागपरिच्छेदसे घटे तो असख्यात वा सख्यात वा दोइ तथा एक अशपर्यत रहै। तथा सचिक्कण परमाणु रूक्ष हो जाय है रूक्ष परमाणु सचिक्कण होय है। समयसमय परिणमन है अर वाह्य द्रव्य क्षेत्र काल भावादिकनिके निमत्ततै परिणमनमै है। ऐसे स्निग्धरूक्षपणा परमाणुमे तथा स्कधमे जानना। जैसे जलमे सचिक्कणता है तातै छालीका दूधमे छालीका दूधतै गोदूधमे गौके दूग्धतै भैंसीके दुग्धमे यातै घृततै तैलमे सचिक्कणपणा अधिक अधिक पाइए है। तथा पासु जो रज तिसमै रूक्षपणा है तातै वालुकामे तातै शर्करामे अधिक अधिक रूक्षपणा है। ऐसे परमाणूहूमै सचिक्कणपणाकी अधिकता अर न्यूनताअनुमान करना योग्य है। परमाणुमै होय तदिही स्कधमे होय। ऐसे स्निग्धरूक्षपणातै पुद्उलनिके परस्पर बध जानना। अव बध होनेमे अन्य विशेष कहे है—

न जघन्यगुणानाम् ॥३४॥

अर्थप्रकाशिका— जे जघन्यगुणसहित परमाणु है तिनके बध नही होय है। इहां परि-णामुमै स्निग्धताका वा रूक्षताका अविभागपरिच्छेद है ताहि गुण कहिएहै। जिस परमाणुमै स्निग्धताका वा रूक्षताकां एक अविभागपरिच्छेद रहिजाय सो जघन्यगुण है। इहा एक अवि-भागपरिच्छेदकू जघन्य कह्याहै। जिसम एक गुण स्निग्ध रूक्षताको होय सो परमाणु द्वितीयादि सख्यात असख्यात अनत गुणसहित स्निग्धपरमाणुकरिकै वा रूक्षकरिकै नही बधनै प्राप्त होयहै औरभी जिस गुणसहित नही बधै ताके कहनेकू सूत्र कहेहै—

गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥३५॥

अर्थप्रकाशिका— गुण जे स्निग्धरूक्षताके अश तिनकरि साम्य कहिए समान सख्यारूप ऐसे सदृश कहिए रूक्षरूक्ष अर स्निग्धस्निग्ध ऐसे सदृश होय ते परमाणूहू बधकू नही प्राप्त होय है। गुणकी समानता कहिए दोऊ परमाणुमे गुणनिके अविभागपरिच्छेदरूप अश समान होय तिन परमाणुके परस्पर बध नही होय। जामै दोयदोय वा तीनतीन वा चारचार ऐसे सख्यात असख्यात अनत गुण स्निग्धता वा रूक्षताका समान होय तिनके बध नही होय है। अर

सदृशका कहिए रूक्षरूक्षके अर स्निग्धस्निग्धकेहू बध नही होय है। स्निग्धरूक्षकैहू नही होय है। तो कौनके बध होय यातै सूत्र कहे है–

द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥३६॥

अर्थप्रकाशिका– दोय गुणकरि अधिक होय तिनहिके बंध होय अन्यके नहि होय। तुल्य जातीयकैहू होय अर अतुल्य जातीयकैहू होय। जिस परमाणुमे दोय गुण स्निग्धताका होय तिसके एक गुण स्निग्ध वा दोय गुण स्निग्ध वा तीन गुण स्निग्ध परमाणूकरि बध नही है। चार गुण स्निग्धताका जामै होय ताकरि बध है। वहुरि तिस द्विगुण स्निग्ध परमाणुके पच षट् सप्त अष्ट नव दश सख्येय असख्येय अनत गुण स्निग्धाकरि बध नही है। ऐसेही त्रिगुण स्निग्ध परमाणुके पचगुण स्निग्धसहित परमाणुके बध है। अन्य जे पूर्व उत्तर सख्यासहित स्निग्ध गुणधारक परमाणुनिकरि बध नही है। वहुरि चतुर्गुण स्निग्धपरमाणुके षड्गुण स्निग्ध परमाणुकरि बध है। अर शेष पूर्वोत्तकरि नही है। ऐसेहि शेष अन्य परमाणुनिविषैभी दोय गुणकरि अधिक करिकेहि बध है। अन्यकरि नही है।

वहुरि तैसेहि द्विगुण रूक्षके एक दोय तीन गुण रूक्षकरि सहित बंध नही है अर चतुर्गुण रूक्षकरि बध हैं। तैसेही द्विगुण रूक्ष परमाणुके पचगुण रूक्षादिक उत्तरगुण तिन करिकैहू बध नही है। ऐसेही त्रिगुण रूक्षादिक परमाणुनिकहू द्विगुण अधिककरि बध योग्य है जैसे समान जातीयमे कह्या तैसे भिन्नजातीयमेहु बध जानना। द्विगुण स्निग्धकै एक दोय तीन रूक्षगुणसहितनिकरि बध नही है चतुर्गुण रूक्षकरिके बध है अर उत्तर पच गुण रूक्षादिकरि बध नाही है। ऐसेही त्रिगुण स्निग्ध परमाणुके पच रूक्ष परमाणु करिके बध है। शेष पूर्वोत्तर गुणसहितनिके बध नही हैं। ऐसे सख्यात असख्यात अनत गुणके धारक जे स्निग्ध रूक्षपरमाणु तिनके सजातीयमे वा विजातीयमे दोऊ गुण अधिककरिहि बध है अन्यके नही। ऐसेही भगवान् सर्वज्ञ वीतरागदेव प्रत्यक्ष देख्याहै। अन्य छद्मस्थनिके सर्वज्ञ वीतरागका कह्या आगमतै प्रमाण जानना। सोही सिद्धातमे कह्या है।

गाथा– णिद्धस्स णिद्धेण दुराहिएण। लुक्खस्सलुक्खेण दुराहिएण।
णिद्धस्स लुक्खेण उवेदि बदो। जहण्णवज्जो विसमे समे वा ॥१॥

अर्थ– स्निग्ध परमाणुकै स्निग्धपरमाणु दोय गुण अधिककरि बध होय है। अर रूक्षपरमाणुके दोय गुण अधिक रूक्षपरमाणुकरि बध होय है। अर स्निग्ध परमाणुके रूक्षपरमाणुकरि बध होय है। अर जघन्यगुणा जो एक गुण तिस सहित परमाणुकरि बध नही होय है। अर दोय च्यार छह आठ इत्यादिक समगुणके धारकनिकेहू बध है। अर तिन पाच सात नव ग्यारा इत्यादिक

न्विषमगुण धारकनिकेहू बध होय है। परतु गुणके दोय अशकी हीन अधिकता होय तिनहिके ध है अन्यके नहि है।

भावार्थ— स्निग्धस्निग्धकै अर स्निग्धरूक्षके अर रूक्षस्निग्धके दोय गुण अधिक सम-विषम होतै बध होय है। अन्य हीनअधिकके वध नहि होय। ऐसेहि सर्वज्ञ वीतराग प्रत्यक्ष या है। ऐसे कहि जो विधि तिस करि द्वयणुकादि अनत परमाणुका स्कधपर्यंत स्कधकी उत्पत्ति नना योग्य है। वहुरि इहा पुद्गलस्कधका छह भेद सिद्धातमे वर्णन कीया है।

गाथा— वादरवादर वादर। वादरसुहम च सुहमथूल च।
सुहम च सुहमसुहम। धरादिय होदि छब्भेय ॥१॥
पुढवी जल च छाया। चउरिंदियविसयकम्मपरमाणु।
छब्विहभेय भणिय पुद्गलदव्व जिणवरेहि ॥२॥

अर्थ— १ वादरवादर २ वादर ३ वादरसूक्ष्म ४ सूक्ष्मवादर ५ सूक्ष्म ६ सूक्ष्मसूक्ष्म ऐसे स्कधके छह भेद कहे। तिनमे जे छेदेहुए फेर जुडनेको असमर्थ ऐसे काष्ठ पापाणादिक वादरवादरसज्ञक है। वहुरि जे छेदे भेदे हुए स्वयमेव मिलजानेमे समर्थ ऐसे जल घृत दुग्ध आदिक रस वादर है। वहुरि जिनका अवलवन तो स्थूल अर शरीरादिकनिकै आताप आल्हाद ' तोहू छेद्या नही जाय अर उठाय ग्रहण करनेकू अर अन्य स्थान लेजाइवेकी समर्थपणा नही होय ऐसे छाया आतप अधकार चादनी इत्यादिक ये वादर सूक्ष्म स्कध है। वहुरि जे सूक्ष्म है स्थूलपणाते ग्रहणमे आवे ऐसे स्पर्श रस गध वर्ण शब्द ए च्यार इद्रियनिके विषय ते सूक्ष्म दर स्कध है।

वहुरि सूक्ष्म है तातै इद्रियनिके ग्रहणमे नहि आवे ऐसी कर्मवर्गणादिक सूक्ष्म स्कध है। रि कर्मवर्गणाते नीचे दोय परमाणुका स्कधपर्यंत सूक्ष्मसूक्ष्म स्कध है। जाते सूक्ष्म स्थूल पर्याय ग्रहीमे होय है परमाणुमे नहि। परमाणुमे तो रस एक गध एक वर्ण एक स्पर्श दोय शीत गमेतै एक स्निग्धरूक्षमेतै एक एहि पाच गुण है। सूक्ष्मवादरादिक स्कधके धर्म है। अब धिकगुणकरि मिलजाय तिनका स्वरूप कहनेकू सूत्र कहै है—

बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥३७॥

अर्थप्रकाशिका— वध होते अधिक गुणसहित पुद्गल अल्पगुणसहितनिकौ अपने परिणा-मरूप करे है। एकत्व परिणाम होय है। अल्पगुणके धारक अधिकगुणके स्वरूप होय है पूर्व अवस्थाका त्यागपूर्वक तीसरी अवस्था प्रगट होय है। एह स्कध होय नाम है। जो स्कध नही होय तो शुक्ल कृष्ण सूतके ततुकी ज्यो सयोग होतेहू एक परिणाम नही होय

भिन्नभिन्न रूपकरिही तिठै। अर एक होय मिल जाय तदि वर्ण गध रस स्पर्श इनकी अन्यही अवस्था प्रगट होई स्कध उपजे है जैसे कृष्णपीतादिकका सयोग होई हरितवर्णपणा जात्यतर प्रगट होय है। तैसे स्कध मिल्या जात्यतरपणा प्रगट होय है। अव द्रव्यका अन्य लक्षण कहे है।

गुणपर्ययवत् द्रव्यम् ॥३८॥

अर्थप्रकाशिका– गुणपर्यायवान् द्रव्य है जाके गुणपर्याय होय सो द्रव्य है। समस्त द्रव्य अपनेअपने गुणपर्यायसहित है। इहा अन्वयी तो गुण है व्यतिरेकी पर्याय है। जो द्रव्यकी अनेक परिणति होतेहू द्रव्यते भिन्न नही होय द्रव्यकी साथिही रहे सो गुण है अर क्रमवर्ती पर्याय है। द्रव्यके जेते गुण है ते द्रव्यते भिन्न नही गुणनिका समुदाय है सो ही द्रव्य है।

द्रव्यके अनेक पर्यायकू पलटतैहू गुण नही पलटे है। लारही रहे है। तातै गुण है ते अन्वयी है। द्रव्यका स्वभाव गुणरूप अर पर्यायरूप है। द्रव्यका लक्षण पूर्वे सत् कह्या सो तो सामान्यलक्षण है। जातै सत् कहनेमे द्रव्य गुण पर्याय समस्त आगए। जातै सत् सामान्य कहे तो सत् द्रव्य है की गुण हैं कि पर्याय हैं यातै द्रव्यका विशेपलक्षण गुणपर्ययवान् कह्या। जातै द्रव्य है सो सहप्रवृत्त तो अनतगुण अर क्रमप्रवृत्त अनतपर्यायनिका आधारपणाकरि अनतरूपपणाते एकहू नानारूप कहिए है। द्रव्यके गुणनितै भेद मानिए वा गुणनिके द्रव्यते भेद मानिए तो वडा दोप आवे।

गुण है ते तो कोऊ द्रव्यके आश्रय हैं। जाकै आश्रय सोही द्रव्य अर द्रव्यकू गुणनितै भेदही मानिए अर द्रव्यमे गुणनिके मिले मानिए तो पहले गुणनिविना द्रव्यका स्वरूप तो कैसे था अर द्रव्यविना गुण कहा तिष्ठै थे। तदि दोऊनिका नाश होय तातै द्रव्यते गुण भिन्न नही द्रव्य गुणस्वरूपही हैं द्रव्यके अर गुणनिके प्रदेशनिकरि भेद नही ऐसा एकपणा है। अर प्रदेशनका भेदरूप अन्यपणाभी नाही अर अनन्यपणाभी नाही है। जैसे एक परमाणुके एक अपना प्रदेशकरि सहित अभिन्नपणाते अन्यपणा नही है तैसे एक परमाणुके अपने स्पर्श रस गध वर्णादिगुणनिकरिकैभी भिन्नपना नही है।

वहुरि जैसे अत्यत दूरवर्ती सह्याचल पर्वत अर विध्याचल पर्वत इनकी ज्यो तो द्रव्य गुणनिके अन्यपणाहू नाही हैं। अर अत्यत मिलेरहे जे दुग्ध अर जल इनकी जौ अनन्यपणा नाही है। जातै अत्यत मिले हुए हू दुग्धजलप्रदेशनिके भिन्नपणाते अनन्यपणाकू नही धारै है। अर सज्ञा सख्या लक्षण विषयादिकरि द्रव्यके अर गुणनिके भेद है तोहू सह्याचल विध्याचलकीज्यो प्रदेशनकरि भेद नही है। अब कोऊ कहे। लोकमे कहे है ए द्रव्यके [illegible] कहनेतै जानिए है जो द्रव्य भिन्न है अर गुण भिन्न है सो नही हैं। जातै द्रव्य

प्रदेश सस्थान सख्या विषय अन्यपणामेभी होय अर अनन्यपणामेहू पाईए है ।

जैसे देवदत्तके गौ है इहा देवदत्त भिन्न है अर गौ भिन्न है इहा अन्यत्वमे षष्ठी विभक्तिकरि व्यपदेश है तैसे वृक्षके शाखा है द्रव्यके गुण है ऐसे अनन्यपणामेभी षष्ठीव्यपदेश है। जैसे देवदत्त जो है सो फल है ताहि अकुशकरिके धनदत्तके अर्थि वृक्षतै वाडीमे चूटै है । इहा अन्यत्वमे षट्प्रकार है । जातै देवदत्त कर्ता सो भिन्न है अर फल कर्म सो भिन्न है । अर अकुश करण है सो भिन्न है अर धनदत्तके अर्थि सप्रदान भिन्न है अर वृक्ष जो अपादान सो भिन्न अर वाटिका आधार सो भिन्न है ।

ऐसेही अनन्यत्वमे षट्प्रकारक अभिन्न है । जैसे मृत्तिका घटभाव जो है ताही स्वय आपहीकरि आपके अर्थि आपतै आपविषै करे है । अर ऐसेही आत्मा आपने आपकरि आपके अर्थि आपतै आपमे जाणे है ऐसे अनन्यपणामेहू कारकव्यपदेश है । जैसे ऊच देवदत्ताकी ऊची गौ इस प्रकार अन्यत्वमे सस्थान है तैसे ऊचा वृक्षके ऊची शाखा अर मूर्तद्रव्यका मूर्तगुण ऐसे अनन्यत्वमेभी सस्थान होय है ।

जैसे एक देवदत्तके दश गाय है ऐसे अन्यत्वमे सख्या है तैसे एकवृक्षके दश शाखा है एक द्रव्यके अनत गुण है ऐसे अनन्यत्वमेभी सख्या है । जैसे गुवाडामे गाय है ऐसे अन्यत्वविषै विषय है । तैसे वृक्षमे शाखा है द्रव्यमे गुण है ऐसे अनन्यत्वमेभी विषय है । तातै व्यपदेशादिक है ते द्रव्यगुणनिके वस्तुपणाकरि भेद नही साधे है । वस्तुपणाकरि एकही है । अब वस्तुपणाकरि भेदका अर अभेदका उदाहरण कहे है । जैसे धनका अस्तितत्व भिन्न है अर पुरुषका अस्तित्व भिन्न है अर धनका सस्थान कहिए आकार सो भिन्न है अर पुरुषका सस्थान भिन्न हैं ।

वहुरि धनकी सख्या भिन्न है अर पुरुषकी सख्या भिन्न है । अर धन भिन्नविषयमे प्रवर्त्तै है अर पुरुष भिन्नविषयमे प्रवर्त्तै है । ऐसे धनके अर पुरुषके वडा भेद है तोहू धनका सबधकरि धनी ऐसा नाम पृथक्प्रकारकरि पावे है । बहुरि जैसे ज्ञानका अस्तित्व अर पुरुषका अस्तित्व भिन्न नही अर पुरुषका सस्थान अर ज्ञानका सस्थान भिन्न नही अर ज्ञानकी सख्या अर पुरुषकी सख्या भिन्न नही । अर ज्ञानका विषय अर पुरुषका विषय भिन्न नही तोहू पुरुषके ज्ञानी ऐसा नाम एकत्वप्रकारकरि करे है । ओठैहू जहा द्रव्यके भेदकरि कथन होय तहा पृथक्पणा है अर जहा भेदकरि कथन होय तहा एकत्वकरि कथन है बहुरि जो ज्ञानी आत्मा ज्ञानतै जुदाही होय तो जैसे अपना कतृअशविना जैसे परसीरहित देवदत्त काष्ठकू नही छेदी सकै तैसे किसी पदार्थकू जाननेकू नही समर्थ होय ज्ञानविना काहेतै जानै यो दोष आवे ।

वहुरि ज्ञान है सो जो ज्ञानीतै भिन्न नही होय तो कतृअशविना कोन जाने । जैसे देव-

दत्तरहित परसी काष्ट छेदनेकू समर्थ नही तैसे ज्ञानी जो आत्मा तिस विना ज्ञान जाननेकू नही समर्थ होय तदि ज्ञानकै अचेतनपना आया यो दोष आयो ।

बहुरि ज्ञान अर ज्ञानी दोऊनिके संयोग मिलिकरिकैभी चेतनपणा प्रगट नही होयहै ज्ञानगुणविना तो ज्ञानीका अभाव है। अर आत्माविना निराश्रय गुणका अभाव है। तातै आत्माविना ज्ञान कहू सिद्ध होजाय अर ज्ञानविना आत्मा सिद्ध होजाय तो दोऊनिका सयोगभी सिद्ध होय सो भिन्न कहू सिद्धहै नही ।

बहुरि केइक एकाती ऐसे कहे है। जो आत्मा अर ज्ञान दोऊनिकै भेद है परतु समवाय नाम एकपदार्थ है सो ज्ञानकू अर आत्माकू युक्त करिदेहै समस्त गुणगुणीनिकू समवायपदार्थ जोडेहैं। ऐसे मानेहैं ताकू कहेहै। जो तुम आत्मातै ज्ञानकू भिन्न माना हो अर ज्ञानका समवायतै आत्माकू ज्ञानी माना हो सो नही बणि सकैहै। सो पूछेहैं ज्ञानका समवाय पूर्वै नही भया तदि आत्मा ज्ञानी था की अज्ञानी था। जो या कहोगे ज्ञानका समवाय भये पहलाभी आत्मा ज्ञानी था तदि तो ज्ञानका समवाय मानना निष्फल है पहलाही ज्ञानी था। अर कहोगे पहला अज्ञानी था तो पूछेहैं। अज्ञानका समवायकरी अज्ञानी था की अज्ञानकरि सहित एकपणाही था।जो अज्ञानसमवायतै तो अज्ञानी नही होसकै जातै अज्ञानीकै अज्ञानसमवाय निष्फल है। अर ज्ञानका समवायविना ज्ञानी था नही। तातै अज्ञानकरिकै सहित एकपणा अवश्य सिद्ध भया। अर ज्ञानकरि सहित एकपणा सिद्ध भया। तदि तैसेही ज्ञानकरि सहितहू आत्माका एकपणा सिद्ध होयहै। तदि तुमारा समवायतै सबध मानना वृथा है ।

जातै जैनीनिकै तो जो द्रव्यकै अर गुणनिकै एक अस्तित्वपणा सोही तथा अनादिनिधनवृत्तिपणा सोही समवायहै। अर जो समवायकू एकपदार्थही भिन्न माने सो नहीहै। अन्यमती समवायपदार्थकू न्यारा मानेहै। जो जगतमै एक समवाय है सो अग्निमै उष्णगुणका समवाय करेहै [illegible] ज्ञानगुणका समवाय करेहै। ऐसे समस्तपदार्थनमै गुणका जोड समवाय करेहै। [illegible] करेहै। जो जगतमे वस्तु तो अनत है अनतनिमै गुण जोडनेकू एकाकी समवाय कैसे समर्थ होय। अर समवाय तो जड है अचेतन है। एक है सो उष्णगुणका समवाय एकहीमे कैसे [illegible] अर [illegible]गुणका समवाय जलहीमे अर ज्ञानगुणका समवाय आत्माहीमै करनेका ज्ञान जड [illegible] ऐसे समवायपदार्थमे कैसे आया तातै समवायतै गुणगुणीकी सयुक्तता मानना [illegible]है। जैसे परमाणूविषै वर्ण रस स्पर्श गध गुण प्ररूपणकरिएहै ते गुण परमाणुतै अविभक्त [illegible] भिन्नही है। तैसेही ज्ञान दर्शन गुणहू आत्मविषै अविभक्तप्रदेशपणाकरि अन्य [illegible]है। नामादिकनिकरि भिन्न है तोहू स्वभावतै द्रव्यतै अपृथक्पणाही जानना। [illegible] गुणनिकै अभेदपणा दिखाया।

[illegible] जो पर्याय है सोहू द्रव्यते भिन्न नही है द्रव्यका स्वभावही है। द्रव्य तो पर्याय

विना कहू देखिए नही अर पर्याय द्रव्यविना नही। यद्यपि द्रव्यके अर पर्यायके सज्ञा सख्या लक्षणादिकरि भेद है तोहु वस्तुपणाकरि भिन्न नही है। जैसे मृत्तिका नाम द्रव्य है तिसके घटादिक पर्याय है। सो मृत्तिकाके अर घटादिकके कथचित् सज्ञाकरि भेद है वाकू मृत्तिका कहिए वाकू घट कहिए। अर सख्याकरि भेद है मृत्तिकाको पिड एक था ताके घट पाच गिणिगए तातै सख्याकरिभी भेद है। वहुरि मृत्तिकाका लक्षण तो पिडादिकरूप अन्य हैं अर घटका लक्षण कवुग्रीवाकारादिपणा भिन्न है। वहुरि मृत्तिकाका प्रयोजन तो लेपन हस्तधोवनादि अन्य है। अर घटका जलधारणादि प्रयोजन अन्य है। ऐसे द्रव्यके अर पर्यायके सज्ञा सख्या लक्षण प्रयोजनादिककरि कथचित् भेद होतैहू वस्तुपणाकरि भेद नही है वाही एक मृत्तिका है। ऐसे गुणपर्यायवान्पणा द्रव्यका लक्षण कह्या। अव कालद्रव्यकू कहे है।

कालश्च ॥३९॥

अर्थप्रकाशिका– काल है सोभी दव्य है। इहा द्रव्य है ऐसा वाक्य शेष है इस लोकाकाशके समस्तप्रदेशनिविपै एक कालद्रव्य भिन्नभिन्न तिष्ठै है परस्पर मिले नही एकएक परमाणुमात्र अवगाहनाकू धारते असख्यात कालाणुद्रव्य है। ते कालद्रव्य अमूर्त हे स्पर्श रस गध वर्ण गुणरहित है। वहुरि ज्ञान दर्शनादि चेतनासबधी गुणरहित है तातै अचेतन है। प्रदेशनिका समूह इनिके नही तातै एकएक प्रदेशमात्र भिन्नभिन्न मिलनेकी शक्तिरहित रत्ननिकी राशिकी ज्यो असख्याते तिष्ठै है तातै अकाय है। क्षेत्रतै क्षेत्रातरमे गमनरहित है तातै निष्क्रिय है। उत्पाद व्यय ध्रौव्य युक्त सत्पणा अर गुणपर्यायवान्पणा द्रव्यके लक्षण तिनकरि सयुक्त है तातै कालभी द्रव्य है।

वहुरि कालके ध्रौव्यपणा तो स्वाधीनस्वभावकी व्यवस्थातै है। अर उत्पाद व्यय एक निमित्ततैभी है अर अगुरुलघुगुणकी वृद्धी हानिकी अपेक्षाकरि स्वनिमित्ततैभी है। तथा कालद्रव्यके गुणहू साधारण असाधारण दोउरूप है। तिनमे वर्तना हेतुपणा तो असाधारण है। अर अचेतनपणा अमूर्तपणा सूक्ष्मपणा अगुरुलघुपणा ए साधारण गुण है। उत्पाद व्यय लक्षण पर्याय हैं। समस्तद्रव्यनिकी समयसमय वर्तनापरिणमनका बहिर्निमित्त कालद्रव्य है। अब व्यवहारकालका प्रमाणनिश्चयके अर्थि सूत्र कहे है–

सोऽनन्तसमयः ॥४०॥

अर्थप्रकाशिका– काल है सो अनत है समय जाके ऐसा है। यद्यपि वर्तमानकाल समयमात्र है तोहू अतीत अनागत अपेक्षा अनत समय है। समय है सो अतिसूक्ष्म हैं। ताका समूह सो आवली घटिका इत्यादि व्यवहारकाल है। अथवा अनतपर्यायनिकी वर्तनाका

कारण एक कालाणु है तातै मुख्यकालकैहू अनतसमयपणा वर्त्तैहै । अब गुणपर्यायवान् द्रव्य कह्या तिनके गुणका लक्षण कहनेकू सूत्र कहे है–

द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥४१॥

अर्थप्रकाशिका– जे द्रव्यके तो आश्रय है अर आप अन्यगुणनिकरि रहित है ते गुण है। जे द्रव्यकू आश्रयकरि नित्यही वर्त्ते ते गुण है । अर पर्याय है ते कदाचित् होय कदाचित् अन्य होय । अर गुण है ते द्रव्यमे नित्य है । गुणविना द्रव्य नही है । जीवके अस्तित्वादिक ज्ञान-दर्शनादिक गुण है । पुद्गलके अचेतनत्वादिक तथा रूपादिक गुण है । इत्यादि समस्त द्रव्यनिमे जानना । अत्र पूछे है परिणामशद्व वारवार कह्या सो परिणाम कहा है यातै सूत्र कहे है–

तद्भावः परिणामः ॥४२॥

अर्थप्रकाशिका– धर्मादिक द्रव्यनिका जिस स्वरूपकरि होना सो तद्भाव है सो ही परिणाम है। सो परिणाम दोय प्रकार है। एक आदिमान् परिणाम है। एक अनादिमान् परिणाम है। तहा धर्मादिकनिके जो गति हेतुपणा इत्यादिक अनादि परिणाम है सो सामान्यअपेक्षाकरि है। विशेषकी अपेक्षा वाह्यनिमित्तादिकतै परिणाम होइ तातै आदिमानूहू है। तिनमे कोऊ ऐसा जाने जो धर्म अधर्म आकाश काल इनिविषै तो अनादिही परिणाम है अर जीवपुद्गलनिमे आदिमान् है सो ऐसे नही मानना समस्तद्रव्य अनादि है तातै अनादिही परिणाम मानना अन्यथा नित्यपणाका अभावका प्रसग आवे । तिनमे च्यार द्रव्यनिका परिणाम तो आगम गम्य है। अर जीवपुद्गलके परिणाम कथचित् प्रत्यक्षगम्यभी है ।

पर्याय दोय प्रकार है । एक व्यजनपर्याय एक अर्थपर्याय । तिनमे व्यजनपर्याय है ते तो मूर्त है अर वचनगोचर है चिरस्थायी है विनाशीक है अर स्थिर है । अरअर्थपर्याय है सो सूक्ष्म है क्षणक्षणप्रति विध्वसी, वचनके अगोचर है । इहा धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य आकाशद्रव्य कालद्रव्य इनिके तो अर्थपर्याय है । अर जीवद्रव्य अर पुद्गलद्रव्य इनिके अर्थपर्याय अर व्यजनपर्याय दोऊ है ।

अरूपी एक रूपी अर धर्म अधर्म आकाश इनिकै एकद्रव्यपणा अर क्रियारहितपणा अर धर्म अधर्म एकजीवकै लोकाकाशप्रमाण असख्यातप्रदेश कहे अर आकाशद्रव्यकै अनतप्रदेश कहे पुद्गलस्कधकै सख्यात असख्यात अनत प्रदेश कहे। अणुकै प्रदेश नाही ऐसे कह्या। बहुरि आकाशका अवकाशदान उपकार अर धर्मका गति उपकार अधर्मका स्थिति उपकार पुद्गलका शरीरादि उपकार जीवनिकै परस्पर उपकार कालका वर्त्तना उपकार कह्या। बहुरि पुद्गलके स्पर्शादिगुण स्कंधादिक पर्याय कहे अणु स्कंध भेद कहे। बहुरि द्रव्यका सत् सामान्यलक्षण कह्या नित्यताका स्वरूप कह्या, मुख्य गौणकरि नयका लगावना कह्या बहुरि पुद्गलकै स्कध होनेका विधान कह्या बहुरि द्रव्यका विशेषलक्षण कह्या। बहुरि कालद्रव्यकू कह्या अर गुण-पर्यायका स्वरूप कह्या।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पंचमोऽध्यायः ॥५॥

ऐसे तत्वार्थका है ज्ञान जातै ऐसा दशाध्यायरूप जो मोक्षशास्त्र तामै पाचमा अध्याय समाप्त भया।

– दोहा –

है जातै तत्त्वार्थका। अधिगम सबसुखदाय ॥
मोक्षशात्र मंगलमय। नमो पंचम अध्याय ॥५॥

पंचम अध्याय समाप्तः

अर्थ प्रकाशिका

(तत्वार्थ टीका)

पं. सदासुखदास विरचित

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्य ॥

अथ षष्ठोऽध्यायः ॥

आगे छठा अध्यायका प्रारभ करे है।

– दोहा –

आस्रव आगे कर्मका त्यागि सुभले प्रकार ॥
पायो पद अविकार जिन ध्यावों स्तुतिविस्तार ॥१॥

अजीवपदार्थके अनंतर आस्रव कहने योग्य है याते आस्रवकी प्रकटकताकै अर्थि सूत्र है।

कायवाङ्मनःकर्म योगः ॥१॥

अर्थप्रकाशिका—काय वचन मन इनिकी कर्म कहिए क्रिया सो योग है। तहां वीर्यान्तरायकर्मका क्षयोपशम होतै औदारिकादिक सप्तप्रकार काय वर्गणामेतै अन्यतम वर्गणाका आलंबनकी अपेक्षाकरि आत्मप्रदेशका सकप होना सो काययोग है। वहुरि वीर्यांतराय अर मतिअक्षरादि आवणरका क्षयोपशमकरि प्राप्त भया वाग्लब्धिकी निकटता होतै जो वाग्रूप परिणमनकै सन्मुख जो आत्मा ताका प्रदेशनका जो हलनचलन सो वाग्योग है। वहुरि अभ्यतर वीर्यांतराय अर नोइद्रियावरणका क्षयोपशमस्वरूप मनोलब्धिकी निकटता होतै अर वाह्य निमित्तनिमित्तका आलवन होतै मन परिणामकै सन्मुख आत्माका प्रदेशनिका चलनवलन सो मनोयोग है। ऐसे क्षयोपशमलब्धि अभ्यंतर हेतु है। अर केवलीकै क्षयहेतु होतैहू त्रिविध योग

है। जातै क्रियारूप परिणमन करता आत्माकै तीन प्रकार पुद्गल वर्गणाका आलवनकी अपेक्षा जो आत्मप्रदेशनिका सकप होना सो योग है। सो सयोगीगुणस्थानपर्यंत है अयोगीकै अर सिद्धनिकै त्रिविध वर्गणाका आलवनको अभाव तातै योग नही। ऐसे मन वचन काय तीन योग है तेही आस्रव है यातै सूत्र कहेहै–

स आस्रवः ॥२॥

अर्थप्रकाशिका– कह्या जो योग सो आस्रव है। योगके निमित्ततै आत्माकै कर्मका आगमन होहै तातै योग है सोही आस्रव है। जैसे सरोवरकै जल आवनेका द्वार होय सो जल आवनेकू कारण है ताकू आस्रव कहिएहै। तेसे इहाहू योगद्वारकरि आत्माकै कर्म आवेहै यातै योगभी आस्रव है ऐस कहिए है। अथवा। जैसै गीला वस्त्र है सो समस्त तरफतै आया रजकू ग्रहण करेहैं तैसै कषायरूप जलकरि गीला आत्मा योगनिकरि ग्रहणकीया कर्मकू समस्त प्रदेशनिकरि ग्रहण करेहै। अथवा जैसै अग्निकरि तप्तायमान लोहका पिड जलविषै क्षेप्याहुवा सर्व तरफतै जलकू ग्रहणकरेहै तैसै योगनिकरि तप्तायमान जीव समस्ततरफतै कर्मरूप जलकू ग्रहण करे है। सो कर्म दोय प्रकार पुण्यपापरूप है ताका हेतु कहनेकू सूत्र कहेहै–

शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥३॥

अर्थप्रकाशिका– शुभ योग पुण्यका आस्रव करेहै। अशुभयोग पापका आस्रव करेहै तहां प्राणीनिका घात करना असत्य बोलना परधनहरण ईर्षापरिणामकू आदि लेय अशुभ योग है यातै पापका आस्रव होयहै। वहुरि प्राणीनिका उपकार रक्षा करना सत्य बोलना पचपरमेष्ठीकी भक्ति इत्यादि शुभयोग है इनितै पुण्यका आस्रव होय है। इसका विशेष ऐसा। जो प्राणीनिका घात करना, विनादीया परधनहरण करना, मैथुनप्रयोगादि अशुभ काययोग है। अनृतवचन कठोरवचन असत्यवचन इत्यादिक अशुभ वाग्योग है। हिंसा ईर्षा ग्लानिका चितवन सो अशुभ मनोयोग है। ऐसे अशुभयोगके असख्यातविकल्प है। बहुरि इनतै उलटा सो शुभयोग है। यद्यपि परिणामके भेद असख्यातही है तथापि अनतानत जीवनिकी अपेक्षा अनत भेद है।

अत्र कहोगे। जैसे सुवर्णमय सांकल बेडी तथा लोहमय बेडी आत्माकै स्वतत्रताका अभाव दोऊ तुल्य करेहै। तैसे पाप अर पुण्य आत्माकू पराधीन करनेको दोऊ निमित्त तुल्य है तातै इनकू शुभ अशुभ भेद रूप कैसे कहे। ताका समाधान। इष्ट अनिष्ट गति जात्यादिक रच[illegible]। अत्र इहा कोऊ कहे। जो आयुकर्मविना सप्तकर्मका आस्रव निरतर होय है। [illegible] परिणाम पुण्यहीका कारण अर अशुभ पापहीका कारण कैसे कहोहो। ताका उत्तर। [illegible] संसारी जीवनिकै सप्तकर्मका आस्रव निरतर होय है तथापि ऐसे जानना जो सक्लेश-

परिणामतै देव मनुष्य तिर्यक् आयुविना एकसो पैंतालीस कर्मकी प्रकृतिनिकी स्थिति बहुत वढिजाय है अर तीन आयुकी स्थिति घटिजाय है अर मंद कषायके परिणामतैं समस्त कर्मकी स्थिति घटिजाय है अर तीन आयुकी स्थिति वढीजाय है। बहुरि तीव्र कषायकरि शुभप्रकृतिनिमैं अनुभाग जो रस सो घटिजाय है। अर असातावेदनी आदिक अशुभप्रकृतिनमैं अनुभाग वढिजाय है। बहुरि मंदकषायके प्रभावतैं शुभ जे पुण्यप्रकृति तिनमैं रस वढिजाय है। अर पापप्रकृतिनिमैं रस घटिजाय है। तातैं स्थिति अनुभागकी अपेक्षाकरि शुभपरिणामनितैं पुण्यास्रव कह्या अर अशुभपरिणामतैं पापास्रव कह्या। जातैं स्थिति अनुभागही प्रधान है। स्थितिविना आस्रव कुछ कार्यकारी नाही। अर अनुभाग जो रस तिसविना थोथी प्रकृति यहा कार्य करै। तातैं शुभपरिणामनितैं अशुभकर्मनि स्थिति घटिजाय अर अनुभाग जो रस सो घटिजाय तदि अशुभका आस्रव नही आने तुल्यही है। अर अशुभपरिणामनितैं पुण्प्रकृतिनिकी स्थिति अनुभाग दोऊ घटिजाय अर पापप्रकृतिनिकी स्थिति अनुभाग वढिजाय तदि स्थिति अनुभागविना आस्रव निष्फल रह्या। सोही पूर्वाचार्यकृत वार्त्तिकमैं गाथासूत्र लिख्या है–

गाथा– सव्वठ्ठिदीणमुक्कस्सा गोदुउक्कस्स सकिलेसेण।
विपरीदे दु जघण्णो आयुगतिगवज्ज सेसाण ॥१॥

अर्थ– समस्तकर्मनिकी उत्कृष्ट स्थिति सक्लेशपरिणामनितैं होय है। विशुद्धपरिणामनितैं जघन्यस्थितिवध होय है। मनुष्य तिर्यक् देव आयुकू वर्जिकरि इन तीनी आयुकी स्थिति सक्लेशपरिणामनितै घटै है विशुद्धनातैं वढै है।

गाथा– सुभपगदीण विसोधिए। तिव्वमसुहाण सकिलेसेण।
विपरीदे दु जघण्णो। अणुभागो सव्वपयडीण ॥१॥

अर्थ– विशुद्धपरिणामनिकरि शुभप्रकृतिनिमे रस अधिक होजाय है। अशुभप्रकृतिनिमे मंद रस होय है। अर सक्लेशपरिणामकरि शुभप्रकृतिनमे रस मंद होय अशुभमे तीव्र होय तातैं कषायही ससारका कारण है। अब यो आस्रव सर्व ससारनिके समानफलका हेतु है कि कुछ विशेष है। यातैं सूत्र कहे है–

सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः ॥४॥

अर्थप्रकाशिका– कषायसहित जीवके सांपरायिक कहिए ससारका कारण ऐसा आस्रव होय है। अर कषायरहित जीवके ईर्यापथ कहिए स्थितिरहित आस्रव होय है। इहा स्वामीके भेदतैं आस्रवमे भेद है आस्रवके दोय स्वामी हैं। सकषायी जीव अर अकषायी जीव। जे आत्माकू "कषति" कहिए घातैं ते क्रोधादिक कषाय है। तथा जैसे फिटकडी लोद हरडैं ए कषायले द्रव्य वस्त्रके रंग लगनेकू कारण है। तैसे क्रोधादिकषाय आत्माके कर्मरूप रंग

लगनेकू कारण है तातै कषाय कहिए है । ऐसे कषायसहित जीवके सापराय कहिए ससारका कारण आस्रव होय है । अर कषायरहित जे उपशातकषाय क्षीणकषाय सयोगीके योगका वशकरि आस्रव होय है सोही ईर्यापथ आस्रव है स्थिति एकसमयहूकी नही पावे है जैसे मार्ग होय गमनकरि जाय ठहरैनही । अव बहुत भेदरूप जो सांपरायिक आस्रव ताके भेद कहनेकू सूत्र कहे है-

इन्द्रियकषायाव्रतक्रियाः पंचचतुःपंचपंचविंशतिसंख्याः पूर्व्वस्य भेदाः ॥५॥

अर्थप्रकाशिका— इद्रिय पाच-कषाय च्यार-अव्रत पाच क्रिया पचीस ए सव है ते "पूर्व्वस्य" कहिए पहिले कह्या जो सापरायिक आस्रव ताके भेद है । तहा पाच इद्रिय तो पहिले कह्या सोही इद्रियनिके विषयविषै रागद्वेषरुप प्रवर्त्तना । बहुरि कषाय क्रोधादिक वहुरि अव्रतांहिसादिक आगे कहसी—

अव इहा पचीस क्रिया कहे है । तहा चैत्य गुरु अर प्रवचन जो आगम इनिकी पूजादिलक्षण सम्यक्त्वक्रिया है—१, अन्य कुदेवतानिका स्तवनादिरूप मिथ्यात्व क्रिया है—२, गमनागमनादिरूप प्रवर्तन का यादी करि सो प्रयोगक्रिया है—३, वहुरि वीर्यातराय वा ज्ञानावरणका क्षयोपशम होते सतै अगोपागका अवलवनतै आत्माके काय वचन मनके योग रचनामे समर्थ ऐसे पुद्गलनिका ग्रहण सो समादानक्रिया है । अथवा सयमीपुरुषके असयमके सन्मुखपणा सो समादानक्रिया है—४, वहुरि ईर्यापथ जो गमनकर्म ताकै निमित्त क्रिया सो ईर्य्यापथक्रिया है—५, ऐसे पाच क्रिया कही । वहुरि क्रोधके वशते जो क्रिया सो प्रादोषिकी क्रिया है । जातै क्रोध प्रदोषकू कारण है । कोऊ अपना इष्ट स्त्री वित्तहरणादिक निमित्त विना ही चुगल दुष्ट क्रोध करे है जैसे दृष्टिविषादिक स्वभावतैही होय है ।

तथा दुष्टनिकी चेष्टाविना निमित्तही क्रोधादिरूप है निमित्तवान् प्रदोष है—१, दुष्टपनाके अर्थि उद्यम करना सो कायकी क्रिया है—२, हिसाके उपकरण शस्त्रादिक ग्रहण करना सो अधिकरणक्रिया है—३, अपने वा परके दु.खकी उत्पत्तिको कारण सो पारितापिकी क्रिया है—४, आयु इद्रिय वल प्राणका वियोग करनेतै प्राणातिपातिकीक्रिया है—५, ऐसे पच क्रिया कही ।

वहुरि प्रमादी जीवके रागार्द्रीकृतपणातै रमणिक रूपके अवलोकनका अभिप्राय सो दर्शनक्रिया है—१, वस्तुके स्पर्शने विषै परिणामतै प्रवर्त्तना सो स्पर्शक्रिया है-२, विषयके अपूर्व नवीननवीन कारण उपजावना सो प्रात्ययिकी क्रिया है—३, वहुरि स्त्रीपुरुष पशूनिके बैठने सोवने प्रवर्त्तनेके देशविषै मलमूत्रादिक क्षेपना सो समतानुपात क्रिया है—४, विना देखी विना सोधी भूमिविषै कायादिकका निक्षेप करना वैठना सोवना सो अनाभोग क्रिया है—५, ऐसे पाच क्रिया है ।

वहुरि जो परके करने योग्य क्रियाकू आप करे सो स्वहस्तक्रिया है–१,

पाप जाकरि ग्रहण होय ऐसी प्रवृत्तीकू भला जानना सो निसर्गक्रिया वा आलस्यते ाशस्तक्रियाका नाही करना सो निसर्गक्रिया है–२, परकरि आचरण किया जो पापादिक ाका प्रकाश करना सो विदारणक्रिया है–३, चारित्रमोहके उदयते आवश्यकादिकनिविषै रमागमकी आज्ञाप्रमाण प्रवर्त्तन करनेकू असमर्थ होई अन्यथा प्ररूपण करना सो आज्ञाव्यापा-इका क्रिया है–४, मूर्खतातै वा आलस्यकरिके परमागमकरि उपदेशकरी विधिमे अनादर करना ो अनाकाक्षा क्रिया है–५, ऐसे पाच क्रिया है ।

वहुरि छेदन भेदन छोलन इत्यादि क्रियामे तत्परपना अथवा अन्यकरिके आरभ रता सता हर्ष करना सो आरभक्रिया है–१,

परिग्रहकी रक्षाके अर्थि प्रवर्त्तना सो परिग्राहिकी क्रिया है–२, ज्ञानदर्शनादिविषै ाटरूप उपाय सो मायाक्रिया है–३, कोऊ मिथ्यात्वका कार्य करता होय ताकू प्रशसादिकरिके ; करे जो वहुत भले करी ऐसे मिथ्यात्वकू दृढ करे सो मिथ्यादर्शन क्रिया है–४, सयमका तक कर्मके उदयके वशतै निवृत्तिरूप नही होना सयमरूप नही प्रवर्त्तना सो अप्रत्या-ानक्रिया है–५, ऐसे सर्व पचीस क्रियाके नाम कहे । ए आस्रवके कारण है । अव स्रवका विशेष जनावनेकू सूत्र कहे है–

तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीर्यविशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥६॥

अर्थप्रकाशिका– तीव्रभाव मदभाव ज्ञातभाव अज्ञातभाव अधिकरण वीर्य इनिके शेषतै तिस आस्रवमै विशेष है । बाह्य अभ्यतर कारणनिकी उदीरणाके वशतै अतिवृद्धिरूप धादि कषायनिकरि तीव्र परिणाम सो तीव्रभाव है । अर कषायनिकी मदतातै मदभाव हैं । ऊ प्राणीका घात होतै ज्ञान भया जोमै प्राणोका घात कीया सो ज्ञातभाव है। अथवा यो प्राणी रने योग्य हैं ऐसा जानिकरी मारनेमे प्रवृत्ति करना सो ज्ञातभाव हैं । वहुरि मद्यादिककरी इद्रियनिकै मोहके करनेवाला मद तातै वा असावधानता है लक्षण जाका ऐसा प्रमादतै ानादिकनिमै विनाजाणे प्रवृति करना सो अज्ञातभाव है । जाकै आधार पुरूषनका प्रयोजन ा सो अधिकरण है द्रव्यकी शक्तीका विशेष सो वीर्य हैं । इन छहके तफावततै आस्रवविषै ावत होयहै । ए जहा जैसा होय तहा तैसा आस्रव होयहै । जातै कारणके भेदतै कार्यमे हैही । अव कह्या जो अधिकरण तामै भेद दिखावेहै–

अधिकरणं जीवाजीवाः ॥७॥

अर्थप्रकाशिका– आस्रवका आधार जीव अर अजीव हैं । इहा वहुवचन कहनेकरि ातिस पर्यायकरि सहित जीव अजीव अधिकरण है। अव प्रथम जीवाधिकरणका भेद कहे है–

आद्यं संरम्भसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतकषाय विशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥८॥

अर्थप्रकाशिका– आदिका जीवाधिकरण है सो सरभ समारभ आरंभ ए तीन अर मन वचन काय ए तीन, अर कृत कारित अनुमोदना ए तीन, क्रोध मान माया लोभ ए कषाय च्यार, इनिकौ परस्पर गुणे एकसो आठ भेद रूप है । हिंसादिकविषै उद्यमरूप परिणाम सो संरभ हैं। हिंसादिकका साधन जे कारण तिनमै अभ्यास करना सामग्री मिलावना सो समारभ हैं । हिंसादिकनिमै प्रवर्तन करना सो आरभ है । ऐसे ए तीन वहुरि मन वचन कायके भेदतै योग तीन, वहुरि कृत कहिए आप स्वाधीन होय करै अर परतै करावै सो कारित है अर अन्य कोऊ करै ताकू आप भला जानै सो अनुमत है ऐसे ए तीन वहुरि क्रोध मान माया लोभ ए च्यार कषाय एते विशेषनिकरि परस्पर सबधरूप करिए तदि एकसो आठ भेद होइ है ।

सो ऐसे । क्रोधकृत कायसरभ–१, मानकृत कायसरभ–२, मायाकृत कायसरभ–३, लोभकृत कायसरभ–४, क्रोधकारित कायसरभ–५, मानकारित कायसरभ–६, मायाकारित कायसरभ–७, लोभकारित कायसरभ–८, क्रोधानुमत कायसरभ–९, मानानुमत कायसरभ-१०, मायानुमत कायसरभ–११, लोभानुमत कायसरभ–१२, ऐसै कायसरभके भेद भए ।

ऐसैही वचनसरभके वारह भेद हैं अर ऐसेही मन.सरभके वारह भेद है । सव मिलि सरभके छत्तीस भेद भए । ऐसेही समारभके अर आरभके छत्तीस छत्तीस भेद होयहै । सव मिलि जीवाधिकरणके एकसो आठ भेद होय है ।

वहुरि सूत्रमे च शब्द है सो अतरग भेदके समुच्चयकै अर्थि है । ताकरि अनतानुबधी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण सज्वलन जे कषायके च्यार भेद तिनकरि गुणे च्यारसे वत्तीस भेद होय है । ऐसे जीवके परिणामके विशेषतै आस्रवमै भेद है । अव अजीवाधिकरणके भेद कहेहै–

निर्वर्त्तनानिक्षेपसंयोगनिस्सर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परम् ॥९॥

अर्थप्रकाशिका– निवर्त्तना निक्षेप सयोग निसर्ग ए च्यार है । तहा निर्वर्त्तनाके दोय भेद । निक्षेपके च्यार भेद । सयोगके दोय भेद । निसर्गके तीन भेद । ऐसे अजीवाधिकरणके भेद है । तहा निपजाइए सो निर्वर्त्तना है सो दोय प्रकार है । शरीरतै कुचेष्टा उपजावना सो देहदुःप्रयुक्त नाम निर्वर्त्तना है–१, अर हिंसाके उपकरण शस्त्रादिककी रचना करना सो उपकरणनिर्वर्त्तना है–२, तथा एक मूलगुण निर्वर्तना एक उत्तरगुणनिर्वर्तना । तहां मूल पचप्रकार शरीर वचन मन श्वासनिश्वासका निपजावना सो मूलगुणनिवर्तना है । अर उत्तर जो काष्ठपुस्त

कहिए मृत्तिकादिक अर चित्रकर्मादि निपजावना सो उत्तरगुण निर्वर्तना है। ऐसैंहू दोय प्रकार निर्वर्तना है।

वहुरि निक्षेप कहिए धरिए सो निक्षेप है। ताके सहसानिक्षेपाधिकरण–१, अनाभोगनिक्षेपाधिकरण–२, दु प्रमृष्टनिक्षेपाधिकरण–३, अप्रत्यवेक्षितनिक्षेपाधिकरण–४, ऐंसैं निक्षेप च्यार प्रकार है।

तहां भयादिककरिकैं वा अन्यकार्य करनेकी शीघ्रताकरिकैं जो पुस्तक कमडलु शरीर तथा शरीरका मलादिक क्षेपिए सो सहसानिक्षेपाधिकरण है।

१, बहुरि शीघ्रता नही होतैंहू इहा जीव है वा नही हैं ऐंसा विचार नहीकरै अर अवलोकनविना ही पुस्तक कमडलु शरीर अर शरीरसबधी मलादिक निक्षेपण करिए तथा जहा वस्तु धरि चाहिए तहा नही धरना जैसे तैसे अनेक जाइगा धरना सो अनाभोगनिक्षेपाधिकरण है।

२, वहुरि जो दुष्टताकरि वा यत्नाचाररहितपणाकरि जो उपकरण शरीरदिकनिका क्षेपना सो प्रदुष्टनिक्षेपाधिकरण है।

३, बहुरि जो विनादेख्या वस्तुका निक्षेपण करना सो अप्रत्यवेक्षितनिक्षेपाधिकरण है। ऐंसे च्यारप्रकार निक्षेप कह्या। वहुरि सयोजना जो सयोग सो दोय प्रकार हैं। तहां जो शीतस्पर्शरूप जो पुस्तक तथा कमडलु शरीरादिक तिनकू तावडाकरि तप्त जो पिछिका ताकरि पूछना सोधना इत्यादिक उपकरणसयोजना है। बहुरि पान जो जलादिक तिनक अन्यपानमैं मिलावना तथा भोजनमैं मिलावना तथा भोजनकू पानमैं मिलावना तथा अन्यभोजनमैं मिलावना सो भक्तपानसयोजना है।

निसर्गाधिकरण तीन प्रकार है। दुष्टप्रकार मनका प्रवर्तन करता सो मनोनिसर्गाधिकरण है–१, दुष्टप्रकार वचनका प्रवर्त्तन करना सो वाग्निसर्गाधिकरण है--२, दुष्टप्रकार कायका प्रवर्तन करना सो कायनिसर्गाधिकरण है।

भावार्थ– जीव अजीव दोऊ द्रव्यके आश्रयकरि कर्मका आगमन होय है तिन भावनिके ए विशेष कहेहैं। ऐसे सामान्य आस्रवका स्वरूप कहि अव ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्मके आस्रवके कारण कहेहैं–

तत्प्रदोषनिन्हवमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः ॥१०॥

अर्थप्रकाशिका-- ज्ञानदर्शनकैं विषैं तत्प्रदोष निह्नव मात्सर्य अतराय आसादना उपघात इनि भावनितैं ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्मका आस्रव होयहै। तहा कोऊ पुरुष मोक्षका कारण

ऐसा तत्वज्ञानकी कथनी करता होई ताकू श्रवणकरि ईर्षाभावतै प्रशंसा नहीकरै मौन राखै ताकू प्रदोष कहिए । वहुरि आपकू शास्त्रका ज्ञान होय अर कोऊ जाननेकै अर्थि आपकू पूछे इस वस्तुका स्वरूप कहा है तदि आप नटिजाय जो मै तो नही जानू ऐसा शास्त्रज्ञानका छिपावना सो निन्हव है । वहुरि आपकै शास्त्रका ज्ञान होई अर शिक्षायोग्य होई तोहू सिखावै नही जो सिखजायगा तो मेरी बराबरी करैगा ऐसे अभिप्रायकू मात्सर्य कहिए । वहुरि ज्ञानाभ्यास कोऊ करता होई तिसमै विघ्नकरिदे पुस्तकका तथा पढावनेवालाका तथा स्थानका विच्छेद वियोग करदे सो अतराय है । वहुरि परकरि प्रकाशन कीया ज्ञानको वर्जन करना अवार मती प्रकाशो इत्यादिक है सो आसादना है । वहुरि प्रशस्तज्ञानकू दूषण लगावना सो उपघात है । इनिकरि ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्मका आस्रव होय है । औरहू आचार्य उपाध्यायतै प्रतिकूलता अर अकालमै अध्ययन, श्रद्धानका अभाव विद्याके अभ्यासमै आलस्य तथा अनादरतै सूत्रका अर्थका श्रवण, धर्मतीर्थका लोप, वहुश्रुतीपणाका गर्व तथा मिथ्या उपदेश देना, वहुश्रुतीनीका अपमान करना, असत्यप्रलाप उत्सूत्रवाद करना, शास्त्रनिका वेचना, हिंसादिकमै प्रवर्त्तना ते समस्त ज्ञानावरण कर्मके आस्रवका कारण है ।

वहुरि परके देखनेमै मात्सर्य तथा अतराय करना तथा नेत्रनिका उत्पाटन, दृष्टिका गर्व, वहुतनिद्रा, दिवसमै शयन करना, आलस्यस्वभाव रहना, नास्तिकताका ग्रहण, सम्यग्दृष्टिकू दूषण लगावना, कुतीर्थनिकी प्रशसा करना, प्राणीनिका घात करना यतिजनाकी निंदा करना, इत्यादिक दर्शनावरण कर्मके आस्रवका कारण है । अव अन्य कर्मके आस्रवकू कहेहै–

दुःखशोकतापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभयस्थान्यसद्वेद्यस्य ॥११॥

अर्थप्रकाशिका– दुख शोक ताप आक्रदन वध परिदेवन एते आपके करे तथा परके करे तथा आपके परके दोऊनिके करे सो असातावेदनीय कर्मके आस्रवके कारण है । तहा पीडारूप परिणाम सो दुख है । अपने उपकारक द्रव्यका वियोग होतै जो परिणाममे मलीन होय तिसमे लीन अभिप्रायरूप होय चिंता खेदरूप निराश होना सो शोक है । वहुरि जो निंद्यकार्य करनेतै अपना अपवाद होनेतै अत करणकी कलुषतातै तीव्र पश्चानाप करना सो ताप है । कोऊ या कहै जो निंद्यकार्य कीया ताका तो पश्चाताप चाहिएही तो निंद्यकार्य करनेतै अपवादहूभी चाहिएही निंद्यकार्यका फल तो नरक तिर्यंचमै भोगना पडेगा इहा निंदा अपवाद होनेतै धर्मात्मा तो [illegible] मानेगा जो मै निंद्यकार्य कीया है मेरी निंदा अपवाद तिरस्कार चाहिएही अव पश्चाताप करेगा तो तीव्रकर्मका वध होयगा ऐसा विचारि क्लेशित नही होय है ।

वहुरि परितापतै उपज्या अश्रुपातपूर्वक विलापकरि रोवना सो आक्रदन है । वहुरि [illegible] इंद्रिय वल प्राणादिकका वियोग करना सो वध है । वहुरि ऐसा विलाप करे जो श्रवण

करनेवालेके करुणा उपजि आवे सो परिदेवन है। ऐसे दु ख शोक ताप आक्रदन वध परिदेवन ये दु'खादिक आप करे तथा परके दु खादि करे तथा आपके अर परके दोऊनिके करे ताके असातावेदनीयकर्मका आस्रव होय है। तथा औरहु कहे हैं। अशुभप्रयोग, परका अपवाद, परकी चुगली निर्दयता, परके आताप करना, अगोपागका छेदन, भेदन, ताडन, त्रासन, तर्जन भर्त्सन इत्यादि तथा परकी निंदा, अपनी प्रशसा करना तथा सक्लेश प्रगट करना. महाआरभ, महापरिग्रह धारणकरना तथा विश्वासघातता, वक्रस्वभावता, पापकर्मकरि जीविका करना निरर्थक परकू दड देना, विषमिलावना वा जाल पासी वागुरा पिजर वनावना, जीवनिके परके मारनेकू पकरनेकू यत्रनिका उपाय तथा खोटे प्रयोग शस्त्रनिका दान पापतै मिले भाव इत्यादि असातावेदनी कर्मके आस्रवका कारण है।

वहुरि इहा कोऊ प्रश्न करे जो दु खदिक आपके परके करनेतै असातावेदनीयका बध होई तो नग्न रहना अनशनादिक तप करना आतापन योगादि धरना इत्यादिकका उपदेश देना वा करना इसमेहू दु खादि उत्पन्न होय है तातै अपने कहनेमैही धर्मतीर्थमे विरोध आया, ताका समाधान, जो अतरगमे क्रोधादिक परिणामके आवेशपूर्वक दु ख आदिक देनेका अभिप्राय होय ते असातावेदनीयकर्मके आस्रवके निमित्त है। अर जैसे कोऊ वैद्य परमकरुणाचित्तकरि नि शल्य हुवा यत्नतै सयमीपुरुषके गूमडाके चिरादे है सो वाकै दुःख उपजावे है तोहू तिस वैद्यके वाह्य दु खके निमित्तमात्रहीतै पापबध नही होय है। वैद्यका अभिप्राय तो रोगीके रोगकू दुरिकरी निरोगी करनेका है। तातै ससारके दु ख मेटि मोक्ष प्राप्तहोनेका अभिप्रायवलाकै दुःख होनेका अभिप्राय नाही, तातै किंचित् वाह्यदुःख होतैहू परिपाककालमे कडवी औषधिकीज्यो समस्तदु खका दूरी करनेवाला है तातै असाताके बधका कारण नही है। अव सातावेदनीयका आस्रवके कारणनिकू कहे है--

भूतव्रत्यनुकम्पादानसरागसंयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥१२॥

अर्थप्रकाशिका-- आयुनामकर्मके वशतै उत्पन्न होय ते भूत कहिए ते समस्त चतुर्गतिसबधी प्राणी जानने। अर जिनकै अहिंसादिव्रतनिका धारण होय ते व्रती जानने। इनकै विषै पीडा जानि आपमे जैसे दु ख आया तैसे परकी पीडा मेटनेरूप परिणाम होना सो भूतव्रतीनिमे अनुकम्पा है। अव इहा कोऊ आशका करे। जो भूत कहनेमेही सर्व प्राणिमात्र आगए फिरि व्रतीनिका ग्रहण काहेतै कीया। ताका समाधान। जो समस्त प्राणिमात्रमे अनुकम्पा करना तथा व्रतीनिविषै अनुकम्पाका विशेष प्रधानपना जनावकै अर्थि व्रतीनिका भिन्नग्रहण कीया है।

वहुरि दु खित बुभुक्षित जीवनिका उपकारकै अर्थि धनादिक औषधि आहारादिक देना तथा व्रती सम्यग्दृष्टि सुपात्र तिनमे भक्तिपूर्वक दान देना सो दान है। जिनके चित्तमे दुष्टकर्म हरनेमे राग सराग कहिए ऐसे रागीनिका सयम सो सराग सयम है अथवा

रागसहित सयम सो सरागसयम है। आदिशब्दतै सयमासयम आकामनिर्ज्जरा वालतप इनिका ग्रहण करना। तहा एकदेशत्याग करना विषयनिमें विनाप्रयोजननिका त्याग होय ताकू संयमासयम कहिए है।

वहुरि जो आपका अभिप्रायतै तो त्याग नही कीया अर पराधीनपणातै भोग उपभोगका निरोध होना सो अकामनिर्जरा है। तत्वका यथार्थग्रहणका अभावतै अज्ञानी तिनकौ वाल कहिए मिथ्यादृष्टी कहिए तिनका जो तप सो वालतप है।

निर्दोषक्रियाविशेषका जो आचरण सो योग है ताहि समाधि कहिए। वहुरि शुभपरिणामनिकी भावनातै क्रोधादिकषायका अभाव होना सो क्षमा है। वहुरि लोभके प्रकारनिका त्याग सो शौच है। वहुरि इतिशब्दकरि अरहतका पूजन तथा वाल वृद्ध तपस्वी मुनीनिका वैयावृत्य करनेमें उद्यमी रहना, योगनिकी सरलता, विनयादिक समस्त सातावेदनीयकर्मके आस्रवके कारण है। अनतससारका कारण दर्शनमोह ताके आस्रवके कारणनिकू कहे हैं—

केवलिश्रुतसङ्घधर्म्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ।।१३।।

अर्थप्रकाशिका— केवली श्रुत सघ धर्म अर च्यारनिकायके देवनिके नही होते झूठे दोष प्रगट करना अपनी बुद्धिकी मलिनतातै सो दर्शनमोहका आस्रव करे है। जाके समस्तज्ञानावरणका अत्यतक्षयतै इद्रियनिविना क्रमरहित त्रिकालवर्ती समस्तगुणपर्यायनिसहित लोक अलोकका जानना प्रगटहूवा ऐसे भगवान अरहतकू केवली कहिए है।

तिस केवलीके ग्रासादिककरि आहार करनेतै जीवना कहे अर केवलीकै क्षुधा तृषा आहार निहार कहे। कवलादि वस्त्रपात्र कहे। कालभेदतै ज्ञानदर्शन प्रवर्त्तता कहे इत्यादिक केवलीका अवर्णवाद है। वहुरि श्रुतके ऐसा दोष लगावे जो श्रुतविषै मांसभक्षण मधुभक्षण मदिरापान अर वेदनाकरि पीडितकै मैथुनसेवन रात्रिभोजन इत्यादीक निर्दोष कह्या है। ऐसे जिनेद्रका आगमका झूटा दोप प्रगट करना सो श्रुतका अवर्णवाद है।

वहुरि देहमै निर्ममत्व निर्ग्रंथ वीतरागमुनीश्वरनिके सघकू अपवित्र कहना निर्लज्ज कहना तथा इहाही दुख भोगवे है तो परलोकमे कैसे सुखी होइगे? ऐसें कहना सो सघका अवर्णवाद है। वहुरि जिनेद्रधर्मसेवनका फल असुरादि होना कहना सो धर्मका अवर्णवाद है। वहुरि देवनिकै मांसभक्षण मद्यपान कहना तथा देवनिके भोजनादिकका भक्षण कहना वा मनुष्यणीनिमें काममेवनादि कहना सो देवनिका अवर्णवाद है। इनकरि दर्शनमोहनीयका आस्रव होय है। अब चारित्रमोहके आस्रवका कारण कहे है—

कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य ॥१४॥

अर्थप्रकाशिका– द्रव्य क्षेत्र काल भावके निमित्तका वशतैं कषायनिका तीव्र उदयतैं तीव्रपरिणाम होय तातैं चारित्रमोहनीय कर्मका आस्रव होय है। तथा जगतके उपकार करनेमे समर्थ जे शीलव्रत तिनकी निंदा करना, आत्मज्ञानी तपस्वीनिकी निंदा करना धर्मविध्वस करना धर्मके साधनमे अतराय करना शीलवाननिकू शीलतैं चिगावना देशव्रती महाव्रतीनिकू व्रतनितैं चलायमान करना मद्यमासमधुके त्यागीनिके चित्तमे भ्रम उपजावना चारित्रमैं दूषण लगावना क्लेशरूप लिंग भेद धरना क्लेशरूप व्रत धरना आपके अर परके कषाय उपजावना इत्यादि कषायवेदनीयके अस्रावके कारण है।

वहुरि उत्कट हसना दीन दु खित अनाथनिकी हास्य करना कामकथा कामचेष्टाकरि हास्य करना बहुतवृथाप्रलाप करना इन परिणामनितैं हास्यवेदनीकर्मका आस्रव होय है। वहुरि परपुरुष कोऊ विचित्रक्रीडा करै तिसमैं तत्परता उचितक्रियाकू नही वर्जन करना परके पीडाका अभाव करना देशादिकानिमे उत्सुकपणाका अभाव सो रतिवेदनीयकर्मका आस्रवका कारण है।

वहुरि अन्य जीवनिके अरति प्रगट करना परकीर्तिका विनाश करना पापीनिकी सगति करना खोटी क्रियामे उत्साह करना इत्यादि अरतिवेदनीयका आस्रवका कारण है। बहुरि आपके शोक होई तामैं विषादी होई चिंता करना परकैं दु ख प्रगट करना अन्यकू शोकमे देखि आनद धारना सो शोकवेदनीयकर्मका आस्रवका कारण है। वहुरि अपना भयरूप परिणाम करना परके भय उपजावना निर्दयपरिणामकरि परकू त्रास देना सो भयदेवनीयका आस्रवका कारण है।

वहुरि सत्यधर्मकू प्राप्त भए जे च्यार वर्णके धारक ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य क्षूद्र तिनका कुलकी क्रिया आचारनकी ग्लानि करना परका अपवाद करनेका स्वभाव सो जुगुप्सादेवनीयके आस्रवका कारण है। वहुरि अतिक्रोधके परिणाम अतिमानीपणा ईर्षाका व्यवहार असत्यवचनमे प्रवृत्ति अतिमायाचारमे तत्परपना अतिरागभावका करना परस्त्रीसेवन करना परस्त्रीका राग-भावतैं आदर करना स्त्रीकेसे भाव आलिंगनादिकरना इन भावनतैं स्त्रीवेदका आस्त्रव होय है। वहुरि अल्पक्रोध अर कुटिलताका अभाव निलोभता स्त्रीनि सवधमैं अल्पराग अपनी स्त्रीमैं सतोप ईर्षाका अभाव अर स्नान गध पुष्पमाला आभरणादिकनिमे अनादरपणा इत्यादि पुरुपवेदके आस्रवका कारण है। वहुरि प्रवल क्रोध मान माया लोभके परिणाम तथा गुह्य इंद्रियका छेंदना स्त्रीपुरुषनिके कामके अंग छाडि अनगमे व्यसनीपणा करना तथा शीलवतनीकू उपसर्ग करना व्रतनीकूं दु ख करना गुणवतनिका मथन करना दीक्षाग्रहण करनेवालेनिकू दु ख देना परस्त्रीके रागके निमित्त तीव्रराग धरना आचाररहित निराचारी होना सो नपुसकवेदके आस्त्रवका कारण

है। ऐसे मोहनीयकर्मके आस्रवका कारण कह्या। अब आयुकर्मके आस्रवके कारणनिमें नरकायुका आस्रवनिके कारणनिकू कहे है-

बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥१५॥

अर्थप्रकाशिका- बहुत आरंभ अर बहुत परिग्रह नरक आयुके आस्रवके कारण है। तहां प्राणीनिके पीडाका कारण व्यापारका प्रवर्तन करना सो आरंभ है। बहुत जो आरंभ सो बह्वारंभ है। अर परद्रव्यनिमें मेरा ये वस्तु है में उसका स्वामी हू ऐसे परवस्तुमें आपा अर आपकापणाका संकल्प सो परिग्रह है।

बहुत जो परिग्रह है सो बहु परिग्रह है। सो बहु आरंभ अर बहु परिग्रह नरकायुके आस्रवके कारण है। बहुरि मिथ्यादर्शनमें मिस्या आचरण उत्कृष्टमानीपणा शिलाभेद समान क्रोध तीव्रलोभकें परिणाम निर्दयपणा परजीवनिके संताप उपजावनेके परिणाम परके घातकरनेके परिणाम परके वधन होनेका अभिप्राय प्राणीनिका घातकरनेवाला असत्यवचन परद्रव्यके हरनेके परिणाममैं मैथुनमें अतिराग अभक्ष्यभक्षण दृढवैर साधुनिकी निंदा तीर्थकरनिकी आज्ञाभंग कृष्णलेश्याके परिणाम रौद्रध्यानकरि मरण इत्यादिकहू नरकआयुके आस्रवके कारण है। अब तिर्यगायुके आस्रवका कारण कहे है-

माया तैर्यग्योनस्य ॥१६॥

अर्थप्रकाशिका- चारित्रमोहके उदयतैं प्रगट भया जो आत्माका कुटिलस्वभाव सो माया है। मायाचारतैं तिर्यग्योनिका आस्रव होय है। बहुरि मिथ्याधर्मका उपदेश देना बहु आरंभ बहु परिग्रहमें परिणाम कपट कूटकर्ममें तत्परपना पृथ्वीभेदसमान क्रोधीपणा शीलरहितपणा शब्दकरि चेष्टाकरि तीव्र मायाचार करना परके परिणामनिमैं भेद उपजावना अति अनर्थ प्रगट करना गंध रस स्पर्शनिका विपरीतपणाका करना जाति कुल शीलमें दूषण लगावना विसवादमैं प्रीति रखना परके उत्तम गुणनिकू छिपावना विना होते जो गुण प्रगट करना नील कपोत लेश्याके परिणाम आर्तध्यानतैं मरण करना इत्यादि तिर्यंच आयुके आस्रवका कारण है। अब मनुष्यआयुका आस्रवका कारण कहे है-

अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥१७॥

अर्थप्रकाशिका- अल्प आरंभ अल्प परिग्रहपणातैं मनुष्य आयुका आस्रव होय है। बहुरि मिथ्यादर्शनसहित बुद्धि विनयवान स्वभाव सरलप्रकृति साचे आचरणमें सुख मानना अपना मुख जनावना अल्प क्रोध व्यवहारमैं सरलप्रकृति संतोषमें रति प्राणीनिका घातमें निरक्तता कुकर्मतैं निवृत्तहोना समस्तमैं मिष्टवचन स्वभावहीतैं मधुरता लौकिकव्यवहारतैं

उदासीनता ईर्षारहितपणा अल्पसक्लेशपणा देव गुरु अतिथिनिका दान पूजाकै अर्थि अपने द्रव्यमैतै विभाग करना कपोतलेश्याके परिणाम मरणकालमे धर्मध्यानीपणा ए मनुष्यायुके आस्रवके कारण है । इहां कोऊ आशका करे । जो मिथ्यादर्शनसहित जाकी बुद्धि होय ताकै मनुष्यायुका आस्रव कैसे कह्या । ताका उत्तर । मनुष्य तिर्यचनिके सम्यक्त्वपरिणाम होतै तो कल्पवासीदेवकाही आयु बधे है मनुष्यायुका बध नही करे है । अव औरहू मनुष्यायुका आस्रवपणाका कारण कहे है–

स्वभावमार्दवं च ॥१८॥

अर्थप्रकाशिका– विना शिखाया स्वभावतेंही कोमलपणा सोहू मनुष्यायुके आस्रवके कारण है । अव अन्यहू विशेप कहे है–

निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम् ॥१९॥

अर्थप्रकाशिका– शीलरहितपणा अर व्रतरहितपणाते समस्त च्याारूही आयुका आस्रव होय है । इहा कोऊ कहे है । जो व्रतशीलरहित होय ताके देवआयुका आस्रव कैसे होय । ताका समाधान, जो भोगभूमीके जीवनिकै शीलव्रतादिक नही है तोहू देवआयुहीका आस्रव होय है । अव देवआयुके आस्रवके कारणनिकू कहे है–

सरागसंयमसंयमासंयमाकामनिर्जराबालतपांसि दैवस्य ॥२०॥

अर्थप्रकाशिका– सरागसयम अर सयमासयम अकामनिर्झरा बालतप ए देवायुके आस्रवका कारण है । कर्मके नाशकरनेमे राग तथा व्रतादिक शुभ आचरणमे रागसहित संयमभाव सो सरागसयम है । अर त्रसहिसाका त्याग सो सयम अर थावरका विघातका त्याग नही सो असयम । ऐसे सयम असयम दोऊ रूप परिणाम सो सयमासयम है । अर पराधीन बुद्धिग्रहादिकनिमे क्षुधातृषादिककी पीडाका भोगना मारना ताडनादिक त्रास भोगना मलधारन करना भूमिशय्या ब्रह्मचर्य रखना परितापादिक दुःख भोगना इत्यादिक मदकषायके भाव होय सो अकामनिर्जरा हैं । बहुरि आत्मज्ञानरहित तप करना सो वालतप है । सो सरागसंयमतै अकामनिर्जराते वालतपतै देवआयुका आस्रव होय है । तथा आपके कल्याणके कारण ऐसे मित्रनिका सबध करना तथा धर्मायतन जे धर्मके स्थानका सेवन करना सत्यार्थधर्मका श्रवण तथा प्रशसा करना धर्मका महिमा दिखावना निर्दोष उपवासादि करना तपमे भावना रखना इनतै देव आयुका आस्रव होय है ।

बहुरि बदिग्रहमे बधनादिककरि वध्या होय तथा दीर्घ कालका रोगी होय सता क्लेशरहित हुवा वृक्षते पड्या होइ तथा पर्वतते पड्याहोइ तथा अनशनमे अग्निप्रवेशमे

जलप्रवेशमे विषभक्षणमे धर्म होनेकी बुद्धिकरि मरणकीया होइ ते व्यंतरनिमे मनुष्यनिमे तिर्यंचनिमे उपजे है। तथा जो शीलव्रतरहित होइ परतु अनुकपासहित जिनका हृदय होय अर जलरेखासमान ज्याके रोष अतिमंद होइ ते व्यतरादिक देवनिमे उपजे है। तथा भोगभूमिके उपजे मनुष्यतिर्यंच तेहू व्यतरादिक देवनिमे उपजे है तथा आत्मज्ञानरहित अज्ञानसयमी अर सक्लेशभावरहित होइ ते भवनवासी व्यतरादि वारमा स्वर्गपर्यंत देवनिमे उपजे है। तथा मनुष्यतिर्यंचनिमेहू उपजे है। अब औरहू देवायुके आस्रवका कारण कहे है–

सम्यक्त्वं च ॥ २१ ॥

अर्थप्रकाशिका– सम्यक्त्वते देवआयुहीका आस्रव होय है। इहा न्यारा सूत्र कहनते कल्पवासी देवहीका नियम है। भवन व्यतर ज्योतिषमे नहि उपजे हैं। कल्पवासीनिमेहू महर्द्धिकदेव होय है। नीचदेव नही उपजे है। ऐसे मनुष्य तिर्यंचनिकी अपेक्षा नियम है अर देवलोकमेते व नरकमेते आया सम्यग्दृष्टी कर्मभूमिका मनुष्यही होय है। जाते देवपर्यायते आयाहुवा देव होयनही अर नरकका निकस्याहू देव होय नही। ऐसे आयुकर्मके आस्रवका कारण कह्या। अब नामकर्ममे अशुभनामकर्मके आस्रवकू कहे है–

योगवक्रताविसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥२२॥

अर्थप्रकाशिका– मन वचन कायके योगनिकी वक्रता अर अन्यजीवनिकू अन्यथा प्रवर्त्तावना धर्मके मार्गकू छुडाय उन्मार्गमे प्रवृत्त करावनेसे अशुभनामकर्मका आस्रव होय है। मिथ्यादर्शन धरना पूछि पाछे खोटी कहना, चित्तका अस्थिरपना, ताखडी वाट कूडा रखना, सुवर्ण मणि रत्नादिक खोटेकु साचेमे मिलावना, कूडी खोटी साक्षि भरना, अर उपागका काटना, वर्ण रस गध स्पर्श इनिकी विपरीतता करना, अनेकजीवनिकू दु.ख देनेवाले यत्र पिंजरे वनावना, कपटकी अधिक्यता रखना, परकी निदा करना, अपनी प्रशसा करना, झूठ वचन बोलना, परका द्रव्य ग्रहण करना, महारभ महापरिग्रह, उजलवेषका मद करना, आभरण रूपादिकका मद करना, कठोर निद्य वचन असत्य प्रलाप करना, क्रोधके वचन धीरताके वचन कहना, अपना सौभाग्य चाहना, वशीकरणके प्रयोग करना, परजीवनिके कौतुहल उपजावना, आभरण पहरनेमें आदरते अनुराग करना, जिनमदिरके चदनादिक गध अर पुष्पमाल्यादिक [illegible] चोरना, हास्य करना, ईटनके पकावनेके प्रयोग करना, दवाग्नि लगावनेका प्रयोग करना, प्रतिमाका विनाश करना, तथा प्रतिमाका स्थान जो मदिर ताका विनाश करना, [illegible] बैठनेसोवनेके मकानकी मलमूत्रादिकरि विगाडना, वाग वगीचा वनका विनाश करना, तथा क्रोध मान माया लोभका तीव्रपणा पापकर्मते जीविका करना इत्यादिकनितै अशुभनामकर्मका आस्रव होय है। अब शुभनामकर्मके आस्रवकू कहे है–

तद्विपरीतं शुभस्य ॥२३॥

अर्थप्रकाशिका- अशुभनामकर्मका जो आस्रव कह्या तातैं विपरीत कहिए उलटा भावतैं शुभनामकर्मका आस्रव होयहै। मन वचन कायकी सरलता अर विसवादका अभाव अर धर्मात्माकूं देखि हर्षकरना सम्यग्भाव रखना ससारभ्रमणतैं भयभीत रहना प्रमाद वर्जना इत्यादि शुभनामकर्मके आसवका कारण है। अब अनत अर उपमारहित है प्रभाव जाका अर अचिंत्य-विभूतिविशेषका कारण अर त्रैलोक्यमैं विजय करनेवाला ऐसा तीर्थंकरनामा नामकर्मके आस्रवके कारण षोडशभावना तिनकौं कहैहैं —

दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतिचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौ-शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैय्यावृत्यकरणमर्हदाचार्यबहुश्रुतभक्तिप्रवचन-भक्तिरावश्यकापरिहाणि मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥२४॥

अर्थप्रकाशिका— दर्शनविशुद्धता—१, विनयसम्पन्नता—२, शीलव्रतेष्वनतीहार—३, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग–४, सवेग—५, शक्तितस्त्याग—६, शक्तितस्तप—७, साधुसमाधि—८, वैयावृत्यकरण-९, अरहतभक्ति—१०, आचार्यभक्ति—११, बहुश्रुतभक्ति—१२, प्रवचनभक्ति—१३, आवश्यकापरिहाणि—१४, मार्गप्रभावना—१५, प्रवचनवत्सलत्व—१६, इन षोडशभावनाकरि तीर्थकरनामकर्मका आस्रव होयहैं।

तहा जो सत्यार्थ आप्त आगम गुरुका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है। तिनमे जो अठारह दोषनिकरि रहित होय अर सर्वज्ञ होय अर परमहितोपदेशक होय इनि तीन विशेषनिकरि सहित होइ सो आप्त होय है। तिनमे क्षुधा १, तृषा २, जन्म ३, जरा ४ मरण ५ रोग ६, शोक ७, भय ८, विस्मय ९, अरति १०, चिंता ११, राग १२, द्वेष १३, स्वेद, १४, खेद, १५, निद्रा १६, मद १७, मोह, १८, ए अठारह दोषकरि रहित होइ सोही आप्त है अर दुजा विशेषण सर्वज्ञपणा जामे पाइए जो लोक अलोकरूप समस्तपदार्थ तिनकू त्रिकालवर्ती समस्त-गुणपर्यायनिसहित युगपत् एकसमयमैं जानना होइ सो सर्वज्ञपणा आप्तका दूसरा विशेषण है। अर तीजा परमहितोपदेशक होइ ऐसे निर्दोषपणा अर सर्वज्ञपणा अर वीतरागपणा जामैं तीनो गुण असाधारण पाइए सोही आप्त है। जो आप्तका लक्षण एक निर्दोपही कहिए तो क्षुधादि अठारह दोषकरि रहित तो घटपटादिकभी है।

धर्म अधर्म आकाश काल पुद्गलभी है। इनिके आप्तपणाका प्रसग आवे तातैं सर्वज्ञविना आप्तत्व नही। अर जो निर्दोषत्व अर सर्वज्ञत्व दोय विशेषणरूपहीकू आप्त कहिए तो भगवान् सिद्धपरमेष्ठी निर्दोषभी है अर सर्वज्ञभी है यातैं सिद्धनिके आप्तपणाका प्रसग आवे तातैं तीजा विशेषण परमहितोपदेशकपणा कह्या। तातैं निर्दोषत्व अर सर्वज्ञत्व अर परम-

हितोपदेशकत्व इनि तीन विशेषणनिकरि सहित भगवान् अरहतकैंही आप्तपणा सभवैंहै अन्यकै नही सभवैंहै। यातै निर्दोष सर्वज्ञ परमहितोपदेशक अरहतकूही आप्त जाणि श्रद्धान करना उचित है।

बहुरि जो शास्त्र भगवान् आप्तका कह्या हुवा होइ अर वादी प्रतिवादीकरि उल्लघन नही कीया जाई अर जाकी कथनी प्रत्यक्ष अनुमानकरि विरूद्ध नही होई अर सारभूत वस्तुकू कहनेवाला होइ अर समस्त छह् कायके जीवनिका हितरूप होइ अर कुमार्गका दूरि करनेवाला होइ ऐसा आगमका श्रद्धान करना उचित है।

बहुरि जाकै विषयनिमैं वाछा नही होइ अर समस्त आरभ अर परिग्रह रहित होई निरतर ज्ञानाभ्यासमैं तपमैं आसक्त होई सोही वीतरागी मोक्षमार्गी गुरू श्रद्धान करनेयोग्य है।

ऐसें सत्यार्थ आप्तमैं आगममैं गुरूमैं जाकै दृढश्रद्धान होइ अर इन लक्षणरहितकू आप्त आगम गुरूपणाकरि श्रद्धान नहीकरै सो श्रद्धानरूप परिणाम सम्यग्दर्शन है। सो इस श्रद्धानपरिणाममें पचीस दोष नही होय अर अपने गुण अगनकरि सहित होय सोही दर्शन विशुद्धिता है। तिन दोपनिमैं तीन मूढता है, अष्ट, मद है, शकादि अष्ट दोष है, छह् अनायतन है ए पचीस दोप है। तिनमैं जो नदीस्नानमैं धर्म मानैं समुद्रकी लहरी लेनेमैं धर्म मानैं तथा पर्वततैं पडनेमैं अग्निमैं प्रवेश करनेमे धर्म मानैं तथा स्नानतैं अपना शौच मानैं तथा श्राद्धतर्प्पणादिकनिकू धर्म मानै तथा सक्राति जानि दान करना, ग्रहणजानि सूतक मानना स्नान करना इत्यादिक बहुतप्रकार लोकमूढता है।

तैंमेही ग्रह भूत पिशाच योगिनी यक्ष यक्षिणी क्षेत्रपाल सूर्य चद्रमा शनैश्चरादिकनिकू वाछितकी सिद्धिकै अर्थि सेवना पूजना वदना दान देना सो देवमूढता है। अर जो देवपणा- परि रहित, जिनमे च्यारि निकायका देवपणा नही अर देवाधिदेव सर्वज्ञपणाकरि रहित अर जिनके तिर्यंचनिकेसे मुख हस्तीकासा मुख वानराकासा मुख सिंहकासा मुख गर्द्दभमुख सूवर- नाना रूप जिनकै पूछ सीग इत्यादि विपरीत आकारकू धरे तथा चतुर्मुख पचमुख षण्मुख चतुर्भुजादि रूपके धारकनिकू देव मानना तथा लिंग योनि इत्यादि विपरीत रूपनिमैं देवबुद्धि करना तथा जलकू अग्निकू वृक्षकू पहाडकू अन्नकू देव मानि पूजना तथा सर्पादिकनिकू गौकू देव मानना तथा देवतानिकै बकरा भैंसा इत्यादिक मारि चढाना तथा देवतानिकूँ मद्यमासके पूजन तथा गेट लापसी बडा पूवा इत्यादिककी देवता वासना लेहै तथा भोजन करेहै ऐसें विपरीतश्रद्धान करेहै सो समस्त मिथ्यात्वका तीव्र उदयतैं देवमूढता कहिए है।

यातैं चारनिकायके देव है ते मनुष्य तिर्यंचनिकीज्यो मुखमे ग्रास लेय आहार करे हैं।

देवनिके तो मानसिक आहार है। मनमे विचार होतप्रमाण तृप्त होय है। देवनिके आहार-निहार माने सो सर्वज्ञकी आज्ञाते पराङमुख मिथ्यादृष्टि है।

बहुरि जो आरभपरिग्रहके धारक हिंसादि पापनिमे प्रवर्तवाले विषयानुरागी अभिमानी अज्ञानी अपना पूजा सत्कारके इच्छक कुलिंगी सूत्रविरूद्ध आचरणकेधारकनिकू गुरु जानना पुज्य जानना सो गुरुमूढता वा पाषडिमूढता कही है।

बहुरि जो ज्ञानका मद जाति कुलका बलका तपका ऐश्वर्यका रूपका हस्तकी कलाका मद करना सो समस्त मिथ्यादर्शनका प्रभाव है। जाते पराधीन विनाशसहित इद्रियजनित ज्ञानका मद करना सो मिथ्यादर्शन है। तथा कुल जाति ऐंश्वर्य रूप वलादिक ए समस्त कर्मका उदयजनित पौद्गलिक इनमे जो आपा मानि अहकार करना सो समस्त मिथ्यादर्शनका प्रभाव हैं।

बहुरि जो रागी द्वेषी मोही देवपणारहित सो कुदेव है अर हिसासहित यज्ञादिक ये कुधर्म हैं। विषय कषायके आधीन प्रवर्त्तनेवाले परिग्रहधारी आरंभधारी सो कुगुरु है अर इन कुगुरु कुदेव कुधर्मके सेवनेवाले ए छह अनायतन है। इनिमे धर्म नही ताते अनायतन है। इनिकू भला जाने धर्मरूप माने सो मिथ्यादर्शनके उदयते है।

तथा 'शका काक्षा ग्लानि मूढता अनुपगूहन अस्थितीकरण अवात्सल्य अप्रभावना ए आठ दोष है इनिके त्यागते नि शकितादिक अष्टगुण प्रगट होय है तिनकू कहे हैं। जो, इस-लोकका भय। परलोकभय। मरणभय। वेदनाभय। अनारक्षकभय। अगुप्तिभय। अकस्माद्भय। इनि सप्तभयनिकरि रहित अपना स्वरूपकू अवलोकन करना सो नि.शकित अग है। जाते जो भवितव्य है सो अतरग वहिरग दोऊ कारणनिका परिपूर्णसयोग मिलनेते है ताते भवितव्यता दुर्लंघ्य है ऐसे निश्चयकरि भयका अभावरूप रहना तथा अरहत भगवानकरि उपदेश्या प्रवचनमे शकाका अभाव सो नि शकित है। जो सर्वज्ञ वीतराग अन्यथावादि नही है अन्यथा तो रागी द्वेषी कहे है ऐसा निश्चयकरि सर्वज्ञ वीतरागकी आज्ञामे जाके अचलप्रीति होय सो नि.शकित है।

बहुरि इहलोक परलोकसबधी भोगनिकी वाछाका अभावरूप परिणाम सो नि काक्षित है। इहा कोऊ पूछे। जो, अविरतसम्यग्दृष्टीकंभी- भोगनिमे धनमें वाछा है ताकेनिर्वांछकपणा कैसे। ताका समाधान जो सम्यग्दृष्टीके भोगनेकी वाछा है सो भोगनिकू भला जानि नही वाछा करे है। इद्रलोकका भी भोग महान दुख दिखे है परतु चारित्रमोहका प्रवल उदयते कषायराग मद भई नही याते इद्रियजनित दाह सहनेकू समर्थ नही ताते वर्त्तमानकालका दुख उपशम होजाय तावन्मात्र चाहे है। जैसे रोगी कटुक औषधीकी बहुत चाह नाकरि पीवे है।

वर्त्तमान दु.ख नही सह्या जाय याते परंतु अंतरंगमे ऐसा चितवन है जो कदि इम औषधिते मेरा छुटना होई। अतरगमे औषधितै अति अरुचि है। तैसे जानना। तथा मिथ्यादृष्टीनिका ज्ञान आचरण तपमे वाछाको अभाव सो नि.कांक्षित गुण है।

बहुरि शरीरादिकनिका अशुचिस्वभाव जानिकरि शुचिपणाका मिथ्यासंकल्पका अभाव करना तथा अरहंतके प्रवचनमे साधुका समस्त आचरण योग्य है परंतु स्नान नही करना घोर तप करना कष्ट सहना ये अयोग्य है ऐसे ग्लानि नही करना सो निर्विचिकित्सता अग है।

बहुरि बहुत प्रकार एकातरूप दुर्नयनिके मार्ग है ते सत्यसे दीखे अर सत्य नही तिनमे परीक्षारहित होय मूढनिका बखायाहुवा विपरीत मार्गमे नही प्रवर्त्तना तथा लौकिकमे मणि मत्र औषधनिका सयोगजनित अनेक क्रिया तथा व्यतरादिकनिकरिविपरीत चेष्टाकू देखी भगवत्सूत्रकी आज्ञाते विपरीत श्रद्धानका अभाव सो अमूढदृष्टि अग है।

बहुरी जैसे पुत्रकृत दोषकू माता गोपन करे तैसे परके दोप देखि प्रगट नही करे जो मोहनिय ज्ञानावरणादि कर्मके आधीन जगत् नष्ट होय रह्या है जो गुण होना दुर्लभ है हमारेमाहीही अनेक दोष है ऐसे विचारी परका दोप प्रगट नही करे अर अपना सुकृत्य होइ ताहि प्रशसाके अर्थि प्रगट नही करे तथा धर्मात्मामे दोष देखि विचारे जो इसके अज्ञान तातै अशक्ततातै दोष लगिगया है जो प्रगट होइगा तो धर्मकी निंदा होयगी ऐसा विचारि दोषकू गोपन करे सो उपगूहनगुण है। अथवा उत्तम क्षमादिभावनाकरि आत्माके धर्मकी वृद्धिका करना सो उपबृहण है सोभी यहीकू कहिए है।

बहुरि कर्मका उदयजनित रागद्वेष वा रोगपीडा तथा उपसर्गपरीषह इनितै परिणाम बिगडी जो धर्मसू छूटता होइ ताकू धर्मके उपदेशकरि ज्ञान वैराग्य बधाय चिगने नही देना तथा औषध आहार पानका सयोगतै शरीरकी टहलतै तथा हम आपके है आपकी सेवातै कदाचित् नही चिगेगे आपकेही है ऐसे आत्मसमर्प्पणतै जैसे बने तैसे चिगनेनही देवै धर्ममे स्थापन करैसो स्थिताकरण अग है।

बहुरि जिनेद्रका कह्या धर्ममे तथा धर्मके धारकनिमे धर्मके कारणनिमै नित्य अनुराग रखना सो वात्सल्य अग है।

बहुरि जो रत्नत्रयधर्मको धारणकरि आत्माका प्रभाव प्रगट करना तथा दान शील तप जिनपूजन इत्यादिकरि जिनधर्मका प्रभाव प्रगट करै तथा अन्यमिथ्यादृष्टीहू जाकी प्रशसा करै जो जैनीका वडा सतोप वडा दयावानपणा निर्लोभीपणा दातारपणा क्षमावानपणा जो प्राण जातेहू विकारी नही होइ अनेक लोभके वशतैहू असत्यवचन नही कहे, परधनहरण स्वप्नमैहू नही करै, जैनीनिका सादृश्य और कोऊनिका नाही ऐसे मन वचन कायकी प्रवृत्तिकरि धर्मकी

निंदा नही करावे अर अनेकालके प्रभावकरि एकातरूप मिथ्याश्रद्धानकू दूरिकरि लोकनिके हृदयमे अनेकातरूप सत्यार्थवस्तुका स्वरूपका प्रकाश करै तथा सप्तक्षेत्रनिमे धन लगायकरि वा सकलत्यागी होई धर्मका प्रभाव प्रगट करै सो प्रभावनाग है। ऐसे पचीस दोषनिकरि रहित अप्ट अगनिकरि रहित होइ सो दर्शनविशुद्धिता है–१

वहुरि दर्शन ज्ञान चारित्रके विषै तथा दर्शन ज्ञान चारित्रके धारकनिविषै आदर सत्कार भक्ति करना तथा देव गुरु धर्मका प्रत्यक्ष परोक्ष विनय करना सो विनयसपन्नता गुण है। तथा कषायका अभाव करि आत्माकू मार्द्दवरूप करना सो विनयसपन्नता अग है–२

अहिंसादिक व्रतनिके पालनेकं अर्थि क्रोध मान माया लोभ कषायका अभावरूप आत्मस्वभावका करना सो शील है। तथा स्पर्शइंद्रियजनित समस्तविषयनितै राग छूटि वीत-रागभावरूप होना सो शील है। शीलविषै मन वचन कायकी निर्दोषता करि अतिचाररहित प्रवर्त्तना सो शीलव्रतेष्वनतिचारभावना हैं–३

वहुरि निर्दोषग्रथनिकू पढना पढावना उपदेश करना श्रुतज्ञानके अर्थमे निरतर उपयोग रखना सो अभीक्ष्णज्ञानोपयोग है–४

बहुरि शरीरसबधी क्षुधा तृपा शीत उष्ण रोगादिजनित अर मनसबधी दुःख अर इष्टवियोग अनिष्टसयोग वाछितका अलाभ इत्यादिक ससारके दुःखनितै भयभीत होइ परमवीतरागताका चितवन सो सवेगभावना है–५

बहुरि अपना अर अन्यका उपकारकै आहार औषध शास्त्र अभयदानका सम्यग्भावनितै भक्तिपूर्वक देना, जातै त्यागमे अर तपमे शक्ति छिपावनाहू नही अर शक्तितै अधिकहू नही जातै शरीरादिक बिगडी भ्रष्ट होजाय सो नही करना सो शक्तितस्त्याग भावना है–६

वहुरि अपना वीर्यकू नही छपायकरिकै जिनेद्रका मार्गके अनुकूल अनशनादिक तप करना तथा ऐसे विचारना जो यो शरीर दुःखके कारण हैं अशुचि है कृतघ्न हैं इस देहकू यथेष्ट भोजन देय पुष्ट करना अयोग्य है तोहू चारित्र ज्ञानादिक रत्ननिका सचय करनेकू उपकारी हैं यातै विषयनितै विरक्त होइ करिकै अपना प्रयोजनकै अर्थि परिमित शद्ध आहार देय यथाशक्ति मार्गतै अविरोधी कायक्लेशादि तप करना श्रेष्ठ है ऐसी शक्तितै तपोभावना है–७

वहुरि अनेक शीलनिकरि सहित जो मुनि तिनकै कोऊ कारणकरि विघ्न आवे तो ताका दूरि करना, जैसे अनेक वस्तुनिकरि भऱ्या भडारविषै अग्नि लागि होई ताका जैसे बुझावना तैसे साधुनिकै विघ्न दुःख दूरीकरि व्रत शील संयमकी रक्षा करना सो साधुसमाधि है–८

गुणवत जे साधुजन तिनकै कोऊ कारणकरि दुःख रोग आजाय ताका निर्दोष विधान-करि दूरि करना सेवा टहल करना सो वैय्यावृत्य है–९

इहा उपदेशादिकरि तथा शरीरकी टहलकरिके आहारादिक पानकरिकै तो वैया-वृत्ति होय है अर उनके व्रतसंयमादिकनिमै विघ्नके कारणानिकू दूरि करना सो साधु-समाधि है।

वहुरि केवलज्ञानही है दिव्य नेत्र जाके ऐसा अरहन्त भगवानके गुणनिमें अनुराग सो अर्हद्भक्ति है–१०

वहुरि समस्तसंघके अधिपति दीक्षाशिक्षाके देनेवाले आचार्यनिके गुणनिमैं अनुराग सो आचार्यभक्ति है–११

वहुरि परके हित करनेमे है प्रवृत्ति जिनकी अर स्वमतपरमतके विस्तारका निश्चयका जाननेवाले वहुश्रुत जे उपाध्याय तिनकै गुणनिमे अनुराग सो वहुश्रुतभक्ति है–१२

वहुरि श्रुतज्ञानके गुणनिमे अनुराग सो प्रवचनभक्ति है–१३

वहुरि सामायिक स्तव वदना प्रतिक्रमण प्रत्याख्यान कायोत्सर्ग ए षट् आवश्यक क्रियानिका हानि नही करना यथाकाल प्रवर्त्तन करना सो आवश्यकापरिहाणि भावना है–१४

वहुरि परमतरूप अज्ञानके उद्योतका तिरस्कार करनेवाली जे स्याद्वादरूप सम्यग्ज्ञान-[illegible] प्रभाकरि जिनधर्मका सत्यार्थ प्रभाव दिखावना तथा जातै देवनिकेहू आसनकपायमान होजाय ऐसा महान् तपकरि तथा भव्यरूप कमलनिके वनकू प्रफुल्लित करनेवाला जिनेद्रका [illegible] धर्मका प्रभाव प्रगट करना सो मार्गप्रभावनाग है–१५

वहुरि जैसे गऊ वत्सविषै प्रीति करै तैसे सधर्मीकू अवलोकन करि स्नेहतै चित्तका [illegible] होजाना सो प्रवचनवत्सलत्व भावना है–१६

[illegible] भावना समस्त तथा ऊन दर्शनविशुद्धिकरि सहित चितवन करी हुई तीर्थ-[illegible] भावना कारण है–१७

केवली भगवान् तथा श्रुतकेवलीके चरणनिके निकटही होय और तरह नही होय ।

बहुरि तीर्थकरप्रकृतिकू बाधि देवआयुकाही बधकरै सो कल्पवासीनिकैमें महर्द्धिकदेव वा इद्र होइ तथा सर्वार्थसिद्धिपर्यंत अहमिंद्रनिमैजाय उपजै है तहा देवपर्यायमेहू निरतर आस्रव आस्रवे है । अर जाकै पूर्वे मिथ्यात्वगुणस्थानमे तिर्यंचगतिका वा मनुष्यगतिका आयु बधिगया होई ताके नियमतै तीर्थकरप्रकृतिका बध नही होई । अर पूर्वे मिथ्यात्वपरिणामनिमे प्रथम नरकका वा द्वितीय नरकका आयुबध करीलीया होइ अर पाछै केवली श्रुतकेवलीका निकट पाय क्षयोपशम वा क्षायिकसम्यक्त्वकू प्राप्त होइ अविरतनाम चतुर्थगुणस्थानी होइ जातं नरक आयु बधनकीया होइ ताके देशव्रत महाव्रत ग्रहण नही, तातै अविरतगुणस्थानधारी रहे है पछ केवलीका निकटकु पाय षोडशकारण भावना तीर्थकरप्रकृतिका बध करे सो सम्यक्त्व अव्रत-सहित मरणकरि प्रथमनरक जाय तहांभी तीर्थंकरप्रकृतिका आस्रव हुवाकरै । तहासै आयु पूर्ण करी पचकल्याणके धारक तीर्थंकर होई निर्वाण प्राप्त होइ है । अर कोऊ मिथ्यादृष्टी जीव द्वितीय तृतीय नरकका आयु बध कीया होइ अर पिछै क्षयोपशमसम्यक्त्व ग्रहण करि केवली तथा श्रुतकेवलीका निकट पाय षोडशकारणभावना भाय तीर्थंकरप्रकृतिके बधकू करे फिर मनुष्यआयुमे अतमुहूर्त बाकी रहे तहांताई सम्यक्त्व रहै अर समयसमय तीर्थंकर प्रकृतिका आस्रव हुवा करै फिर द्वितीय नरकमे सम्यक्त्व लीएजाय नही। यातै अतर्मुहूर्त्त आयुमे बाकी रही जाय तदि सम्यक्त्व छूटि मिथ्यादृष्टी होइ द्वितीय तृतीय नरकमे जाय हैं। तहा अतर्मुहूर्त्तपर्यंत तो मिथ्यात्व रहे फिर पर्याप्त पूरा हुवा सम्यग्दर्शनकू प्राप्त होइ तदि तीर्थ-करप्रकृतिका फिर आस्रव होनेलगिजाय सो तीन सागर वा सप्त सागर पूर्ण करि वहातै मनुष्यजन्ममै पचकल्याण पाय निर्वाण जाय है ।

इहा भरतक्षेत्रमै वा ऐरावतक्षेत्रमै तो दोय जन्म पहली तीर्थकरप्रकृतिबध कीया होइ ऐसा जीव तीन नरकका आया वा षोडश स्वर्ग वा अहमिंद्र लोकका आयाही तीर्थंकर होइ पचकल्याणक पाय निर्वाण जाय हैं ।

बहुरि विदेहक्षेत्रमै पूर्वभवमे तीर्तंकरप्रकृति बाधि तीसराताई नरकका आया वा कल्पवासी देवका आया वा अहमिंद्रलोकका आया तो पचकल्याणकु प्राप्त होयहै। अर कोऊ मनुष्यपर्यायमे गृहावस्थामे तीर्थकरप्रकृतिबध करै सो तप ज्ञान निर्वाण तीन कल्याण प्राप्त होय है । जातै याके गर्भ जन्म तो तीर्थकरप्रकृतिबध कीया पहली होगए । तदि दोय कल्याण कैसे होई ।

- बहुरि कोऊ मुनिपणामै तीर्थंकरप्रकृतिका बध कीया ऐसा चरम सरीरी दोऊ भवहीमे ज्ञान निर्वाण दोऊ कल्याण पायकरीही निर्वाण जाय है । ऐसे तीर्थंकरप्रकृतिका आस्रव कही नामकर्मके आस्रवके कारण कहे । अब नीच गोत्रके आस्रवके कारण कहे है ।

परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥२५॥

अर्थप्रकाशिका— परकी निंदा अपनी प्रशसा करनी परके विद्यमानहू गुणका आच्छादन करना अर आपके जे गुण नही होइ तिनकूहू प्रगट करना इन भावनिते नीचगोत्रका आस्रव होय है। परजीवनके होते दोष वा अनहोते दोप प्रगट करनेकी इच्छा सो परनिंदा है। अर आपविषे विद्यमान वा अविद्यमान गुणनिको प्रगट करनेकी इच्छा सो आत्मप्रशसा है अर परके सत्यगुणनिकू आच्छादन करना अर अपने झूटेहु गुण प्रगट करना सो परनिदा आत्मप्रशसा है अर परके गुण होंइ तिनकू ढौकणा आपके अनहोते गुण प्रकट करना ते नीचगोत्रके आस्रवके कारण है। विशेष ऐसा। जो जाति कुल वल रूप श्रुत आज्ञा ऐश्वर्य तपका मद करना परकी अवज्ञा करना परकी हास्य करना परके अपवाद करनेका स्वभाव रखना धर्मात्मा पुरुपनिकी निदा करना अपनी उच्चता दिखाना परके यशकू विगाडि देना अपनी असत्यकीर्ति प्रगट करना गुरुनिका तिरस्कार करना गुरुनिका दोष विख्यात करना गुरुनिका स्थान विगाडना अपमान करना, गुरुनिके पीडा उपजावना अवज्ञा करना गुणनिकु लोपना गुरुनिका अजुली नही जोडना गुरुनिकी स्तुति नही करना गुरुनिके गुण नही प्रकाशना गुरुनिकू देखि नही खडा होना तीर्थकरादिककी आज्ञाका लोप करना ए समस्त नीच गोत्रके आस्रवकू कारण है। अव उच्च गोत्रके आस्रव के कारण कहे है—

तद्विपर्ययौ नीचैर्वृत्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥२६॥

अर्थप्रकाशिका— नीचगोत्रके आवते विपर्ययपणाते अर नीचप्रवृत्ति अर उत्सुकताका-अभावतै उच्चगोत्रका आस्रव होय है। परकी प्रशसा करना अपनी निंदा करना परके भले गुणनिकू प्रगट करना अपने गुणकी कथनी नही करना गुणवतानिविषै विनयकरि नम्रीभूत रहना सो नीचैर्वृत्ति है। आपमे विज्ञानादिक अधिक होइ तोहू तिनकृत मद नही करना सो अनुत्सेक है। सो ए उच्चगोत्रके आस्रवके कारण है। अन्यहू जानना।

जाति कुल रूप वल वीर्य विज्ञान ऐश्वर्य तप इनिकरि अधिक होइ तातै आपकी उच्चता नही चितवन करना। अन्यजीवनिकी अवज्ञा नही करना अन्यजीवनितै उद्धतपणा छाडना परकी निदा ग्लानि हास्य अपवादका त्याग करना अभिमानरहित रहना धर्मात्मा जनका पूजा सत्कार करना देखतैही उठि खडा होना अजुली जोडना नम्रीभूत रहना वदना करना [illegible] अवसरमे अन्यपुरुपनिकै ऐसे गुण दुर्ल्लभ तिनकू आपमे होतैहू उद्धतपणा नही करना [illegible] अनिकीजो अपना माहात्म्य नही प्रगट करना धर्मके कारणनिमै परमहर्ष [illegible] उच्चगोत्रके आस्रवके कारण है। अव अतरायकर्मके आस्रवनिकू कहे है—

विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥२७॥

अर्थप्रकाशिका— दानदेनेमैं विघ्न करनेतैं दानांतरायका आस्रव होय है। जो कोऊके लाभ होता होइ तिन लाभके कारणनिकूं विगाडनेतैं लाभांतरायकर्मका आस्रव होय है। परके वीर्य विगाडनेतैं वीर्यांतराय कर्मका आस्रव होय है।

बहुरि विशेष ऐसा। जो कोउ ज्ञानाभ्यास करता होइ ताके निषेध करनेतैं तथा कोऊ सत्कार होता होइ तिसके विनाशनेतैं तथा दान लाभ भोगोपभोग वीर्य स्नान विलेपन अत्तर फुलेल सुगंध पुष्पमाल्यादिक वस्त्र आभरण शय्या आसन भक्षण करने योग्य पेय आस्वादने योग्य लेह्य इत्यादिकनिमे दुष्टभावनातै विघ्न करनेतै तथा विभवसमृद्धि देखि आश्चर्य करनेतैं तथा अपने धन होतैंहू नहीं खरच करनेतैं द्रव्यकी अतिवांछातैं देवताकै चटीकै वस्तुके ग्रहण-करनेतैं निर्दोष उपकरणके त्यागनेतैं परकी शक्ति वीर्य विनाशनेतैं धर्मका छेद करनेतैं सुदर आचारके धारक तपस्वी गुरूका घात करनेतैं धर्मका आयतन तथा जिनप्रतिमाकी पूजाके विगाडनेतैं तथा दीक्षितनिकूं वा दारिद्रीनिकूं दीन अनाथनिकूं कोऊ वस्त्र पात्र स्थान देता होइ तिनका निषेध करनेतैं परकूं वंदिग्राहमे रोकनेतैं गुह्य अंगके छेदनेते कर्ण नासिका ओष्ठके काटनेतैं जीवनिके मारनेतैं अंतरायनाम कर्मका आस्रव होय है।

इहां कोऊ ऐसी आशंका करे। जो कोऊ पुरुष अभक्ष्यभक्षण करै ताकूं वर्जन करै तो ताके अंतराय कर्मका आस्रव कैसे नही कह्या। ताका समाधान। जो कोऊ अभक्ष्यभक्षण करता देखि ऐसा विचार करै जो अभक्ष्यभक्षणतैं नरक जायगा अर हिंसातैं महान् पापका बंध होयगा किसी तरै याके यातना नही होई ऐसी करुणा भावनाकरि वर्जन करे ताके तो अंतरायकर्मका बंध नही होय। अर जाका केवल भोग विगाडनेका अभिप्रायतैंही वर्जन करे ताके अंतरायका आस्रव होयगा बंध नही है।

इहां ऐसा विशेष। जैसे कोऊ मद्यपानी अपनाही रुचिके विशेषतैं मोह मद विभ्रमके करनेवाली मदिरा पीय करिकैं अर ताके परिपाकके वशतैं अनेक विकारकूं प्राप्त होय है। तथा जैसे रोगी अपथ्य भोजन करि अनेक वातपित्तकफादिजनित विकारनिकूं प्राप्त होय है। तैसे यह जीव आस्रवविधिकरि ग्रहणकीया अष्ट प्रकारका ज्ञानावरणादिकर्म तथा एकसो अडतालीस प्रमाण उत्तरकर्म तथा असंख्यात लोकप्रमाण उत्तरोत्तरकर्मकी प्रकृतितैं उपज्या विकारकूं प्राप्त होय है।

अब इहां कोऊ प्रश्न करै। जो आयुकर्मविना सप्तकर्मप्रकृतिनिका आस्रव समय समयप्रति निरंतर अनादिकालतैं होय है तदि तत्प्रदोषादिकनिकरि ज्ञानावरणादिकनिकाही नियम कैसे रह्या। ताका उत्तर। एककालमे जो समयप्रबद्ध आवे हैं तिसके परमाणु आयुविना ज्ञानावरणादि सप्तकर्मनिकूं वटै है तथा अपनेअपने वटैमे यथायोग्य अपनी उत्तरप्रकृतिनिकूं वटै है तातै समस्त कर्मप्रकृतिकै प्रदेशबंधप्रति नियम नही कह्या है। जो ए तत्प्रदोषादिक

भाव कहे ते अनुभागप्रति कारणका नियम है। इन भावनितै जो कर्म आवे सो अनुभागप्रति नियम जणावे है। जैसे कोऊ पुरुषका भाव दानके देनेमे अतराय करनेवाला होइ तदि उस समयमे जो कर्मका आस्रव भया सो सप्तकर्मनिकू वटिगया परतु दानातरायकर्ममे तो रस प्रचुर पडा अर अन्यप्रकृतिनिमे रस मद पडा थोथी रही गई जातै कर्मनिका प्रकृति प्रदेश बध तो योगनिके आधीन होय है। अर स्थिति अनुभाग कपायरूप भावनिके आधीन कोऊमे मद पडे है। ऐसे जानना।

वहुरि आयुकर्मका आस्रवकी विधि ऐसे जाननी। जो कर्मभूमिके मनुष्य तिर्यचनिका वर्तमान आयुका जेता काल होइ ताके ती भाग करने ,जव दोय भाग व्यतीत होइ तव तृतीय भागकी आदिमे अतर्मुहूर्तमात्र आयुबधका काल है। ऐसे अप्ट त्रिभाग है।

उस कालमेही आयुकर्मके आस्रव होनेकी योग्यता है। जैसे किसी मनुष्य तिर्यचका भुज्यमान आयु इक्यासी वर्षका होइ ताके दोय त्रिभाग जो चोवन वर्ष तिन पर्यत तो परभव संवधी आयुके वध करनेकी योग्यताही नही। अर वाकी जो सत्ताइस वर्षकी आयु रही तिसकी आदिविपै अतर्मुहूर्तपर्यंत आयुकर्मके आस्रव होनेकी योग्यता है, वहा नही बधे तो दोय त्रिभागके अठारह वर्ष भए तिनमे आयु बधे नही अर नव वर्ष रह्या तिसका आदिका अतर्मुहूर्त पर्यंत आयुकर्मका आस्रवका अवसर है। अर इहा नही बधे तो छह वर्पपर्यत योग्यता नही तीन वर्पकी आदिका अतर्मुहूर्त्तमे योग्यता है अर इहा नही बधे तो दोयवर्षपर्यत नही बधे एक वर्पकी आदिका अतर्मुहूर्तमे बध करे। अर इहाहू जो बध नही होइ तो आठ महिनापर्यंत योग्यता नही पछे आयुका महीना चारकी आदिका अतर्मुहूर्तमे आयुबध होनेकी योग्यता है। इहाहू नही बधे तो अस्सी दिनपर्यंत योग्यता नही, च्यालीस दिनकी आदिके अतर्मुहूर्त्तमे बधकी योग्यता है। अर इहाहू वध नही होइ तो चालीस दिनका दोय त्रिभाग जो छवीस दिन अर चालीस घडीपर्यंत आयुवधकी योग्यता नही है। पछे तेरा दिन वीसघडीकी आयु रहे आदिका अतर्मुहूर्त्तमे आयुवधक योग्यता है। इहाहू नही बधे तो आठ दिन वीस घडी अस्सी पल पर्यंत बधकी योग्यता नही है चार दिन दस घडीकी योग्यता है। ऐसे आठ अपकर्पण आयुके बधने योग्य है। अर इन आठ अपकर्पकाभी यह नियम नही जो इहा आयुका बध होयही। [illegible] अपकर्प है नही, तदि कहा बधे। सो कहे है। भुज्यमान आयुके कालमे एक [illegible] असख्यातवा भाग प्रमाण अवशेष रह्या परभवसबधी आयुका बध होयही ऐसा [illegible] है।

ार बांधनेवाले सख्यातगुणे, यातै पाचवार, यातै च्यारवार, यातै तीनवार, यातै एक अपक-
ामै आयुवध करनेवाले सख्यात असख्यात गुणे है ।

वहुरि जो एक अपकर्षणमै एकवार जैसी आयु बधीजाय सो अन्य अपकर्षमैभी वाही
अन्य आयुको आस्रव नही होइ स्थिति हीन अधिक बध्र करेही । वहुरि देव नारकीनिकै
ुका त्रिभागमै पराभवका आयु नाही बधेहै भुज्यमान आयुका छैमहीना अवशेष रहै छै
िनाकै त्रिभागमै वधेहै सोहू अष्ट अपकर्षरूप जानना ।

वहुरि एकसमयकरि अधिक कोटीपूर्वकू आदिसे तीन पल्यपर्यत सख्यात असख्यात
की आयुके धारक भोगभूमिके मनुष्यके तिर्यचनिकै भुज्यमान आयुका नव महीना अवशेष
त्रिभागमै आयुवध करै है ऐसे आस्रव कह्या ।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ।।६।।

ऐसे तत्वार्थका है ज्ञान जातै ऐसा दशाध्यायरूप जो मोक्षशास्त्र तामै छठा अध्याय
ाप्त भया ।

— दोहा —

है जातै तत्त्वार्थका । अधिगम सबसुखदाय ।।
मोक्षशात्र मंगलमय । नमो छठा अध्याय ।।६।।

छठा अध्याय समाप्तः

अर्थ प्रकाशिका

(तत्वार्थ टीका)

पं. सदासुखदास विरचित

।। ॐ नमः सिद्धेभ्य ।।

।। ॐ नम परमात्मने ।।

अथ सप्तमोऽध्यायः ।।

आगे सातमे अध्यायका प्रारभ करे है ।

— दोहा —

।। पापपुन्यको भेद जिन । कह्यो सुज्ञानविवेक ।।
।। मोहभाव निर्मूलतैं । आस्रव टिकै न एक ।।१।।

आस्रव विशेषविधानके अर्थि व्रत कहनेकू सूत्र कहे है—

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ।।१।।

अर्थप्रकाशिका— हिंसा अनृत स्तेय अब्रह्म परिग्रह इनतैं जो विरत कहिए निवृत्त होना सो व्रत है । हिंसादिकनिका स्वरूप आगै कहसी । चारित्रमोहके उपशम क्षयोपशमतैं जो हिंसादिक पचपापनितैं विरतिरूप होना सो व्रत है । वुद्धिपूर्वक पापनिका त्यागरूप नियम सो विरति है । व्रतनिमैं हिंसाका त्याग प्रधान है । तातै अहिंसाव्रतकू आदिमैं कह्या हैं । ऐसे अहिंसा—१, सत्य—२, अचौर्य्य—३, ब्रह्मचर्य—४, परिग्रहत्याग—५, ऐसे व्रतनिके नाम है । अब व्रतनिके द्विविधपणा जणावनेकू सूत्र कहेहै—

देशसर्वतोऽणुमहती ॥२॥

अर्थप्रकाशिका– एही पचव्रत एकदेश होय तव अणुव्रत होयहै । तातैं इन पाचोपापनिका जो एकदेशत्यागी होइ सो अणुव्रती कहावेहै । अर पाचो पापनिका समस्तपणाकरी त्याग करै सो महाव्रती कहिए हैं। तिनका ऐसा विशेष है। जो मन वचन काय कृत कारित अनुमोदनाकरि समस्त त्रसस्थावरनिकी विराधनाकरि रहित समस्त आरभ परिग्रहका त्यागी देहादिक समस्त परद्रव्यनिमैं प्रवर्तें तोहू मनवचनकायतैं मारनेका सकल्पकरि त्रसजीवनिकी हिसा आप करे नही अन्यतैं करावे नही अर अन्य कोऊ करै ताकू भला जाने नही अर जो गृहमे तिष्ठता गृहस्थावस्थाहीमैं अणुव्रतरूप श्रावकका व्रत धारण करेहैं तिसकै आरभजनित हिंसाका तो त्याग वणी सके नही अर अपने मन वचन कायके सकल्पकरी द्वीद्रियादि त्रसजीवनिकी हिंसा करे नही करतेकू भला जाने नही अर थावरकी हिंसाका त्याग नही परतु प्रयोजनविना स्थावरकी विराधना करे नही अर प्रयोजनके वशतैं पृथ्वी जलादिककी विराधना होइ ताकू भला जाणे नही तातैं गृहस्थकै एकदेशहिसाका त्याग है ।

ऐसेही स्थूल असत्यका चोरी कुशीलका परिग्रहका त्याग करे सो अणुव्रती है अर याहीकू देशव्रती कहिए है । अव इन व्रतनिकू धारण करनेवाला ज्ञानी इन व्रतनिकी रक्षाके अर्थि जे भावना भावै तिनकै अर्थि सूत्र कहे है–

तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पंच पंच ॥३॥

अर्थप्रकाशिका– इन व्रतनिके स्थिर करनेके अर्थि एकएक व्रतनिकी पांचपाच भावना है। वारवार चितवन करना सो भोवना है। इनितैं व्रत दृढ होय है। अव अहिंसाव्रतकी भावना कहे है–

वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानि पंच ॥४॥

अर्थप्रकाशिका– वचनगुप्ति मनगुप्ति ईर्यासमिति आदाननिक्षेपणसमिति आलोकितपानभोजन ए पाच अहिंसाव्रतकी भावना है। वचनकी प्रवृत्तिकू भले प्रकार रोकना सो वचनगुप्ति है। मनको प्रवृत्तिकू भले प्रकार रोकना सो मनोगुप्ति है, भूमिकू अवलोकनकरि गमनाचारतैं चालना सो ईर्यासमिति है। यत्नाचारतैं जीवनिकी विराधन रहित वस्तूकू उठावना धरना सो आदाननिक्षेपणसमिति है। आहार पान दिवसविषैं अतरगज्ञानदृष्टितैं अर [illegible] देखि शोधि भक्षण करना सो आलोकितपानभोजन है। ए पाच भावना अहिसाव्रतकी [illegible] चितवन करना। अव सत्यव्रतकी पाच भावना कहनेकू सूत्र कहे है–

क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पंच ॥५॥

अर्थप्रकाशिका— क्रोधका प्रत्याख्यान कहिए त्याग। अर लोभका त्याग। भयका त्याग। हास्यका त्याग। अर पापरहित सूत्रके अनुसार बोलना सो अनुवीचिभाषण। ए पांच भावना सत्यव्रतकी है। जातै क्रोध लोभ भय हास्य इनिके निमित्ततै असत्यवचन बोलिए। तातै इनिका त्यागरूप भावना राखणी अर अपना परका अहितहितकू विचारि बोलना। ऐसे सत्यकी पचभावना कही। अब अचौर्य व्रतकी पचभावना कहनेकू सूत्र कहे है—

शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धिसधर्माविसंवादाः पंच ॥६॥

अर्थप्रकाशिका— शून्यागारमे वसना, विमोचितवासमै वसना, परका वर्जन नही करना, भिक्षाकी शुद्धिता करना, सधर्मनिसो विसवाद नही करना, ए पच भावना अदत्तादान-वर्जव्रतकी है। शून्यगृह जो पर्वत गुफा वन वृक्ष कोटरादिकनिमे वसना, अर परकरि छोडा हुवा उजडस्थानमे वसना, तथा आप जठे जवे अन्य कोऊ आवे ताकू वर्जन नही करना, तथा पहली कोऊ वासकरि राख्या होइ ताकू काढी नही वसना, अर आचारागके मार्गकरि भिक्षाकी शुद्धिता करना, सधर्म्मनितै विसवाद नाही करना, ए अचौर्यव्रतकी पच भावना अव ब्रह्मचर्य-व्रतकी पच भावना कहे हैं—

स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मनोहराङ्गनिरीक्षणपूर्वरतानुस्मरणवृष्येष्टरस-स्वशरीरसंस्कारत्यागाः पंच ॥७॥

अर्थप्रकाशिका— स्त्रीनिके विषे राग उत्पन्न करनेवाली कथाका त्याग करना, स्त्रीनिके सुदरमनोहर अगनिके रागसहित अवलोकनका त्याग करना, त्याग नही कीए पहली भोगकीए थे तिनके स्मरण करनेका त्याग करना, वृष्येष्टरस कहिए पुष्ट इष्ट रस जो कामोद्दीपन करने-वाला इद्रियनिकै लालसा उपजावनेवाला रसका त्याग करना, अर अपने शरीरकू कज्जल कुकुम पुष्प तैलादिकरि सस्कार करनेका त्याग ए पाच भावना ब्रह्मचर्यव्रतकी जानना। अव परिग्रह-त्यागव्रतकी पंच भावना कहेहै—

मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रियविषयरागद्वेषवर्जनानि पंच ॥८॥

अर्थप्रकाशिका— पाच इद्रियनिके जे स्पर्श रसादिक इष्ट अनिष्टविपय तिन विषै रागद्वेष छाडना सो परिग्रहत्याग व्रतकी पच भावना है। ऐसे पच व्रतनिकी पाच पाच भावना निरतर भावनेतै व्रत शिथिल नही होय है। जैसे व्रतनिकी दृढता करनेकू भावना कही तैसे व्रतनिकू विरोधी हिसादिकनितै पराङ्मुख होनेकू भावना कहे है—

हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् ॥९॥

अर्थप्रकाशिका— हिसादिक पच पाप होतै सतै इस लोकमे तथा परलोकमे अपाय कहिए नाश तथा भय अर अवद्य कहिए निदनीकपणा देखिए है। ऐसे भावना करवोयोग्य है। कैसे सो कहिए है। हिसक है सो नित्यही उद्वेगरूप होय है। अर निरतर अनेकजीवनितै वैरका बाधनेवाला होय है अर इस लोकमे वध क्लेशादिकनिकू प्राप्त होय है। अर परलोकमे अशुभगति अर निदनीय होय है। तातै हिंसातै विरक्तता श्रेष्ठ है कल्याणकारिणी है। तैसेही अनृतवादी समस्तके श्रद्धानयोग्य नही होय है।

इस लोकहीमे जिव्हाका छेद तथा तीव्रदडादिक तथा जिनकू असत्यवचनतै दुखित लोग ते वैरी भए तिनते महान् कष्टनिकू प्राप्त होय है। अर परलोकमे अशुभगति होय है अर निदनीक होय है। तातै अनृतवचनते विरक्त होना कल्याणकारी है। तैसे परधनहरणमे आसक्त है बुद्धि जाकी ऐसा चोर है सो सर्वके भय उपाजनेवाला होय है।

अर इस लोकहीमे मारन ताडन वध बधन अर हस्त पाव कर्ण नासिका ओष्ठ इत्यादिकनिका छेदन भेदन सर्वस्वहरणादिकनिकूं प्राप्त होय है। अर परलोकमे अशुभगति अर निदनीक होय है। तातै चोरीतै विरक्त होना कल्याणकारी है। तथा कुशीलपुरुष है सो सदा विभ्रमकरि उन्मत्तचित्त रहे है। अर स्त्रीनिकरि ठिग्याहुवा वनका हस्तीकीज्यो वध बध परिक्लेशादिकनिकू भोगे है। मोहकरी तिरस्कृत हुवा कार्य अकार्यकू नही जाणे है। अर [illegible] कुशलकू नही आचरण करे है। अर जो परकी स्त्रीका आलिगनमे रति करे है सो इस लोकमे वैरका वधाणकरि लिगछेदन वध बधन सर्वस्वहरणादिक नाशकूं प्राप्त होय है। परलोकमे अशुभगति कू प्राप्त होय है अर निंद्य होय है। यातै कुशीलतै विरक्त होना [illegible]

अर्थप्रकाशिका– हिंसादिक पच पाप है ते दु खरूपही है ऐसी भावना राखना। हिंसादिक दु.खका कारण है तातै हिंसादिक दु खही है। इहा कारणमे कार्यका उपचारकरि कह्या है। हिंसादिक पाप है ते असातावेदनीयादि अशुभकर्मका कारण है अशुभकर्म दु.खका कारण है ऐसे दु.खका कारणका कारणभी है तातै दु खही हैं। जैसे बधन पीडन मोकू अप्रिय है तैसेही अन्य समस्तप्राणीनिकू अप्रिय है। जैसे कटुक कठोरवचन मोकू कोऊ कहे ताके श्रवण करनेतै हमारे अति तीव्र दु ख उपजै है तैसे अन्य जीवनिकैंहू दु.ख उपजावे है। जैसे मेरा इष्टद्रव्यकू चोरनिकरि चोरतै हमारे महादु ख होय है तैसे अन्य जीवनिकैंहू होय है जैसे हमारी स्त्रीका कोऊ तिरस्कार करै तिस करि हमारे तीव्र मानसिक पीडा होय तैसे अन्य जीवनिकैंहू अतिदु ख होय है। जैसे आपके धनादिक परिग्रह नही प्राप्त होतै वा प्राप्तहुवा ताकू नष्ट होतै वाछा रक्षा शोक इत्यादि करि उपजा दु खकू प्राप्त होय हैं। तैसेही परिग्रहको वाछातै तथा परिग्रहके नष्ट होनेतै समस्तजीवनिके दु ख होय है। तातै हिंसादिक पापनितै विरक्त होनाही जीवका कल्याण है ।

इहा कोऊ प्रश्न करै। सुदरस्त्रीका कोमल सुदर शरीरका स्पर्शनतै रतिसुख उपजता देखिएहै सो दु खरूप कैसे कह्या।ताका उतर। जो यो सुख नहीहै भ्रातितै सुखरूप दीखैहै। वेदनाका इलाज है। जैसे चाम मास रूधिर है ते जव विकारते कलुपपणाने प्राप्तहोइ खाजिकी उत्कटताकरि वाधा करेहै तदि नखनतै ठीकरी फत्तर इत्यादिकनिते अपना शरीरकू खुजावेहै। गात्रकू छेंदने रगडनेतै रूधिरकरि लिप्त हुवाहू अत्यत खुजायकरि दु खहीको सुख मानेहै। तैसे मैथुन सेवनेवाराहू मोहतै दु खहीकू सुख मानेहै। तथा मनुष्य असुर नथा सुरेंद्रादिक समस्तही अपने साथि उपजि इद्रिया तिनकरि उपजा दु खकू सहनेकू असमर्थ भए रमणीकविषयनिमै रमेहै जाते समस्त ससारीजिवनिकै इद्रियनिकरि उपज्या परोक्षइद्रियाकै आधिन ज्ञान है ताते इद्रियनिविषैंही मित्रता वर्तैहै अर इद्रियानिकै अपनेअपने विषयनिमे अतिलालसाकरी झपापात प्रवर्तैहै ।

जैसें अग्नीकरि तप्तायमान लोहका गोला तैसे इद्रियनिकी तापकरी तप्तायमान जो आत्मा ताके विषयनिमे अतितृष्णातै उपज्या अतिदु खका वेगकू सहनेकू असमर्थ भया विषयनिमे रमैहै। जैसे कोऊ पुरुष च्यारोतरफ अग्निकी ज्वालातै वलता अग्निके आतापकू नही सही सकता विष्टाका भऱ्या महादुर्गंधकुडमै जाय पडेहै तिस विष्टामे मस्तकपर्यत डूवि ताकूही आतापरहित सुख मानि मरण करेहै ।

तैसे स्पर्शनइद्रियकी आताप सहनेकू असमर्थ हुवा ससारीजीव स्त्रीयानिका दुर्गंधदेहमे कामकी आतापरहित सुख मानता अतितृष्णातै उपज्या तीव्रदु खकू भोगता मरणकरि ससारमे नष्ट होजाय है तथा इस जीवके इद्रिय तो महाव्याधि हैं अर विषय हैं सो किंचित्काल व्याधि हो

उपशमताका कारण औषध है। जिनकै इंद्रिया जीवती तिष्टै है तिनके स्वाभाविकही दुख है। दुख नही होइ तो विषयनिमे उछलिउछलि कैसे पडे। सो देखिएही है।

कपटकी हथनीका शरीरका स्पर्शकै अर्थि वनका हस्ती स्पर्शनेद्रियकी आतापकरि बंधनमे पडेहै। धीवरके पसारे काटेविषै रसनाइद्रियका विषयका लोलुपी मत्स्य फसि मरेहै। घ्राणेद्रियकी आतापका मान्या भ्रमर है सो सकोचके सन्मुख कमलका गधकू ग्रहणकरता मरण करेहै। नेत्रेद्रियजनित सतापकू नही सहि सकता रूपका लोभी पतग दीपककी ज्वालामे भस्म होयहै।

कर्णेद्रियजनित तृष्णाकी आतापकू नही सहि सकता हरिण शिकारिकरी गाया रागमे अचेत होइ मान्या जायहै। इनि दुर्निवार इद्रियनिकी वेदनाके वसि पडे जीवनीका निकटही है मरण जिनमे ऐसे विपयनिविषै पतन होयहीहै इद्रियजनित आतापतुल्य त्रैलोक्यमे आताप नहीहै। जैसा इद्रियनिका आताप है तैसा अग्निका नही शस्त्रका नही विषका नही।

इंद्रियनिका आताप सहनेकू असमर्थभये विषयनिके अर्थि अग्निमे बलैहै शस्त्रनिके सन्मुख होइहै, विषभक्षण करेहै, धर्म लोपेहैं, मात पिता गुरु उपाध्यायकू विषयनिका रोकनेवाला जानि मारि डारेहैं।

इस ससारमे दुखही केवल इद्रियजनित है। जिनके इद्रियरहित अतीद्रिय केवलज्ञान है तिनहीके निराकुलता लिए ज्ञानानदसुख है। यातै इद्रियाके आधीन है त्याके स्वाभाविक दुखही है जो स्वाभाविकदुख नही होइ तो विषयनिमे प्रवृत्ति कैसे करे।

जाकै शीतज्वर मिटिगया सो अग्नितै तापना नाही चाहेगा। जाकै दाहज्वर मिटिगया सो काज्याका सींचना नही चाहेगा। जाकै नेत्ररोग मिटिगया सो खपरचा अजनादिक नहीं चाहैहै। जाकै कर्णवा शूल मिटिगया सो कर्णमे बकराका मूत्र नही डारेगा। जाकै [illegible] मिटिगया सो मलमपट्टी नही करेगा। तैसे जाकै इद्रियजनित वेदना नही ताकै विषयनिमे प्रवृत्ति कदाचित् नही होयगी।

क्षुधा वेदनाविना भोजन कौन करे? तृषावेदनाविना जल कौन पीवे? गरमविना [illegible] कौन चाहै? शीतविना रूईका भन्या तथा रोमका वस्त्र कौन वोढे? तातै ए समस्त [illegible] इलाज है। वेदना घटिजाय ताकू अज्ञानी सुख मानेहै। सुख तो जो है जहा [illegible]। [illegible] स्वाधीन अतीद्रिय अनतज्ञान है सोही सुख है अन्य नही ऐसा [illegible]। [illegible] हिंसादिकनिकू दुखरूपही चितन करना। अब औरहूं व्रतनिके अर्थि

जो दूरी नही होते दीखै तो जैसे बहुमोल्यवस्तुनिका नाश नही होइ तैसे गृहमैसू भिन्न होइ तिष्ठै तैसे व्रत शील सयमादिक पुण्य परिणामनिके सचयसयुक्त जो शरीर तिसका विनाश नाही चाहेहै। तथापि जो दुर्भिक्ष जरा रोग उपसर्ग्गादिक शरीरके नाशके कारण आय प्राप्त-होइ तो जैसे अपना सम्यग्दर्शनादि गुण नही मलिन होइ तैसे यत्न करे अर जो यत्नतैंहू देहका मरण नही दूरि होत जाणै तो जैसे अपना व्रत सयमादिक नही विनसै तैसे आहारादिकका त्यागकरि सल्लेखनामरण करे तिसकै आत्मघात कैसे होय।

बहुरि जैसे तपमे तिष्ठते साधुकै शीत उष्णादिजनित दुःख सुख होतेहू सुख-दुःखरूप अभिप्रायके अभावतै सुखदुःखमे रागद्वेष नही होनेतै सुखदुःखकृत कर्मबध नही होयहै। तैसे अरहतप्रणीत सल्लेखना करनेवाले पुरुषके जीवने मरणेके अभिप्रायरहित पुरुषकै अपने मरणमे रागद्वेषके अभावतै सल्लेखनामरणमे आत्मघात कदाचित् नही होय है। ऐसे व्रतनिका तथा सल्लेखनाका स्वरूप कह्या। जाकै प्रमत्तयोगविना आत्मज्ञानसहित देहसू भिन्न कलेवरकू अवश्यविनाशीक जाणि त्याग करै ताके हिंसा नही। अब सम्यक्त्वके पच अतिचार कहे है–

शङ्काकाङ्क्षाविचिकित्सान्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतिचाराः ॥२३॥

अर्थप्रकाशिका– शका, काक्षा, विचिकित्सा, अन्यदृष्टिप्रशसा, अन्यदृष्टिसस्तव ए सम्यग्दर्शनके पाच अतिचार है। तहा जो अरहतके परमागमतै प्ररूपणकीए अर्थमे सशय सो शकाहै तथा अपने आत्माकू ज्ञाता द्रष्टा अखड अविनाशी परपुद्गलनिके सवधतै भिन्न जाणिकरिकैंहू जो सप्तभयकू प्राप्तहोना सो शकानाम अतिचार है। इस लोक परलोकसवधी भोगनिमै वाछा सो काक्षा नाम अतिचार है। तथा दुःखित दरिद्री रोगी इत्यादिक क्लेशितमनुष्य तिर्यचनिकू देखि ग्लानि करना तथा अशुभकर्मका उदयमै ग्लानि करना तथा अरहतके परमागमतै जो अनशनादिक तप अर यावज्जीव स्नानका त्याग त्रिकाल परिषहका सहना इत्यादिक आचरणमे ग्लानिकरना सो विचिकित्सा नाम अतिचार है। मिथ्यादृष्टीनिका ज्ञान तप शील दानादि देखि अपना मनविषै भला जानना सो अन्यदृष्टिप्रशसा नाम अतिचार है। अर मिथ्यादृष्टीके ज्ञान चारित्र शील तपादिकनिका वचनकरि प्रशसा करना सो सस्तव नाम अतिचार है। ऐसे सम्यग्दर्शनके पाच अतिचार कहै। ऐसेही व्रतादिकनिके अतिचार है–

व्रतशीलेषु पंच पंच यथाक्रमम् ॥२४॥

अर्थप्रकाशिका– अहिंसादिक अणुव्रत अर दिग्विरत्यादिक शील इनकेभी पांच पांच अतिचार यथाक्रमतै कहिएहै सो जानना। जातै जाणेविना त्यागपूर्वक व्रत शुद्ध कैसे होइ। अब अहिंसा अणुव्रतके अतिचार कहे है–

बन्धवधच्छेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥२५॥

वस्त्रविकाररूप वस्त्र आभरणादिकहू अनुपसेव्य है ते त्यागनेयोग्य है। तातै त्रसवद्धका स्थान अर प्रमाद करनेके कारण अर वहुवध अर अनिष्ट अर अनुपसेव्य इनिकूँ त्यागी अन्य भोगनिमै तथा न्यायरूप परिभोगनिमे कालकी मर्यादाकरि त्याग करै । सो भोगपरिभोगप्रमाण व्रत है।

वहुरि अतिथि जे मोक्षकै अर्थि उद्यमी अर सयममे लीन अर अतरग वहिरग शुद्ध ऐसे व्रनिकै अर्थि शुद्ध मनकरि निर्दोषभिक्षा देना योग्य है। जातै जिनधर्ममै लीन यती है ते याचनारहित उद्गमादि वियालीस दोष वत्तीस अतरायरहित चोदहमल टालि भक्तिपूर्वक गृहस्थनिकरि दीया भोजन ग्रहण करै है। तातै ग्रहस्थ भक्तिपूर्वक सयमकी वृद्धि करनेवाला भोजन देवै तथा दर्शन ज्ञान चारित्रकी वृद्धिका कारण धर्मोपकरण देवैहै। तथा सयमकै अर्थि रोगका नाश करनेवाला प्राशुक औषध देना तथा ध्यानाध्ययनका कारण शुद्ध वस्तिका देना ऐसे चार प्रकार दानमै अपना भोजन धनादिकका विभाग करना सो अतिथिसविभाग नाम व्रत है ऐसे पचव्रत अर सप्तसील ए वारह व्रत श्रावककै होयहै। अव सल्लेखनाभी कहेहै।

मारणान्तिकी सल्लेखनां योषिता ॥२२॥

अर्थप्रकाशिका– मरणके अतमै सल्लेखना जो है ताहि योषिता कहिए प्रीतिकरै सेवन करै। आयु इद्रिय वल स्वासोछास इन दशप्राणनिका वियोगकूं मरण कहिएहै। मरणरूप अर्तविर्षे सल्लेखनाकू प्रीतिकरि सेवन करना। सो सल्लेखना दोय प्रकार है। एक कायसल्लेखना दूजी कपायसल्लेखना है तहा कायकू जो सम्यक् कहिए आत्महितकै अर्थि लेखना कहिए कृश करना सो सल्लेखना है। अर कषायनिकू आत्महितकै अर्थि कृश करना सो कषायसल्लेखना है। जैसे वात पित्त कफादिकके प्रकोपकरि मरणके अवसरमै परिणाम आकुल होइ आराधनातै नही चलायमान होइ तैसे काय सल्लेखना करै। अर मोह राग द्वेषदिककरि अपना ज्ञानदर्शनपरिणाम मरणसमयमै मलिन नही होइ तैसे कपायसलेखना करै ऐसे अनशन रसपरित्यागादिकका क्रमकरि तो जो देहका त्यागकरै अर शुभध्यान स्वाध्यायादिक करि परमात्मस्वरूपमै एकाग्रता करता ससारसवधी समस्तविकल्प छाडि च्यार आराधनाका आराधक हुवा प्राणत्याग करै ताकै सल्लेखनामरण होयहै ससारके नाश करनेकू समर्थ है।

जो दूरी नही होते दीखै तो जैसे वहुमोल्यवस्तुनिका नाश नही होइ तैसे गृहमैसूं भिन्न होइ तिष्ठै तैसे व्रत शील सयमादिक पुण्य परिणामनिके सचयसयुक्त जो शरीर तिसका विनाश नाही चाहेहै। तथापि जो दुर्भिक्ष जरा रोग उपसर्गादिक शरीरके नाशके कारण आय प्राप्त-होइ तो जैसे अपना सम्यग्दर्शनादि गुण नही मलिन होइ तैसे यत्न करे अर जो यत्नतैंहू देहका मरण नही दूरि होत जाणै तो जैसे अपना व्रत सयमादिक नही विनसै तैसे आहारादिकका त्यागकरि सल्लेखनामरण करे तिसकै आत्मघात कैसे होय।

वहुरि जैसे तपमे तिष्ठते साधुकै शीत उष्णादिजनित दुख सुख होतेहू सुख-दुखरूप अभिप्रायके अभावतै सुखदुखमे रागद्वेष नही होनेतै सुखदु.खकृत कर्मबध नही होयहै। तैसे अरहतप्रणीत सल्लेखना करनेवाले पुरुषके जीवने मरणेके अभिप्रायरहित पुरुषकै अपने मरणमे रागद्वेषके अभावतें सल्लेखनामरणमे आत्मघात कदाचित् नही होय है। ऐसे व्रतनिका तथा सल्लेखनाका स्वरूप कह्या। जाकै प्रमत्तयोगविना आत्मज्ञानसहित देहसू भिन्न कलेवरकू अवश्यविनाशीक जाणि त्याग करै ताके हिसा नही। अव सम्यक्त्वके पच अतिचार कहे है—

शङ्काकाङ्क्षाविचिकित्सान्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतिचाराः ॥२३॥

अर्थप्रकाशिका— शका, काक्षा, विचिकित्सा, अन्यदृष्टिप्रशसा, अन्यदृष्टिसस्तव ए सम्यग्दर्शनके पाच अतिचार है। तहा जो अरहतके परमागमतै प्ररूपणकीए अर्थमे सशय सो शकाहै तथा अपने आत्माकू ज्ञाता द्रष्टा अखड अविनाशी परपुद्गलनिके सवधतै भिन्न जाणिकरिकैंहू जो सप्तभयकू प्राप्तहोना सो शकानाम अतिचार है। इस लोक परलोकसवधी भोगनिमैं वाछा सो कांक्षा नाम अतिचार है। तथा दुखित दरिद्री रोगी इत्यादिक क्लेशितमनुष्य तिर्यचनिकू देखि ग्लानि करना तथा अशुभकर्मका उदयमै ग्लानि करना तथा अरहतके परमागमतै जो अनशनादिक तप अर यावज्जीव स्नानका त्याग त्रिकाल परिषहका सहना इत्यादिक आचरणमे ग्लानिकरना सो विचिकित्सा नाम अतिचार है। मिथ्यादृष्टीनिका ज्ञान तप शील दानादि देखि अपना मनविषै भला जानना सो अन्यदृष्टिप्रशसा नाम अतिचार है। अर मिथ्यादृष्टीके ज्ञान चारित्र शील तपादिकनिका वचनकरि प्रशसा करना सो सस्तव नाम अतिचार है। ऐसे सम्यग्दर्शनके पाच अतिचार कहै। ऐसेही व्रतादिकनिके अतिचार है—

व्रतशीलेषु पंच पंच यथाक्रमम् ॥२४॥

अर्थप्रकाशिका— अहिसादिक अणुव्रत अर दिग्विरत्यादिक शील इनकेभी पाच पाच अतिचार यथाक्रमतै कहिएहै सो जानना। जातै जाणेविना त्यागपूर्वक व्रत शुद्ध कैसे होइ। अव अहिसा अणुव्रतके अतिचार कहे है—

बन्धवधच्छेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥२५॥

अर्थि आप युक्त करे तथा अन्यतै प्रेरणा करावे तथा करतेकू भला माने सो स्तेनप्रयोग अति-चार है। बहुरि जो चोरकू प्रेरणाभी नही करी अर अनुमोदनाहू नही करी परतु चोरका लाया वस्तुकू ग्रहणकरे सो तदाहृतादान नामअतिचार है। बहुरि जो उचित न्यायकू छाडि जो देना ग्रहणकरना सो विरुद्ध है राज्यके न्यायतै विरुद्ध सो विरुद्धराज्यातिक्रम है। ज्यो बहुत-मोलकी वस्तु अल्पमोलकरि लेना इत्यादिक विरुद्धराज्यातिक्रम दोष है। जो तोलावाट तो मान है अर तोलनेकी ताखडी उन्मान है तहा न्यूनकरिके अन्यके अर्थि देना अर अधिककरी लेना ऐसा कपटका प्रयोग रखना सो हीनाधिकमानोन्मान नाम अतिचार है। बहुरि जो सुवर्णादिक धातु तथा वस्त्र तथा कुकुम कर्पूरादिक तिनमे खोटी मिलाय खरीमे वेचना सो मायाचारपूर्वक व्यवहार सो प्रतिरूपकव्यवहार नाम अतिचार है। ऐसे अदत्तादानत्याग नाम अणुव्रतके पाच अतिचार त्यागनेयोग्य है। अब ब्रह्मचर्यव्रतके पाच अतिचार कहे है-

परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीतागमनानङ्गक्रीडा-कामतीव्राभिनिवेशाः ॥२८॥

अर्थप्रकाशिका- परविवाहकरण। अपरिगृहीतेत्वरिकागमन। परिग्रहीतेत्वरिका-गमन। अनगक्रीडा। कामतीव्रता। ए ब्रह्मचर्यव्रतके पाच अतिचार है। सातावेदनीय अर चारित्रमोहनीय कर्मके उदयतै जो कन्याका वरणा सो विवाह है। परका जो विवाह करनासो परविवाहकरण नाम अतिचार है। बहुरि ज्ञानावरणकर्मके क्षयोपशमतै प्राप्त भई जो कला-गुणप्रवीणता ताकरीके तथा स्त्रीवेद नामकर्मके तीव्रउदयकरिके तथा अगोपाग नाम कर्मका उदयतै परपुरुषतै रमनेका जाका स्वभाव होइ सो व्यभिरिणी इत्वरिका है। तहा इत्वरिकाके दोय भेद। एक तो जाका कोउ स्वामी नही होइ ऐसी जो परपुरुषगामिनी कुलटा सो अपरि-गृहीत इत्वरिका है। अर जाके स्वामी होइ एक पुरुषकी परिणीतिहौइकरी जो परपुरुषनिमे गमन करनेवाली कुलटा सो परिगृहीत इत्वरिका है। इनि दोऊ प्रकारकी व्याभिचारणीके जावना बुलावना लेना देना वचनालाप करना ते दोऊ शील खडनेके कारण अतिचार है। बहुरि कामसेवनयोग्य अगनिकू छाडि अन्य अगनिमे क्रीडा सो अगनक्रीडा नाम अतिचार है॥ बहुरि काममे अधिक परिणाम तथा कामसेवनमे निरतर परिणाम सो कामती-व्राभिनिवेश नाम अतिचार है। ऐसे ए ब्रह्मचर्य नाम अणुव्रतके धारनकरनेवाले श्रावकके ए पाच अतिचार त्यागनेयोग्य है। बहुरि दीक्षितस्त्री अतिवाला स्त्री तिर्यंचणी इनका त्याग कामतीव्रताकरि कह्याही। जिस पापीके लोकापवादका भय तथा राजका भय तथा परलोकभय नही होयगा तिसके ऐसे अन्यायमे प्रवृत्ति होय है तातै लौकिकजनही इनिका परिहार करे हैं तदि श्रावक कैसे ग्रहण करे। अब परिग्रहप्रमाण अतिचार कहे है-

क्षेत्रवास्तुहिरण्यसुवर्णधनधान्यदासीदासकुप्यभाण्डप्रमाणातिक्रमाः ॥२९॥

अर्थप्रकाशिका- वध, वध, छेद, अतिभारारोपण, अन्नपाननिरोध ए पाच अहिंसा अणुव्रतके अतिचार है। तहा जो प्राणीनिका वांछितदेशमे गमनकू रोकना खोडा बेडी शाकल पींजरा कोठा रसा जेवडानिकरि वाधना सो बध अतिचार है।

वहुरि लाठी चाबका वेतादिककरि प्राणिनिका घात करना सो बध नाम अतिचार है। वहुरि कर्ण नासिका लिंगादि अंग उपांगनिका छेदना सो छेद नाम अतिचार है। वहुरि वलध उंट घोडा भैंसा इत्यादिक ऊपरि जो भार बोझ लादनेकी जो न्यायरूप मर्याद तातैं अधिक भारका लाधना तथा मर्यादतैं अधिक दूरिचलावना सो अतिभारारोपण नाम अतिचार है। वहुरि मनुष्य तिर्यंचादिकनिकू खानपानादिकका निरोधकरि भूखा तिसाया राखना तथा काल उल्लघनकरि भोजन पान देना सो अन्नपाननिरोध नाम अतिचार है। ऐसे अहिंसा अणुव्रतके पंच अतिचार कहे। अव सत्य अणुव्रतको कहे है-

मिथ्योपदेशरहोऽभ्याख्यानकूटलेखक्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रभेदाः ॥२६॥

अर्थप्रकाशिका- मिथ्याउपदेश, रहोभ्याख्यान, कूटलेखक्रिया, न्यासापहार, साकार-मंत्रभेद। ए पाच सत्य अणुव्रतके अतिचार है। तहा जो स्वर्गमोक्षके साधक क्रियाविशेषविषैं अन्यजीवनिकू अन्यथा प्रवर्त्तन करावना झूटा उपदेश देना सो मिथ्योपदेश नाम अतिचार है। तथा स्त्रीपुरुषनिकरि एकातमे जो क्रिया आचरण किया ताका प्रकाश करना प्रगट करना सो रहोभ्याख्यान नाम अतिचार है। वहुरि परकरि कह्या नही अर परका अभिप्रायतैं किंचित जानिकरि लिख देना जो तिनमे ऐसें कह्या है ऐसा आचरण कीया है परकूं ठिगनेके अर्थि कूडा लिख देना सो कूटलेखक्रिया नाम अतिचार है।

वहुरि कोऊ रुपया ह्मोर वा आभरणादिक आपके धारण करगया सोपि गया अर फेरी गिणती भूलि अल्पप्रमाण मागनेलगा वाकू कहे जो ठीक है अपने है सो लेजावो ऐसे विस्मरणहुवाकू कहना सो न्यासापहार अतिचार है। वहुरि कोऊ प्रकरणकरि वा अगविकार भृकुटीक्षेपादिककरि अन्यके अभिप्रायकू जाणी ईर्षाभावते लोकनिकू प्रगट करना सो साकारमत्रभेद नाम अतिचार है। ऐसे सत्यअणुव्रतके धारककै त्यागनेयोग्य पंच-अतिचार कहे अव अचौर्यव्रतके कहे है-

स्तेनप्रयोगतदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिक-
मानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः ॥२७॥

अर्थप्रकाशिका- स्तेनप्रयोग। तदाहृतादान। विरुद्धराज्यातिक्रम। हीनाधिक मानोन्मान। प्रतिरूकव्यवहार। ए पच अचौर्यअणुव्रतके अतिचार हैं। चोरी करतेकू चोरणेके

अर्थप्रकाशिका– क्षेत्रवास्तु। हिरण्यसुवर्ण। धनधान्य। दासीदास। कुप्यभाड। इनिका प्रमाणनिकरि उल्लघना सो परिग्रहत्याग अणुव्रतके पाच अतिचार है। धान्यादिक उपजनेका स्थान क्षेत्र है। रहनेका गृहादिक मकान सो वास्तु है। रूपया ह्मोर इत्यादि हिरण्य है। सुवर्ण प्रसिद्ध है। इहा हिरण्यशब्दकरि तो व्यवहारमे प्रवृत्तिका कारण रूपये ह्मोर इत्यादि लेना। अर सुवर्णशब्दकरि आभरण पात्र अन्य सुवर्णका सचयादि लेना। गौ वल्ध इत्यादिक धन है। शालि गोहू इत्यादिक धान्य है शरीरकी गृहकी सेवा करनेके अधिकारी स्त्रीपुरुष-दासदासी है। वस्त्र कपास चदनादि कुप्य है।

इस परिग्रहमे मेरै इतनाही ग्रहण है। अधिक त्यागीहू ऐसे प्रमाणकरि फिर अतिलोभके वशतै प्रमाणतै अधिक ग्रहण करना ते परिग्रह परिमाणव्रतीकै त्यागनेयोग्य पच अतिचार है अव दिग्विरतके अतिचा कहेहै।

ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रमक्षेत्रवृद्धिस्मृत्यन्तराधानानि ॥३०॥

अर्थप्रकाशिका– उर्ध्वातिक्रम। अधोतिक्रम। तिर्यगतिक्र। क्षेत्रवृद्धि। स्मृत्यतराधान ए दिग्विरतिव्रतके पच अतिचार है। तहा पर्वत वृक्ष भूम्यादिकनिकै उपरि चढना सो उर्ध्वातिक्रम है। कूप वावडी इत्यादिकनिके मध्य अवतरणतै अधोतिक्रम है। भूमिके मध्य विल तथा पर्वतादिकनिकी गुफादिकनिमै प्रवेश करना सो तिर्यगतिक्रम है पूर्वे जो दिशानिका योजनादिककरि प्रमाण कीया तातै अधिक क्षेत्रमे गमकी वाछा सो क्षेत्रवृद्धि नाम अतिचार है। मर्यादकरी ताका विस्मरण होना सो स्मृत्यतराधान नाम अतिचार है।

इहा ऐसा जानना। जो दिशाका प्रमाण कीया तिसमै जो समस्तलोकनके जावनेयोग्य मार्ग है तिसमै व्रतीकू गमन करना उचित है। अर मार्ग छाडि पर्वत वृक्ष टीवा इत्यादिकउपरि चढना तथा कूपादिकमे नीच उतरना तथा गुफादिकमे प्रवेश करना सो अतिचार है। ऐसे दिग्विरतिव्रतके पच अतिचार त्यागनेयोग्य है। अव देशव्रतके कहेहै–

आनयनप्रेष्यप्रयोगशब्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपाः ॥३१॥

अर्थप्रकाशिका–आनयन। प्रेष्यप्रयोग। शब्दानुपात। रूपानुपात पुद्गलक्षेप ए पच देशविरतिव्रतके अतिचार है। तहा जो मर्यादरूप क्षेत्रकरि तिष्ठते पुरूषकै प्रयोजनके वशतै मर्यादवाह्य क्षेत्रकी वस्तु परकरी मगावना तथा परकू बुलावना सो आनयन नाम अतिचार है। मर्यादकरि तिस क्षेत्रके वाह्य आप तो नही गमन करे परतु सेवककू वा पुत्रादिकनिकूं कहै जो हमारे तो इस मकानतै वाहिर गमनका त्याग है। तुमकू ऐसा कार्य करना ऐसे अपने अभिप्रायका ...की प्रेरणा करना सो प्रेष्यप्रयोग नाम अतिचार है। मर्यादवाह्य क्षेत्रमे तिष्ठते पुरूषनिकू

काश खखारादि समस्याकरि समझावना सो शब्दानुपात अतिचार हैं ।

वहुरि मर्यादवाहिर क्षेत्रमे तिष्ठतेनिकू अपना रूप दिखाय कार्यमे प्रवर्त्तन करावना सो रूपानुपात अतिचार है। वहुरि मर्यादवाह्य क्षेत्रमे पाषाण काकरी इत्यादिक क्षेपि कार्यके करनेवालेनिकू समस्या करना सो पुद्गलक्षेप नाम अतिचार है। ऐसे देशव्रतीकू त्यागयोग्य पंच अतिचार कहे। अव अनर्थदडत्यागका अतिचार कहे है–

कन्दर्पकौत्कुच्यमौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगर्थक्यानि ॥३२॥

अर्थप्रकाशिका– कदर्प। कौत्कुच्य। मौखर्य। असमीक्ष्याधिकरण। परिभोगका अनर्थपणा ए पाच अतिचार अनर्थदडके त्यागके हैं। तहा रागभावकी उत्कटताते हास्यते मिल्याहुवा गाली भडवचन बोलना सो कदर्प अतिचार है। वहुरि रागका उदयकी तीव्रताते हास्यवचनभी अर अशिष्ट भंडवचन बोलना अर कायतेंह् निदनीक क्रिया करना सो कौत्कुच्य नाम अतिचार है। वहुरि धीटताकरि अनर्थक वहुतप्रलाप करना सो मौखर्य अतिचार है। वहुरि प्रयोजनकू विचारेविना अधिकपणाकरि प्रवर्त्तन करना सो अधिकरण है। सो काय मन वचनकरि तीन प्रकार है। तहां अनर्थकू करनेवाला खोटा काव्य श्लोकादिक चितवन करना सो मन अधिकरण है। अर नि प्रयोजन कथा करना विकथा करना तथा परके पीडा करनेवाला वचन सो वचन अधिकरण है। अर प्रयोजनविना गमन करना बैठना खडा रहना सचित्त अचित्त तृण वृक्ष पत्र पुष्प फलादि छेदन भेदन कुट्टन क्षेपणादि करना अग्निका विषका क्षारादिकका देना ए समस्त असमीक्ष्याधिकरण है। वहुरि जेता अर्थकरि अपना भोग उपभोगकी कल्पना होइ तितना तो अर्थ है। अर प्रयोजनविना अधिकका सग्रह करना सो भोगोपभोगानर्थक नाम अतिचार है ऐसे अनर्थदडविरतिव्रतके धारनेवालेके त्यागनेयोग्य पच अतिचार है अव सामायिक व्रतके अतिचार कहे है–

योगदुःप्रणिधानानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३३॥

अर्थप्रकाशिका– मन वचन कायके योगनिका दुष्प्रणिधान अनादरस्मृत्यनुपस्थान ए सामायिकके पच्च अतिचार है। सामायिक करनेका अवसरमे शरीरके अंगोपांगादिकनिका निश्चलतारहित रखना सो कायदु.प्रणिधान है। अर अक्षरनिका उच्चारणमे शुद्ध सस्कारका अभाव अर्थ जामे नही जान्या जाय ऐसे पाठका पढना सो वचन दुष्प्रणिधान है। अर सामायिकके भावमे अर्थमे मनका नही लगावना सो मनोदुष्प्रणिधान है। इहां प्रणिधान नाम दुष्टपरिणामनिका वा अन्यथा प्रवर्त्तनका है। वहुरि उत्साहरहित अनादरतें सामायिक करना सो अनादर नाम अतिचार है। वहुरि सामायिकमे एकाग्रताविना चित्तकी व्यग्रतातें पाठका

भूलि जाना सो अनादर नाम अतिचार है। ऐसे सामायिकव्रतीके त्यागनेयोग्य पच अतिचार कहे। अव प्रोषधोपवासके पच अतिचार कहे हैं—

अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३४॥

अर्थप्रकाशिका— अप्रत्यवेक्षित अप्रमार्जित ऐसी भूमिमे मलमोचन तथा उपकरणग्रहण तथा सस्तरोपक्रमण अर अनादर, अर स्मृत्यनुपस्थान ए पच प्रोषधोपवासके अतिचार है। इस भूमिमे जीव है कि नही है ऐसे नेत्रनितै, देखना सो प्रत्यवेक्षण है। वहुरि कोमल उपकरण-करिकै सोधना भुवारना सो प्रमार्जन है। तहा जो नेत्रनितै देखेविना तथा कोमल उपकरणतै सोधन कीएविना भूमिमे मल मूत्र कफादिकका क्षेपना सो अप्रत्यवेक्षित अप्रमार्जितोत्सर्गनाम अतिचार है।

वहुरि देखे शोधेविना अरहत आचार्यादिकनिकी पूजनके उपकरण तथा गध माल्य धूपादिकनिका ग्रहण तथा अपने पहरनेके वस्त्र वा पात्रदिकनिका ग्रहण सो अप्रत्यवेक्षिता-प्रमार्जितादान नाम अतिचार है। वहुरि विनादेखि विनासोधी भूमिविषै वस्त्रादिकनिकू शयनासनके अर्थि विछावना सो अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितसस्तरोपक्रमण नाम अतिचार है। वहुरि क्षुधा तृषादिककी वाधाकरि आवश्यक क्रीयानिविषै अनादर सो अनादर सो अनादर नाम अतिचार है। करने योग्य आवश्यकादिकनिकू विस्मरण होजाना सो स्मृत्यनुपस्थापन अतिचार है। ऐसे प्रोषधोपवासके धारक पुरुषकै ए पाच अतिचार त्यागनेयोग्य है। अव भोगोपभोगप्रमाणव्रतके अतिचार कहे है—

सचित्तसम्बन्धसम्मिश्राभिषवदुःपक्वाहाराः ॥३५॥

अर्थप्रकाशिका— सचित्त, सचित्तसबध, सचित्तसमिश्र, अभिषव, दुःपक्व, ऐसे आहारका भक्षणतै भोगोपभोगप्रमाणव्रतके पच अतिचार है। चेतनासहित द्रव्य पुष्पफलादिकका आहार, सो सहित्तआहार नाम अतिचार है। सचित्तनै भिडथा सबधने प्राप्त भया जो आहार सो सचित्तसम्बधाहार नाम अतिचार है। सचित्ततै भिन्न नही कीया जाय ऐसा वस्तुका आहार सो सचित्तसमिश्राहार नाम अतिचार है। वहुरि पुष्टवस्तु द्रव्यादिकका आहार करना सो अभिषव नाम अतिचार है।

वहुरि जो अन्न सम्यक् नही पक्या होइ सो दुपक्वाहार है। जैसे भातके पकनेमे अधिकतर तदुल रहिगया होइ तथा अती सीजिगया होइसो दुपक्व है जातै दुपक्व आहार करनेमें इंद्रियनिमैं मदकी वृद्धि होइ वा सचित्तपणाका प्रसग होइ वातादिक रोग होइ फिर [illegible] करनेमे पापका बध होइ तातै दुपक्वाहार त्यागनेयोग्य है। भोगोपभोगव्रतीके

त्यागनेयोग्य पंच अतिचार है। अब अतिथिसंविभागव्रतके अतिचार कहे हैं–

सचित्तनिक्षेपापिधानपरव्यपदेशमात्सर्यकालातिक्रमाः ॥३६॥

अर्थप्रकाशिका– सचित्तनिक्षेप, सचित्तापिधान, परव्यपदेश, मात्सर्य, कालातिक्रम, ए दानके पंच अतिचार है। सचित जो कमलपत्रादिकमे स्थापनकरि दानदेवे सो सचित्तनिक्षेप नाम अतिचार है। वहुरि जो अन्यका नामकरि दान देना सो परव्यपदेश नाम अतिचार है। वहुरि देतासता आदरविना देना सो मात्सर्य है अथवा अन्यदातारतैं ईर्षाभावतैं तथा अदेखसकाभावतैं देना सो मात्सर्य नाम अतिचार है। कालके उल्लघनकरि अकालमे भोजन देना सो कालातिक्रम नाम अतिचार है। ऐसे अतिथिसविभागके पाच अतिचार है। अब सल्लेखनाके अतिचार कहे है–

जीवितमरणाशंसामित्रानुरागसुखानुबन्धनिदानानि ॥३७॥

अर्थप्रकाशिका– जीविताशसा, मरणाशंसा, मित्रानुराग, सुखानुबंध, निदान, ए पाच अतिचार सल्लेखनामरणके है। सल्लेखनाकरिके जीवनेकी इच्छा करना जीविताशसा नाम अतिचार है। रोगादिक उपद्रवतैं आकुल होइ मरणकी वाछा करना सो मरणाशसा नाम अतिचार है। पूर्वे जिनके जिनके सामीलरहि अनेक क्रीडादिकमे रच्या तिन मित्रनिकू स्मरण करना सो मित्रानुराग नाम अतिचार है।

वहुरि पूर्वे भोगे भोगनिकू शयनकू क्रीडनकू चितवन करना सो सुखानुवध नाम अतिचार है। वहुरि जो विषयसुखनिकी अभिलाषा भोगनिमैं आगामीकालमे वांछा सो निदान नाम अतिचार है। ऐसे सल्लेखनामरण करनेवाला व्रतीका पच अतिचार कह्या। अब दानका लक्षण कहे है–

अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानं ॥३८॥

अर्थप्रकाशिका– आपका अर परका उपकारकै अर्थि धनादिकका त्याग करना देना सो दान है। जिसतैं आपके पुण्यवध होइ वा धर्मात्मा पात्रका लाभ सो अपना उपकार है। अर अन्य जीवके सम्यग्ज्ञानादिककी वृद्धि होइ सो परका उपकार है। अपना अर परका उपकारके अर्थि आहारादिक देना सो दान हैं। अब दानके फलमे विशेषके दिखावनेकू सूत्र कहे है–

विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः ॥३९॥

अर्थप्रकाशिका– विधिविशेषतैं, द्रव्यविशेषतैं, दातारके विशेषतैं, पात्रके विशेषतैं,

दानमैं विशेषतैं, तहां प्रतिग्रह उच्चस्थान पादोदक प्रणमन इत्यादिक विधि है। इनमें तफावततैं फलमे विशेष है तफावत है।

वहुरि आहार उपकरणादिक कोऊ तो तप स्वाध्यायकी वृद्धिका कारण होइ तथा कोऊ नही होई इत्यादिक द्रव्यके तफावततैं फलमे तफावत हैं। वहुरि ईर्षारहितता तथा विषादरहितता तथा देनेके इच्छकमे देतेमे दीया तिसमे प्रीति होइ। तथा कल्याणका अभिप्राय होइ तथा दृष्ट फलकी चाहना नही होइ तथा निदान नही होइ। इत्यादि दातारके गुण हैं तिनके तफावततैं फलमे तफावत होय है।

वहुरि सम्यग्दर्शनादिक गुणनिकरि युक्त पात्र होइ पात्रके तफावततैं फलमे तफावत होय है। ऐसे विधि हुवा दातार पात्र इनके विशेषतैं दानमे विशेष जानना। जहां जैसा होय तहा तैसा फल होय। ऐसे सप्तम अध्ययके विषैं हिंसादिक पच पापके त्यागकू व्रत कहिके तिस व्रतके एकदेशतैं अणुव्रती सर्वदेशतैं महाव्रती ऐसे कह्या। वहुरि तिन व्रतनिके दृढ करनेकू पाच पांच भावना कही।

वहुरि पाच पापनिकू इस लोक परलोकमे दुःखदाई तथा दुःखरूप कहे। वहुरि मैत्री आदि चारी भावना कही। बहुरी ससार देहका स्वभावकी भावना कही। बहुरि पंचपापनिका जुदा जुदा लक्षण कह्या। तथा शल्यरहितकू व्रती कह्या। वहुरि गृहस्थके अणुव्रत सप्त शील कहे। अतसल्लेखना कही। वहुरि एकसम्यक्त्व पच अणुव्रत सप्त शील एक सल्लेखना इन चोदहनिके पाच पाच अतिचार कहे। वहुरि दानका लक्षण अर दानके मध्य विशेपपणा कह्या।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

ऐसे तत्वार्थका है ज्ञान जातैं ऐसा दशाध्यायरूप जो मोक्षशास्त्र तामैं सप्तम अध्याय समाप्त भया।

— दोहा —

है जातैं तत्त्वार्थका। अधिगम सबसुखदाय ॥
मोक्षशात्र मंगलमय। नमो सप्तमो अध्याय ॥७॥

सप्तम अध्याय समाप्तः

।। ॐ नमोऽर्हद्भ्य: ।।

।। ॐ नम. सिद्धेभ्य. ।।

।। ॐ नम परमात्मने ।।

अथ अष्टमोऽध्याय: ।।

आगे आठमे अध्यायका प्रारभ करे है।

— दोहा —

।। श्रीजिनेंद्रपद नमनतैं । होई सबसुखसंच ।।
।। करमभरमसंबंधका । कारन रहे न रंच ।। १ ।।

अव इस सूत्रमे बधपदार्थका वर्णन करिएगा परतु गुणस्थाननिके अर मार्गणास्थाननिके तथा मार्गणा है मध्य जाके ऐसी वीसप्ररूपणानिका स्वरूप जाणेविना बंधका उदयका एत्वका स्वरूप समझनेमे नही आवे तथा प्रसगपाय प्रयोजन स्वरूप समकीपहली संक्षेपकरी गुणस्थाननिका स्वरूप लिखिए है। तिनमे प्रथमही गुणस्थाननिका नाम जाननेयोग्य है–

।। गुणस्थान ।।

मिच्छो सासण मिस्सो । अविरदसम्मो य देसविरदो य ।
विरदप्पमत्त इदरो । अपुव्व अणियट्टि सुहुमो य ।।१।।

उवसंत खीणमोहो । सजोगकेवलिजिणो अजोगी य ।
चोद्दसगुणठाणेहि य । कमेणसिद्धा य णादव्वा ।।२।।

मिथ्यत्व– १, सासादन– २, मिश्र– ३, अविरतसम्यग्दृष्टि– ४, देशविरत– ५, प्रमत्तसयत– ६, अप्रमत्तसयत– ७, अपूर्वकरण– ८, अनिवृत्तिकरण– ९, सूक्ष्मसापराय–१०, उपशातमोह– ११, क्षीणमोह– १२, सयोगकेवलीजिन– १३, अयोगकेवलीजिन– १४

इस प्रकार गुणस्थाननिके चोदह नाम कहे। अब इनके नामनिके अर्थसहितपणा दिखावे है। मिथ्यात्व कहिए असत्यार्थ है दृष्टि कहिए श्रद्धान जाके सो मिथ्यादृष्टि हैं। आसादना नाम विराधनाका है जो सम्यक्त्वकी विराधनासहिद प्रवर्त्तै सो सासातनम्यग्दृष्टि कहावे।

जातै सम्यक्त्वतै छूटि मिथ्यात्वके सन्मुख होइ तदि सासादन नाम पावे-२

वहुरि सम्यक्त्व अर मिथ्यात्व दोऊ मिलेहुए परिणाम होइ सो मिश्र नाम पावे-६

वहुरि जाके व्रत नही होइ अर सम्यग्दर्शन होइ सो अविरतसम्यग्दृष्टि नाम पावे-४

वहुरि जाके एकदेशविरत कहिए व्रत होइ सो देशविरत नाम पावे-५

वहुरि जो सयत कहिए सयमी होइ अर प्रमादसहित होइ सो प्रमत्तसयत है-६

वहुरि प्रमादरहित ध्यानमे लीन जो सयमी सो अप्रमत्तसयत है-७

वहुरि जाके समयसमय अपूर्व कहिए पूर्वके समयमे नहीभए ऐसे करण कहिए विशुद्धपरिणाम सो अपूर्वकरण है-८

वहुरि निवृत्ति नाम विशेषताका है भिन्नताका है। जिसमे नानाजीवनिकी अपेक्षाहू एक समयमे एकसदृश परिणामही होइ निवृत्ति कहिए भिन्नरूप नहीहोइ सो अनिवृत्तिकरण है-९

वहुरि जामे सूक्ष्म कहिए अतिमदतारूप सापराय कहिए कषाय होइ सो सूक्ष्मसापराय है-१०

वहुरि जहा मोहका अत्यत उपशम होइ सो उपशांतमोह नाम है–११

वहुरि जहा मोहका सत्तामेतै अत्यत नाश होइ सो क्षीणमोह नाम है–१२

वहुरि च्यारि घातिकर्मकू जीति लिया तातै जिन है। अर केवल कहिए असहाय इन्द्रियादिकनिकी अपेक्षारहित ज्ञान होइ सो केवली है। अर मन वचन कायके योगनिसहित जो केवलीजिन सो सयोगकेवली जिन है–१३

वहुरि योगनिरहित जो केवलीजिन सो अयोगकेवलीजिन नाम है–१४

ऐसे गुणस्थाननिका अक्षरार्थ कहा। ये गुणस्थान है ते आत्माका स्वभाव नही है। [illegible] उदयादिक वा योगनिकी अपेक्षातै होइ हैं।

धर्मकू समान जानना, तथा देव गुरु धर्म स्वतत्व परतत्वकू जाननाही नही, देहादिक परद्रव्यमेही आपा धारणकरना देहके रूप जाति कुलकूही आत्मा जानना सो समस्त मिथ्यात्वके उदयकू अनुभवन करता जीव विपरीतश्रद्धानी होय है। अर अहिसालक्षण धर्म तथा समस्तजीवनिमे मैत्रीभाव तथा समस्तद्रव्यनिमे साम्यभाव तथा क्षमादिकपरिणाम ताकू नही रुचे है। अहकारादि मदकरि सहित जगतकी अवस्थाकू नही जानता धर्ममे रुचि नहीकरै।

जैसे पित्तज्वरके धारककू मधुररस नही रुचे है। अर जो कदाचित् धर्मका श्रवणहू करे तो जैसे सर्प्प दुग्धमिश्री पानकरिकेहू विषमविषकू उगले है। तैसे धर्मश्रवणकरिकेहू धर्मके धारक पुरुषनितै वा धर्मकी कथनीतै तथा धर्मायतनतै वडा वैर करे है। इस मिथ्यात्वके एकात-१, विपरीत-२, विनय-३, सशय-४, अज्ञान-५

ऐसे पाच भेद हैं इनमे अनेक विपरीतता गर्भित है। सो जहातहा वर्णन कीयाही है। इस मिथ्यात्वगुणस्थानका काल अनादि अनत है। अर अनादि सातहू है। अर सादि सातहू है। ऐसे गुणस्थानका स्वरूप कह्या।

अव सासादनगुणस्थानका स्वरूप कहे है। जो कोऊ जीवके प्रथमोपशमसम्यक्त्व था सो उपशमसम्यक्त्वका काल अतर्मुहूर्त्तका है। तिस उपशमसम्यक्त्वकालमे जघन्यकरि तो एक-समय बाकी रहीगया होय, उत्कृष्ट छह आवलीप्रमाण रहिगया होय, तदि अनतानुबधी क्रोध मान माया लोभ इन च्यार कषायमेतै कोऊएक कषायका उदय होय तदि सम्यक्त्व तो नष्ट होगया अर अनतानुबधी च्यार कषायमेतै एक कोऊ कषाय अनुभव करता जीवके सासादन सम्यक्त्व होइ। क्योकि सम्यक्त्वकी विराधनासहित परिणाम भया तातै सासादन सम्यक्त्व नाम भया।

भावार्थ– उपशमसम्यक्त्वका काल अतर्मुहूर्त्तका है अतर्मुहूर्त्त पाछे नियमतै छुटे है। जो तहा मिथ्यात्वकर्मका उदय आजाय तो उपशमसम्यक्त्व छूटि मिथ्यत्वगुणस्थानी हो जाय। अर तहा जो अनतानुबधी क्रोध मान माया लोभमेतै कोऊ एकका उदय होजाए तो सासादनगुणस्थानी हो जाए। अर सम्यक्त्वप्रकृतिका उदय होजाय तो क्षयोपशम सम्यक्त्व होजाय।

जो जीव उपशमसम्यक्त्वरूप रत्नपर्वततै छूटि मिथ्यात्वरूपभूमिके सन्मुख भया, जेतै अतरालमे जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवलीपर्यंत अन्तरालमे वर्तै तेतै सासादनगुणस्थानी कहावे है।

जैसे वृक्षतै फल टूटचा अर भूमिमे नही पडचा तेतै वृक्षका अर भूमिका संबधरहित अतरालमे है। तैसे कोऊ जीव अनतानुवधीका उदय होतै सम्यक्त्वी नही रह्या अर मिथ्यात्वका

उदयविना मिथ्यात्वी नही कहाया बीचमे जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली कालप्रमाण सासादनगुणस्थानी कहावे है। याका जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवलीप्रमाणही काल है पाछे नियमतै मिथ्यात्वी होय है ऐसे द्वितीय सासादनगुणस्थानका स्वरूप कह्या।

अव तृतीय मिश्रगुणस्थानका स्वरूप कहे है। दर्शनमोहनीयका भेद एक जात्यतर-सर्वघातिसम्याङ्मिथ्यात्व है द्वितीय नाम जाका ऐसी मिश्रप्रकृतिका उदयकरि जीवके सम्यक्त्व अर मिथ्यात्वरूप मिलेहुए कर्बुरितपरिणाम होय है। इस मिश्रप्रकृतिका उदयकरि केवल सम्यक्त्वपरिणामभी नही होइ। अर केवल मिथ्यात्वपरिणामहू नही होइ। जैसे दधि जो दही अर खाड दोऊ मिलजाय तदि एक अन्यजातिका स्वाद अनुभव करावै है जुदाजुदा स्वाद नही देवे है। तैसे मिश्रप्रकृतिका उदयकरि सम्यक्त्व मिथ्यात्व दोऊनिका मिलनरूप अनुभव होय है।

वहुरि मिश्रगुणस्थानी जीव देशसयम तथा सकलसयमकू नही ग्रहण करे है। क्योकि मिश्रगुणस्थानीके देशसयम सकलसयमके होनेयोग्य करणरूप परिणामनिका असभव है। मिश्रगुणस्थानीके देशसयम सकलसयमरूपके भावनिप्रति चढनेकी योग्यता नही है। अर चतुर्गतिका कारण चार आयुका वधभी नही करे है। अर मिश्रगुणस्थानमे मरणभी नही होय है। मिश्रगुणस्थानकू छाडि असयतसम्यक्त्वमे वा मिथ्यात्वमे जाय मरण करे हैं ऐसा नियम है।

वहुरी मिश्रगुणस्थानी पूर्वै सम्यक्त्वपरिणामसे वा मिथ्यात्वपरिणाममे जहा आयुबध कीयाहोय तिस सम्यक्त्व वा मिथ्यात्व परिणामने प्राप्त होयकरिकेही मरण करे है ऐसाभी नियम केई आचार्यनिके अभिप्रायतै जानना। वहुरि मिश्रगुणस्थानमे मारणातिकसमुद्घातहू नही करे हं। ऐसे मिश्रगुणस्यानका स्वरूप कह्या।

अव चौथा असयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानका स्वरूप कहेहै। सम्यक्त्व जो तत्वार्थनिका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन एक प्रकार है। तथापि कारणके वशतै तीन प्रकार है। जातै दर्शन मोहनीयकी तीन प्रकृति अर ४ अनतानुबधी कषाय इनि सातप्रकृतिनिका उपशमतै उपशमसम्यक्त्व होयहै। अर इन सातप्रकृतिनिका अत्यतक्षयतै क्षायिकसम्यक्त्व होयहै। अर [illegible]नि [illegible]प्रकृतिनका क्षयोपशमतै क्षायोपशम सम्यक्त्व होय है। तिन तीन प्रकार सम्यक्त्वमे क्षायोपशमसम्यक्त्वका स्वरूप कहिए है।

जहा अनतानुवधी कपायनिका प्रशस्त उपशम तो नही होइ अर प्रशस्त उपशम होय, [illegible] अनतानुवधीका विसयोजन भया होय, अन्य द्वादशकषाय नवनोकषायरूप परिणामिजाय [illegible] विसयोजन कहिए है। अर मिथ्यात्व अर सम्यग्मिथ्यात्व इन दोऊ दर्शनमोहकी प्रकृतिनका [illegible] उपशम होय अथवा क्षयकू प्राप्त होय। अर सम्यक्त्वप्रकृतिका देशघातिस्पर्द्धानिका [illegible] तत्वार्थनिका श्रद्धान होइ सो क्षयोपशमसम्यक्त्व है।

भावार्थ– जिसका अनंतानुबन्धी च्यार कषायनिका उपशम होइ अथवा विसयोजन होइ अर मिथ्यात्व अर सम्यग्मिथ्यात्व दोऊनिका उपशम होइ, अर सम्यक्त्व प्रकृतिके देशघातिस्पर्द्धकनिका उदय होय तदि क्षायोपशमिकसम्यक्त्व होयहै। इहा ऐसा जानना। जो प्रकृति उदययोग्य तो नही होइ तोभी स्थिति अनुभागकी वृद्धिहानिके योग्य होय वा सक्रमणयोग्य होय सो अप्रशस्तोपशम कहिएहै। अर जो प्रकृति उदययोग्यभी नही होइ अर स्थिति अनुभागकी वृद्धिहानि योग्यभी नही होइ, अर सक्रमणयोग्यहु नही होइ तहा प्रशस्तोपशम कहिए है। इस क्षयोपशमसम्यक्त्वविषै छहप्रकृतिनका तो उपशम वा क्षय हैही।

एक सम्यक्त्वप्रकृतिका देशघातिस्पर्द्धकनिका उदय है। मो देशघातीनिका उदयके तत्वार्थनिका श्रद्धान विगाडदेनेका सामर्थ्य नही तातै सम्यक्त्व वण्या रहे ताकू चल मल अगाढ इन तीन दोनिकरि सहित सम्यक्त्व होय है। क्योकि सम्यक्त्वप्रकृतिके उदयतै तत्वार्थका श्रधान विगाडनेका सामर्थ्य तो है नाही केवल सम्यक्त्वके मल दोष लगावनेमात्रही सामर्थ्य है। तातै इस प्रकृतिकू देशघाति कहिएहै। सम्यक्त्वप्रकृतिके उदयकू अनुभवं याहीतै याकू वेदकसम्यक्त्व कहिएहै।

अव चलादिक दोषनिका स्वरूप कहेहै। अपनेही जे आप्प आगम पदार्थ तिनविषैही जो चलायमान होय सो चलदोष है। जैसे आपकरि कराया जो अरहतका मन्दिरादिकविषै यो हमारा मदिर है यो हमारा देव है ऐसा अभिप्राय करेहै। अर परकरि कराया ताको ये परका है ऐसा परपणाका अभिप्राय सो चलदोष है। क्योकी अरहतका मदिरादिक ते तो महान आनदकरि समस्तभव्यनिके आराधनेयोग्य है। तथापि ए मदिर ए प्रतिमा हमारा ये अन्यका तैसा अभिप्राय सो चलदोष है। तैसे नानाप्रकार कल्लोलनविषै जल एकही है तोहू नानारूपकरि चलेहै तैसे दर्शनमोहनीका भेद जो सम्यक्त्वप्रकृति ताका उदयकरि अपनेही आप्त आगम पदार्थनिविषै श्रद्धान चलायमान रहेहै परकेमै नाही जायहै। तैसा चलदोष है।

वहुरि सम्यक्त्वप्रकृतिका उदयतै श्रद्धानके अतिचार मल लागै। जैसे शुद्धसुवर्ण है मो परसगकरी मलिन होइ तैसे सम्यक्त्वप्रकृतिका उदयरि श्रद्धान मलिन होय सो मलदोष है। बहुरि वृद्धपुरूषका हस्तविषै लाठी स्थानऊपरिही रहे स्थानसू चले नही अर हस्ततैहू नही छूटे तोहू सकप रहेहै। ताकू अगाढ कहिएहै। तैसे आप्त आगम पदार्थका श्रद्धानमे अवस्थित दृढपुरुषहूके सम्यक्त्वप्रकृतिके उदयते श्रद्धान कपायमान रहेहै। सोही दिखावेहै। समस्त अरहतदेवनिके समानही अनतशक्ति है। तोहू इस शातिकर्मके विषै श्रीशातिनाथस्वामीही समर्थ है। इस विघ्नविनाशनकर्मविषै पार्श्वनाथदेवही समर्थ है। इत्यादि प्रकारकरिके श्रद्धानके शिथिलपणाका संभवते अगाढ दोष है।

अब औपशमिक क्षायिक सम्यक्त्वकी उत्पत्तिका कारण अर इनिका स्वरूपकूं कहेहै। अनतानुबधी क्रोध मान माया लोभ अर मिथ्यात्त्व सम्यग्मिथ्यात्व अर सम्यक्त्वप्रकृति ए तीन दर्शनमोहकी इनि सातप्रकृतिनिका करणपरिणामनिकरि अत्यंत उपशमकरिके उपशमसम्यक्त्व उपजेहै। अर इनही सप्तप्रकृतिनका क्षयते क्षायिक सम्यक्त्व होयहै। ए दोऊही सम्यक्त्व निर्मल है। इनमे शकादिक मलदोषका लेशहू नहीहै। तथा ए निश्चल हैं। आप्त आगम पदार्थ है विष जाका ऐसा श्रद्धानका विकल्पनिविषै कहाहू शिथिल नहीहैं बहुरि दृढ है गाढरूप है आप्तादिकनिमै तीव्ररूचिका सभवतै दृढ होयगी। ऐसे कह्या जो तीन प्रकार सम्यग्दर्शन तिनकरि परित सम्यग्दृष्टि है। अर अप्रत्त्ख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ इनमेतै कोई एकका उदकरि सयमभाव नही होसके तातै याकू असंयतसम्यग्दृष्टि कहिएहै। यो असयतसम्यग्दृष्टि भगवान् अरहतका उपदेश्या सत्यार्थ आप्त आगम पदार्थका श्रद्धान करेहै। अर जो आपके विशेषज्ञान नही होई अर केवल उपदेशदाताके सवधतै भगनान् अरहतका उपदेश्या जाणि असत्यार्थहू श्रद्धान करै, जो भगवान्का आगममे ऐसेही कह्या होयगा, सोहू सम्यग्दृष्टि है भगवान्की आज्ञा नही उल्लघनतै। वहुरि कोऊ वहुज्ञानीका सवध होइ। अर गणधरादिकनिका उपदेश्या आगम दिखावै जो तुमने श्रद्धान जो कीया सो नही है। भगवान्का आगममे ऐसे उपदेश हैं। तुम जो समझि रख्या है सो नही है। ऐसे समझावतेहू जो खोटे आग्रहतै तथा अभिमानतै तथा हम हजारनिमनुष्यानिमै कह्या अब कैसे फिरै ऐसे वचनके पक्षपापतै जो असत्यार्थके हटकू नही छाडे सो जीव उसही कालतै मिथ्यादृष्टि होय है।

वहुरि यो असयतसम्यग्दृष्टि है सो इद्रियनिके विषयनिमे विरक्त नही विषयनिका याके त्याग नही। तथा त्रस स्थावरनिकी हिंसाका त्यागहू नहीहै। तथापि जिनेंद्रके वचनका दृढश्रद्धानतै विषयकषायनिकू विषसमान जानता विषयनिमे अतिविरक्त है अर प्रयोजनविना स्थावर त्रसनकी विरोधनामैहु नही प्रवर्त्तैहै हिंसाकू महान् अधर्म जानहै। याका जघन्यकाल अतर्मुहूर्त्त है। उत्कृष्ट तेतीससागर कुछ अधिक जानना। ऐसे अविरतसम्यग्दृष्टि नाम चतुर्थ-गुणस्थानका स्वरूप कह्या।

अब देशसंयम नाम पचमगुणस्थानका स्वरूप कहेहै। अनतानुबधी अर अप्रत्यारख्या-नावरण इन अष्टकषायनिका उपशमतै अर प्रत्याख्यानावरण च्यार कषायनिका देशघातिस्पर्द्धकनिका उदय होतैसतै अर सर्वघातिस्पर्द्धकनिका उदयाभावलक्षण क्षय होतै सकल-सयमके भाव नही होय है। देशसयम होय है। एकदेश थोरेव्रत होय है। देशसयमकूं धारण करणेतै देशसयम नाम पचमगुणस्थान प्राप्त होय है। जाके त्रसनकी हिसाका त्याग अर स्थावरनकी हिसाका त्याग नही। एककालविषै त्रसकी हिंसातै विरत अर स्थावरहिंसातै विरत नही तातै याकू विरताविरतहू कहिएहै। परतु प्रयोजनविना स्थावरहिंसाकू नही करेहै। इस

देशसयमगुणस्थानमेही श्रावकव्रतके ग्यारह स्थान है जाकी जैसी शक्ति होइ तिस प्रमाण धारण करे है–

इन ग्यारह स्थानका वर्णन लिखे तो ग्रथ वहुत होजाय याते नही लिख्या है रत्नकरड्श्रावकाचारादि अन्य ग्रथनिते जानना । याका काल जघन्य तो अतर्मुहूर्त है अर उत्कृष्टकाल अष्टवर्ष अतर्मुहूर्त घाटि कोटिपूर्वका है । ऐसे देशसयम नाम पचमगुणस्थानका स्वरूप कह्या ।

अव प्रमत्तसयत नाम छठा गुणस्थानका स्वरूप कहेहै । इहा सज्वलन क्रोध नाम माया लोभरूप च्यार कषाय अर हास्य रति अरति शोक भय गुजुप्सा स्त्रीपुरुष नपुसकवेद इनका तीव्र उदयतै संयमहू होइ अर सयमके मल लगावनेवाला प्रमादहू होय यातै याकू प्रमत्त सयत कहिएहै ।

इहाहू सज्वलन कषाय अर नवनोकषाय इनिका सर्वघातस्पर्द्धकनिका उदयाभावलक्षण क्षय होतै अर द्वादश कषायनिका अर उदयकू नही प्राप्त भए ऐसे सज्वलन कषाय अर नवनोकषायका निषेकनिका सत्तामे अवस्थितलक्षण उपशम होतै अर सज्वलनका अर नोकषायनिका देशघातिस्पर्द्धकनिका तीव्र उदयतै सयम होइ अर मलका उपजावनेवाला प्रमादहू उत्पन्न होय है तातै छठा गुणस्थानवर्ती जीवकू प्रमत्तसयत कहिए है । ऐसा जानना । जो केते प्रमाद तो अपने अनुभवमे आवे तातै व्यक्त कहिए । अर केतेक प्रमाद है ते प्रत्यक्षज्ञानके धारकनिके जाननेमे आवे ते अव्यक्त हैं ।

ऐसे व्यक्त अर अव्यक्त प्रमाद होतैहू जो सयम वर्त्तैहै सो चारित्रमोहनीयका क्षयोपशमका महात्म्यकरिके सकल गुणशीलकरी सहित महाव्रती होयहै । देशसयमीकी अपेक्षा याकू सकल सयमी कहिए है । याका आचरण प्रमादसहित है तातै कर्बुरित आचरण है । अव प्रमादनिका नाम सख्या कहे है ।

गाथा– विकहा तहा कसाया । इदियणिद्दा तहेव पणयो य ।
चतु चदु पण एगग होति पमादाहु पचदस ।।१।।

विकथा चार, कषाय च्यार, इद्रिय पाच, एक निद्रा, एक स्नेह, ऐसे तो ए पंचदश प्रमाद हैं । इहा इनका ऐसा अर्थ है । जो सयमतै विरुद्धकथा सो कथा है अर जे सयमगुणका घात करे ते कषाय है । अर सयमतै विरोध करनेवाली इद्रियनिकी प्रवृत्ति ते इद्रिय है । अर निद्रा नाम कर्मके उदयतै सामान्यग्रहकू रोकनेवाली जड अवस्था सो निद्रा है । अर वाह्य अर्थनिमे ममत्वरूप परिणाम सो प्रणय है स्नेह है । इनि पंद्रह प्रमादनिके सामान्य भेदनिकू परस्पर गुणे अस्सी भेद होय अर विकथा पचीस अर कषाय पचीस अर मनसहित इद्रिय छह

अर निद्रा पाच अर स्नेह मोह दोय इनकू परस्पर गुणें साढा सैंतीस हजार भेद प्रमादनिके भिन्नभिन्न होय हैं। सो इनका आलापादि लिखे ग्रथ वहुत वधिजाय इस भयतै विशेप नही लिख्या है। इस प्रमत्तगुणस्थानका जघन्य उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त काल है। ऐसे छटा प्रमत्तसयत-गुणस्थानका स्वरूप कह्या।

अव अप्रमत्तसयत नाम सप्तम गुणस्थानका स्वरूप कहेहैं। जिस कालमे सज्वलन क्रोध मान माया लोभ इन च्यार कषायनिका अर हास्यादिक नव नोकपायनिका यथा-सभव मद उदय होय प्रमाद उपजावनेका सामर्थ्यरहित होय तिस कालमे जीवके अतरर्मुहुर्त्तपर्यंत अप्रमत्तगुणस्थान होय है। इहा समस्तप्रमादरहित अर व्रत गुण शील इनिका पक्तिकरि मडित होय। अर सम्याग्ज्ञानोपयोनयुक्त होय। अर धर्मध्यानमे लीन जाका मन होय सो अप्रमत्तसयम है। सो यो अप्रमत्तसयत जितने उपशमश्रेणीके वा क्षपकश्रेणीके चढवेकू सन्मुख नही प्रवर्त्तै तितनै स्वस्थान अप्रमत्त कहिए है। अर जिस अवसरमे इकवीस प्रकृति मोहनीयकी उपशम करनेकू वा क्षपावनेकू सन्मुख होय सो सातिशय अप्रमत्त कहिएहै।

याका सक्षेप ऐसा है। जो समयसमय अनतगुण विशुद्धताकरि वर्द्धनाम ऐसा वेदकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसयमी प्रथमही अनतानुबधी कषायचतुष्टयकू करणत्रयपूर्वक सक्रमण-विधान द्वादश कषाय नव नोकषायरूप विसयोजन करै परिणमन करावे। ताके अनतर अतरर्मुहूर्त्त काल विभाग करि वहुरि करणत्रयकरिके दर्शनमोहत्रयकूं उपशमनकरि द्वीतीयो-पशमसम्यग्दृष्टि होयहै।

अथवा करणत्रयपरिणामकरि दर्शनमोहका त्रयकू छायाकरि क्षायिकसम्यग्दृष्टि होय है ताके अनतर अतर्मुहूर्त कालपर्यत प्रमत्त अप्रमत्त दोऊ गुणस्थानिमे हजारवार पलटा-पलटी करे है। तहा पछे समयसमयप्रति अनतगुण विशुद्धताकरि वधतो एकविशति चारित्र मोहनीयकी प्रकृतिके उपशम करनेकू उद्यमी होय है। अथवा इकवीस प्रकृतिके क्षपावनेविषै उद्यमी होयहै। परतु क्षपावनेके सन्मुख क्षायिकसम्यग्दृष्टिही होय उपशमसम्यग्दृष्टि नही होय। अर उपशम करनेमे दोऊही सम्यक्त्वी उद्यम करे है। सो सातिशय अप्रमत्त होय है सोही चारित्र मोहके उपशम वा क्षपण करनेके निमित्त जे तीन करण तिनमे प्रथम अध प्रवृतिकरण करैहै इहा अध प्रवृत्तिकरण होइ ताका स्वरूप अर प्रवृत्ति वर्णन करिए तो कथनी बहोत हो जाय तातै ग्रथ वधनेके भयतै नही लिख्या ज्ञानीजन श्रीगोमटसार वा लब्धिसारतै जानहु।

इस अध करणके प्रभावतै समयसमय अनतगुण विशुद्धताकी वृद्धि अर स्थितिबधा-पसरण अर सातादिक प्रशस्तप्रकृतिनका समयसमय अनतगुणवृद्धिकरि गुडखड शर्करा अमृत-[illegible] चतु स्थानरूप अनुभाग वध अर असातादिक अप्रशस्तप्रकृतिनका समयसमय अनतगुणी

हानिकरि निय काजी सदृश हि स्थानरूप अनुभागबध होय है। ऐसे चार आवश्यक सभवे है। इहा नानाजीवनिकी अपेक्षा नीचले समयके अर ऊपरले समयके परिणामनिकी विधता मिली जाय है। जैसे कोई जीवकू अध करणकू प्राप्तभए वीस समय भये जो विशुद्धि ताकू प्राप्तभया होइ सो विशुद्धता कोई जीव पाचसमयमेही प्राप्त होजाय। ऐसे नानाजीवनिकी अपेक्षा नीचले उपरिले समयकी विशुद्धता कीसी जीवकी मिलिजाय किसीकी नही मिले तातै याकू अध करण कह्या। याका काल असख्यातसमयरूप अतर्मुहूर्तका है। अर असख्यातलोकप्रमाण परिणाम नानाजीवनिकी अपेक्षा त्रिकालगोचर है समयसमय विशुद्धता अनतगुणी है सो याका दृष्टात-दार्ष्टात विस्ताररूप है तातै लिख्या नही है।

अव अपूर्वकरण अष्टमगुणस्थानकू कहे है। ऐसे अतर्मुहूर्त कालपर्यंत पूर्वं कह्या अध.प्रवृत्तिकरणकू व्यतीतकरी विशुद्धसयमी होइ समयसमयप्रति अनतगुणी विशुद्धताकी वृद्धि-करि वधतो अपूर्वकरणगुणस्थानकू आश्रय करे है। जातै इस अपूर्वकरणगुणस्थानविषै असदृश जे उपरिउपरिके समयनिमे स्थित जे जीव ते पूर्वपूर्व समयमे नही प्राप्तभए ऐसे विशुद्धपरिणामनिकू प्राप्त होय है। तातै इसकू अपूर्वकरण कहिए है। जैसे अध प्रवृत्ति-करणके भिन्नभिन्न समयनिमे तिष्ठते जीवनिके परिणामनिकी सख्या अर विशुद्धिता सदृश सभवे है। तैसे अपूर्वकरण गुणस्थानमे समस्तकालमे कोऊ जीवकेहू सदृशपणा नही होय है। याका काल अध प्रवृत्तिकरणके कालके असंख्यातवे भागरूप अतर्मुहूर्तका है तोहू असख्यातसमय-मात्र है। अर त्रिकालगोचर नानाजीवनिकी अपेक्षा अध प्रवृत्तिकरणका जे असख्यात लोकमात्र परिणाम तिनतै असख्यातगुणे अपूर्वकरणकी परिणाम है। अर समयसमय अनत-गुणी विशुद्धतारूप है इन परिणामनिका समयसमयप्रति सख्या विशुद्धिताके दृष्टातदार्ष्टात ग्रथ वधनेके नही लिख्या है। तिस अपूर्वकरणपरिणामरूपपरिणत समस्तजीव है। ते प्रथमसमयकू आदि लेय चारित्रमोहनीयकर्मका क्षपणमे वा उपशमनेमे उद्यमी होय है। अर गुणश्रेणीनिर्जरा-१, गुणसक्रमण-२, स्थितिखडन-३, अनुभागखडन-४ ए है लक्षण जिनका ऐसे च्यार आवश्यक करे है। इस अपूर्वकरणगुणस्थानके प्रथमभागमे निद्रा प्रचला दोयकी वधमे व्युच्छित्ति होतै जे उपशमश्रेणीकू आरोहण करते है तिसका प्रथम भागमे मरण नही होइ ऐसी आगमकी आज्ञा है। जे अपूर्वकरणगुणस्थानी जीव उपशमश्रेणी चढे है। तिनके चारि-त्रमोहनीय नियमकरि उपशम होय है। अर जे क्षपकश्रेणी चढे है। ते नियमकरि चारित्र-मोहनीयकू क्षपावे है। क्षपकश्रेणीसे सर्वत्र मरण नही है। जातै मिश्रगुणस्थानमे अपूर्वकरणका प्रथमभागमे अर सर्वत्र क्षपकश्रेणीमे संयोगकेवलीमे इनि गुणस्थाननिमे मरण नही ऐसा आगममे है।

अव अनिवृत्तिकरण गुणस्थानका स्वरूप कहे है। अनिवृत्तिकरण गुणस्थानका काल अपूर्वकरणके कालतै असख्यातवे भाग है एक समयमे वर्त्तमानत्रिकालगोचर नानाजीव जैसे

संस्थान आयु शरीरका वर्ण अवगाहनाकरि परस्पर भेदरूप है। तैसे विशुद्धपरिणामनिकरि भेदरूप नही हैं। नही विद्यमान है विशुद्धपरिणामनमें भेद जिनके ते अनिवृत्तिकरण जीव है। प्रथमसमयतै लगाए समयसमयप्रति अनंतगुण विशुद्धताकी वृद्धिकरि वधता हीनादिकभावरहित त्रिकालवृत्ति नानाजीवनिके परिणामनिमे भेद नही। जेता समयका याका काल है तितनेही याके परिणाम है। निर्मल अंतर्ध्यानरूप अग्निकी शिखाकरि कर्मरूप वनकू दग्ध करे है। इस अनिवृत्तिकरणकरि समस्त चारित्रमोहनीयका उपशम वा क्षपण नियमतै होय हैं ऐसे अनिवृत्तिकरणगुणस्थानका स्वरूप कह्या। अब सूक्ष्मसांपरायनाम दशमागुणस्थानकू कहेहै।

जैसे धोयाहुवा कुसूमल वस्त्र सूक्ष्मरागसंयुक्त होयहैं। धोए पछैहू सूक्ष्मरंगका अंशकी झलकी रहेहैं। तैसे पूर्वै अनिवृत्तिकरणस्थानविषै संभवता कर्मनिकी शक्तिसमूहरूप स्पर्द्धक तिनकू अनिवृत्तिकरणपरिणामकरि कीया तिसकै अनंतैक भागमात्र अपूर्वस्पर्द्धक तिनको अनिवृत्तिकरणपरिणामनकरि कीया बादरकृष्टि तिनको तिनकरि कीया कर्मनिकी शक्ति सूक्ष्मखंडरूप सूक्ष्मकृष्टि तिनका यथाक्रम अनुभाग अपने उत्कृष्टतै अपना जघन्य उपरितन जघन्यतै अधस्तन उत्कृष्ट अनंतगुण हीन क्रमतै होयहै ऐसे अनिवृत्तिकरणका अंतका समयके लगतीही सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानकू प्राप्त होइ सूक्ष्मदृष्टिकू प्राप्तभया लोभकू अनुभव करता उपशम वा क्षपक ताकू सूक्ष्मसांपराय कहिएहै।

सामायिक छेदोपस्थापन संयमकी विशुद्धितातै अतिविशुद्ध सूक्ष्मसांपराय संयसहित यथाख्यात चारित्रतै किंचित् हीन होयहै। भावार्थ– अनिवृत्तिपरिणामनिकरि लोभ सूक्ष्मकृष्टिकू प्राप्त होयहै सो सूक्ष्म कहिए सूक्ष्म है सांपराय कहिए लोभकषाय जाकै सो सूक्ष्मसांपराय कहिए। याका अंतर्मुहूर्त्त काल है।

अब उपशांतकषायगुणस्थानका स्वरूप कहे है। जैसे कतकफलचूर्णसंयुक्त जल मल रहित उजल होइहै कर्दम नीचे दविजाय है तैसे समस्तपणाकरि जाके मोहनीय उपशांत भया होइ उदययोग्य नही होय सो उपशांतकषाय कहिए ऐसे उपशांतकषायगुणस्थानका स्वरूप कह्या।

अब क्षीणकषायनाम गुणस्थानका स्वरूप कहेहै। जाके क्षीणा कहिए प्रकृति स्थिति अनुभागरहित मोहनीयकी प्रकृति जाके भई होइ सो क्षीणमोहगुणस्थान है। स्फटिकका पात्रमे तिष्ठता निर्मल जलकीज्यो उजल परिणामसहित है सोही परमार्थ निर्ग्रंथ है। ऐसे क्षीणकषायगुणस्थानका स्वरूप कह्या।

अब सयोगकेवली नाम तेरमा गुणस्थानका स्वरूप कहे है। जाके समस्त घातिकर्म नष्ट भया यातै केवलज्ञानकरि समस्त त्रिकालवर्ती गुणपर्यायसहित समस्त द्रव्यनिकू जाणे। अर

दिव्यध्वनिकरि अनेक भव्यजीवनिका अज्ञान अधकार दूरि कीया। अर क्षायिक ज्ञान दर्शन दान लाभ भोग उपभोग वीर्य सम्यक्त्व चारित्र रूप नव लब्धिनिकू प्राप्त होइ परमेष्ठी अरहत जिन नामकू प्राप्तभया। अर योगकरि सहित तातै सयोगी कहिए। अर परके सहायरहित ज्ञान-दशनसहित तातै केवली कहिए। अर घातिकर्म निर्मूल कीया तातै जिन कहिए।

अव अयोगकेवली चौदमा गुणस्थानकू कहेहै। जो अठारह हजार शीलका अधिपति-पणानै प्राप्तभया। अर समस्त आस्रव अर बधकरि रहित होय मन वचन कायके योगरहित होय ऐसा केवली जिन सो अयोगकेवली जिन कहिए सोही अयोगी कहिए। ऐसे चौदमा गुण-स्थानका स्वरूप कह्या। ए गुणस्थान आत्माका स्वभाव नही है। मोहकर्म अर योगकरि उत्पन्न भयाहै। इनि गुणस्थानके धारी कर्मसहित ससारीजीव कहे। जिनके अष्टकर्मनिका नाश भया ऐसे गुणस्थानरहित भगवान् सिद्धपरमेष्ठी मुक्तजीव है। ऐसे सक्षेपकरि गुणस्थाननिका वर्णन किया। अव गुणस्थाननिके चढने उतरनेका क्रम कहेहै।

मिथ्यात्वगुणस्थानतै तो चढनेके च्यार मार्ग हैं। कोऊ जीव तो मिथ्यात्वमै तीन करणकरि दर्शनमोहनीकी तीन प्रकृति अर अनतानुबधी च्यार कषाय इन सात प्रकृतिनिका उपशमकरि चतुर्थगुणस्थानकू प्राप्त होयहै। कोऊ मिश्रप्रकृतिका उदयतै तीजै गुणस्थान जाय है। कोऊ सात प्रकृतिनिका अर अप्रत्याख्यानकाहू क्षयोपशमतै पचमगुणस्थान चढे है। कोऊ दर्शनमोहनी अर अनतानुवधी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरणका क्षयोपशमादिकरि संज्वलन अर नव नोकषायका देशघातिस्पर्द्धकनिका अतिमद उदयतै सप्तमगुणस्थानकू प्राप्त होयहै। ऐसे मिथ्यात्वतै तो चौथे तीजे पाचमे सातमे इन च्यार गुणस्थाननिमेही गमन होय है। अर सासादनतै एक मिथ्यात्वमेही पडेहै चढे नही। अर मिश्रगुणस्थानमे चढे तो चौथे। पडे तो पहले मिथ्यात्वमे ये दोयहीमे गमन है। अर अव्रत नाम चतुर्थगुणस्थानी चढे तो सातमे तथा पाचमे दो स्थानमे जाय अर पडे तो प्रथममे जाय अर पडे तो प्रथममे तथा द्वितीयमे तृतीयमे ऐसे चढने उतरनेके पांच मार्ग है। अर देशसयम नाम पचम गुणस्थानी चढे तो एक सप्तममे जाय पडे तो मिथ्यात्वादिक च्यारमे ऐसे पाच मार्ग है। अर छठे गुणस्थानतै चढे तो एक सप्तमे अर पडे तो प्रथमै तथा द्वितीय तृतीय चतुर्थ पचम ऐसे छह मार्ग है। अर सप्तम गुणस्थानमै पडे तो एक छटे अर चढे तो अष्टममे अर मरण करे तो चतुर्थ गुणस्थानमे आवे ऐसे तीन मार्ग है। अर अष्टम गुणस्थानतै चढे तो नवमे पडे तो सातमे मरण कीए पछे चौथे ऐसे तीन मार्ग है अर नवमा गुणस्थानतै चढे तो दशमे सूक्ष्मसापरायमे जाय अर पडे तो आठमे अर मरण करे तो चौथे अव्रतमे ऐसे तीन मार्ग है। अर दशम गुणस्थानतै क्षपकश्रेणीवाला मोहकी क्षपणाकरि होइ ते तो वारमै जाय अन्य मार्ग नही। अर मोहनीयका उपशम करनेवाला चढे तो एक ग्यारमे अर पडे तो नवमै अर मरण करे तो चौथे ए तीन मार्ग है। अर ग्यारमा

गुणस्थानधारी पडे तो दशमे अर मरे तो चौथे दोयगुणस्थानही मार्ग है चढे नही पडेही। अर बारमा क्षीणकषाय नामा चढे सो तेरमेही जाय पडे नही अर मरणहू नही करे। अर तेरमा गुणस्थानी केवली चौदमेही जाय पडे नही अर यामे मरणहू नही। अर चौदमा गुणस्थानी सिद्धालयमेही जाय है। ऐसे गुणस्थानके उतरनेचढनेका स्वरूप कह्या।

इहा ऐसा जानना। जो मिश्रगुणस्थामे अर क्षीणकषाय नाम बारमा गुणस्थानमे अर तेरमामे अर क्षपकश्रेणीमे तो नियमकरि मरण नहीहै। अन्य गुणस्थानमे मरण करेहै। परतु मरणकरी परलोकजाय है तदि मार्गमे विग्रहगति कहिए तहा विग्रहगतिमे मिथ्यात्व और सासादन णर अविरत ए तीनही गुणस्थान है। पचमादि अन्यगुणस्थानमे मरण तो करे परतु मरणकरतेही दूजे समयमेही अविरतगुणस्थान होजाय है समयमभाव रहे नही। अर मिथ्यात्वका मन्या मार्ग मिथ्यात्वी सासादनका मन्याकै मार्गमे सासादन रहेहै। अपर्याप्त अवस्थाताई पाछे मिथ्यात्व होय है अविरतका मन्याकै अव्रत रहे। ऐसे सक्षेप गुणस्थाननिका स्वरूप कह्या।

अब बीस प्ररूपणाविषै जीवसमासप्ररूपणा कहे है। जीव अनेक है बहुत प्रकार तिनकी जाति है तोह सामान्यताकरि एकपणाने प्राप्तिकरिए सो जीवसमास है। जीव जामै सग्रहरूप ग्रहणकरीए नानारूप जाका ग्रहणमे आजाय सो जीवसमास है। जीव है सो उपयोगलक्षण एकप्रकार है। इसमे समस्त जीव आयगए। द्रव्यार्थिकनयका विषयकरी जीव एकप्रकारही है। संग्रहनयकरि ग्रहणकीया तिनमे भेद करनेवाला व्यवहारनयकरी ससारी जीवका त्रस स्थावर भेदकरि जीवसमास दोयप्रकार है। एकेंद्रिय विकलेंद्रिय सकलेंद्रिय करि तीन प्रकार है। एकेंद्रिय विकलेंद्रिय सकलेंद्रियके सज्ञी असज्ञी भेद करी च्यार प्रकार है। एकेंद्रिय द्वीद्रिय त्रीद्रिय चतुरिंद्रिय पचेंद्रिय भेदकरि पचप्रकार है। पृथ्वी अप तेज वायु वनस्पति त्रसकायके भेदकरि [illegible] प्रकार है।

बहुरि पच स्थावर विकलेंद्रिय अर सकलेंद्रियके भेदकरि जीवसमास सप्तप्रकार हैं। पच स्थावर अर विकलेंद्रिय अर सज्ञी असज्ञी भेदकरि अष्टप्रकार है। बहुरि स्थावर पचेंद्रिय त्रीद्रिय चतुरिंद्रिय पचेंद्रिय भेदकरि नवप्रकार है। बहुरि पच स्थावर तीन विकलेंद्रिय अर सज्ञी असंज्ञी भेदकरि दशप्रकार है। तथा पच स्थावरकाय बादरसूक्ष्मकरि दश अर त्रसकाय ऐसे ग्यारह प्रकार है। बहुरि बादरसूक्ष्मकरि स्थावर दशप्रकार अर विकलेंद्रिय सकलेंद्रिय भेदकरि [illegible]प्रकार है।

वनस्पतिका नित्यनिगोद इतरनिगोद ऐसे स्थावरनिके षड्भेद वादरसूक्ष्मकरि वारह अर प्रत्येक-वनस्पति ऐसे स्थावर तेरह अर विकलेंद्रिय अर सज्ञी असज्ञी भेदकरि पोडश प्रकार है।

वहुरि स्थावरकाय तेरह प्रकार विकलत्रय तीन पचेद्रिय एक ऐसे सतरह प्रकार है। तथा स्थावरकाय तेरह विकलत्रय सज्ञी असज्ञी ऐसे अष्टादशप्रकार जीवसमास है। तथा पृथ्वीकाय अप तेज वायु नित्यनिगोद इनका वादरसूक्ष्मकरि वारहभेद अर सप्रतिष्ठित अप्रति-ष्ठितकरि प्रत्येक वनस्पति दोय भेद द्वीद्रिय त्रीद्रिय चतुरिंद्रिय सज्ञी असज्ञी पचेद्रिय ऐसे उगणीस प्रकार है। बहुरि पर्याप्त अपर्याप्तकरि गुणीए तो अडतीस प्रकार। अर पर्याप्त लब्धपर्याप्त निर्वृत्यपर्याप्त करि गुणे सत्तावन भेदरूप है।

तथा अठचाणवे जीवसमास समझनेयोग्य है। पृथ्वी अप् तेज वायु नित्यनिगोद चतुर्गतिनिगोद इनि छहके वादरसूक्ष्मकरि वारह भेद भए अर प्रत्येकवनस्पति सप्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित ऐसे दोय भेद सब मिलि एकेद्रियके चोदह भेद अर विकलत्रय ऐसे सतरह भेद इनिके पर्याप्त निर्वृत्यपर्याप्त लब्धपर्याप्त इन तीन भेदनिकरि गुणे इक्यावन भेद एकेद्रिय विकलत्रयके भए।

वहुरि तिर्यंचनिमे कर्मभूमिके गर्भज पचेद्रिय तिर्यच जलचर स्थलचर नभश्चर तीन भेद ते प्रत्येक सज्ञी असज्ञी भेदकरि छह प्रकार तिनके पर्याप्त निर्वृत्यपर्याप्तकरि कर्मभूमिके गर्भज पचेद्रिय तिर्यचके वारह भेद भए। वहुरि कर्मभूमिके सन्मूर्छन पचेंद्रिय तिर्यच जलचर स्थलचर नभश्चर इनिके सज्ञी असज्ञी भेदकरि छह प्रकार।

इनिके पर्याप्त निर्वृत्यपर्याप्त लब्धपर्याप्तकरि अठारह प्रकार ऐसे कर्मभूमिके पचेद्रिय तिर्यचके तीस भेद भए। भोगभूमिमे सज्ञीही उपजै है अर असज्ञी नही उपजे अर जलचर नही उपजै। यातै स्थलचर नभश्चर इनके पर्याप्त निर्वृत्यपर्याप्तकरि चार भेद भए। ऐसे तिर्यचनिके पच्यासी भेद भए। अर मनुष्यनिमे आर्यखडके अर म्लेच्छखडके अर भोगभूमिके अर कुभोग-भूमिके च्यार प्रकारके गर्भज मनुष्य पर्याप्त निर्वृत्यपर्याप्त भेदकरि अष्टप्रकार भए।

वहुरि समूर्छन मनुष्य लब्धपर्याप्तही होइ यातै नव भेद भए। अर देव नारकी पर्याप्त निर्वृत्यपर्याप्तकरि च्यार भेदरूप भए। ऐसे अठचाणवे जीवसमास जानने इन भेदनिके जाननेतै ससारी जीवनिके प्रकारनिका जान्या जायहै। मुक्तजीव विशुद्धज्ञानदर्शनमय एकस्वरूपही है। ऐसे दूजी जीवसमासप्ररूपणा वर्णन करी।

अव तीसरी पर्याप्तिप्ररूपणा वर्णनकरीए है। जैसे घट पट गृह इत्यादिक वनाइए है तहां जो समस्त शक्तिसहित परिपूर्ण होजाय तदि पूर्ण कहिए। अर समस्तशक्तिरहित पूर्ण नही होइ सो अपूर्ण कहिए है। तैसेही ससारी जीवकू एक शरीर छांडि अन्य शरीरके ग्रहण

करनेविषैहू अपनेयोग्य पर्याप्ति पूर्ण करे सो पूर्ण कहावे तथा पर्याप्त कहावे ।.पूर्ण नही करे सो अपर्याप्त कहावे ।

आहारपर्याप्ति १, शरीरपर्याप्ति २, इंद्रियपर्याप्ति ३, श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति ४, भाषापर्याप्ति ५, मन पर्याप्ति ६, ऐसे छह पर्याप्तिनिके नाम जानने। तिनमे एकेंद्रिय जीवनिके भाषा अर मन नही तातैं च्यारिही पर्याप्ति है। अर विकलत्रय जीवनिके तथा असंज्ञी पचेंद्रियके मनविना पचपर्याप्ति हैं। सज्ञी पचेंद्रिके छह पर्याप्ति हैं ।

इहा ऐसा जानना। जो मनुष्य तिर्यचनिके तो औदारिक शरीर होय है। अर देव-नारकीनिके वैक्रियक शरीर होय है। छठा गुणस्थानवाले आहारक ऋद्धिधारक मुनिके सशयादि दूरि करनेके अर्थि एक हाथ प्रमाण इंद्रियनिके अगोचर मस्तकमैतैं निकसे अत-र्मुहूर्त्तप्रमाण कालमे केवली श्रुतकेवल्याका दर्शनमात्रतैं सशयादि दूरिकरि मुनीश्वराका अंगमे पाछा प्रवेश करे सो आहारकशरीर है। ऐसे तीन शरीरके मध्य जैसा शरीर नाम कर्मका उदयकरि जो शरीर धारण करना होय तिस शरीरके योग्य तथा छह पर्याप्तिनिके योग्य पुद्गलस्कधनिकू खलरसभागकरि परिणमावनेकू पर्याप्तिनाम कर्मका उदयतैं आत्माकै शक्तिका उपजना सो आहारपर्याप्ति है ।

भावार्थ– कर्मके उदयतैं जैसा शरीर धारण करना होइ ताकै योग्य जो प्रथम समयमे ग्रहण कीये पुद्गलस्कध तिनकू खलरसभागरूप परिणमायवेकी पर्याप्तिनाम कर्मके उदयतैं आत्मामे शक्ति प्रगट होजाना तिस आत्मशक्तिकू आहारपर्याप्ति कहिए हैं ।

वहुरि तीन शरीर षट्पर्याप्तिके योग्य जे पुद्गलस्कध तिनके खलभाग तो हाड दत्तादिक स्थिर अवयवरूप अर रसभाग जो रुधिरादिक द्रव्य अवयवरूप करिकै परिणमायवेकी शक्तिका उपजना सो शरीरपर्याप्ति है ।

वहुरि आवरण अर वीर्यांतरायके क्षयोपशमतैं विस्तरी जो आत्माके योग्यदेशमे तिष्ठते [illegible]ादि विषयनिका ग्रहण करनेके व्यापारमे शक्ति प्रगट होना सो जातिनाम कर्मके उदयतैं [illegible] सो इंद्रियपर्याप्ति है। वहुरि आहारवर्गणारूप आए जे पुद्गलस्कधनिकू उच्छ्वास-[illegible] करिके परिणमायवेकू उच्छ्वासनिश्वासनाम कर्मका उदयतैं शक्तिका उपजना सो [illegible]श्वासनिश्वासपर्याप्ति है। वहुरि स्वरनाम कर्मका उदयके वशतैं भाषावर्गणारूप आए जे पुद्गलस्कध तिनतैं सत्य असत्य उभय अनुभव भाषारूप करिके परिणमायवेकू शक्तिका प्रगट [illegible] सो भाषापर्याप्ति है ।

पशमविशेषकरि गुणदोषनका विचार तथा स्मरण चिंतवन है लक्षण जाका ऐसा भावमनरूप परिणमनकी शक्तिकी उत्पत्ति होना सो मन पर्याप्ति है ।

भावार्थ– जन्म या लेतेही इद्रियादिक तो प्रगट होय नही । परतु शरीरादिकनिके योग्य पुद्‌गलवर्गणा ग्रहणकरि तिनमे आहार शरीर इद्रियादिक उपजनेकी शक्ति प्रगट होजाना सो पर्याप्ति है शरीर इद्रियादिक तो परिपूर्ण अवसरपाय होयहै परतु पुद्‌गलनिमे होनेकी शक्ति प्रगट होजायहै । जैसे आम्र नामा वृक्षकी उत्पत्ति होते तो अकुर प्रगट होयहै परतु उस अकुरमे पान खूल फल डाहला इत्यादिक होनेकी शक्ति प्रगट होजाय है तैसे अन्य देहयोग्य पुद्‌गल ग्रहण करतेही अतर्मुत्तमे शक्तिका प्रगट होना सो पर्याप्ति नाम है ।

इहा इतना जानना । जो एकेद्रिय च्यार पर्याप्तियोग्य द्रव्यग्रहण करेहै सो एकसमयमे ग्रहण करेहै विकलचतुष्क पाच पर्याप्तियोग्य अर सज्ञी पचेद्रिय छहके योग्य एक समयमे ग्रहण करेहै । अर पर्याप्ति एक क्रमतै अतर्मुहूर्तमे पूर्ण करेहै । इन छहू पर्याप्तिका काल एकएककाभी अतर्मुहूर्त्त अर सयस्तका मिलाइए तोहू अतर्मुहूत्ततै अधिक नही होई क्योकि अतर्मुहूर्त्तभा जघन्य तो एक आवली एकसमयका है । अर उत्कृष्ट दोयघडी एक समय घाटीका है । मध्यका असख्यात भेद है । दोय पूर्ण होय सो एक मुहूर्त्त है ।

इहा अन्य विशेष जानना । जो पर्याप्तनाम कर्मके उदयते एकेद्रिय तो चारि पर्याप्ति पूर्ण करेहै । विकलचतुष्क पाच पूर्ण करेहै । सज्ञी पचेद्रियके छह पूर्ण करे तदि पर्याप्त नाम कहिए वा पूर्ण कहिए । परतु जेतै अतर्मुहूर्तपर्यत शरीरपर्याप्ति पूरण न करे तेतै निवृत्य-पर्याप्ति कहिएहै । इसका अर्थ ऐसा जो निवृत्ति कहिए शरीरपर्याप्तिकी उत्पति तिस करि अपर्याप्त कहिए पूर्णता नही होइ तिनने निवृत्यपर्याप्ति कहिए । अर शरीर पर्याप्ति अतर्मुहूर्तमे पूर्ण होजाय तदि पर्याप्त कहिएहै ।

बहुरि जो अपर्याप्त नाम कर्मका उदयते एकेद्रियादिक जीव अपने अपने चार पाच छह पर्याप्ति पूर्ण नही करे । स्वासका अठारमा भागही मात्र अतर्मुहूमेही मरण करै सो लब्ध्यपर्याप्त कहिएहै ।

भावार्थ– पर्याप्त अपर्याप्त दोय जीवके भेद है । तिनमे जो अतर्मुहर्तमे पर्याप्ति पूर्ण करे सो पर्याप्त कहिए । अर अपर्याप्तके दोय भेद है । एक निवृत्यपर्या त । एक लब्ध्यपर्याप्त जाके पर्याप्त कर्मके उदयते अतरर्मुहूर्तमे पर्याप्ति नियमते पूर्ण होयगा जेतै पूर्ण नही होइ तेतै अतर्मुहूर्तप्रमाण निवृत्यपर्याप्त कहावेहै । अर जाके अपर्याप्तनाम कर्मके उदयते एकहु पर्याप्ति पूर्ण नही होय सवसका अठारवा भागमेही मरणकरे सो लब्ध्यपर्याप्त कहावेहै ।

सो लब्ध्यपर्याप्त सन्मूर्छन तिर्यचनिमेही होयहै । अर सन्मूर्छन मनुष्यनिमेहू होयहै ।

अर गर्भज तिर्यच मनुष्य समस्त भोगभूमिके कुभोगभुमिक म्लेछ खडके अर समस्त देवनारकी इनमे लव्ध्यपर्याप्तक जीव नही उपजेहै। पर्याप्त अर निर्वृत्यपर्याप्त दोय प्रकारही होयहै। ऐसे पर्याप्त नामा तीजी प्ररुपणा समाप्त करी।

अव प्राणप्ररूपणा सक्षेपकरि कहेहै। स्पर्शनादिक पाच इद्रिय प्राण अर मनोवल वचनवल कायवल श्वासोच्छ्वास अर आयु। ए दशप्राण है सो पर्याप्तावस्थामे सज्ञी पचेद्रियके मनविना नवप्राण है। अर चतुरिद्रियके मन अर कर्ण इद्रियविना आठ प्राण है। अर त्रीद्रियके नेत्रहू नही तातै सात प्राण है। अर द्वीद्रियके नाशिकाहू नही तातै छह प्राण है। एकेद्रियकै रसना इद्रिय अर वचनवलहु नही तातै च्यार प्राणही है। अर अपर्याप्त अवस्थामे एकेद्रियके स्पर्शनेद्रिय अर कायवल अर आयु ऐसे तीन प्राणही है। जातै अपर्याप्त अवस्थामे वचनवल अर श्वासोच्छ्वास अर मनोवल ए नही होइहै। द्वीद्रिय अपर्याप्तके च्यार प्राण, त्रीद्रियके पाच प्राण, चतुरिद्रियके छह प्राण, असज्ञीपचेद्रियकैहू सप्त प्राण है मन वचन वल उच्छ्वास तीन प्राण अपर्याप्तके नही होयहै। ऐसे चौथा प्राणप्ररूपणा समाप्त करि।

अव सज्ञाप्ररूपणकावर्णन करेहै। सज्ञा नाम इहां वाछाका है। सो सज्ञा च्यार प्रकार है। आहारसज्ञा–१, भयसज्ञा–२, मैथुनसज्ञा–३, परिग्रहसज्ञा–४, ए जे सज्ञा कहिए वाछा इनकरि पीडाकू प्राप्तभए जीव इस भवविषै विषयनिकू सेवनकरते तथा विषयनकी प्राप्ति होते वा नही प्राप्ति होते दोऊ लोकमे महान् दु खकू प्राप्त होइहै।

इहा ऐसा जनना। जो सुदर च्यार प्रकारके आहारके देखनेतै तथा आहारकू यादि करनेतै आहारकी कथाके श्रवणकरनेतै आहारमे उपयोग लगावनेतै तथा उदरकारितापणातै अर असातावेदनीयकी उदीरणातै तथा तीव्र उदयते आहार जो विशिष्ट अन्नादिकका भोजन करनेमे वाछा सो आहारसज्ञा है। वहुरि भयसज्ञाकी उत्पत्तिका कारणकू कहेहै। अतिभयकर व्याघ्रादिक क्रूर मृग सर्प्पादिकका देखना तथा इनकी कथाका श्रवण करना आदि तथा आपका शक्तिरहितपणा इत्यादि वाह्यकारणकरिकै अर भयनोकषायका तीव्र उदयरूप अतरग कारणकरि भागनेकी वाछा तथा छिपजानेकी इच्या सो भयसज्ञा है अव मैथुनसज्ञाके कारणनिकू कहेहै।

पुष्टरसका भोजन करना कामकी कथाका श्रवण करना पूर्वकालमे सेवनकीया [illegible] याद करना कुशील पुरुपनिकी सगति करना तथा कामकी गोष्टी श्रृगारादिक कथा [illegible] हावभाव रूपादिका देखना इत्यादिक वहिरगकारण अर स्त्रीवेद पुरुषवेद नपुसकवेद [illegible] वेदनाम नोकपायकी उदीरणरूप अतरगकारणकरि सुरतव्यापाररूप मैथुनमे [illegible] सो मैथुनसज्ञा है।

अब परिग्रहसज्ञाकी उत्पत्तिके कारणनिकू कहे है। वाह्यपरिग्रह धनधान्य आभरण-वस्त्रादि अनेक उपकरणनिका देखना तथा परिग्रहकी कथाका श्रवण करना तथा धनका सबध होना तथा नानाप्रकारके परिग्रहधारीनिकू देखना इत्यादिक बहिरगकारण अर लोभकषायकी उदीरणारूप अतरगकारणनिकरि जो परिग्रहका संचयमे परिग्रहका उपार्जनमे वाछाका उपजना सो परिग्रहसज्ञा है। ऐसे ए च्यार सज्ञा कही।

तिनमे आहारसज्ञा तो छठा गुणस्थानपर्यतही है। जातै अप्रमत्तादि गुणस्थाननिमै असातावेदनीकी उदीरणा नही होय है। अर भयसज्ञा मैथुनसज्ञा यद्यपि नवमा गुणस्थानताई तथा परिग्रहसज्ञा दशमाताई उपचारकरि कही क्योकि इनकाकारण कर्मका मदसद्भावतै कहिएहै। अर निश्चयतै तो अप्रमत्तादिगुणस्थाननिमे ध्यानमे लीन रहै। परिणामनिकी विशुद्धताकू शुक्ल-ध्यानके प्रभावतै समयसमय चढैहै तिनके भय मैथुन परिग्रहका लेशरूपभी परिणाम नहीहै परतु सत्तामैतै कर्मका नाश मूलतै नहीभया यातै उपचारतै करणानुयोगमे सज्ञा कहीहै। भावनिमे सज्ञा नही। ऐसे सज्ञाप्ररूपणा पाचमी वर्णनकरी।

अब गतिमार्गणाका स्वरूप कहेहै। गतिनाम कर्मका उदयतै उत्पन्नहुवा जो जो जीवकै पर्याय सो गति है। एकभवकू त्यागी अन्यभवकू प्राप्त होय तदि जो प्राप्तहोनेयोग्य होय सो गति है। सो गति, नारक –१, तिर्यक् –२, मनुष्य –३, देव –४ के भेदकरि च्यार प्रकार है।

उक्तचगाथासूत्र– ण रमति जदोणिच्च। दव्वे खित्ते य कालभावे य।
अण्णोण्णेहिं जह्मा। तह्मा ते णारया भणिया ॥१॥

अर्थ– जो जीव नरकगतिसबधी आहाराहिकद्रव्यमे तथा एकसमयकू आदि लेय अपना आयुका अतपर्यत कालमे तथा चैतन्यकी पर्यायरूप भावमे नही रमै है रह्यानही चाहेहै अति बुरा लागै है। तथा भवातरमे उत्पन्नहुवा वैरतातै उपज्या परस्पर नारकीनिके क्रोध तिनकरिके पुरातन अर नवीन नारकी रत कहिए रागी नही होइ तातै इनकू नरक कहिए। अथवा नर जे प्राणी तिननै कम्यति अथवा नरक जे विल इनमे उपजे तातै नारक कहिए। अथवा नर जे प्राणी तिननै कम्यति कहिए। वाधा करे दुष्ट करे ते नारक है नारकीनिकी गति सो नरकगति कहिए है।

उक्तच गाथा– तिरयति कुटिलभावं सुविउलसण्णा णिगिदृमण्णा।
अच्चत पाववहुला तह्मा तेरीच्छिया भणिया ॥१॥

अर्थ– जा कारणतै ते जीव सुविवृत सज्ञा कहिए आहारादिसंज्ञा जिनक

दृढ नही आहार भय मैथुन परिग्रहादिक जिनके प्रगट होइ। अर प्रभाव सुख द्युति लेश्याकी विशुद्धताकरि अत्यत घाटि होइ तातै निकृष्ट है। बहुरि हेय उपादेयका ज्ञानादिककरि हीन पणानै अज्ञानी है। बहुरि नित्यनिगोदादिककी अपेक्षाकरि अत्यत पापकी बाहुल्यतासहित है। तिस कारणतै तिरोभाव जो कुटिलपरिणाम मायचारके परिणामनिकू अत्यत किंए प्राप्तहोय ते तिर्यच कहिए है।

उक्तच गाथासूत्र– मण्णति जदो णिच्च। मणेण णिउणा मणुक्कडा जह्मा।
मणुब्भवा य सव्वे। तह्मा ते माणुसा भणिदा ॥१॥

अर्थ– जातै जे जीव हेयोपादेय कहिए त्यागनेयोग्य ग्रहण करनेयोग्यकू नित्यही जाणें अर मनकरि निपुण कहिए अनेक शिल्पादिकलामे प्रवीण होय वा मनसोत्कटा कहिए ज्याका चिंतवनादिकमै दृढ उपयोग होय अर मनु जे कुलकर तिनके सतान है तातै मनुष्य कहिए है।

उक्तच गाथा– दिव्वति जदो णिच्च। गुणेहिं अठ्ठेहि दिव्वभावेहिं।
भासत दिव्वकाया। तह्मा ते वण्णिया देवा ॥४॥

अर्थ– जातै जे जीव मनुष्यनिके नही पाइए ऐसे अणिमा महिमादिक ऋद्धिके प्रभावकरि मानते मेरुकुलाचल द्वीप समुद्रनिविषै 'दीव्यन्ति' कहिए क्रीडा करै तथा मोद द्युति स्तुति कांति विजिगीषा गमनादिकने प्राप्त होय तथा गुणकरि प्रकाशमान होय तथा सप्तधातु मल वातपित्तकादि दोपरहित प्रभासहित जिनका शरीर होय ते जीव परमागममे देव कहेहै। ऐसे तो च्यार गतिका स्वरूप कह्या।

अर जे जन्म मरण भय सभोग वियोग दुःख रोग क्षुधादि अनेक वेदना रहित भए [illegible] छांडिए सिद्धत्वपर्यायलक्षण सिद्ध भए तिनके चतुर्गति नही है ससारीनिकी [illegible] गति ऐसे छठी गतिप्ररूपणा समाप्त करी।

ग्रहण करनेके व्यापारमे प्रवृत्ति सो उपयोग हैं। ऐसे लब्धि अर उपयोगरूप तो भावेंद्रिय है। भाव नाम चैतन्यकी परणती जाननेरूप भई ताका है।

भावार्थ– पदार्थके ग्रहणकरनेकी शक्ति सो लब्धि है। अर पदार्थके ग्रहणकरनेमे व्यापार सो उपयोग है। बहुरि जातिनाम कर्मका उदय है सहकारी जाके ऐसा देहनाम कर्मका उदयते उपज्या निर्वृत्ति अर उपकरण दोयप्रकार द्रव्येंद्रिय है। इन इंद्रियनिमे अपनेअपने आवरणके क्षयोपशमसहित आत्माके प्रदेश इंद्रियनिके आकार होय तिष्ठेहैं सो तो अभ्यतरनिर्वृत्ति है। अर आत्मप्रदेशनिकरि सहित शरीरके प्रदेशनिका सस्थान सो वाह्यनिर्वृत्तिहै। अर इंद्रियपर्याप्तिकरी आए नोकर्मवर्गणाका स्कधरूप जे स्पर्शादिक अर्थके ज्ञानके सहकारी सो अभ्यतर उपकारण है। अर ताके आश्रय त्वचादिक ते वाह्य उपकरण है ऐसे द्रव्येंद्रियभावेंद्रियका स्वरूप कह्या।

जिनके स्पर्शविषै ज्ञान सोही चिन्ह सो एकेंद्रियजीव है जिनके स्पर्श अर रस दोयविषै ज्ञान जो चिन्ह ते द्वीद्रियजीव है। जिनके स्पर्श रस गधविषै ज्ञान जो चिन्ह ते त्रीद्रियजीव हैं। जिनके स्पर्श रस गध रूपविषै ज्ञानचिन्ह होइ ते चतुरिंद्रियजीव है। जिनके स्पर्श रस गध रूप शद्वविषै ज्ञानचिन्ह ते पचेद्रियजीव है। ते सर्वजीव अपनेअपने भेदकरी भिन्नभिन्न हैं। एकेंद्रियजीवकै एक स्पर्शही इंद्रिय है। द्वीद्रियादिक जीवनिके जिव्हा घ्राण नेत्रकर्ण इंद्रिय क्रमते वधती होय हैं। पृथ्वी अप् तेज वायु वनस्पतीनिके एकही इंद्रिय है सखादिक द्वीद्रिय हैं। पिपीलिकादि त्रीद्रिय हैं। भ्रमरादि चतुरिंद्रिय हैं मनुष्यादि पचेद्रिय है। स्पर्शनेंद्रिका अनेक प्रकार सस्थान है। रसनेंद्रिय खुरपाकै आकार है। घ्राणेंद्रिय तिलका पुष्पके आकार है। नेत्रेंद्रिय मसूरके आकार है। कर्णेंद्रिय यवकी नालीके आकार है। ऐसे इंद्रियप्ररूपणा सप्तमी कही।

अव कायप्ररूपणा अष्टमी कहेहै। जे पुद्गलस्कधनिकरि सचयरूप होय ते काय है औदारिकादि शरीरमे तिष्ठता आत्मा पर्यायहूकू उपचारकरि काय कहिएहै। पुद्गलविपाकी शरीरनाम कर्मके उदयकरी शरीरकूभी काय कहिएहै। जातै जातिनाम कर्मका उदयते अविनाभावी जो त्रसस्थावरनाम कर्मका उदयते उपज्या आत्माके त्रस तथा स्थावरत्वपर्याय सो काय कहिएहै। सो पृथ्वी अप् तेज वायु वनस्पति त्रसकायके भेदतं छह प्रकार भगवान् कह्याहै।

पृथ्वी अप् तेज वायु नाम कर्मकी उत्तरोत्त प्रकृतिका उदयकरिकै पृथ्वी अप् तेज वायुरूप जे पुद्गलस्कध तिनमेतै सोहो वर्ण गध रस स्पर्शयुक्त जीवनिके देह नियमकरिकै होय है तातै पृथ्वीही है काय कहिए शरीर जिनके ते जीव पृथ्वीकाय कहिए। जलरूपही है काय जिनके ते अप्कायिक है। अग्निही है काय जिनके ते जीव अग्निकायिक है।

पवनही है काय जिनके ते जीव पवनकायिक है। कोऊ जीव पूर्वदेहकू छाडि पृथ्वीकायपणाकी पर्यायके सन्मुख हुवा विग्रहगतिविषै वर्तै है सो पृथ्वीजीव कहिए। अर जो पृथ्वी-रूप शरीरकू ग्रहणकर रख्याहै सो पृथ्वीकायिक कहिए। अर पृथ्वीका शरीरकू छाडिगया अर पृथ्वीमय देह रह्या तिस देहकू पृथ्वीकाय कहिए ।

ऐसेही अपजीव अप्कायिक अप्काय तेजोजीव तेजस्कायिक तेजस्काय, वायुजीव वायुकायिक वायुकाय, ऐसे इन च्यारनीका तीनतीन प्रकार जानना। इन च्यार प्रकारके स्थावरनिके जीवविपाकी वादरनाम कर्मके उदयतें वादर कहिए स्थूलशरीर होयहै। अर जीवविपाकी सूक्ष्मनाम कर्मके उदयते सूक्ष्मशरीर होयहै ।

इहा वादरसूक्ष्मका ऐसा लक्षण जानना। अपना शरीरकरि परका घात होय परकरि अपना घात होय सो वादरशरीर है अर बादरजीव आधारते तिष्ठेहै। कोऊ पृथ्वी पर्वत जल स्थलादिकके आधार होय हैं। अर सूक्ष्मशरीरकरि परका घात नही होइ परकरि सूक्ष्मदेहका घात नही होइ। जलमे स्थलमे पृथ्वीमे वज्रमे कहाहू रुके नही निकलीकरि चलेजाय है मान्या मरे नही छेद्या छिदे नही अग्निमे वलै नही पवनकरि रूकै नही उडे नही ऐसा सूक्ष्मदेहधारी सर्वत्र त्रैलोक्यमे जलमे स्थलमे आकाशमे निरतर अतररहित भरे है। आधारकी अपेक्षा नही करेहै। समस्त पर्वत भीत वज्रादिक शरीरादिकमे गमनागमन करेहै। इन च्यार प्रकारके वादर सूक्ष्म जीवनिके शरीरका प्रमाण घनागुलके असख्यातवे भाग है ।

यद्यपि चोसठी भेद अवगाहनाके कीए तिनमे केतेक बादरशरीरतै केतेक सूक्ष्मशरीरकी अवगाहना वडी है तोहू जिनके वादरपणाका स्वभाव है ते परकरि रूके है। अर जिनशरीरनिका सूक्ष्म परिणमन है ते बादरदेहतै अवगाहनाकरि अधिक है तोहू त्रैलोक्यमे कहाहू नही रूकेहै। अर वादजीव अल्पशरीर होतेहू वादरनाम कर्मके उदयते परकरि रूकेहै।

जैसे महीन वस्त्रमे जल नहीरूके अर सरस्यू रूकेहैं। यद्यपि ऋद्धिधारिनिका स्थूलशरीरहू वज्रमय शिला पर्वत जल पृथ्वीमे नही रूकेहै। सो तपका अतिशयका महात्म्य है। जाते तप विद्या मणि मत्र औषधिनिकी वडी अचित्य शक्ति है अतिशयरूप महात्म्य है। स्वभाव देखनेमे आवेहै स्वभावमे तर्क्क नही है ।

अब वनस्पतिकाय जीवनिका ऐसा स्वरूप जानना। वनस्पति या नामक स्थावर नाम कर्मके उदयते वनस्पति कायिक जीव होयहै। ते दोय प्रकार है। एक प्रत्येकशरीर एक साधारणशरीर। एक जीवका एक शरीर होय सो प्रत्येक वनस्पति है अर एक शरीरकू अनत जीव धारण करे देह एक अर जीव अनत ते साधारण शरीर ताकू साधारणवनस्पति कहिएहै। तिनमे प्रत्येकशरीरहू दोय प्रकार है।

जिनकै आधार वादरनिगोदशरीर तिष्ठै ते प्रतिष्ठितप्रत्येक कहिए। अर जिनके आधार वादरनिगोद नही सो अप्रतिष्ठितप्रत्येक है।

अव प्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति की पहिचानि कहेहै। जिस वनस्पतिमे तातू प्रगट नही भए होय अर लीक धारवा प्रगट नही तथा सधी प्रगट नही भई होय अर तोडतै समभग होजाय तथा तातू लग्या, नही रहे वा वाकी टेडी नही टूटै तथा छेद्याहुवा फिर उगी आवे सो वनस्पति साधारणशरीरसहित है तातै प्रतिष्ठित प्रत्येक कहिए। सोहू साधारणके आश्रयतै उपचारतै साधारण कहिएहै। अर वनस्पतिमे नसा कली धारवा तथा पेली तातू प्रगट होजाय वा समभग नही होय सो अप्रतिष्ठित प्रत्येक है साधारणशरीररहित है।

मूल कद छालि वकल कूपल पत्र छोटी डाहाली वा डाहला पेड फूल फल जिनका वरोवरी समभग होजाय सोही निगोदशरीरसहित प्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति है। अर वाही वनस्पती केते काल गए पाछै समभग नही होइ तातु प्रगट होजाय तथा पेली सधी प्रगट होजाय सो निगोदरहित अप्रतिष्ठित प्रत्येक होयहै।

वहुरि जिनके कदके वा मूलके डाहालाके डाहलीके वकल अतिस्थूल होय सोहू निगोदसहित प्रतिष्ठित प्रत्येक होय है। अर जिनके कदादिकमे छाली पतली होय ते अप्रतिष्ठित प्रत्येक है निगोदरहित है।

अव साधारणवनस्पतीका स्वरूप कहे है। साधारण नाम कर्मका उदयतै निगोदशरीर होय है। इनकू साधारणशरीर कहिएहै। सो ए साधारणवनस्पतिशरीर पूर्वे कह्या लक्षणसहित वादर सूक्ष्म दोय प्रकार है। जिनके आहार श्वासोच्छ्वास जन्म मरण समानकालमे होय ते साधारणजीव है।

इहा ऐसा जानना। जो साधारण नाम कर्मका उदयके वशवर्त्ती अनतजीवनिके उत्पन्न होनेके प्रथमसमयमे आहारवर्गणारूप आए पुद्गलस्कधनिकू खलरसभाग परिणमावनेकी शक्ति समस्त अनतजीवनिके सदृश समानकाससे प्रगट होय सोही आहारकी पूर्णता है। और कवलाहार ग्रास लेना सो नही जानना। आहारपर्याप्ति अतर्मुहूर्तमे पूर्ण भए पछै वहुरि आहारवर्गणारूप आए पुद्गलस्कधनिकू शरीराकार परिणमनकी शक्ति समस्त अनत जीवनिके समान कालमे होय है। वहुरि स्पर्शनेंद्रियके आहार परिणमनशक्ति तथा स्वासोच्छ्वास होनेकी शक्ति अनन-जीनिके समानकालमे होयहै। तातै साधारण कहिए है।

वहुरि प्रथमसमयमे उत्पन्न भए जीवनिकीज्यों तिसही शरीरमे द्वितीयादि समयमे उत्पन्न भए अनतानत जीवनिके पूर्वसमयमे उपजे अनतानत जीवनिकरि सहित आहारपर्याप्ति सदृशकालमे पूर्ण करे तातैंहू साधारण कहिएहै। जिस निगोदशरीरमे जिस कालमे अनती

स्थितिके क्षयके वशतै एकजीव मरण करेहै तिस कालमे तिसही निगोदशरीरमे समानस्थिति-वाले अनतानत जीव साथीही मरण करेहै। अर जिस निगोदशरीरमे जिस कालमे एक जीव उत्पन्न होय तिस निगोदशरीरमे सामान्यस्थितिवाले अनताअनत जीव साथिही उत्पन्न होय है ऐसेह साधारणपणा जानना। अर द्वितीयादिसमयमे उपजे अनतानत जीवनिको अपनी स्थितिका क्षय होनै साथिही मरण जानना।

एक निगोदशरीरमे अननानत जीव समयसमयप्रति साथिही मरेहै साथिही उपजैहै। जितने असख्यात कोटाकोटिसागर प्रमाण निगोदशरीरकी उत्कृष्टस्थिति पूर्ण होय।

भावार्थ– निगोदजीवनिको आयु तो अतर्मुहूर्त्तकी है अर निगोदशरीरकी स्थिति असख्यातवर्षनिकी यातै शरीर तो वण्यारहै अर समयसमय अनतजीव उपजावो करे अर समानस्थितिवाले अनंत मरण कीया करे ऐसा जानना वहुरि एक इहा विशेष जानना। एक वादरनिगोदशरीरमे वा सूक्ष्मनिगोदशरीरमे अनतानत साधारणजीव केवल पर्याप्तही उपजै तथा एकशरीरमे केवल अपर्याप्त उपजै एकशरीरमे पर्याप्त अपर्याप्त दोऊ नही उपजै क्योकि तिनके समान कर्मका उदय है यातै।

अव वादरनिगोदजीवनिके शरीरनिकी सख्या कहे है। इस लोकमें असख्यात लोक-प्रमाण प्रतिष्ठितप्रत्येक जीनिवके शरीरनिके स्कध है। अर एकएक स्कधविषै असख्यात लोकप्रमाण अडर है। अर एकएक अडरविषै असख्यातलोकप्रमाण आवास है। एकएक आवासमें असख्यात लोकप्रमाण पुलवी हैं। एकएक पुलवीविषै असख्यात लोकप्रमाण वादरनिगोद जीवनिका शरीर है। एकएक शरीरविषै अतीतकालके सिद्धनितै अनतगुणा जीव है।

वहुरि साधारणके दोय भेद है। एक नित्यनिगोद एक चतुर्गतिनिगोद तहा जे अनता-नतजीव अनादि कालतै त्रसनिकी पर्याय नही पाई निगोदका भवकूही अनुभवै हैं ते नित्यनिगोद है। वहुरि चार गतिमे परिभ्रमण फेरि निगोदकूही प्राप्त होय ते अनित्यनिगोद है।

मनुष्यनिके शरीर ए समस्तही बादरनिगोदके शरीरनिकरि आश्रित है सहित हैं। अर सूक्ष्मनिगोद समस्त त्रैलोक्य है आधारकी अपेक्षा नही है।

वहुरि पृथ्वीकाय जलकाय अग्निकाय पवनकाय इनि च्यारनिका शरीर जघन्य उत्कृष्ट अवगहना घनागुलके असख्यातवैं भाग है। वहुरि पृथ्वीकायिकनिका शरीर मसूरके आकार है गोल है। अप्कायिकनिका जलकी बूदके आकार है। अग्निकायिक जीवनिका शरीर सूईनिका समूहसमान है तैसा उचा वहुमुख है। वातकायिकनिका शरीर ध्वजासमान आयत चतुरस्र है लब चोकोर है। इनका शरीरका आकार कह्या परन्तु अगुलके असख्यातवे भाग है तातै नेत्रनिके गोचर नहीं अर जो ए दीखैहै ते असख्यातशरीरनिका समूह है।

वहुरि वृक्षादिकवनस्पतिनका शरीर अर द्वीद्रियादिक त्रसनिके शरीरनिका आकार अनेकप्रकार है। अर अवगाहनाका प्रमाण घनागुलके असख्यातवे भाग तो जघन्य हैं। अर उत्कृष्ट वृक्षनिमे तो कमल हजार योजनतै अधिक उचा है। वेद्रियमे सख द्वादश योजन है। त्रीद्रियनिमे कानखिजूऱ्या तीन कोशका शरीर है। चोंद्रिनिमे भ्रमरका देह एक योजनप्रमाण है। पचेद्रियनिमे मत्स्यका शरीर हजारयोजनका है। अर मध्य अवगहनाके अनेक भेद है। ते ए उत्कृष्ट अवगाहनाके धारक एकेद्रियादिक जीव स्वय भूरमणद्वीप समुद्रम है। ऐसे कायप्ररूपणा अष्टमी सक्षेपकरि वर्णन करी।

अव नवमी योगप्ररूपणा कहेहै। अगोपाग नाम कर्म अर शरीर नाम कर्मका उदयकरिकै मन वचन काय पर्याप्तिरूप परिणमनमे प्राप्तभया जो ससारी जीव ताके लोकमात्र जोअपने समस्त देशनिमें प्राप्त जो पुद्गलस्कधनिके कर्मरूप परिणमनको कारणरूप जो शक्ति सो भावयोग है वहुरि भावयोगसहित आत्मप्रदेशनिमे किंचित चलनरूप सकप होना सो द्रव्ययोग है। जैसे अग्निके सयोगकरि लोहाके जलावनेकी दग्ध करनेकी शक्ति होयहै। तैसे अगोपाग नाम अर शरीर नाम कर्मका उदयकरि मनोवर्गणा वा भाषावर्गणारूप आए पुद्गलस्कधनिका तथा आहारवर्गणारूप आए नोकर्मपुद्लस्कधनिका सबधकरि जीवके प्रदेशनिके कर्मनोकर्म ग्रहण करनेका सामर्थ्य उपजै सो योग है।

अव योगका विशेषे कहेहै। सत्य असत्य उभय अनुभयरुप वस्तुविषै जाननेको मन वचनकी प्रवृत्ति होय सो सस्थादिक पदार्थका सबधतै सत्यमनोयोग उभयवचनयोग अनुभववचनयोग होयहै। सम्यग्यज्ञानका विषय जो पदार्थ सो सत्य है। ऐसे जलके ज्ञानका विपय जल है जाते स्नानपानरुप जलकी अर्थक्रिया ताका सद्भाव है। वहुरि मिथ्याज्ञानका विषय अर्थ सो असत्य हैं। जैसे जलज्ञानका विषय मरीचिकासमूहमे जलका जानना। जिसमे स्थानपानादिरूप जलकी अर्थक्रियाका अभाव है। वहुरि सत्य अर असत्य दोयप्रकारका ज्ञानका विषय जो अर्थ सो उभय है।

इहा उभयनाम सत्य असत्य दोऊनिका है। जैसे कमडलुमे जलका घटका ज्ञान होना। इहा कमडलुमे जलका धारणरूप अर्थक्रियाका सद्भाव है यातै सत्यताकी प्रतीति है। अर घटका नामादिककी प्रतीतिका अभाव है तातै कमडलुमे घटका जानना सो उभय है। वहुरि सत्य असत्य दोऊ अर्थ जाका विषय नही सो अनुभय है। जाकू सत्यहू नही कह्याजाय अर असत्यहू नही कह्याजाय सो अनुभय है। जैसे यह क्यौ प्रतिभासे जाननेमे आवेहै।

इहा ऐसे सामान्यकरिके प्रतिभासमे आया अर्थ सो अर्थक्रियाकरी विशेषनिर्णयका अभावतै सत्य ऐसे कह्या नही जाय अर सामान्यग्रहणमे आया तातै असत्यहू कह्या नही जाय, तातै सत्य असत्य दोऊरूपके अभावतै अन्यजातिका अनुभयका अर्थ जानना। सत्यपदार्थका सकल्प सो सत्यमनोयोग है। असत्यपदार्थका सकल्प सो असत्यमनोयोग है। सत्य असत्य दोऊरूप अर्थका सकल्प सो उभयमनोयोग है। अनुभयरूप मनका सकल्प जामे सत्य असत्य दोऊ नही सो अनुभयमनोयोग है।

ऐसेही वचनयोगहू च्यार प्रकार है। सत्यमनोयोगका अर सत्यवचनयोगका अर अनुभयमनोयोगका अनुभयवचनयोगका। इनि च्यार योगनिका मूलकरण पर्याप्तिनाम कर्मका उदय अर शरीर नाम कर्मका उदय है। अर असत्य मन वचनके योगनिका अर उभयमनवचनके योगनिका मूलकारण अवरणका तीव्र अनुभागका उदय है। कोऊ कहे जो दर्शनिचारित्रमोह कर्मका उदयकारण कैसे नही कह्या सो मोहकर्म कारण नही है। जातै असत्य उभयमनवचनयोग तो मिथ्यादृष्टीकीज्यो असयतसम्यग्दृष्टीके तथा देशसयमीकैहू होय है तातै असत्य अर उभयमनवचनयोगका कारण आवरणका तीव्र उदयही है।

अव सत्यवचनका भेद कहेहै। जनपदसत्य —१, समतसत्य —२, स्थापनासत्य —३, नामसत्य —४, रूपसत्य —५, प्रतीतिसत्य —६, व्यवहारसत्य —७, सभावनासत्य —८, भावसत्य —९, उपमासत्य —१०. ऐसे दशप्रकार सत्यका उदाहरण कहेहै। जनपद नाम देशका है। जिस जिस देशमे उपजे जे व्यवहारही जन तिनकै प्रसिद्ध जो वचन सो जनपदसत्य है। जैसे राध्या हुदा चावलनिकू महाराष्ट्रदेशविषै भातु कहेहै भेदु कहेहै। आध्रदेशमे वट कमु तथा कुड कहिएहै। कर्नाटकदेशमे कुलु कहिए द्राविडदेशमें चोरु, मालवदेशमे चोखा कहेहै। इत्यादिक देशसत्य कहिए है।

वहुरि सम्मति जो कल्पनाकरिके वहुतलोकनमे मान्य होय सो सम्मतसत्य है जैसे राजाकी पट्टराणीकू देवी कहिए तथा पट्टराणीविनाहू कोऊकू देवी कहे। वहुरि अन्यका अन्यमे स्थापन करना सो स्थापनसत्य है। जैसे काष्ठपाषाणादिककी मूर्तिकू जिनेद्र तथा इंद्र ऐसा स्थापन करना जो यह जिनेद्र है।

वहुरि गुणजात्यादिअपेक्षाविना व्यवहारका प्रवर्त्तनके अर्थि कोऊ मनुष्यका जिनदत्त देवदत्त इंद्र राजा ऐसा नाम कहना सो नामसत्य है। बहुरि जैसे कोऊ पुरुषकू स्वेत कहना जो केशादिक श्याम है ओष्ठ नखादिक रक्त होतैंकू प्रधानगुणकरि कहना सो रूपसत्य हैं।

वहुरि दीर्घकी अपेक्षा ह्रस्व कहना ह्रस्वकी अपेक्षा दीर्घ कहना सो प्रतीतिसत्य है। वहुरि नैगमनयकू प्रधानकरि जो वचन प्रवर्तै सो व्यवहारसत्य है। जैसे कोऊ जल भरैथा ईंधन ल्यावैथा ताकू कोऊ पूछा काहा करोहो तदि कहे भात राधूहू इहा भात तो पक्या तयार होयगा परतु प्रारभके सकल्पकूही भात कहना सो सब व्यवहारसत्य है।

वहुरि सभवका परिहारपूर्वक प्रवृत्या वचन सो सभावनासत्य है। जैसे इद्र है सो जबूद्विपकू पलट देनेकू समर्थ है। यद्यापि कोऊ जबूद्विपकू पलटानही अर पलटैगा नही तोहू इंद्रमे जबूद्वीप पलटनका सामर्थ्यका असभव नही हैं। यातै सभावनासत्य है। वहुरि अतीद्रिय अर्थविषै शास्त्रोक्तविधिनिषेधका सकल्परूप परिणाम सो भावसत्य है जैसे सूकगया तथा अग्नि-करि पकाया तथा चाकीमे सिला वटी लोडीतै पीस्या तथा जत्रमे पील्या तथा आमली लवणकरि मिल्या द्रव्य प्रासुक है। प्रासुक सेवनेमे पापपध नही है। ऐसे प्रासुकमे दृष्टीके अगोचर सूक्ष्म-प्राणका पतन होजाय तो कोन जाने परतु भावमे प्रासुक होगया सो याकू प्रासुक कहना सो भावसत्य है। वहुरि प्रसिद्ध अर्थके सदृश होना सो उपमासत्य है जैसे चद्रमुखी कन्या इत्यादिक जानना ऐसे सत्यके दश भेद कहे।

वहुरि अनुभयवचनके नव भेद कहेहै। आमत्रणी—१, आज्ञापिनी—२, याचिनी —३, आपृच्छिनी—४, प्रज्ञापनी—५, प्रत्याख्यानी—६, सशयवचनी—७, इच्छानुलोमवचनी —८, अनक्षरी—९, ऐसे नव प्रकार अनुभयवचन हैं। सो देवदत्त इत्यादि आमत्रणी अनुभय-भाषा है। इसमे सत्यहू नही असत्यहू नही वहुरि एक आज्ञा करूहू ऐसी आज्ञापिनी भाषा है। एक याचना करुंहू ऐसी याचिनी भाषा हैं। एक मे प्रश्न करुंहू सो आपृच्छिनी भाषा है। एक मे जणाऊहू सो प्रज्ञापनी भाषा है। एक त्याग करूहू सो प्रत्याख्यानी भाषा है। सशयरूप कहना सो सशयवचनी भाषा है। आपकी इच्छाके अनुकूल करूहू सो इच्छानुलोम भाषा है। द्वीद्रियादिक जीवनिकी अक्षरात्मक भाषा है सो अनक्षरी है। ए नवप्रकार अनुभय भाषा है। जातै इनमे श्रवणकरनेवालेनिके सामान्य अर्थ तो प्रगट हुवा तातै असत्य नही। अर विशेष अर्थ प्रगट नही भया जो कहा कहे है कहा आज्ञा करेगा कहा याचना करेगा कहा पृच्छा करेगा कहा जणावेगा कौन वस्तु है कहां इच्छा है अव कहा कहे है तातै सत्यहू नही क्योकि विशेष अर्थ प्रगट हुवाविना सत्यहू कह्या जाय नही अर सामान्य अर्थ प्रगट भयाही यातै असत्यहू नही कह्याजाय तातै अनुभय जानना। औरहू अनुभयभाषा इसहीमे गर्भित जाननी।

अव सप्तप्रकार काययोगकू कहे है। औदारिक—१, औदारिकमिश्र—२, वैक्रियिक

–३,वैक्रियिकमिश्र–४, आहारक–५, आरकमिश्र–६, कार्मण–७, उदार नाम स्थूलका है। यह शरीर वैक्रियकादिककी अपेक्षा स्थूल है यातै औदारिककाय कहिए है। औदारिक कायके अर्थि जो आत्माके प्रदेशनिके कर्म नोकर्मरूप पुद्गलनिके खेचनेकी ग्रहण करनेकी शक्ति सो औदारिककाययोग है। अथवा औदारिकवर्गणारूप पुद्गलस्कधनिकू औदारिककायरूप परिणमनको कारण जो आत्मप्रदेशनिके सकपपना सो औदारिककाययोग है। सो यो औदारिकशरीर एकेंद्रियादिक समस्त तिर्यचनिमे अर समस्त मनुष्यनिके होय है। यद्यपि केतेक एकेंद्रियनिके सूक्ष्मशरीरहू होय है तथापि वैक्रियिक आहारादिकनिकी अपेक्षा स्थूलही है। तातै उदारपुद्गलनितै उपजा सो औदारिकशरीर हैं।

अब औदारिकमिश्रकाययोगकू कहे है पूर्वे कह्या है लक्षण जाका ऐसा औदारिकशरीर जितने अतर्मुहूर्त्तपर्यत पूर्ण नही होई अपर्याप्त अवस्था रहे तितने काल औदारिकमिश्रशरीर कहिए हैं। यो आत्मा पूर्वपर्याय छाडि अन्यपर्यायकू जाय है तदि मार्गमे एक समय तथा दोय समय तथा तीन समय लगै तहा मार्गमे याके अष्टकर्ममय कार्मणशरीर है। फिर अन्यपर्यायमे गया तहा औदारिकादिशरीरके योग्य जे पुद्गलस्कधनिकूं ग्रहण करना सो आहार है। तहा अतर्मुहूर्त्तपर्यत पर्याप्त पूर्ण नही करे तितने काल औदारिक मिश्रशरीर कहिए हैं।

पर्याप्ति पूर्ण होजाय तदि औदारिकशरीर कहिए है। याकू मिश्रसज्ञा ऐसे जाननी जो विग्रहगतिके तीन समयमे कार्मणकाययोगकरि खेंचया कार्मणवर्गणा ताका सयोगकरि औदारिकमिश्र कह्या है। अथवा पर्याप्त अपर्याप्त दोऊ अवस्था मिलनेतै अथवा परमागमे ऐसी रूढी है तातै मिश्र कहिए है।

औदारिक मिश्रकायकरिके आत्माके कर्मनोकर्मके ग्रहण करनेकी शक्तिरूप प्रदेशनिक-सकपपना सो औदारिकमिश्रकाय योग है। सो अपर्याप्त अवस्थाहीमे होयहै।

अब वैक्रियिककाययोगकू कहे है। जे पुद्गलस्कध नानाप्रकार शुभअशुभ क्रिया करनेकू अणिमा महिमादिकशक्तिकू प्राप्त होने योग्य होय सो वैक्रियिकशरीर है। जो वैक्रियाके अर्थि तिस रूप परिणमनयोग्य शरीरवर्गणाके स्कधनिके खेंचनेकी शक्तिसहित आत्माका प्रदेशनिका कपायमान होना चलना सो वैक्रियककाययोग है। सो वैक्रियिककाययोग देवनिके अर नारकीनिके होय है।

बहुरि इतना विशेष जानना। जो बादरतेजस्कायिक बादरवायुकायिक तथा पचेंद्रिय पर्याप्त तिर्यचमनुनिके अपने अपने औदारिकशरीरही विक्रयाकू प्राप्त होय है। ते जीव अपृथग्विक्रिया करे है। अपना एकशरीरही विकाररूप छोटा वडा इत्यादिक होय है। भिन्न देह नही धार्म्मिकं है। अर देव तथा भोगभूमिमे उपजे तिनके तथा चक्रवर्तिके पृथग्विक्रयाहू होय है

अपना एकशरीरका अनेकरूपहू करे है। तिन वादरतेजस्कायिक अर वातकायिक समस्तजीव-निके विक्रिया नही है। अपनी सख्याके असख्यातवे भाग जीवनिकेही विक्रिया है।

अब वैक्रियिकमिश्रकाययोग ऐसा जानना। जो वैक्रियिकशरीर अतर्मुहूर्त्तमे जेतै पूर्ण नही होय तितने अपर्याप्त अवस्थामे वैक्रियिकमिश्रकाययोग है। औदारिकमिश्र जो अपर्याप्त-कालमे आत्मप्रदेशनिका सकप होना सो वैकियिकमिश्रकाययोग है। प्रमत्तसयतगुणस्थानधारीके आहारकशरीर नाम कर्मका उदयकरि आहारवर्गणारूप आए पुद्गलस्कधनिका आहारशरीररूप परिणमनकरि आहारकशरीर होय है।

सो याके होनेका प्रयोजन ऐसा। जो ढाईद्वीपमे वर्तते तीर्थयात्रादिकके अर्थि विहारमे असयमके दूरि करनेके अर्थि ऋद्धिसहितहू प्रमत्तसयमी मुनीके श्रुतज्ञानावरण वीर्यात-रायका क्षयोपशमकी मदता होतै जो धर्मध्यानका निरोध करनेवाला ऐसा श्रुतका अर्थमे सदेह उपजावे तो तिस सदेहका नाशके अर्थि आहारकशरीर प्रगट होय है सो शरीर रसादि सप्त-धातु रहित है। अर प्रशस्त है। अर सहनन जो हाडनका वधन ताकरि रहित है। शुभ समचतुरस्रसस्थान शुभ अगोपागसहित है। धवलवर्ण ऐसा मानू चद्रकातीकरि रच्या है। एक हस्तप्रमाण है। प्रशस्त आहारकशरीर आहार बधन सघात अगोपागसहित है। अपना शरीरकरि परका घात नही परकरि आपका घातरहित वज्रशिलादिकका भेदवामे समर्थ वज्रा-दिकमे प्रवेशकरनेकू समर्थ है।

जघन्य उत्कृष्ट अतर्मुहूर्त्तकालकी स्थितियुक्त है। तिस शरीरपर्याप्ति पूर्णहोतै सतै कदाचित् आहारक शरीरकी ऋद्धियुक्त प्रमत्तसयतके आहारकका काययोगका कालविषै अपना आयुकर्मका क्षयका वशकरि मरणहू होय है। आहारक ऋद्धियुक्त प्रमत्तसयमीमुनी प्रवचन-पदार्थमे सशय होतै सतै सशयके दूरी करनेके अर्थि श्रीकेवलीके चरणनिके निकट जाय सूक्ष्म अर्थनिकू आहरति कहिए ग्रहण करे है तातै याकू आहारक कहिए है। आहारकशरीर पर्याप्ति पूर्ण होतै आहारकवर्गणाकरि आहारकशरीरके योग्य पुद्गलस्कधनिके आकर्पणरूप शक्तिसहित आत्मप्रदेशनिका सकंप होना सो आहारककाययोग है।

वहुरि आहारकशरीर अतर्मुहूर्त्तपर्यत पूर्ण नही होय तितने आहारकमिश्रकाययोग है। पूर्वका औदारिकशरीर वर्गणाकरि मिल्याहै तातै मिश्र कहिए है।

अब कार्मणकाययोगकू कहे है। अप्टविधकर्मनिका स्कध सोही कार्मण है। कार्मणशरीर नाम कर्मका उदयकरि उपज्या सो कार्मण है। तिस कार्मणस्कधकरि सहित आत्माके कर्मग्रहणकरनेकी शक्तिसहित आत्माका प्रदेशनिका सकपपना सो कार्मणकाययोग है। जो विग्रहगतिकालविषै एकसमय दोयसमय वा तीनसमयमे है वा केवलीके समुद्घातसंबंधी प्रतरद्वय

लोकपूर्ण इन तीन समयमेही होय है। अन्यकालमें कार्मणकाययोग नही होय है। इन समस्त-योगनिका परके निरोधविना अतर्मुहूर्त्तकाल हैं। अर निरोध होय तो एकसमयकू आदि लेय यथासंभव अंतर्मूहुर्त्तपर्यंत जानना।

वहुरि आहारकऋद्धि अर वैक्रियकऋद्धि युगपत् नही होय है। वहुरि औदारिक वैक्रियिक आहारक तैजस शरीर नाम कर्मका उदयकरि यथासख्य औदारिक वैक्रियिक आहरक तैजस नाम च्यार शरीर होय ते ए नोकर्मशरीर होय है।

इहां नो शब्द किंचित् वा तुच्छ अर्थमे प्रवर्तै है। इनि नोकर्मशरीरनिके कर्म जो आत्माका गुणका घातकपणा तथा गत्यादिकनिमे आत्माकू पराधीन करनेकी सामर्थ्यका अभाव है। अर कर्मका सहकारीपणाकरी ईषत्कर्मकू नोकर्म कहिए है। ज्ञानावरणादि अष्टविधकर्म-स्कधका समूह सो कर्मणशरीर है। सिद्धराशिके अनतवै भाग अर अभव्यराशितै अनतगुणा ऐसा जो मध्यम अनतानपरिमाण पुद्गलपरमाणुनिका स्कंध ताकूं वर्गणा कहिए है।

वहुरि अनंतानतवर्गणानिका समूह सो समयप्रवद्ध है। एकसमयमे जीवके कर्म अर नोकर्मका समयप्रवद्ध ग्रहणमे प्राप्तहोय बधे है। इतना विशेष है। इन पचशरीरके योग्य नोकर्मका समयप्रवद्धका प्रमाण समान नही है। औदारिकका समयप्रवद्धमे परमाणूनिका प्रमाण सर्वतै अल्प है यातै असंख्यातगुणा वैक्रियिकशरीरका समयप्रवद्ध है। तातै असख्यातगुणा आहारकका समयप्रवध्द है। यातै अनतगुणा तैजसका समयप्रवध्द है यातै अनतगुणा पर-माणु प्रमाण कार्मणका समयप्रवध्द हैं।

वहुरि औदारिकका समयप्रवध्दकी अवगहनाक्षेत्र घनांगुलके असख्यातवे भाग है। तथापि उत्तरउत्तर शरीरनिका समयप्रवध्दके अवगाहनाका क्षेत्र असख्यातगुणा क्रमतै घाटि जानना इनिमे परमाणु तो अधिकाधिक है। अवगाहना सूक्ष्म परिणमनतै घाटिघाटि है। ऐसे योगप्ररूपणा संक्षेपकरि कही। याका विशेष अर कर्मनिका सत्तामे रहना सो अर सम-यप्रवद्धनिका वटवारा सो समस्त कथन गोमटसारतै जानना।

अव दशमी वेदप्ररूपणाका वर्णन करे है। चारित्रमोहका भेद जो पुरुषवेद स्त्रीवेद नपुंसकवेद नाम कर्मका उदयकरि चैतन्यपरिणामविषै पुरुष स्त्री नपुंसक रूप जीव होय है। अर निर्माण नाम कर्मका उदयकरि पुद्गलका पर्यायविशेषविषै पुरुष स्त्री नपुंसक होय है। सोही दिखावेहै।

पुरुषवेदका उदयकरि स्त्रीमे अभिलाषारूप मैथुनसज्ञाकरि व्याप्त जीव भावपुरुष होय है। स्त्रीवेदका उदयकरि पुरुषमे रमनेकी इच्छारूप मैथुनसंज्ञाकरि व्याप्त जीव भावस्त्री

होय है। नपुसकवेदका उदयकरि दोऊनिकी अभिलाषरूप मैथुनसज्ञाकरि व्याप्त जीव नपुसक होय है।

वहुरि पुरुषवेदका उदयकरि निर्माण नाम कर्मका उदयकरि युक्त अगोपाग नाम कर्मका उदयके वशकरि डाढी मूछ शिश्नादिलिगकरि चिन्हितशरीरसहित जीव भवका प्रथम-समयकू आदिकरि तिस भवका अतसमयपर्यंत द्रव्यपुरुष होय है।

वहुरि स्त्रीवेदका उदयकरि निर्माण नाम कर्मका उदययुक्त अगोपाग नाम कर्मका उदयकरि रोमरहित मुख अर कुचयोन्यादि लिंगकरि चिन्हित शरीरयुक्त जीव भवका प्रथम-समयकू आदि लेय तिस भवका अतसमयपर्यंत द्रव्यस्त्री होय है।

वहुरि नपुसकवेदका उदयकरि युक्त अगोपाग नाम कर्मका उदयकरि स्त्रीपुरुष दोऊनिका चिन्हिते रहित देहसहित भवका प्रथमसमयकू आदि लेय तिस भवका अतसमयपर्यंत द्रव्यनपुसकजीव होय है।

ये द्रव्यभावके भेद वाहुल्लतयाकरि देवनारकीनिमे भोगभूमिके तिर्यच मनुष्यनिमे समान होयहै। जैसा भाववेदतै साही द्रव्यवेद होयहै। अर कर्मभूमिके मनुष्य तिर्यंचनिमे विषमभी होयहै। द्रव्यपुरूष होय अर भावपुरूष तथा स्त्री तथा नपुसकहू होयहै। अर द्रव्यस्त्री अर भावपुरूष तथा स्त्री तथा नपुसकहू होयहै। अर द्रव्यतै नपुसक होय। अर भावतै पुरूष तथा स्त्रीहू होयहै।

चारित्रमोहका भेद जो वेद ताकी उदीरणाकरिकै वा तीव्र उदयकरिकै परिणामविषै समोह जो विक्षेप सो उपजै है। तिस समोहकरिकै यो जीव गुणकू अर दोषकू नाही जानेहै योही वडो अनर्थ है। तातै परमागमकी भावनीका वलकरिकै ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहणकरवेयोग्य है।

अव पुरूपका लक्षण कहेहै।

उक्तच गाथासूत्र — पुरूगुणभोगे सेदे। करदे लोयम्मि पुरुगुण कम्मं।
पुरुउत्तमहि जम्हा। तह्मा सो वण्णिओ पुरिसो ॥१॥

अर्थ— लोककैविषै जो जीव पुरूषगुण जो सम्यग्ज्ञानादिक अधिकगुणनिके समूहविषै शेते कहिए स्वामीपणाकरि प्रवर्त्तै अर पुरुषभाग कहिए नरेद्रनागेद्र देवेद्रादिक अधिक भोगनके समूहविषै भोक्तापणाकरिकै प्रवर्त्तै तथा पुरूगुणकर्म कहिए धर्म अर्थ काम मोक्ष लक्षण जे पुरुषार्थका धारणरूप दिव्य आचरण करै तथा पुरुत्तमे कहिए परमेष्ठीपदाविषै शेते कहिए तिष्ठै तिस कारणतै द्रव्यभावसयुक्त जीव सो पुरुष वर्णन करिए है।

स्त्री शद्वका अर्थ कहेहैं ।

उक्तच गाथासूत्र– छादयदि सय दोसे । णयदो छादेदि परपि दोसेण ।
छादणसीला जह्मा । तह्मा सा वणिया इत्थी ॥२॥

अर्थ– जातै स्वय अपने आत्मकू दोष जो मिथ्यादर्शन अज्ञान असंयम क्रोध मान माया लोभकरिकै आच्छादन करै । अर युक्तितै कोमलवचन स्नेहसहित अवलोकन अनुकूलप्रवर्तनादिक अर कुशलव्यापारकरिकै पर जो आपतै अन्य पुरुष ताहिकू अपने वशकरिकै दोप जे हिंसा अनृत चौर्य अब्रह्म परिग्रहादिक पापकरिकै आच्छादन करै ताकारणतै आच्छादनस्वभावरुप द्रव्यभावकरिकै स्त्री या नामकरि वर्णनकरि परमागमविपै कही ।

यद्यपि तीर्थंकरनिकी माता वा अन्य सम्यग्दर्शनकी धारक स्त्रीनिकै ये कहे दोष नहीहै तोहू ते स्त्री अतिविरली है । सर्वकठोर आधिक्यताका व्यवहारकरि स्त्रीका लक्षण कह्या है ।

वहुरि जे जीव पूर्वै कहे गुण तिनकरि सहित पुरुष नही अर स्त्रीहू नही दोऊनिके डाढी मूछि तथा कुचादि चिन्हरहित ईट पकावनेकी अग्निसमान तीव्र कामाग्निकर सहित होय तथा कलुषितचित्त होय सर्वकाल कामवेदनाकरि कलकित जाका हृदय होय सो जीव नपुसक परमागममे कह्याहै ।

एकेद्रियादिक चोइद्रियपर्यंत अर समस्त सन्मूर्छन अर नरकके नारकी ए तो नियमतै नपुंसकही होयहै । च्यारप्रकारके देवनिमै स्त्री अर पुरुष दोयही वेद है । अर गर्भज तिर्यकू मनुष्यनिमे तीनो वेद है । ऐसे वेदप्ररूपणाका सक्षेप कह्या ।

अव ग्यारमी कषायप्ररूपणा वर्णन करेहै । अव कषायशद्वकी निरुक्ति जो है ताका अर्थ कहिएहै । ससारी जीवके शुभ अशुभ ज्ञानावरणादि मूल उत्तर प्रकृतिरूप क्षेत्र ताहि कृपति कहिए हलादिकतै खेतज्यो सवारै फलनिपजावनेयोग्य करे तिस कारणकरि क्रोधादिक जीवके परिणाम कपाय है । ऐसे भगवान् जिनेद्र कह्या है ।

कर्मरूप क्षेत्र कैसा कहे इद्रियनिका विषयसंबंधतै उत्पन्नभया हर्ष अर शारीर मानसिकदुःख सोही धान्य सो जहा उपजै हैं वहुरि कर्मरूप क्षेत्र कैसा कहै अनादिके पचपरावर्त्तन जाकी सिंव है मर्यादा है । मिथ्यादर्शनादि जीवका संक्लेशपरिणामरूप याका जीव है अर क्रोधादिकपाय नाम भृत्य है । सो प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेश भेदरूप कर्मबंधलक्षण क्षेत्रमे वोयाहुवा कालादि सामग्री पाय सुखदुःखलक्षण वहुतप्रकारके धान्यरूप फल अनाद्यनतसमारमीममै प्रगट करेहै ।

अथवा सम्यक्त्वकू देशचारित्रकू तथा सकलसयमकू यथाख्यातचारित्रकू इस प्रकार-करि विशुद्धपरिणामनिकू 'कषन्ति' कहिए हिंसा करे घातै इनिकू कषाय कहिएहै। अनतानुबधी क्रोध मान माया लोभ आत्माका सम्यक्त्वपरिणामकू 'कषन्ति' कहिए घात करेहै। अनतससारका कारणपणातै मिथ्यात्वकू अनत कहिएहै। अनत जो मिथ्यात्वकू 'अनुवध्नन्ति' कहिए वांधै यातै अनतानुवधी कहिएहै। अप्रत्याख्यानावरणकषाय है सो अणुव्रतपरिणामकू घातै है। अप्रत्याख्यान नाम ईषत् त्यागका है। सो किंचित् अणुव्रतमात्रकूहू 'आवृण्वन्ति' कहिए घातै सो अप्रत्याख्यानावरणकषाय है।

वहुरि जो प्रत्याख्यान जो सकलसयम ताकू 'आवृण्वन्ति' कहिए घातै सो प्रत्याख्यानावरण है। वहुरि 'स' कहिए सयम जो यथाख्यातचारित्र ताहि ज्वलन्ति कहिए दग्धकरै सो सज्वलनकषाय है।

ऐसे निरुक्तिका वलकरि कषायनिका अर्थ जानना। अनतानुबधी तो तत्वार्थश्रद्धान तो नही होनेदेहैं। अर अप्रत्याख्यानावरण अणुमात्रव्रतकाहू घात करेहै तातै देशसयमकूहू घातेहै अर प्रत्याख्यानावरण सकलसयमकू नही होनेदेहै। सज्वलनकषाय यथाख्यात सयमकू घातेहै नही होनेदेहै।

इनके क्रोध मान माया लोभकरि च्यारच्यार भेद है। ऐसे सोलह कषाय कहे। ये कषाय उदयका स्थानका विशेषकरि असख्यातलोकप्रमाण है। पाषाणकी लीखसमान उत्कृष्टशक्तियुक्त क्रोध जीवनै नरकगतिमे उत्पन्न करेहै। पृथ्वीका भेदसमान अनुत्कृष्टशक्तियुक्त क्रोध जीवकू तिर्यचगतिविषै उपजावेहै। धूलीमे लीखसमान अजघन्यशक्तियुक्त क्रोध जीवकू मनुष्यगतिविषै उपजावेहै। जलमे लीखसमान जघन्यशक्तियुक्त क्रोध जीवकू देवगतिविषै उपजावेहै।

वहुरि शिलास्तभसमान उत्कृष्टशक्तियुक्त मान जीवकू नरकगतिविषै उपजावेहै। हाडसमान अनुत्कृष्टशक्तियुक्त मान जीवकू तिर्यंचगतिविषै उपजावेहै। वहुरि काष्ठसमान अजघन्यशक्तियुक्त मान जीवकू मनुष्यगतिविषै उपजावेहै।

वहुरि वेत्रसमान अजघन्यशक्तियुक्त मान जीवनकू देवगतिविषै उपजावे है। जैसे पाषाण हाड काष्ठ वेत्र है ते चिरतरादि कालविना नमावनेकू समर्थ नही होय है। तैसे उत्कृष्टादिशक्तियुक्त मानकषाययुक्त जीवहू चिरतरादि वहुतकालविना नमनकीया नही जाय है।

वहुरि बांसकी जडसमान उत्कृष्टशक्तियुक्त मायाकषाय जीवकू नरकगतिमे उपजावेहै। मींढाका सींगसमान अनुत्कृष्टशक्तियुक्त माया जीवकू तिर्यंचगतिविषै उपजावे है। गोमूत्रसमान

अजघन्यशक्तियुक्त माया जीवकू मनुष्यगतिविषै उपजावेहै। खुरपासमान जघन्यशक्तियुक्त माया जीवकू देवगतिविषै उपजावेहै। जैसे वासकी जडादिक वहुतकालविना अपनी अपनी वक्रताकू छाडि सरळपणाकू नही प्राप्त होय है। तैसे जीवहू उत्कृष्टादिशक्तियुक्त मायाकषायरूप परणया वहुतकालविना सरल नही होय है।

वहुरि कृमिराग अर रथके पहेवा गाववाका मल अर शरीरका मल अर हलदका रंगसमान उत्कृष्टादिशक्तियुक्त लोभकषाय विषयाभिलाषरूप अनुक्रमतै नरक तिर्यच मनुष्य देवगतिमे जीवकू उपजावेहै।

भावार्थ– नारकादिभवमे उत्पत्तिका कारण सोसो आयुगति आनुपूर्व्यादिक कर्मका वध करे है। ऐसे कषायप्ररूपणा सक्षेपकरि वर्णन करी।

अव ज्ञानमार्गणा नाम वारमी प्ररूपणा वर्णन करे है। ज्ञानके पांच भेद है। मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन पर्ययज्ञान केवलज्ञान, ए सम्यग्ज्ञान है। जैसा पदार्थका स्वरूप होय तातै न्यून नही जाने अर अधिक नही जाने जैसा है तैसा जाने सामान्यसग्रहरूप द्रव्यार्थिकनयकरि ज्ञान एकरूपही है। तोहू विशेष अपेक्षाकरि ज्ञानके पाच भेद हैं। तिनमे मति श्रुत अवधि मन पर्यय ए च्यार ज्ञान तो क्षायोपशमिक है। जातै मतिज्ञानावरणादि तथा वीर्यान्तरायका क्षयोपशमतै उपजेहै। इहा क्षयोपशमका अर्थ ऐसा जानना।

जो घातिकर्मकी प्रकृतिनिका स्पर्द्धक दोय प्रकार है। एक सर्वघातिरूप एक देशघातिरूप है। तहा जो मतिज्ञानावरण अर वीर्यातराय कर्मका सर्वघातिस्पर्द्धकनिका तो उदयाभाव क्षय होय उदय जो रस नही देना सोही क्षय है अर जो उदयावलीमे नही आए ऐसे उपरितन जे सर्वघातिस्पर्द्धक तिनका सत्तामे अवस्थितिरूप रहना सोही उपशम ऐसे सर्वघातिस्पर्द्धकनिका तो क्षय अर उपशम अर देशघातिस्पर्धकनिका उदय होय तव मतिज्ञान होय है। जातै देशघातिस्पर्द्धकनिमे अपने प्रतिपक्षीगुणका घातनेका सामर्थ्य नही होयहै। तैसेही श्रुतज्ञानावरण वीर्यातरायका क्षयोपशमतै श्रतज्ञान होयहै। ऐसेही अवधि मन.पर्ययज्ञान अपने आवरण अर वीर्यातरायके क्षयोपशमतै होई तातै च्यार ज्ञान क्षायोपशमिक है। अर केवलज्ञानावरणका अर अतराय कर्मका अत्यत क्षयतै उपज्या केवलज्ञान क्षायिक है।

अव मिथ्याज्ञानकी उत्पत्ति तथा कारण स्वरूप अर स्वामी अर भेदकू कहेहै। [illegible] उदय तथा अनतानुवधी च्याय कषायमे कोऊ एकका उदय होतै जीवकै [illegible] कुश्रुतज्ञान विभगज्ञान ए विपरीतज्ञान होय है। जैसे दुग्ध मिष्ट है तोहू कडवी [illegible] होय परिणमेहै। तैसे मिथ्यादृष्टिजीवके मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञानकू

कुमति कुश्रुत कुअवधि रूप परिणमननै प्राप्त होयहै। इन तीन कुज्ञानका विशेपरूप ऐसा जानना।

जो परका उपदेशविनाही अनेकवस्तु मिलाय जीवनिके मारनेकू विष उपजाय लेनेकी जाकै बुद्धि उपजै तथा सिह व्याघ्रादिककू पकडनेके मारनेके काष्ठमय जत्र वणावनेकी बुद्धि उपजै तथा जलके जीव पकडनेकी तथा तीतर सूवा इत्यादिक पक्षीनिके पकडनेका जाल पीजरा वनावनेकी तथा वनका मृग पकडने मारनेकी जो विनाशिखाये बुद्धि उपजै सो सव कुमतिज्ञान है।

औरहू जो परजीवनिका धन ठिगनेकू तथा परधन सोप्याहुवा राखनेकू तथा परकी स्त्रीके हरनेकू तथा परके मारनेकू धनके चोरनेकू तथा निर्बलजीवनिकी आजीविका जमी जायगा स्त्री धन खोसि लेनेमै तथा अन्यका अपमान करादेनेमे तथा न्यायमे साचा होय ताकू झूठा करदेनेमे तथा झूठाकू साचा करनेमे तथा परकै दूषण लगावनेमे तथा धर्मात्मापुरूपनिकै चोरीका कुशीलका दोष लगावनेमे परका अपवाद निदा करानेमे जाकै प्रवलबुद्धि होइ तथा कुदेवनिनिमे जीवाकै देवत्वबुद्धि करादेनेमे तथा पाखडी कुलिगनिमे गुरूपणाकी बुद्धि कराय पूजा देनेमे तथा आप व्यसनी पापी होय आपकी प्रशसा कराय देनेमे तथा अधर्मकू धर्मकू धर्म जणाय देनेमे इत्यादि हिसा झूठ कुशील परधनहरण परिग्रहवधावन रूप महापापनिमे जाकै प्रवीणता होय।

तथा पृथ्वी जल अग्नि पवन वनस्पति त्रस इनि छकायके जीवनिका घातकरि ससारीक अनेक यत्र अनेक क्रिया अनेक जगतकै राग उपजावनेवाली रागकारी वस्तु उपजावनेमे जाकै प्रवलबुद्धि उपदेशविना शास्त्रविना जाकै उपजै सो समस्त कुमतिज्ञान है।

तथा ग्राम नगारादिककू दग्ध करनेका तथा समस्त देश ग्रामनिवासी जीवनिका तथा परकी सेनाके विध्वस करनेका उपायभूत शास्त्र विप अग्नि उपजाय देनेकी बुद्धिविना शिखाया उपजै सो समस्त कुमतिज्ञान है।

वहुरि चोरनिके शास्त्र तथा कोटपालपणाका शास्त्र तथा जिनमे हिंसाकी प्रधानता जिनमे उत्तमपुरूषनिके व्यभिचार वतावना उत्तमपुरूपनिके माता अन्य, पिता अन्यतै उपज्या कहना तथा शिकार करना मासभक्षण करना राजानिका मनालनमार्ग वतावना शिकारमे धर्म वतावना देवीनिके वकरा भैसा मारी चढावनेका महाफल कहना देवतानिकू मासभक्षी कहना पितृ ईश्वरनिकू मासपिड देना सनातनसू क्षत्रीकुलकू मासभक्षी कहना [illegible] उपदेश देना व्यभिच्चारकू पुष्ट करना देवनिके मनुष्यिणीसू नगम कहना कामी क्रोधी नन्नचारीनिकू परमेश्वर कहना तथा कामशास्त्र युद्धशास्त्र मायाचार प्रधानशास्त्र रचना नाना [illegible] वनावना स्त्रीपुरूपनिके कामादिक चरित्र कहना परजीवनिका अपवाद रचना ते कुश्रुत है।

तथा जिनमे एकातरूप पदार्थका स्वरूप कहना । तथा देवताके अर्थि हिंसा करनेमे धर्म कहना महा आरभ हिंसाकू धर्म कहना पचभर्त्तारीकू सती कहना हनुमानादिकनिकू वानर रावणकू राक्षस तथा देवतानिका तिर्यचरूपादिक जामै वर्णन कीया ते समस्त कुश्रुत हैं । इनके पठन श्रवणका ज्ञान सो कुश्रतज्ञान है ।

वहुरि मिथ्यादर्शनकरि कलकित जीवके अवधिज्ञानावरण अर वीर्यातरायका क्षयोपशमतै जो अवधिज्ञान उपजे सो कुअवधि है । वा याहीकू विभगज्ञान कहिएहै जो यो द्रव्य क्षेत्र काल भावकी मर्यादतै रूपीद्रव्यकू प्रत्यक्ष जाने है । सो यो विभग ज्ञान मनुष्यपर्यायतै तथा तिर्यंचमे तो तीव्र कायक्लेश तप अर द्रव्यसयमकरिके उपजेहै तातै गुणप्रत्यय है ।

अर देवनारकीनिके तप व्रत सयम नही तातै उनका भावही कारण है । जो देवका भव तथा नारकीका भव पावैगा ताके नियमतै अवधिज्ञान होयगा । तातै देवनारकीनिके भवही प्रत्यय कहिए कारण हैं । तातै देव नारकीनिके भवप्रत्यय अवधि आगममे कहीहै

सो मिथ्यादृष्टि देव नारकीनिके विभंग अवधि कहावे । वा कुअवधि कहावे । सो यो विभगज्ञान मिथ्यात्वादिक कर्मबधका बीज है कारण है तथा कोऊके नरकादिकगतिमे पूर्व जन्मका उपजाया पापकर्म ताका फल तीव्रदुःख वेदना ताकरिके ऐसा चितवनहू होय हैं । जो मै पूर्वजन्ममे हिसादिक पचपाप कीये सप्तव्यसन सेये अभक्ष्यभक्षण निर्माल्यग्रहण अन्यायप्रवृत्ति वहुत आरभ वहुत परिग्रह ग्रहण कीया ताका फल नरकमे प्रत्यक्ष पाया ऐसा आत्मनिंदा करता पापतै विमुख होय ताके सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञानकूहू उपजावेहै । ऐसे कुमति कुश्रुत कुअवधि ये तीन ज्ञान तिनका स्वरूप सक्षेपकरि कह्या ।

अव मतिज्ञानका स्वरूप अर भेद कहेहै । यो मतिज्ञान है सो इद्रियद्वारे जानेहै । इद्रियनिविना स्वय जाननेकू समर्थ नही । अर इद्रिय है ते स्थूलपदार्थकू जाने सूक्ष्मकू नहीं जाने अर वर्तमानकालवर्त्तीकू जाने । वर्तमान नही ताकू नही जाने । अर अपने योग्य क्षेत्रमे तिष्टताकू जाने । दूर क्षेत्रमे तिष्टताकू नही जाने । अन्य इद्रियनिके विषयकू अन्य इद्रिय नहीं जाने । जैसे शब्दकू नेत्रेंद्रिय नहीजाने । इन इद्रियनिके स्पर्शादिक स्थूलविषयनिके जाननेकाही सामर्थ्य है । सूक्ष्म जे परमाणु इत्यादिक अर अतरित जे पूर्वे भए रामरावणादिक अर दूरवर्ती जो स्वर्ग नरक मेरु इत्यादिकके जाननेकू असमर्थ है । यो मतिज्ञान जो है सो पाच इद्रिय छठा मन इनहीतै उपजेहै ।

याका विशेष ऐसा । जो इद्रिय अर इद्रियके ग्रहणयोग्यविषयनिके सयोग होतैही

जो वस्तुका सत्तामात्र ग्रहण होय सो दर्शन है । जैसे दृष्टी पडताही वस्तुका प्रकाश होनेमात्र निर्विकल्पग्रहणमे आया सो चक्षुदर्शन है । ऐसेही कर्णादिक च्यार इंद्रियद्वारे सामान्य विकल्परहित ग्रहण होय सो अचक्षुर्दर्शन है । अर ताके लगताही जो देख्याहुवा पदार्थका वर्ण संस्थानादिक विशेष ग्रहणमे आवे सो आवग्रह नामा मतिज्ञान है ।

भावार्थ— इंद्रिय अर पदार्थ इनका संबंध होताही जो सामान्यग्रहण होइ जो कुछ देखनेमे आया तथा कुछ श्रवणमे आया तथा स्पर्शनमे आया परंतु कुछ विशेष जाननेमे नही आया जो कौनका रूप है वा कहा शब्द है कैसा स्पर्श गंधादिक है ऐसे विशेष जाननेमे नही आवे अर सामान्य सत्तामात्रका ग्रहण होय सो दर्शन है । अर पछें लगताही पदार्थका रंग आकारादिकका ग्रहण होइ सो अवग्रह नामा मतिज्ञान है । जैसे प्रथमही ग्रहणमे आया जो यो श्वेत है । ऐसे श्वेतरूप जाण्या पदार्थमे विशेष जाननेकी इच्छा जो ये श्वेत है सो बुगलाकी पंक्ति जाननेकी इच्छा अथवा ध्वजा देखीथी तिसमे ध्वजा जाननेकी इच्छा सो ईहा नामा मतिज्ञानका दुसरा भेद है ।

अथवा जो यो श्वेत दीखे है सो ध्वजानिकी पंक्ति होसी ऐसे जो वस्तु होय तामें ताहीका ज्ञान होना सो ईहा नाम मतिज्ञान है । ऐसेही शब्दादिकमैंहू अन्य इंद्रियद्वारेहू ईहा होय है । सो यो ईहाजान तो प्रमाणरूप है परंतु ढीला ज्ञान है ।

बहुरि जामे ईहा उपजीथी ताहीका निर्णय होय दृढ होना याका नाम अवाय है । जैसे बुगलाकी पंक्तिमे ईहा नामा ज्ञान हुवोछो और बहुरि पाखनिका उंचा नीचा हलावनेकरि निश्चय भया जो या बुगलाकी पंक्तिही है । ऐसे निर्णयरूप अवाय नामा तीसरा मतिज्ञानका भेद है ।

बहुरि जाका निर्णय होगया तामै वारवार प्रवृत्ति करिके ऐसा निर्णय हुवा जो कालांतरमे विस्मरण नही होय । सो धारणा नामा मतिज्ञानका चौथा भेद है ।

सो ये अवग्रहादिक वारह प्रकार होय है । जहा वहोतका अवग्रह होय । जैसे वहुत गायनिमे कोऊ धोली कोऊ काली कोऊ कावरी कोऊ खाडी कोऊ मुडी ऐसे वहुत गायनिका ग्रहण सो वहुअवग्रह है । अर सेनाकू देख्या जाय तहा वहुत जातिका हस्ती घोडा ऊंट वलध मनुष्य इत्यादि अनेक जातिका अवग्रहादिक होय सो वहुविधका है । शीघ्रतातैं पडता जो जलका प्रवाहादिक ताका ग्रहण सो क्षिप्रग्रहण है ।

बहुरि जलमे मग्न जो हस्ती इत्यादिकका ग्रहण सो अनि सृतग्रहण है । वहुरि वचनतैं कह्याविना अभिप्रायतैं जानि लेना सो अनुक्तग्रहण है । वहुरि वहुतकालमे जैसाका तैसा निश्चल-ग्रहण करना सो ध्रुवग्रहण है । वहुरि अल्पका तथा एकका ग्रहण सो अल्पग्रहण है । वहुरि

घोडा हस्ती ऊट वलध मनुष्यादिकनिमे एकजातिहीका ग्रहण सो एकविधग्रहण है। वहुरि मदगमन करता अश्वादिकनिका ग्रहण सो अक्षिप्रग्रहण है।

वहुरि प्रगट वाह्य नीकल्या वा प्रगट हुवा ताका ग्रहण सो नि सृतग्रहण है। वहुरि यो घट है ऐसे कह्या हुवाका ग्रहण सो उक्तग्रहण है। वहुरि क्षणमात्रस्थिति रहता जो वीजली इत्यादिकका ग्रहण सो अध्रुवग्रहण है। ऐसे अवग्रह वार प्रकार कह्या। तैसेही वारह वारह प्रकार ईहा अवाय धारणा होयहैं। ते सब मिली एकइद्रियद्वारे अडतालीस भेद भए। तव पाचू इद्रिय छठा मन इन छहुनिसू गुणे ॥ २८८ ॥ भेद अर्थावग्रहके जानने। जातै नेत्रादिक इद्रियनिका विपय है सो तो अर्थ है। ताके वहु अदिक विशेषण है। इन वहु इत्यादिक विशेषणकरि सहित सो अर्थ कहिए वस्तू ताके अवग्रह ईहा अवाय धारणा ऐसा सबध जोडि दोयसै अठचासी भेद जानिए।

वहुरि व्यजन कहिए अव्यक्त जो शद्वादिक ताका अवग्रहही होयहै। ईहादिक नही होयहै। ऐसा नियम है। जैसा नवा माटीका सरावाविषै जलका कणा क्षेपिए तहा दोय तीन आदिकणाकरि सीच्या जेतै आला नही तेतै तो अव्यक्त है सो व्यजन है। वहुरि सोही सरावा फेरि सीच्याहुवा मदमद आला होय तव व्यक्त है। तैसेही श्रोत्रादिक इद्रियनिका अवग्रहविषै ग्रहणयोग्य जे शद्वादि स्वरूप परणया पुद्गलस्कध ते दोय तीन आदिसमयमे ग्रह्याहुवा जेतै व्यक्त ग्रहण नही होय तेतै तो व्यजनावग्रह है।

वहुरि फेरफेर तिनका ग्रहण होय तव व्यक्त होय तव अर्थावग्रह होय है। ऐसे व्यक्तग्रहणतै पहलै तो व्यजनावग्रह कहिए। वहुरि व्यक्तग्रहणकू अर्थावग्रह कहिए। यातै अव्यक्तग्रहणरूप जो व्यजनावग्रह तातै ईहादिक नही होयहै। ऐसे जानना।

वहुरि जलके वारै हस्तीकी सूडीकू देखी करि जलमे मग्न जो हस्ती ताका जानना सो अनिःसृत नामा मतिज्ञान है अथवा साध्यतै अविनाभावका नियमका निश्चयरुप जो साधन तातै साध्यका विज्ञान होना सो अनुमान है। अनुमानहू अनिःसृत नामा मतिज्ञानहीमे गर्भित हैं जातै साध्य जो हस्ती ताविना सूडि नही होनेका नियमरुप है निश्चय जाका ऐसो साधन जो सूडि तातै साध्य जो हस्ती ताका जानना सो अनुमानप्रमाण मतिज्ञानही है।

वहुरि कोऊकै स्त्रीका मुखका ग्रहणके कालहीमें अन्य वस्तुरूप जो चद्रमा ताका ग्रहण होना जातै मुखका सदृशपणातै चद्रमाका स्मरण होना जो चद्रमासमान मुख है ऐसा प्रत्यभिज्ञान होय है। अथवा वनमे गोसदृश गवयकू ग्रहणकरि गौका स्मरण होना जो गोसदृश गवय है ऐसा प्रत्यभिज्ञान होय है। तथा जैसे रसोईमे अग्निहोतेही धूम उपज्या देख्या अर जलका न्हृदमे अग्निको अभाव है तातै धूमभी नही देख्या तैसे सर्वदेश सर्वकाल सबधपणाकरि अग्निके अर धूमके अन्यथा अनुपपत्ति कहिए अग्नि विना धूमनही ही होय ऐसा अविनाभावसबधका ज्ञान सो तर्क नाम मतिज्ञान हैं ऐसे अनुमान स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क ये चार मतिज्ञानका भेद जो अनिसृत ताके विषय हैं। केवलपरोक्ष है।

जातै अनिसृतमतिज्ञानके भेद जे अनुमान स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क ए च्यार एकदेशहू विशदता जो निर्मलताके अभावतै परोक्षही है। वहुरि शेष जे स्पर्शनादि इद्रिय अर मन इनका व्यापारतै उपजे जे वहु इत्यादिक है विषय जिनका ऐसे मतिज्ञान ते एकदेश निर्मलतातै सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष कहिएहैं। ते सर्व मतिज्ञान सम्यक् है। अर प्रमाण हैं।

अव श्रुतज्ञानका स्वरूप कहेहैं। प्रथम तो मतिज्ञानावरणकर्मके क्षयोपशमतै मतिज्ञान उपजेहै पछै मतिज्ञानकरि ग्रहणकिया पदार्थका अवलवनकरिकें अर वामे श्रुतज्ञानावरणके क्षयोपशमतै अधिक अन्य अर्थ जानना सो श्रुतज्ञान है। जहा मतिज्ञानकी प्रवृत्तिको अभाव है तहा श्रुतज्ञानकी प्रवृत्तिकाहू अभव है।

ऐसा नियम है। जव इहा श्रुतज्ञानका प्रकरणविषै श्रुतज्ञान दोय प्रकार है एक अक्षररूप दूजा अक्षररहित। तिनमे ककारादिक तो अक्षर है अर विभक्त्यत पद है। अर परस्पर अपेक्षासहित पदनिका निरपेक्षसमुदाय सो वाक्य है। सो अक्षर पद वाक्य इनतै उपज्या अक्षरात्मक श्रुतज्ञान सो तो प्रधान है मुख्य है।

जातै देना ग्रहणकरना शास्त्रनिका अध्ययन इत्यादिक सपूर्ण व्यवहारका कारण तो अक्षरात्मक श्रुतज्ञानही हैं। अर अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान लिंग चिन्हतै उपज्या एकेंद्रियादिक पचेद्रियपर्यंत जीवनिविषै होयहै। तोहू व्यवहारके प्रवर्त्तावनेमे प्रधान नाही तातै अप्रधान है। जैसे जीव विद्यमान है ऐसा शद्वका ज्ञान तो कर्णइद्रिकरि उपज्या मतिज्ञान है। इस मतिज्ञानन जीवना अस्तित्वकू होता जो वाच्यवाचकका नतरह्ना महेनना जोडपूर्वक जो ज्ञान उपजे है सो

अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है। अथवा कोऊ घट ये दोय अक्षर कह्या सो घट ये दोय अक्षरनिका कर्णद्वारा जानना सो मतिज्ञान है। अर घटशब्दकू मतिज्ञानतै जलका धारणकरनेवाला घटका आकार ज्ञानमे प्रगट होजाना सो अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है।

बहुरि जैसे पवन देहके लाग्या तदि पवनका शीतस्पर्शका जानना सो तो स्पर्शनइंद्रियद्वारे अनक्षरात्मक मतिज्ञान है। अर पवनका शीतस्पर्शरूप ज्ञानतै जो वातप्रकृतिवालाके यह अमनोज्ञ है विकारकारी है। तथा यो पवन फल फूल उपजावेगा तथा फलफूल बिगाडिदेगा। मेघ वरसावेगा तथा अभाव करेगा। ऐसा ज्ञान प्रगट होना सो अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान है।

इहां श्रुतज्ञान अक्षरात्मक अनक्षरात्मक कह्या। तिनमे अनक्षरात्मकश्रुतज्ञानके भेदमे पर्याय समास है लक्षण जाका सो सर्व जघन्यकू आदि लेय आपका उत्कृष्टपर्यंत असख्यात लोकमात्र भेद है। असख्यातवार षट्स्थानवृद्धिकरि वर्द्धित है। अर अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है सो एक घाटि एकठ्ठी प्रमाण जे अपुनरुक्त अक्षर त्यानै आश्रयकरि सख्यातभेदरूप है। सो एकघाटी एकठ्ठी प्रमाण अपुनरुक्त जे अक्षर त्यानै आश्रयकरि सख्यातभेदरूप है। सो एकघाटी एकठ्ठीके अक्षरनिका प्रमाण ऐसा वीस अक्षररूप जानना— १८४४६७४४०७३७०९५५-१६१५।

अब श्रुतज्ञानके वीस भेद जानना, पर्याय–१, पर्यायसमास–२, अक्षर–३, अक्षरसमास–४, पद–५, पदसमास–६, सघात–७, सघातसमास–८, प्रतिपत्तिक–९, प्रतिपत्तिकसमास–१०, अनुयोग–११, अनुयोगसमास–१२, प्राभृतप्राभृतक–१३, प्राभृतप्राभृतकसमास–१४ प्राभृत–१५, प्राभृतसमास–१६, वस्तु–१७, वस्तुसमास–१८, पूर्व–१९, पूर्वसमास–२०, ऐसे श्रुतज्ञानका वीस भेद जानना।

तिनमे सूक्ष्मनिगोदिया लब्ध्यपर्याप्तकके उत्पन्न होनेके प्रथमसमयमे आवरणरहित सर्व जघन्यशक्तिरूप पर्यायनामा श्रुतज्ञान है। सो पर्यायज्ञान समस्तज्ञाननिमे जघन्यज्ञान है। याके फिर आवरण नही। याकेहू जो आवरण होय तो ज्ञानका अभाव होय ज्ञानका अभाव भया तब समस्त आत्माकाहू अभाव होय। तातै पर्यायज्ञानमे अधिक घटि बनै ठिकाना नही तातै पर्याय ज्ञान आवरणरहित है। सो सूक्ष्मनिगोदिया लब्ध्यपर्याप्तकके जन्मका प्रथमसमयमे सर्व जघन्य-स्पर्शनेंद्रियजनित मतिज्ञानपूर्वक लब्ध्यक्षर है दूजा नाम जाका ऐसा जघन्यपर्याय नामा-श्रुतज्ञान होय है।

धाराविषै दोयका वर्ग –४, अर दूसरा स्थान च्यारका वर्ग –१६, तीजा वर्गस्थान –२५६ चोथा वर्गस्थान पण्णाठ्ठी –६५५३६, पाचमा वर्गस्थान वादाला –४२९४९६७२९६, छठा वर्गस्थान एकठ्ठी –१८४४६७४४०७३७०९५५१६१६, ऐसे परस्परगुणरूप अनतानतवर्गस्थान गए जीवराशिका प्रमाण उपजे है।

वहुरि ताके उपरि अनतानंतवर्गस्थान गए पुद्गलराशिका प्रमाण उपजेहै। वहुरि ताके उपरि अनतानत वर्गस्थान गए कालका समयकी राशि उपजे है। वहुरि ताके उपरी अनतानत वर्गस्थान गए आकाशका प्रदेशाकी श्रेणीका प्रमाण उपजे है। वहुरि ताके ऊपरि अनतानत वर्गस्थान गए धर्म अधर्म द्रव्यके अगुरुलघुनाम गुणका अविभाग प्रतिच्छेद उपजैहै। वहुरि ताके ऊपरि अनतानत वर्गस्थान गए जीवका अगुरुलघुगुणका अविभागप्रतिच्छेद उपजेहै। वहुरि ताके उपरि अनतानतवर्गस्थान गए सूक्ष्मनिगोदिया लब्ध्यपर्याप्तका जघन्यज्ञान जो पर्यायज्ञान ताके अविभागप्रतिच्छेद उपजे है।

यातै सूक्ष्मनिगोदिया लब्ध्यपर्याप्तकका सर्वतै जघन्यज्ञानके जाननेकी शक्तिरूप अनतानत अविभागप्रतिच्छेद है। तिनकै ऊपरि द्वितीयादिक भेद षड्गुणी वृद्धिकरि वर्द्धित है। अनतभागवृद्धि–१, असख्यातभागवृद्धि–२, सख्यातभागवृद्धि–३, सख्यातगुणवृद्धि–४, असख्यातगुणवृद्धि–५, अनंतगुणवृद्धि–६ ऐसे असख्यातलोकप्रमाण पट्स्थानवृद्धिरूप असख्यातलोकप्रमाण पर्यायसमास ज्ञानके भेद होयहै। सो इन षट्स्थाननिकी वृद्धिका स्वरूप गोमटसार नाम ग्रथतै जानना। अर या पर्यायसमासज्ञानतै अनतगुणा अर्थाक्षरनाम हैं। अक्षर तीन प्रकार है। लब्ध्यक्षर–१, निर्वृत्यक्षर–२, स्थापनाक्षर–३, तिनमै पर्यायज्ञानावरणनै आदि लेय श्रुतकेवल ज्ञानावरणपर्यत क्षयोपशमतै उपजी जो आत्माकै अर्थग्रहणकरनेकी शक्ति सो लब्धी कहिए भावेद्रिय है। तिस रूप जो अक्षर सो लब्ध्यक्षर है। तातै लब्ध्यक्षरकै अक्षरज्ञानकी उत्पत्तिको हेतुपणा है।

वहुरि कठ ओष्ठ तालवादिक जे स्थान तिनका स्पर्शनादिक जे करणरूप प्रयत्न तिनकरि निर्वृत्तिनाम कहिए उत्पन्नभया है स्वरूप जाका ऐसा अकारादिक तो स्वर अर ककारादिक व्यजनरूप मूलवर्ण अर मूलवर्णनिका सयोगादिकका सस्थान सो निर्वृत्यक्षर है। वहुरि पुस्तकनिमै अनेकदेशका अनुकूलपणाकरि लिख्या जो सस्थान सो स्थापनाक्षर ऐसे एक अक्षरका श्रवणतै उपज्या सो अर्थज्ञान सो एकाक्षरश्रुतज्ञान है। ऐसे जिनेद्रभगवान् कह्या है।

अव शास्त्रका विषयका प्रमाण कहेहै। जो वचनकरि [illegible] नही आव तैसा केवलज्ञानकै गोचर जे भाव कहिए जीवादिक पदार्थ तिनतै अनतवै भाग सो [illegible]

द्वादशांगश्रुतविषै व्याख्यान कीजिएहै। सो श्रुतकेवलीकैभी गोचर नही ऐसा पदार्थ कहनेकी शक्ति दिव्यध्वनिविषै पाइएहै। अर जो दिव्यध्वनि करिभी नही कह्याजाय तिस अर्थका जाननेकी शक्ति केवलज्ञानकी है। अर आगै अक्षररूप श्रुतज्ञानका कथनविषय प्रथमसूत्रमे कह्याहै तहातै जानना। विशेषकथन जाननेके इच्छुक श्रीगोमटसारतै जानना। तथा सक्षेप भगवतीआराधनामैहू लिख्याहै तहातै जानना।

वहुरि अवधिज्ञान मन पर्ययज्ञानका स्वरूप सक्षेप प्रथमअध्यायमे लिख्याहै तातै फेरि इहा नही लिख्या।

अव केवलज्ञानका स्वरूप कहेहै। जीवद्रव्यकी शक्तिकू प्राप्त जे ज्ञानका अविभाग प्रतिछेद जेते है। तेते सर्व व्यक्तकू प्राप्त भए इसही कारणतै समस्त मोहनीयकर्म अर वीर्यांतरायकर्मका समस्तक्षयतै अरोकशक्तिपणा युक्तिपणाकरि अर निश्चलपणाकरि तो यो ज्ञान सपूर्ण है। अर इद्रियनिका सहायकी अपेक्षारहितपणातै केवल है। अर प्रतिपक्षी च्यारि घातिकर्मनिका क्षयतै क्रमरहित अतरालरहितपणाकरि समस्तपदार्थनिमै प्रापणातै प्रतिपक्षीरहित लोक अलोककू जाणै सो केवलज्ञान है। ऐसे ज्ञानप्ररूपणा सक्षेपकरि कही।

अव सयमप्ररूपणा तेरमी वर्णन करेहै। जो पचव्रतको धारण अर पचसमितिको पालन अर कषायनिका निग्रह अर अशुभ मनवचन कायको त्याग अर पच इद्रियनिको विजय याकू परमागमै सयम कह्या है। वादर सज्वलनका उदय होतै नियमकरि सयमभाव होयहै। सो सयम सात प्रकार है। सामायिक–१, छेदोपस्थापन–२, परिहारविशुद्धि–३, सूक्ष्मसापराय ४, यथाख्यात–५, सयमासयम–६, असयम–७, तिनमै वादरसज्वलनका सयमतै अविरोधी देशघातिस्पर्द्धकका उदय होतै वादरसामायिक छेदोपस्थापन परिहार विशुद्धि ए तीन सयम होयहै। तहा परिहारविशुद्धि सयम है सो प्रमत्त अप्रमत्त दोऊ गुणस्थानमेही होयहै। अर सामायिक छेदोपस्थापन दोय सयम प्रमत्तादि चार गुणस्थाननिमै होयहै। बहुरि सूक्ष्मकृष्टिकू प्राप्तभया ऐसा सज्वलनलोभका उदय होतै सूक्ष्मसापरायचरित्र होयहै। वहुरि समस्त मोहनीयका उपशमतै अथवा क्षयतै यथाख्यात चारित्र होयहै। सो ग्यारमा गुणस्थानमै तो मोहका उपशमतैही होय। अर वारमै तेरमै चोदमै मोहनीयका क्षयतै होय। वहुरि प्रत्याख्याना-[illegible] जो तृतीय कषायका उदयकरि सयतासयत वा देशसयत नाम पचमगुणस्थानी होय है। अर [illegible] जो अप्रत्याख्यानावरणकषायका उदयकरि असयमभाव नियमकरि होय है। इहां [illegible] जानना। मै सर्व सावद्ययोगका त्यागी हू ऐसा भावकरि भेदरहित समस्तपापका [illegible] सकलसयमस्वरूप होना सो सामायिक है। सो सर्वोत्कृष्ट है। असदृश है। सपूर्ण है। [illegible] कष्टकरि प्राप्त होनेयोग्य है। ऐसा सामायिकसयम होयहै।

[illegible] सामायिकसयमी होय फेरि सयमतै छूटिकरि सावद्य जो

पापसहित प्रवृत्तिमैं लीन होजाय फिर सारद्यव्यापारकू प्रायश्चित्तादिककरि छेदि जो आत्माकू पच महाव्रतादि धर्मसयममैं आपकू स्थापन करे सो छेदोपस्थापन सयम होयहै। छेद जो प्रायश्चितरूप आचरणकरिकै फेरि आपकू सयममे स्थापन करे सो छेदोपस्थापक होयहै। अथवा सामायिक संयममे तो समस्त भावद्ययोगका त्यागरूप भेदरहित सयम ग्रहणकीया था फेर छेद जो पंचमहाव्रत पचसमिति तीन गुप्ति रूप भेदसहित जो सयम सो छेदोस्थापन है।

जो पचसमिति त्रिगुप्तिरूप हुवा सर्वकाल प्राणीनिकी हिंसाको परिहार करै सो परिहारविशुद्धिसयत होयहै। सो जन्मतैं तीन वर्षको सर्वकाल सुखी रह्यो होय सो दीक्षागहणकरिकै पृथक्त्ववर्षपर्यंत श्रीतीर्थंकरका चरणाकै निकट प्रत्याख्यान नाम नवमा पूर्व पढचा होय सो परिहारविशुद्धिनाम ऋद्धिकूं अगीकार करि तीन सध्याविना सर्वकालमे दोय कोश प्रमाण नित्य विहार करै। रात्रिविषै विहार नही करै। वर्षाकालका नियमरहित है। वर्षाकालहूमैं विहार करै है। परहरिण कहिए प्राणीनिकी हिंसातैं रहित है। तातैं परिहारविशुद्धिसयम कहिए है। याका जघन्यकाल अतर्मुहूर्त्त हैं। जातैं परिहारविशुद्धिसयमकू छाडि अन्यगुणस्थानकूं प्राप्त होजाना सभवेहै। अर उत्कृष्ट अडतीस वर्षरहित कोटिपूर्वप्रमाण याका काल है। जातैं तीस वर्षपर्यंत सदासुखरूपकालकू व्यतीतकरि पाछै सयमी होय श्रीतीर्थंकरके चरणारविंदकै निकट पृथक्त्ववर्षपर्यंत है। अर प्रत्याख्यान नाम नवमो पूर्व पढीकरि पाछै परिहारविशुद्धसयमी होय।

इहां पृथक्त्वनाम तीनकै ऊपरि अर नवकै माही च्यार पाच छह सात आठकी आगमसे सख्या कहीहै। परिहारविशुद्धसयमी हैं सो छहकायके जीवनिकरि व्याप्तमे विहार करताहू जैसे जलकरि कमल नहीं लिपै तैसे पापसमूहकरि नहीं लिपैहै।

वहुरि सूक्ष्मकृष्टिगत लोभकूं अनुभव करता उपशमश्रेणीका धारक उपशमक वा क्षपक सूक्ष्मसांपराय संयमी यथाख्यात चारित्रतैं किंचित् न्यून होय है। यामैं सूक्ष्मसापराय एकही गुणस्थान होय है। वहुरि समस्त मोहनीय कर्मकू उपशम होतैं वा क्षय होनेतैं आत्मस्वभावमे अवस्थितिरूप यथाख्यातचारित्र है। सो उपशांतकषायछद्मस्थ तथा क्षीणकषाय-छद्मस्थ सयोगकेवलीजिन अयोगकेवलीजिन ए यथाख्यात सयमी है। वहुरि जे सम्यग्दृष्टि पच अणुव्रत तीन गुणव्रत च्यार शिक्षाव्रतनिकरि सयुक्त हुवा निर्जरा करेहै ते देशसयमी है।

तिनका दर्शनिक-१, व्रती-२, सामायि- ३, प्रोषधोपवास-४, सचित्तविरत-५, रात्रिभुक्तिविरत-६. ब्रह्मचारी-७, आरभविरत-८, परिगहत्यागी-९, अनुमतिविरत-१०, उद्दिष्टाहारत्यागी-११, एग्यारह देशसयमके भेद है।

जो पच उदुवर जो अभक्ष्यफल तिनकरि सहित सप्तव्यसनका त्याग करे अर

सम्यग्दर्शनकरि विशुद्ध जाकी बुद्धि होय सो दर्षनिकश्रावक होयहै। इत्यादि विशेष ग्यारह स्थाननिका कथन श्रावकधर्मका व्याख्यानतै जानना। इहां ग्रथ वधनेके भयतै विशेष नही लिख्याहै।

वहुरि चौदह प्रकार जीवनिविषै अठाईस प्रकार इद्रियनिके विषयनिविषै जाकै विरति नही सो असयत है। सो मिथ्यात्व सासादन मिश्र अविरत च्यारि गुणस्थाननिमैं असयमी है ऐसे सयममार्गणा नाम तेरमी प्ररूपणा समाप्त करी।

अव दर्शनप्ररूपणा चोदमी वर्णन करिए है। सामान्य विशेषात्मक जे पदार्थ तिनको आकार नही करिकै वा भेदका ग्रहण नही करिकै जो सामान्यग्रहण होय स्वरूपमात्रका प्रकाश होय सो दर्शन है ऐसे परमागममे कह्याहै। बाह्य पदार्थनिका जाति क्रिया गुणनिके प्रकारकरि विकल्प भेद नही करिकै अर पदार्थकी सत्तामात्र यामे भासनेमैं आवेहै। सो दर्शन च्यार प्रकार है।

चक्षुर्दर्शन–१, अचक्षुर्दर्शन–२, अवधिदर्शन–३, केवलदर्शन–४, तिनमैं जो नेत्रनिकरि सामान्य सत्तामात्र ग्रहण होय सो चक्षुर्दर्शन है। अन्य च्यारि इद्रियनिकरि जो सामान्य सत्तामात्रका ग्रहण सो अचक्षुर्दर्शन है। वहुरि परमाणुकूं आदिकरि महास्कधपर्यत मूर्तद्रव्य जितने तितने प्रत्यक्ष देखै सो अवधिदर्शन है। वहुरि समस्त सूर्यादिकनिका प्रकाश जाकू उपमा नही ऐसा लोक अलोककू तिमिरहित क्रमरहित इद्रियरहित व्यवधानरहित प्रकाशे सो केवलदर्शन है। ऐसे दर्शनमार्गणा नाम चोदमी प्ररूपणा वर्णन करी।

अव लेश्या नाम पद्रमी प्ररूपणा वर्णन करेहै। द्रव्यभावकरि लेश्या दोय प्रकार है। तिनमैं शरीरका वर्ण सो द्रव्यलेश्या है सो इहां प्रयोजनभूत नहीं। यातैं भावलेश्या वर्णन करे है।

भडनका विगाडनेका जाका स्वभाव होय युद्ध करनेका स्वभाव होय धर्मरहित होय दयारहित दुष्ट होय कोऊके किसीप्रकार वसी नही होय राजी नही होय। उ परिणाम कृष्णलेश्याका धारक जीवकै होय है। अव नीललेश्याका लक्षण कहे है।

जो मद कहिए स्वच्छदसज्ञक होय अथवा क्रियाविषै मद होय बुद्धिविहीन कहिए वर्तमानकार्य जाननेमैं समर्थ नही होय वहुरि विज्ञान विवेकता रहित होय विषय जे पचेद्रिय- [illegible] लोलुपी होय मानी अहकारी होय मायाचारी कुटिल आचरणका धारक होय [illegible] कार्यमें आलस्ययुक्त होय परको जाका अभिप्राय जाननेमे नही आवे जाकै निद्रा [illegible] बाहुल्यता होय धनधान्यादिकनिमैं तीव्रवाच्छायुक्त होय ए लक्षण नीललेश्या- [illegible]। अव कपोतलेश्यावानका लक्षण कहे है।

जो परके अर्थि कोप करै। अर परकी वहुत निंदा करै। अर परके वहुतप्रकार दूषण लगावै। अर शोक वहुत करै। अर जाकै भय वहुत होय। अर परकू सहि न सकै। अर परका तिरस्कार करै अपनी वहुत प्रशंसा करै। अर परकू आपसमान जाणि परकी प्रतीति नही करै। कोऊका विश्वास नही करै। अर कोऊ आपकी प्रशसा स्तवन करै तिस उपरि वहोत राजी होय आनदित होय। अपनी अर परकी हानिवृद्धि नही जानै। अर रणविषै अपना मरण वांछै। अर कोऊ आपका स्तवन करे वडाई करे ताकू वहोत धन देवे करनेयोग्य नही करनेयोग्य विचार नही गिणे ए कपोनलेश्यावान जीवके लक्षण है। अव तेजोलेश्या जो पीनलेश्यावानका लक्षण कहेहै। जो करनेयोग्य नही करनेयोग्यकू अर सेवनेयोग्य नहीसेवनेयोग्यकूं जाणे। समस्तमे समदर्शी होय। दयाविषै अर दानविषै जाके प्रीति होय। अर मनविषै अर वचनविषै अर कायविषै सरल होय। ए तेजोलेश्यावानका लक्षण कहे अव पद्मलेश्यावानकू कहे है। जो त्यागी होय। अर भद्रपरिणामी होय। अर उत्तम काज करनेका जाका स्वभाव होय। शुभकार्य करनेमे उद्यमी होय। अर जे अनिष्ट उपद्रव आजाय तिनकू क्लेशरहित सहै। अर साधुनिकी गुरुनिकी पूजामे जाके प्रीति होय सो पद्मलेश्याधारक होय है।

अव शुक्ललेश्यावानका लक्षण कहेहै। जो पक्षपात नहीकरे। अर आगामी विषयवांछारूप निदान नहीकरे। अर समस्त जननीसमान जानै। वैरी मित्रनिमै समानबुद्धि करै। इष्ट अनिष्टमै रागद्वेषरहित। होय अर पुत्र कलत्र मित्रनिमै स्नेहरहित होय ए शुक्ललेश्यावान जीवका लक्षण कह्या। ऐसे छह लेश्याके परिणाम कहे। इन लेश्याके परिणामनिके अनुकूलही च्यारप्रकार आयुका वध होय है। सो गत्यादिकनिका वर्णन लिखे कथनी बहुत होजाय। याका सोलह अधिकार गोमटसारजीमे कह्याहै कथनी वहुत है सो विशेष जाननेका इच्छक तहातै जानना। ससारपरिभ्रमणही लेश्याके आधीन है। ऐसे लेश्याकी प्ररूपणा पद्रसी कही

अव सोलमी भव्यप्ररूपणा कहेहै। जीवनिके अनन्तचतुष्टयरूप सिद्धपर्याय होनें योग्य है। ते भव्य है। जे सिद्ध होनेयोग्य नही ते अभव्य है। अर केतेक भव्यअनतचतुष्टयरूप होनेके योग्य है तोहू मोक्ष होनेयोग्य सामग्री अनन्तानन्तकालहूमे तिनकू मिलैनही। जैसे सुवर्णपाषाणकू मल दूरि होनेकी सामग्री नही मिलै तदि सुवर्ण पाषाणतै जुदा नही होय। तैसे केतेक भव्यहू अनन्तानत परिवर्त्तन करतेहू वाह्य मनुष्यगत्यादिक अनेक सामग्री मिलेविना ससारते नही छूटे है। अर अभव्य है ते अंधकपाषाणसमान है तिनमें सिद्ध होनेकी योग्यता नही। ऐसे भव्यप्ररूपणा सोलमी सक्षेपतै कही।

अव सम्यक्त्व नामा सतरमी प्ररूपणा कहेहै। भगवान् सर्वज्ञ वीतरागकरी प्ररूपे

जे द्रव्यभेदकरि छह प्रकार अस्तिकायभेदकरि पंच प्रकार पदार्थभेदकरि नवप्रकार. जीवादिक वस्तुनिको श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है। सो दोय प्रकार है। एक तो आज्ञासम्यक्त्व दूजा अधिगमसम्यक्त्व है। सो प्रमाणादिकविना आप्तका वचनका आश्रयकरि किंचित् निर्णयरूप आज्ञाकरि जो श्रद्धान भया सो आज्ञासम्यक्त्व है। अर प्रमाण नय निक्षेप निरुक्ति अनुयोगद्वारकरि विशेपनिर्णय है लक्षण जाका ऐसा अधिगमसम्यक्त्व होय है। सो सम्मक्त्व सरागय वीतरागपणात दोय प्रकार है। तहा सरागसम्यक्त्व है सो प्रशम सवेग अनुकपा आस्तिक्यरूप है। तहा कपायनिकी उत्कटताको अभाव सो प्रशमभाव है। अर ससार देह भोगनिते विरक्तता सो सवेग है। अर समस्त जीवनिके क्लेशका अभाव चहना सो अनुकपा है।

वहुरि जीवादिक पदार्थ जैसे अपने स्वभावमे अवस्थित है तैसे परमागमतै निश्चय करना सो आस्तिक्य है। तथा आप्तमे व्रतमे श्रुतमे तत्वमे आस्तिक्यरूप सरागसम्यक्त्व है। आत्मविशुद्धितामात्र वीतरागसम्यक्त्व है। प्रदेशनिका समूहरूप वहुप्रदेशी है यातै पच अस्तिकाय कहिए हैं।

वहुरि निरंतर अपने गुणपर्यायनिरूप गमनकरे प्रवर्तें तातै छह द्रव्य कहिए। वहुरि निश्चयकरनेयोग्य है यातै नव पदार्थ कहिए है। अर वस्तुका स्वभाव हैं यातै तत्व कहिए है। ऐसे पंचास्तिकाय छह द्रव्य नव पदार्थनिका श्रद्धानकूं सम्यक्त्व कहिए। सो इन तत्वनिका लक्षण इस ग्रथनिमे वर्णन है यातै विशेष इहां नही लिख्या है।

वहुरि ए सम्यक्त्व तीन प्रकार हैं। तहां जो दर्शनमोह तीन प्रकार अर च्यार प्रकार अनतानुवधी कपायका करणलब्धिका परिणामका सामर्थ्यते क्षयकरिके जो निर्मलश्रद्धान सो क्षायिकसम्यग्दर्शन है। सो प्रतिपक्षीकर्मका अभावते नित्य हैं अविनाशी है। आत्मगुणकी विशुद्धितातै उपज्या तातै प्रतिसमय गुणश्रेणीरूप निर्जराका कारण है। क्षायिकसम्यग्दृष्टि वर्तमानभवमेही मुक्त होजाय। तथा देवलोक जायदेवतै मनुष्य होय निर्वाण जाय तातै तीन भव भए। अर कोऊ पूर्वें मिथ्यात्व अवस्थामे नरक आयुवध किया होय अर पाछे क्षायिकसम्यक्त्व होजाय तो प्रथमनरक जाय नरकते निकशि मनुष्य होय निर्वाण जाय। ऐसे तीन भव ग्रहणकरे। अर कोऊ पहिले मनुष्य आयुका वा तिर्यक् आयुका बध कीया होय तो भोगभूमिका मनुष्य तिर्यच नही होय भोगभूमिमे मनुष्य तिर्यच होय मरणकरि कल्पवासी देव होय फिर मनुष्य होय निर्वाण जाय। ऐसे च्यार भव ग्रहण करे। इस सिवाय ससारमे नही रहै।

नही चलायमान होयहै ।

बहुरि दर्शनमोहकी क्षयपणाका आरंभ तो कर्मभूमिका मनुष्य केवली श्रुतकेवलीकै निकटही करेहै । अर निष्ठापन सर्व च्यारिगतिमें होयहै । बहुरि दर्शनमोहनीयका भेद सम्यक्त्वप्रकृतिका उदय होते अर छह प्रकृतिनिका क्षयोपशम होते चल मलिन अगाढ इन तीन दोषनिकरि सहित जो तत्वनिका श्रद्धान सो क्षयोपशम सम्यक्त्व होयहै । इहां दर्शनमोहके उदयकू वेदनेतै अनुभवनेते याका दूजा नाम वेदकसम्यक्त्व है । बहुरि अनंतानुबंधी च्यार कषायनिका उदयाभाव लक्षण अप्रशस्त उपशमकरि तथा दर्शनमोहकी तीन प्रकृतिनिका अप्रशस्त उपशमकरिके जैसे कर्दम जाका नीचै बैठिगया अर उपरि निर्मल जलसमान जो पदार्थनिका श्रद्धान उपजना सो उपशमसम्यक्त्व है । उपशमसम्यक्त्व अंगीकार करनेयोग्य जीवकू कहे है । च्यारू गतिमे भव्य सज्ञी पचेंद्रिय पर्याप्तक विशुद्ध ज्ञानोपयोगी जाग्रच्छुभलेश्यायुक्तकै सम्यक्त्वग्रहण होय है । ऐसे तीन सम्यक्त्व कहे । बहुरि मिथ्यात्व सासादन मिश्रका स्वरूप पूर्वे गुणस्थानप्ररूपणामे कह्या सोही जानना । ऐसे सम्यक्त्वप्ररूपणा सप्तदशमी वर्णनकरी ।

अब अठारमी सज्ञाप्ररूपणा वर्णन करे है । मनइंद्रियावरणका क्षयोपशमतै उपज्या जो ज्ञान सो संज्ञा है । सो सज्ञा जाकै विद्यमान होय सो सज्ञी कहिएहै जो शिक्षा क्रिया उपदेश आलापकू ग्रहण करे सो जीव सज्ञी कहिएहै । हितमै प्रवृत्ति अहितका निषेधरूप जो शिक्षा ताहि ग्रहण करै ऐसा कोऊ मनुष्यादिक अर हस्तपादका चलावनेरूप जो क्रिया ताकू ग्रहणकरे ऐसा कोऊ बलध इत्यादिक तथा कोरडा चामठी इत्यादिकरि मारन ताडन विधानादिक उपदेश इत्यादिककू ग्रहण करनेवाला कोऊ गजादिक अर श्लोकादिक पाठ सो आलाप ताकूं ग्रहण करनेवाला कोऊ चकोर राजसूवा इत्यादिक इस प्रकार मनका अवलंबनकरिकै शिक्षा क्रिया उपदेश आलापकू ग्रहण करनेवाला जीवकू सज्ञी कहिए अर शिक्षा क्रिया उपदेश आलापके ग्रहण करनेकूं असमर्थ ते जोव असज्ञी कहिए ।

बहुरि जे जीव कार्य जो करनेयोग्य ताकू अर अकार्य कहिए नहीकरनेयोग्यकू पहलेही विचारे । अर तत्व अतत्वकी शिक्षा ग्रहण करे अर नामकरि बुलाया आवे सो जीव मनसहित है । अर इन लक्षणरहित अमनस्क असज्ञी है ऐसे सज्ञिमार्गणा नाम अठारमी प्ररूपणा वर्णनकरी ।

अब आहारप्ररूपणा उगणीसमी वर्णन करेहै । औदारिक वैक्रियिक आहारक ए तीन प्रकार शरीर नाम कर्मकी प्रकृतिनिमे कोऊ एक शरीर नाम कर्मका उदय करिके तिन औदारिकादिक शरीरनिविषै जो उदय आया कोऊ एक शरीरवर्गणा अर भाषावर्गणा अर मनोवर्गणा इनि वर्गणानिको नियमते यथायोग्यकालविषै यथायोग्य 'आहरति' कहिए ग्रहण शरिरके अर वचनके अर द्रव्यमनके योग्य जे नोकर्मवर्गणानिका ग्रहण सो आहार है ।

करे सो परमागममे आहार कह्याहै ।

वहुरि विग्रहगतिकू प्राप्तहुवा जीव अर प्रतरलोकपूरण समुद्रघातकू प्राप्तहुवा सयोगकेवली जिन अर अयोगकेंवलीजिन अर सिद्धपरमेंष्ठी ए अनाहारक होयहै । विग्रहगतिनै प्राप्तहुवा जीव अर प्रतरलोकपूरणअवस्थामे सयोगीजिन अर अयोगीजिन नोकर्मवर्गणा ग्रहणकरै तातै अनाहारक है । अन्य समस्तजीव समस्तसमयमे आहारवर्गणा ग्रहण करेहीहैं तातै आहारकही है ।

अव समुद्घात केते प्रकार है सो कहेहै । वेदनासमुद्घात १, कपायसमुद्घात २, वैक्रियिकसमुद्घात ३, मारणातिकसमुद्घात ४, तैजसमुद्घात ५, आहारकसमुद्घात ६, केवलसमुद्घात ७, ऐसे सप्तप्रकार समुद्घात कह्याहै । अव समुद्घातका लक्षण कहेहै । मूलशरीरकू तो छाडैनही अर कार्मणशरीर तैजसशरीर सहित जीवका प्रदेशनिको शरीरतै वाहिर निर्गमन सो समुद्घात कहिएहै । आहारक अर मारणातिक तो दोय समुद्रघात तो नियमकरि एकदिशाकोही प्राप्तहोयहै । जातै सूच्यगुलका असख्यातवा भागप्रमाण ऊचा चौडा आत्माका प्रदेश निकसै सो जहाताई जाना होय तहाताई मूलशरीरतै लेई तारसा चल्याजाय है वहुरि अन्य पचसमुद्रघात रहे ते दशोंदिशाकू प्राप्त होयहै । इनविषै यथायोग्य चौडाई लवाई ऊचाई पाईएहैं । ऐसे आहारकप्ररूपणा उगणीसमी सक्षेपकरि वर्णनकरी ।

अव उपयोगप्ररूपणा वीसमी वर्णनकरेहै । वसत. गुणपर्यायौ यस्मिन् इति वस्तु । ऐसे वस्तुकी निरूक्ति कही । याका अर्थ ऐसा । जामै गुणपर्याय वसै सो वस्तु कहिएहै । वस्तुका ग्रहणकै निमित्त जो ज्ञान प्रवृत्तै सो उपयोग है । पदार्थका ग्रहणकै निमित्तज्ञानका व्यापार वा ज्ञानका परिणमन वा क्रियाविशेष सो उपयोग कहिए । सो उपयोग अष्टप्रकारका ज्ञान हैं । एक साकारोपयोग । एक अनाकारोपयोग । जामै वस्तुका आकार प्रगट होजाय सो साकारोपयोग अष्टप्रकारको ज्ञान हैं ताके मति श्रुत अवधि मन.पर्यय केवल कुमति कुश्रुत कुअवधि नाम है ।

वहुरि वस्तुकी सत्तामात्र अनाकारग्रहणरूप चक्षुर्दर्शन अचक्षुर्दर्शन अवधिदर्शन केवलदर्शन ए च्यार प्रकार दर्शनोपयोग है । इहा मति श्रुत अवधि मन पर्यय ज्ञानकरिकै अपना अपना विषयविषै अतर्मुहुर्त्तपर्यंत अर्थके ग्रहण करनेकै अर्थि व्यापारप्रवृत्ति करना सो ज्ञानोपयोग है । सो साकारोपयोग है । वहुरि चक्षुइद्रियकरिकै वस्तुका सत्तामात्र सामान्यग्रहण सो चक्षुर्दर्शनोपयोग है ।

वहुरि चक्षुविना अन्य स्पर्शनादिक इद्रियनितै सत्तामात्र सामान्य ग्रहण सो अचक्षुर्दर्शन

है तथा मनकै अचक्षुरिन्द्रियपणा है यातै अचक्षुदर्शनकरि वा अवधिदर्शनकरि जीवादिकपदार्थनिमै विशेषनकरिकै निविरदर जो अंतर्मुहूर्त्तकाल सामान्य अर्थग्रहणमे व्यापार लक्षण उपयोग सो अनाकारोपयोग है । समस्तजीवनिका उपयोग लक्षण है । ऐहे उपयोगप्ररूपणा वीसमी समाप्तकरी ।

सो अव्याप्ति अतिव्याप्ति असंभवी दोषनिकरि रहित है । जो लक्षण लक्ष्यविषैभी व्यापै अर अलक्ष्यविषैभी व्यापै सो अतिव्याप्तिदोष है । जैसे जीवका लक्षण अमूर्त्तिक कहिए तो अमूर्तपना तो जीवविषैभी है अर आकाशादि अजीवविषैभी है । वहुरि जहा लक्ष्यका एकदेशविषै लक्षण पाईए सो अव्याप्तिदोप है । जैसे जीवका लक्षण रागादिक कहिए तो रागादिक संसारीविषै संभवैनही तातै लक्षण अव्याप्तिदोपसहित है ।

वहुरि लक्ष्यतै विरोधी लक्षण होई सो असभवी है । जैसे जीवका लक्षण जडत्व कहिए सो संभवै नही । ऐसे निर्दोषरहित उपयोगही जीवका लक्षण है । ऐसे वीसमी उपयोगप्ररूपणा वर्णनकरी ।

अव इनमे आठ सातमार्गणा है । ।गाथा । उवसमसुहुमाहारे । वगुव्वियमिस्मणर अपज्यते । सामणसम्मे मिस्से । सातरगा मग्गणा अट्ठ १, सत्तदिणा छम्मासा । वास पुढत्त च वार मुमुहुता । पल्लासख तिण्ह । वरमवर एगसमयो दु २, अर्थ ए सात मार्गणा अतराल-सहित है । उपशमसम्यक्त्व १, सुक्ष्मसापरायगुणस्थान २, आहारकशरीर ३, आहारकमिश्र-शरीर ४, वैक्रियिकमिश्र ५, लब्ध्यपर्याप्तमनुष्य ६, सासादनगुणस्थान ७, मिश्रगुणस्थान ८, इस समस्तत्रैलोक्यमे उपशमसम्यक्त्ववाला कोऊभी जीव नही पाइए तो सप्तदिनपर्यंतका उत्कृष्ट अतर है । सूक्ष्मसापरायगुणस्थानका उत्कृष्ट अतराल छह महिनेका है । आहारक आहारकमिश्र पृथत्ववर्षका उत्कृष्ट अतर है । इहां पृथक्त्व नाम तीन वर्ष उपरि नव वर्षके माहि आगमपाठित जानना । अर वैक्रियिकमिश्रका उत्कृष्ट अतर वारहमुहूर्त्त हैं बहुरि लब्ध्य-पर्याप्त मनुष्यका अर सासादनगुणस्थानका अर मिश्रगुणस्थानका इन तीनका उत्कृष्ट अतराल पल्यका असख्यातवा भाग प्रमाण असख्यातवर्षका अतराल । पछै कोऊ होयही ऐसा नियम है । अर जघन्य अतर एकसमयका है ऐसा जानना । नानाजीवनिकी अपेक्षाकरिकै कोऊ गुणस्थान वा मार्गणास्थानकू छाडिकरि अन्यगुणस्थान वा अन्य मार्गणास्थानकू प्राप्तहोयकरिकै फिर उसही गुणस्थान वा मार्गणास्थानने नही प्राप्त होय तितने काल अतर कहिएहै । सो पूर्वै कहे । अव औरहू विशेष जानना । प्रथमोपशमसम्यक्त्वसहित देशव्रतीना नानाजीवनिकी अपेक्षा चोदह दिनका अतर है । अर उपशमसम्यक्त्वसहित महाव्रतीका अतर नानाजीवकी अपेक्षा पद्रह दिनका अतर है । ऐसे सातरमार्गणा वर्णनकीया ।

अब मार्गणानिमे गुणस्थानका संक्षेप ऐसा जानना। नरकगतिमे आदिका च्यार गुणस्थान होय है। अपर्याप्तस्थानमे सासादन अर मिश्रविना दोय गुणस्थान है। बहुरि कर्मभूमिके तिर्यंचके पंचगुणस्थान होय है। अपर्याप्तमे मिथ्यात्व सासादन दोयही गुणस्थान होय है। भोगभूमिके तिर्यंचके आदिका च्यार गुणस्थान होयहै। अपर्याप्तअवस्थामे मिश्रविना तीन गुणस्थान होयहै। बहुरि एकेंद्रिय बेंद्रिय त्रींद्रेय चतुरिंरिंद्रिय असैनीपचेंद्रिय इनके पर्याप्त-अवस्थामे एक मिथ्यात्वही गुणस्थान है। अपर्याप्तमे मिथ्यात्व सासादन दोयभी होय। पचेंद्रियके चोदह गुणस्थान होयहै। पर्याप्तमे मिश्रविना तीनगुणस्थानही होय। पृथ्वीकाय अप्काय तेजकाय वायुकाय वनस्पतिकाय पर्याप्तमे मिथ्यात्वही एक गुणस्थान होयहै। अर अपर्याप्त-अवस्थामे पृथ्वी अप् वनस्पतिकाय सासादनभी होय। अर तेजस्काय वायुकायक जीवकै अपर्याप्तमे मिथ्यात्वही होयहै। योगनिमे सत्यअनुभयवचनमे तेरह गुणस्थान है अर असत्यउभय बारह आदिके गुणस्थान है। असत्यअनुभयमनोयोगमे आदिके तेरह अर असत्यअनुभयमनोगमेवचन-योगमेआदिके बारह गुणस्थान है। औदारिककाययोगमे आदिके तेरह गुणस्थान है औदारिकमिश्र-काययोगमे मिथ्यात्व सासादन अविरत अर सयोगी ए च्यार गुणस्थान हैं। वैक्रियिककाययोगमे आदिका च्यार गुणस्थान है। वैक्रियिर्कमिश्रकाययोयमे मिश्रविना आदिका तीन गुणस्थान है। आहारक आहारकमिश्रविषै एक प्रमत्तसयतनाम छठा गुणस्थान है। कार्मणकाययोगमे मिथ्यात्व सासादन अविरत अर समुद्रघाती अपेक्षा सयोगी गुणस्थानहू हैं। अयोगी योगरहित है।

बहुरि तीन वेदनाविषै आदिके नव गुणस्थानही है। ऊपरि वेद नहीहैं। बहुरि अनंतानुबंधीकषायमे मिथ्यात्व सासादन दोयही गुणस्थान है। अप्रत्याख्यानावरण च्यार कषायनिमे आदिके च्यार गुणस्थान हैं। प्रत्याख्यानावरणविषै आदिके पांच गुणस्थान है। संज्वलन तीन कषाय ए आदिके नवगुणस्थान पर्यंत है। सज्वलनलोभ दशमगुणस्थानपर्यत हैं। अर हास्यादिक छह नोकषाय अष्टम गुणस्थानपर्यंत है।
तीन वेद नवमा गुणस्थानपर्यंत है। सज्वलनलोभ दशमगुणस्थानपर्यंत हैं।

बहुरि ज्ञानविषै मतज्ञान अवधिज्ञान इन तीन ज्ञानविषै अविरतादि बारमा गुणस्थान-पर्यंत नवगुणस्थान होयहे। मन पर्ययज्ञानविषै छठा प्रमत्तगुणस्थानकू आदि लेय बारमा गुणस्थानताई सप्त है। केवलज्ञानविषै सयोगी अयोगी केवलीजिन दोय है। सिद्ध हैही। कुमति कुश्रुत विभंगविषै मिथ्यात्वादि दोयही गुणस्थान है। मिश्रगुणस्थानमे मिश्रज्ञान है।

अब संयमविषै समायिक छेदोपस्थापन दोय सयममे प्रमत्तादिक च्यार गुणस्थान है। परिहारविशुद्धिसयमविषै छठा सातमा दोयही गुणस्थान होयहै। सूक्ष्मसापरायचारित्रविषै एक सूक्ष्मसापरायगुणस्थान होयहै। यथाख्यात संयमविषै उपशातमोहादि च्यार गुणस्थान होयहै। देशसंयमविषै एक देशसयमगुणस्थानही होयहै। असयमविषै मिथ्यात्वादि च्यार गुणस्थान। दर्शनमार्गणामे चक्षु अचक्षुर्दर्शनमे आदिका बारह गुणस्थान होयहैं। अवधिदर्शनविषै

अविरतादि नव गुणस्थान है। केवलदर्शमे सयोगी अयोगी दोय गुणस्थान होयहै। लेश्यामार्गणाविषै कृष्ण नील कापोत लेश्याविषै आदिका च्यारही गुणस्थान होयहै। पीत पद्मलेश्याविषै मिथ्यात्वादि सप्त गुणस्थान है। शुक्ललेश्याविषै मिथ्यात्वादि तेरह गुणस्थान है। अयोगी गुणस्थान लेश्यारहित है। भव्यमार्गणामे भव्यकै चोदह गुणस्थान है। अभव्यकै एक मिथ्यात्व गुणस्थानही हैं। सम्यक्त्व मार्गणाविषै अविरतादि आठ गुणस्थान हैं। क्षयोपशमसम्यक्त्वविषैं अविरतादिच्यार गुणस्थान है। क्षायिकसम्यक्त्वविषै अविरतादि अयोगीपर्यंत सिद्धहू जानने। संज्ञीमार्गणा विषै संज्ञीकै मिथ्यात्वादि बारह गुणस्थान है असज्ञीके पर्याप्तमे एक मिथ्यात्व अपर्याप्तमे सासादनहू होय है। आहारकमार्गणमे आहारक मिथ्यात्वमे मिथ्यात्वादि तेरह अनाहारककै मिथ्यात्व सासादन अविरत सयोगी अयोगी च पंचगुणस्थान होय है। ऐसे श्रीगोमटसारसिद्धातकी आज्ञाप्रमाण वीस प्ररूपणाका वर्वन अतिसक्षेपतै कीया। इहा विशेष जाननेका इच्छक होय सो मूलग्रथ गोमटसारजीकी टीकातै जानहू इहा प्रयोजन जानी मदज्ञानीनिकै गुणस्थानादि प्ररूपणाका ज्ञान होनेके अर्थिहमारी बुद्धिप्रमाण लिख्या है। वहुतज्ञानी होय सो इहा प्रमादके वसतै वा अज्ञानके वसतै जो चूकि लिख्याहोय सो शुद्ध करीदीज्यो इहा प्रसग जायगाजायगा गुणस्थानादिकनिका आवै यातै मदज्ञानी जानिले तो कथन समझिमे नीका आजाय यह प्रयोजन जाणि लिख्याहै। अव बधपदार्थ कहनेकै सूत्र कहेहैं।

मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगा बन्धहेतवः ॥ १ ॥

अर्थप्रकाशिका—मिथ्यात्व अविरत प्रमाद कषाय योग ए पच बधके हेतु कहिए कारण है। तहां अतत्वश्रद्धानरूप जो मिथ्यादर्शन सो दोयप्रकार है। एक तो मिथ्यात्वकर्मके उदयते परके उपदेशविनाही तत्वार्थका श्रद्धानका अभावरूप आत्माका परिणाम सो नैसर्गिकमिथ्यात्व है। सो एकेंद्रियादिक सर्व ससारीजीवनिके अनादितै प्रवर्तेहै। याहीकू अग्रहीतमिथ्यात्व कहिएहै।

वहुरि जो मिथ्यात्व खोटे मिथ्यादृष्टि अन्यपुरुषनिके उपदेशतै प्रवर्ते तथा मिथ्याशास्त्रका श्रवणतै मिथ्यागुरूके उपदेशतै प्रवर्तै सो परका उपदेश है निमित्त जाकू ऐसा गृहीतमिथ्यात्व कहिएहै सो वडा कठिन है।

इहा मिथ्यत्व कह्या सो एकात विपरीत सशय विनय अज्ञान भेदकरि पचप्रकार है। तिनमे जो अनेकधर्मरूप जो वस्तु तिस वस्तुका एकधर्मग्रहणकरि सर्वथा एकातरूपही निश्चकरे सो एकांतमिथ्यादृष्टि है। ताका विशेष ऐसा। जो वस्तुकू अस्तिरूपही कहे। वा सर्वथा नास्तिरूपही कहे। सर्वथा अनेकरुपही कहे। सर्वथा नित्यही कहे गुणपर्यायनिते सर्वथा भिनही कहे। सर्वथा अभिन्नही कहे। नयकी अपेक्षाविना सर्वथा वस्तुका स्वरूप कहना सो एकांतमिथ्यात्व है। तिनमें कालवादी तो सर्वथा कालहीकू कर्त्ता माने है। जो कालही समस्तकू उपजावेहैं। कालही समस्तका नाश करेहैं। कालही निद्राकूं प्राप्त करेहै। कालही जागृत करे

कालही फलपुष्पादिकरि युत करै कालही रहीत करै। कालही सयोग वियोग करेहै। कालही समस्तकूं जीर्ण करेहै। तातै समस्तजगतकी रचनाका कारण कालही है। ऐसे कालहीका सर्वथा एकांत करेहै।

कितने ईश्वरका एकांत करै है। आत्मा तो अज्ञानी है अनाथ है। आत्माके सुख दु.ख जीवन, मरण, लाभ, अलाभ, ज्ञानीपणा, अज्ञानीपणा, पापीपणा, धर्म्मीपणा, स्वर्गगमन नरकगमन ईश्वर करे है। तथा ससारका कर्त्ताभी ईश्वर हैं हरताहू ईश्वरहा है। ईश्वरतैही समस्तकी उत्पत्ति प्रलय है। ऐसे ईश्वरकी कल्पनाकरि सर्वथा एकांत करै है। वहुरि कितनें आत्मवादी समस्तकूं एक आत्माही कहे है। जो आत्मा जगतमे एकोही है सो सर्वव्यापी है महान् है पुरूष है देव है सर्वागनिगूढ है सचेतन है निर्गुण है उत्कृष्ट हे इत्यादि स्वरूप आत्माकू सर्वथा प्ररूपहैं।

वहुरि कोऊ भावीकूंही प्रधानकरि कहेहै। जो जाकै जैसा होना है सो नियमतै होयगा तिसकू इद्रहू अन्यप्रकार करनेकूं समर्थ नही। ऐसे भवितव्यताकाही एकात करेहै। वहुरि कोऊ स्वभावहीका एकांत करेहै। जो कंटकाने तीक्ष्ण कोन करेहै। मयूरनै चित्रविचित्र कोन करेहै। कमलनिको सुगध कोन करेहै। मृग शूकर सिह व्याघ्र सर्प्प पक्षी इत्यादिकनिके भिन्नभिन्न रूप कोन करे इनको स्वभावही कारण कहेहैं। ऐसे स्वभावका सर्वथा एकात करेहै।

वहुरि केई सर्वथा पुरूषार्थतेही कार्यकी सिद्धि कहेहै। केई पुरूषार्थरहित दैववलतेही कार्यकी सिद्धि कहेहै। वहुरि केई सयोगतेही कार्यकी सिद्धि कहेहै। सयोगविना कोऊ कार्य सिद्ध नही होईसकेहै ऐसे अपेक्षारहित जितने नयवादी है ते सर्वथापणात एकातमिथ्यात्वरूप हे

वहुरि अहिंसादिक समीचीन धर्मका फल स्वर्गादिकका सुख है। ताकू हिसारूप यज्ञादिकका फल मानना सो विपरीत मिथ्यात्व है। अर जो हिंसाही धर्मका कारण है तो मत्स्यनिके मारनेवाले धीवरादिक अर पक्षीनिके मारनेवाले शाकुनिक अर सूकरादिकनिके मारनेवाले सौकरादिकनिकै धर्मकी प्राप्ती होनेका प्रसग आवै। तातै हिंसातै धर्म कदाचित् नही होय है। अर जो या कहोहो जो यज्ञविषै पशुका मारण पापकै अर्थि नही है अर अन्यमे पापकै अर्थिही है ऐसा कहनाभी योग्य नही दोऊ स्थानमैं मारण है सो तो दुःखका कारण नमानही है। यज्ञवाहिर जैसा मरणमे दुःख होय तैसाही यज्ञमे होय। अर जो या कहो जो स्वयंभू स्वयमेव यज्ञकै अर्थिही पशु रचै है। तातै यज्ञमे मारनेमे पाप नहीं है तो पशुनिऊपरि चढना क्रयविक्रयादि करना ये अयोग्य है जो भगवान् तो यज्ञवास्तै रचे अर फिर चढना सो भगवानकी आज्ञातै पराङमुख भया। वहुरि जो ईश्वर अपने सेवकादिकनितै यज्ञमे पशु मराय स्वर्ग देहै तो विनायज्ञही स्वर्ग क्यों नही पहुचावै। अर जो कहोगें करनीविना स्वर्ग कैसे देनाकू चहिए जो करनी करावनेवाला भी तो ईश्वरही है ऐसी खोटी करनी कराय स्वर्ग

देहैं तो परोपकारादि भली करनी कराय स्वर्ग क्यों नहीं देवै अर जो कहोगे जैसे मंत्रका सामर्थ्यतें दीया विष है सो मरणका कारण नही होय है। तैसें वेदोक्तमन्त्रनिकैं सस्कार-पूर्वक पशुका मरण पापका कारण नहीं हैं। सो कहना भी नही बनै हैं। जो रज्जु इत्यादिक-विनाही मन्त्रका प्रभावतैं यज्ञमें स्वयमेव पशु आय पडै तदि तो मंत्रका प्रभावही मानिए सो है नहीं। बहुरि मन्त्रतैं हूं मारिए तोहू जैसे शस्त्रादिककरि प्राणीनिकूं मारनेवालेके अशुभ अभिप्रायतैं पापका बध होय है तैसैंही मंत्रकरि मारनेवालेकैंहू पापकाही बंध होय है। बहुरि स्त्रीनिमें लपटी क्षुधा तृषादिकसहितकूं तथा कामी क्रोधीनिकूं परमात्मा परमेश्वर मानना। ससारमें उत्पन्न जीव हैं तिनका उपकार अपकार प्रलय करनेवालेनिकूं कृतकृत्य मानना तथा ग्रथसहितकूं निग्रंथ मानना। केवलीकूं कवलाहारी मानना। पचभर्त्तारीकूं सती मानना। गृहस्थके केवलज्ञानकी उत्पत्ति मानना। इत्यादिक विपरीत मिथ्यात्वकी जाती है।

बहुरि सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकूं मोक्षमार्ग कह्या सो एही मोक्षमार्ग हैं कि अन्य समस्तमतनिमें भिन्नभिन्न मार्ग प्ररूपें हैं सो परस्पर वचनमे विरुद्धता कोऊ प्रत्यक्ष जाननें-वाला सर्वज्ञ है नहीं शास्त्र परस्पर मिलेंनहीं तातैं कोऊ निश्चयतैं निर्णय नही होय सके है। इत्यादिक अभिप्राय सो सशयमिथ्यात्व है।

बहुरि सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रतप. सयमध्यानादिकनिकी अपेक्षारहित गुरुनिके पाद-पूजनादिक विनयकरिही मुक्ति मानै सो विनयमिथ्यात्व है। तथा सर्व देवनिको सर्वशास्त्र-निको सर्वमतनिको समस्तभेषीनिकूं समान मानि समस्तका विनय करै अर विनयमात्रतेंही अपना कल्याण होना मानैं सो विनयमिथ्यात्व है। बहुरि जो हित अहित परीक्षारहित परिणाम सो अज्ञानमिथ्यात्व है।

जाकै ऐसा विचार होइ जो स्वर्ग तथा मुक्ति नरक कोन देख्या स्वर्गका समाचार कोनकै आया पापपुण्य कहा लगै अर पापपुण्य कहा वस्तु है परलोकको कोन जानै कोनकै स्वर्गतैं समाचार आया स्वर्ग नरक समस्त कहनेमात्र हैं। इहांही स्वर्ग नरक हैं सुख भोगैं सो स्वर्ग है दुःख भोगैं सो नरक है अर हिंसाकूं पाप कहै हैं अर दयाकूं धर्म कहै हैं सो कहनेमात्र हैं कोऊ ठिकाना हिंसारहित नही ही है। सबमें हिंसा है कहा पाव धरनेकूं ठिकाना नही है। अर ए भक्ष्य हैं ए अभक्ष्य हैं ऐसा विचार भी निरर्थक है एकेंद्रिय वृक्ष अन्नादिक भक्षण करनेमे अर मांसभक्षण करनेमे तफावत नही अर दोऊनिमैंही जीवहिंसा समान है अर जीवनिकैं जीवनिकाही आहार भगवान् बताया है अर समस्तवस्तु खावने-भोगनेकूंही है इत्यादिक अभिप्रायरूप अज्ञानमिथ्यात्व है। ऐसे तो मिथ्यात्वको बधका कारण कह्या।

बहुरि छकायके जीवनिका विराधनाका त्याग नही करना अर पांच इद्रिय अर छठा मन इनिकूं विषयनितैं नही रोकना सो बारहप्रकार अविरत है सो कर्मबधका कारण

है। वहुरि भावशुद्धि कायशुद्धि विनयशुद्धि ईर्यापथशुद्धि भैक्षशुद्धि शयनासनशुद्धि प्रतिष्ठापनशुद्धि वाक्यशुध्दि ऐसैं अष्टप्रकार शुद्धि अर दशलक्षण धर्म इनविषै उत्साहररित परिणाम होइ मदोद्यमी होई सो प्रमादहै। अथवा स्त्रीकथा राजकथा भोजनकथा देशकथा ऐसैं च्यार विकथा अर क्रोध मात माया लोभ ए च्यार कपाय अर पच इद्रिय अर निद्रा अर स्नेह ऐसैं प्रमादकै पनरह भेद हैं।

इनमैं तैं कोऊ प्रमादमें ऐसा लीन होइ जो आपकी अर परकी हेयकी उपादेयकी समालि भूलि असावधान हो जाय सो प्रमाद है। सो ए प्रमाद कर्मवधके कारण है। अर पचीस कषाय अर मन वचन कायके पद्रह योग ए समस्तहू अर भिन्नभिन्नहू कर्मबध होनेकू कारण है। तिनमें मिथ्यात्वगुणस्थानमे तो मिथ्यादर्शनादि पच वधके कारण है। अर सासादन मिश्र अविरत इन तीन गुणस्थाननिमे मिथ्यात्वविना अविरत प्रमाद कपाय योग ए च्यार बधकें कारण है। अर देशव्रत है सो सयतासयत है इसमे विरतपणाहू है अर अविरतपणाहू है। तातैं च्यारोंही बधका कारण हैं। वहुरि प्रमत्तसयतगुणस्थानमे प्रमाद कषाय योग ए तीनही बधके कारण है। वहुरि अप्रमत्तादि च्यार गुणस्थाननिमै कपाय अर योग दोयही बधके कारण है। बहुरि उपशांतकषाय क्षीणकषाय सयोगकेवली इन तीन गुणस्थाननिमे केवल योग करिही कर्मका बध होय है। वहुरि अयोगकेवली बधरहित है।

ऐसे संसार अवस्थामें आत्मा अनादिकालका कर्मरूप पुद्गलस्कधनितैं मिलरह्या तातैं ससारअवस्थामें कथचित् मूर्तिक कहिए है। तातैं नवीन कर्मका बध होता जाय है। पुरातन निर्जरता जाय हैं। जैसे सुवर्ण अर पाषाणकै अनादिका सबध है तैसे जीव-पुद्गलकै अनादिहीका सबध है। जब रत्नत्रयकी परिपूर्णता होइ तदि भिन्नभिन्न होय है। ऐसे सवधके कारण कहे। अव बधके स्वरूपकू कहै है।

सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यानपुद्गलानादत्ते स बन्धः ॥ २ ॥

अर्थप्रकाशिका—जीव है सो कषायसहितपणातैं कर्मयोग्य पुद्गलनिने ग्रहण करेहै सो वध है। समस्तलोक ऊपरि नीचे सर्वतरफतैं पुद्गलनिकरि गाढा गाढा भर्या है। ते पुद्गल अनेकप्रकार परिणमनकी योग्यताकू प्राप्त होरहेहै। तिनमे अनतानत पुद्गलपरमाणु कर्म होनेयोग्यहू समस्तलोकमे भरेहै। जहा आत्माके प्रदेश है तहाइ तिष्ठेहै। जब यह आत्मायोग-द्वारे सकप होय कपायसहित होयहै तदि समस्त तरफतैं समस्त आत्माके प्रदेशनिकरि कर्मयोग्य पुद्गलनिका ग्रहण होना सो वध है। तैसे योग कषायनिकरि कर्मयोग्य पुद्गलनिका ग्रहण होय है।

वहुरि जैसे उदरविषैं जठराग्निका आशयके अनुसार आहारका खल रस भागदिरूप परिणमन होयहै। तैसे तीव्र मद मध्य कषायके आशयके अनुकूल कर्मनिका स्थितिबंध अर

अनुभागबंध होयहै । जातै यिथ्यादर्शनादिकका आश्रयतै आर्द्र जो आत्मा ताकै सर्वतफतै योगनिके विशेषतै सूक्ष्म एकक्षेत्रमे अवगाहकरि तिष्टते अनंतप्रदेशरूप कर्म होनेकेयोग्य ऐसे पुद्गलनिका आत्मातै एकक्षेत्रावगाहरूपकरि परस्पर मिलना सो बंध हैं ऐसे कहिए है । जैसे भाजनविशेपने क्षेपे जे नानारस बीज फल फूल तिनका मदिराभाव परिणाम होयहै । तैसेही आत्माविपै तिष्ठते पुद्गलनिका योग कषायके वशतै कर्मभावकरि परिणमन जानना योग्य हैं । ऐसे कार्मणवर्गणानिका आत्मातै विभागरहित एकत्वपनाकरियुक्त होना सो बंध है । ज्ञान दर्शन अव्यावाध श्रद्धान अवगाहन सूक्ष्मता अगुरूलघुत्व अनंतवीर्य लक्षण पुरूषका सायर्थ्यकूं बांधेहै रोकेहै तातै बंध कहिएहै । जैसे कोठचारमे धानका निकलनाभी होय अर प्रवेशकरनाभी होयहै अर सचयभी वन्यारहेहै तैसे सिद्धराशिकै अनंतवै भाग अर अभव्यराशितै अनतगुणा ऐसा मध्य अनतप्रमाण कर्मपरमाणु समयसमय नवीन बधेहै अर इतनाही निर्जरेहै ताहि समयप्रवद्ध कहिए है । अर ड्योढगुणहानिगुणित समयप्रवद्धमात्र सासतो सत्तामे कर्म मोजूद रहेहै सो याका हिसाव विस्तारसहित गोमटसारजीमे है तहातै जानना इहा लिख्या कथनी विशेप है गय ववेहै । अव बंधका प्रकार कहेहै ।

प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः ॥ ३ ॥

अर्थप्रकाशिका·—प्रकृतिबध । स्थितिवध । अनुभागबध । प्रदेशबंध । ऐसे बंध च्यार प्रकार है । तहा छह प्रकृति तो स्वभावकू कहिएहै । जैसे निवका स्वभाव कटुक है नाटाका स्वभाव मीठा है । तैसे समस्त कर्मपुद्गलप्रकृति जो अपना स्वभाव तिसकरि सहित है । ज्ञानावरणकी प्रकृति ज्ञानकू आच्छादन करनेकी है । जैसे देवताका मुखऊपरि वस्त्र होय तदि देवताकी प्रतिमा है । ऐसा सामान्य तो जाण्याजाय परंतु विशेप रग रूप मुख हस्त पाद नेत्र नासिका नही जानी जाय ऐसा ज्ञानावरणकर्म हैं सो समस्त वस्तुकूं जानने नही देवेहै ।

वहुरि दर्शनावरणकी प्रकृति है सो दर्शनकू आच्छादन करेहै । जैसे द्वारपाल माही प्रवेशही नही करनेदेयतै सामान्यहू नही जान्याजाय है । वहुरि वेदनीयकी कहा प्रकृति है सुखदुखकूं उत्पन्न करनेकी है । जैसे मधुकरि लिप्त खड्गकी धारा है । मोहनीय कर्मकी कहा प्रकृति है मद्य धत्तूर मदन कोद्रवकीज्यो मोहोत्पादनता अचेत करनना है । आयुकी कहा प्रकृति है जैसे वेडीमे खोडेमे पग जाका ऐसा पुरुष नही निकलिसकै तैसे भवकू धारणकरि आयु पूर्ण भएविना भवमेतै नही निकसनेदेहै ।

वहुरि नामकर्मकी कहा प्रकृति है चित्रकारी जो नरनारकादि नानाप्रकार [illegible] करनेरूप है । वहुरि गोत्रकर्मकी कहां प्रकृति है कुंभकारकीज्यो उच्च नीचस्थाने [illegible] है अनरायकी कहा प्रकृति है भंडारीकीज्यो देनेलेनेमे विघ्न करनाहै । [illegible]

कहिए है । वहुरि जे बधकू प्राप्त भई प्रकृति ते जितने कालताई अपने स्वभावकू नाही छांडे सो स्थिति है । जैसे ज्ञानावरणका स्वभाव ज्ञान प्रगट नही होनेदेनेरूप है सो तिम रूप स्वभावकू जवताई नही छाडे सो स्थितिवध है ।

वहुरि जेसे छेली गौ भैंसी इनके दुग्धमे तीव्र मदादिभावकरिकै रसविशेष है तैसे कर्मप्रकृतिमे तीव्र मद रस देनेकी शक्ति सो अनुभव है याहीकू अनुभागवध कहेहै । वहुरि कर्मभावरूप परिणए पुद्गलस्कध तिनका परमाणुके प्रमाणकरि निश्चय सो प्रदेश है। इनि पुद्गलनिके प्रदेशनिका जीवके प्रदेशनिकरि मिलना सो प्रदेशबंध है । ऐसे वंधके च्यार भेद है

इहा सूत्रमे विधिशब्द प्रकारवाची है तातै ए समस्त प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेश ए वधके प्रकार है। तहा प्रकृतिबध अर प्रदेशबध ये दोय तो योगनिके निमित्ततै होयहै । अर स्थितिवध अर अनुभागबध ए दोऊ कषायनिके निमित्ततै होयहै । इन योगकषायनिकी हीनअधिकतातै बधकैहू विचित्रपना है। इहा कोऊ आशका करे। पुद्गल तो जड है अचेतन हैं इनकै प्रकृत्यादिरूप अनेकप्रकार परिणमन अर रस देनेका सामर्थ्य कैसे सभवे। ताकू कहिएहै। जो अचेतन जड पुद्गलनिके तो वडा सामर्थ्य है । जैसे उदरमे प्राप्तभया भोजनरूप पुद्गल सो एकक्षणमात्रमे रूधिर मास हाड चाम वीर्य मल मूत्र केश नख वात पित्त कफादिक नाना प्रकार परिणमनकूं प्राप्त होयहै । अर क्रमतै अपना प्रभाव प्रगटकरि भोगावेहै : वेदनाकू दूरि करेहैं तथा कालातरायताई वेदनाकू वधावेहै । तथा औषधादि खायाहुवा वहुतवर्षपर्यत अपना भला बुरा रस देहे अथवा औषधभक्षण कीयाहुवा वहुतकाल रस नहीदेहै । अर कलातरमे अपना उदयकै योग्य आहार पान तथा क्षेत्र कालादिकनिका निमित्त पाय उदय आवेहै । तैसे कर्मपुद्गलनिकाभी सामर्थ्य जानना ।

वहुरि श्वानविषादिक तथा पारो हीगलू मृगाक तामेश्वरादिक बाह्यनिमित्त मिलें उदयकू प्राप्त होय है। निमित्त नही मिले तेतै शरीरमे मिल्या रहै अपना रस नही देवें तैसे कर्मपुद्गलनिकाहू स्वभाव जानना। बाह्यनिमित्त मिले रस देवै है। तथा मणि मत्र औपधादिक तथा वचनपुद्गलादिक ए नानाप्रकार सामर्थ्यरूप प्रगट देखिए है। तैसे कर्म-पुद्गलनिका सामर्थ्य जानहु । अब प्रकृतिबध मूल उत्तरके भेदते दोयप्रकार है । तिनमे मूलप्रकृति कहनेकू सूत्र कहै हैं ।

आद्यो ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः ॥ ४ ॥

अर्थप्रकाशिका—आद्य कहिए प्रथम जो प्रकृतिबध ताके ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय मोहनीय आयु नाम गोत्र अतराय ए अष्ट भेद है । कर्मप्रकृतिनिका अष्ट प्रकार स्वभाव है। प्रकृति कहो शील कहो वा स्वभाव कहो । जो कारणांतरकी अपेक्षा नही करै

ताकू स्वभाव कहिए है। जैसे अग्निका उर्ध्वगमनस्वभाव है। पवनका तिर्यग्गमनस्वभाव है। जलका अधोगमनस्वभाव है। अर स्वभाव हैं सो कोऊ स्वभाववान्की अपेक्षा करै है। यातैं ये ज्ञानावरणादिक कोनका स्वभाव है। ऐसे कहो तो ये जीव अर कर्म दोऊनिका स्वभाव है। तिनमे आत्माका स्वभाव तो ज्ञान है रागादिक स्वभाव नही परतु मोहनीयके निमित्ततै ज्ञानका ज्ञानस्वभावहू राग द्वेष मोहरूप होई विभावपरिणतिनै प्राप्त होय है। जैसे स्फटिकमणि डाकके सयोगतै विकारी हुवा दीखै तैसे विभावपरिणमनशक्तिहू ज्ञानहीकी हैं तातैं यो ज्ञान अज्ञानीपणाने प्राप्त होई रागादिरूप परिणतिनै प्राप्त होरह्या है। अर रागादिकनिका उत्पादपणा कर्मका स्वभाव हैं।

अव इहा कोऊ कहै। ऐसे तो इतरेतराश्रय दोष आया सो नही है। जातै इनके सादिसबध होइ जव इतरेतराश्रय दोष आवै। जीवकर्मकै तो कनकपाषाणमे सुवर्ण अर मलका सवधकीज्यों अनादिसबध है। याहीतै अमूर्तजीव मूर्तिकर्मकरि बधै है। अर जो या कहो जीवकर्मका अस्तित्व कैसे सिद्ध है। ताकू कहै है। अहं सुखी अह दु खी इत्यादि अनुभवतै तो आत्माका अस्तित्व स्वत सिद्ध हैं। अर एक धनवान् एक दरिद्र इत्यादि विचित्र-परिणामनतै कर्मका अस्तित्वकैहू स्वत सिद्धपना है। ज्ञानकू जो आवरण कहिए आच्छादन करे सो ज्ञानावरण है। दर्शनकूं आवरण करै सो दर्शनावरण हैं। जो वेदिए सो वेदनीय है। सुखदु खका उपात्दकपणा वेदनीयकर्मका कार्य है।

जो मोहित करे जाकरि मोहनै प्राप्त होय सो मोहनीय। जिसकरि नरकादिक-भवनिकू प्राप्त होइ सो आयु है। नारकादि नानारूप करे सो नाम है। जाकरि उच्च नीच कहाइए उच्चनीचपणाने प्राप्त करे सो गोत्र है। दातार दे याचकादिकनिके मध्य प्राप्त होइ विघ्न करे सो अतराय है। कोऊ या कहै जो हित अहितकी परीक्षाका अभाव करनेतै ज्ञानावरण अर मोह ए एकही दीखे है। ताकू कहिए है। इनके जुदापणा है वस्तुका जैसा स्वरूप है तैसा जाणे तोहू यह ऐंसेही है। इस प्रकार श्रद्धानका नही उपजनेदेना सो मोह है। अर वस्तुकू जानने नही दे सो ज्ञानावरण है।

अव कोऊ कहै। पुद्गलद्रव्य एक है तिसके आवरण करना अर सुख दु खादिककूह उपजावना ऐसे अनेककार्य करनेमे विरोध है। ताकू कहिए ए दोष नही है। जैसे एक अग्निके दग्धकरना पकावना प्रतापरूप होना प्रकाश करना इत्यादि अनेककार्य विरोधकू नही प्राप्त होय है। तैसे एक पुद्गलद्रव्यकैहू आवरण अर सुखदु खादिका निमित्तपणा नही विरोधनै प्राप्त होय है।

वहुरि कर्मके भेद है ते शद्वकी अपेक्षा तो एकतै लेय सख्यात जानने। सामान्यकरि तो कर्मवध एक है। जैसे सेना एक है। वन एक है। अर विशेषकी अपेक्षा सेनामे हस्ती

कहिए है । बहुरि जे बधकू प्राप्त भई प्रकृति ते जितने कालताई अपने स्वभावकू नाही छाडे सो स्थिति हैं । जैसे ज्ञानावरणका स्वभाव ज्ञान प्रगट नही होनेदेनेरूप है सो तिस रूप स्वभावकू जबताई नही छाडे सो स्थितिबध है ।

बहुरि जैसें छेली गौ भैंसी इनके दुग्धमे तीव्र मदादिभावकरिकै रसविशेष है तैसे कर्मप्रकृतिमे तीव्र मद रस देनेकी शक्ति सो अनुभव है याहीकू अनुभागबध कहेहै । बहुरि कर्मभावरूप परिणए पुद्गलस्कध तिनका परमाणुके प्रमाणकरि निश्चय सो प्रदेश हैं । इनि पुद्गलनिके प्रदेशनिका जीवके प्रदेशनिकरि मिलना सो प्रदेशबध है । ऐसे बंधके च्यार भेद हैं

इहा सूत्रमे विधिशब्द प्रकारवाची है तातै ए समस्त प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेश ए बधके प्रकार है । तहा प्रकृतिबध अर प्रदेशबध ये दोय तो योगनिके निमित्ततै होयहै । अर स्थितिबध अर अनुभागबध ए दोऊ कषायनिके निमित्ततैं होयहै । इन योगकषायनिकी हीनअधिकतातै बधकैहू विचित्रपना है । इहा कोऊ आशका करे । पुद्गल तो जड है अचेतन हैं इनकै प्रकृत्यादिरूप अनेकप्रकार परिणमन अर रस देनेका सामर्थ्य कैसे सभवे । ताकूं कहिएहै । जो अचेतन जड पुद्गलनिके तो बडा सामर्थ्य है । जैसे उदरमे प्राप्तभया भोजनरूप पुद्गल सो एकक्षणमात्रमे रूधिर मास हाड चाम वीर्य मल मूत्र केश नख वात पित्त कफादिक नाना प्रकार परिणमनकू प्राप्त होयहै । अर क्रमतै अपना प्रभाव प्रगटकरि भोगावेहै : वेदनाकू दूरि करेहैं तथा कालातरायताई वेदनाकूं वधावेहै । तथा औषधादि खायाहुवा बहुतवर्षपर्यंत अपना भला बुरा रस देहे अथवा औषधभक्षण कीयाहुवा बहुतकाल रस नहीदेहै । अर कलातरमे अपना उदयकै योग्य आहार पान तथा क्षेत्र कालादिकनिका निमित्त पाय उदय आवेहै । तैसे कर्मपुद्गलनिकाभी सामर्थ्य जानना ।

बहुरि श्वानविषादिक तथा पारो हीगलू मृगाक तामेश्वरादिक बाह्यनिमित्त मिलें उदयकूं प्राप्त होय है । निमित्त नही मिले तेतै शरीरमे मिल्या रहै अपना रस नही देवें तैसे कर्मपुद्गलनिकाहू स्वभाव जानना । बाह्यनिमित्त मिले रस देवै है । तथा मणि मत्र औषधादिक तथा वचनपुद्गलादिक ए नानाप्रकार सामर्थ्यरूप प्रगट देखिए हैं । तैसे कर्म-पुद्गलनिका सामर्थ्य जानहु । अब प्रकृतिबध मूल उत्तरके भेदते दोयप्रकार है । तिनमें मूलप्रकृति कहनेकू सूत्र कहै हैं ।

आद्यो ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः ॥ ४ ॥

अर्थप्रकाशिका—आद्य कहिए प्रथम जो प्रकृतिबध ताके ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय मोहनीय आयु नाम गोत्र अतराय ए अष्ट भेद है । कर्मप्रकृतिनिका अष्ट प्रकार स्वभाव है । प्रकृति कहो शील कहो वा स्वभाव कहो । जो कारणांतरकी अपेक्षा नही करै

ताकूं स्वभाव कहिए है। जैसे अग्निका उर्ध्वगमनस्वभाव है। पवनका तिर्यग्गमनस्वभाव है। जलका अधोगमनस्वभाव है। अर स्वभाव हैं सो कोऊ स्वभाववान्‌की अपेक्षा करै है। यातैं ये ज्ञानावरणादिक कोनका स्वभाव है। ऐसे कहो तो ये जीव अर कर्म दोऊनिका स्वभाव है। तिनमे आत्माका स्वभाव तो ज्ञान है रागादिक स्वभाव नही परतु मोहनीयके निमित्ततैं ज्ञानका ज्ञानस्वभावहू राग द्वेष मोहरूप होई विभावपरिणतिनै प्राप्त होय है। जैसे स्फटिकमणि डाकके सयोगतैं विकारी हुवा दीखै तैसे विभावपरिणमनशक्तिहू ज्ञानहीकी है तातैं यो ज्ञान अज्ञानीपणाने प्राप्त होई रागादिरूप परिणतिनै प्राप्त होरह्या है। अर रागादिकनिका उत्पादपणा कर्मका स्वभाव हैं।

अब इहा कोऊ कहै। ऐसे तो इतरेतराश्रय दोष आया सो नही है। जातैं इनके सादिसबध होइ जब इतरेतराश्रय दोष आवै। जीवकर्मकै तो कनकपाषाणमे सुवर्ण अर मलका सबधकीज्यो अनादिसबध है। याहीतैं अमूर्तजीव मूर्तिकर्मकरि बधै हैं। अर जो या कहो जीवकर्मका अस्तित्व कैसे सिद्ध है। ताकू कहै है। अह सुखी अह दु खी इत्यादि अनुभवते तो आत्माका अस्तित्व स्वत सिद्ध है। अर एक धनवान् एक दरिद्र इत्यादि विचित्रपरिणामनतैं कर्मका अस्तित्वकैंहू स्वत सिद्धपना है। ज्ञानकू जो आवरण कहिए आच्छादन करे सो ज्ञानावरण है। दर्शनकू आवरण करै सो दर्शनावरण हैं। जो वेदिए सो वेदनीय है। सुखसु खका उपात्दकपणा वेदनीयकर्मका कार्य है।

जो मोहित करे जाकरि मोहनै प्राप्त होय सो मोहनीय। जिसकरि नरकादिकभवनिकू प्राप्त होइ सो आयु है। नारकादि नानारूप करे सो नाम है। जाकरि उच्च नीच कहाइए उच्चनीचपणाने प्राप्त करे सो गोत्र है। दातार दे याचकादिकनिके मध्य प्राप्त होइ विघ्न करे सो अतराय है। कोऊ या कहै जो हित अहितकी परीक्षाका अभाव करनेतैं ज्ञानावरण अर मोह ए एकही दीखे है। ताकू कहिए है। इनके जुदापणा है वस्तुका जैसा स्वरूप है तैसा जाणे तोहू यह ऐसेही है। इस प्रकार श्रद्धानका नही उपजनेदेना सो मोह हैं। अर वस्तुकू जानने नही दे सो ज्ञानावरण है।

अब कोऊ कहै। पुद्‌गलद्रव्य एक है तिसके आवरण करना अर सुख दु खादिककूंहू उपजावना ऐसे अनेककार्य करनेमे विरोध है। ताकू कहिए ए दोष नही है। जैसे एक अग्निके दग्धकरना पकावना प्रतापरूप होना प्रकाश करना इत्यादि अनेककार्य विरोधकू नही प्राप्त होय है। तैसे एक पुद्‌गलद्रव्यकैंहू आवरण अर सुखदु खादिका निमित्तपणा नही विरोधनैं प्राप्त होय है।

बहुरि कर्मके भेद है ते शब्दकी अपेक्षा तो एकतैं लेय सख्यात जानने। सामान्यकरि तो कर्मबध एक है। जैसे सेना एक है। वन एक है। अर विशेषकी अपेक्षा सेनामे हस्ती

घोडा स्वामी सेवकादि अनेकभेद है। वनमे अशोक वकुल तिलकादि अनेक भेद है। तैसेही विशेषकी अपेक्षातै पुण्यपापके भेदतै दोयप्रकार है। अनादिसात। अनादिअनत। सादिसान। ऐहै तीन भेद है। अथवा भुकाजार। अल्पतर। अवस्थित। ऐसेहू तीन भेद है। प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशतै च्यार प्रकार हैं। द्रव्य क्षेत्र काल भव भाव रूप निमित्तके भेदतै पच प्रकार है। षट्जीवनिकायके भेदतै छह प्रकार है। राग द्वेप क्रोध मान माया लोभ रूप हेतुके भेद तैसप्त प्रकार है। ज्ञानावरणादि विकल्पतै अप्टप्रकार है। ऐसे सख्येयभेद है। अर अध्यवसाय स्थानके भेदतै असख्येय भेदरूप है।

पुद्गलपरमाणुरूप स्कधके भेदतै अनतभेदरूप है। तथा अविभागपरिज्छेदनिकी अपेक्षा अनतभेद है। कर्म दोयप्रकार है। तिनमे ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अतराय ए च्यार कर्म है ते जीवका ज्ञान दर्शन वीर्य सम्यक्त्व चारित्र दान लाभादिगुणनिकू घातै हैं नष्ट करे है तातै घातिसज्ञाकू धारै है। अर आयु नाम गोत्र वेदनीय ए च्यार कर्म ज्ञानावरणादिककीज्यों जीवका गुणनिका घात नही करे हैं तातै अघातिसज्ञाकू धारै है।

अव इन अष्टकर्मनके कहनेका अनुक्रमकी उत्पत्तिकू कहे है। तहा ज्ञान है सो आत्माके अधिगमका निमित्त है तातै प्रधान है। तातै आदिमे ज्ञानावरण कह्या। अर दर्शन अनाकारोपयोग है तातै अल्प है अप्रगटकू ग्रहण करे है तातै पाछै कह्या परंतु अर्थके ग्रहण करनेकू कारण तातै अन्यतै उत्कृष्ट है अधिक है। वहुरि वेदना ज्ञानदर्शनतै अव्यभिचाररूप है। ज्ञानदर्शनकू होतै सुखदु खकू वेदए है अनुभवकरिए हैं। ज्ञानदर्शनविना घटपटादिकनिकै वेदना नही होइ है। यद्यपि वेदतीयकर्म अघातिनिमे है। तथापि मोहनीयके वलतै जीवकू घाते है। तातै घातिनिकै मध्य मोहनीयकर्मकी आदिमे वेदनीयकू कह्या है। जातै मोहनीय-कर्मका भेद जो रति अरति प्रकृतिका उदयका वलकरि जीवके सुखदु ख रूप साता असाताका निमित्त इद्रियविषयनिके अनुभव करि जीवकू घातै है। तातै मोहनीयकी आदिमे वेद-नीय कह्या।

वहुरि आयु कह्या आयुका वलकरिही नामकर्मका कार्यभूत जो चतुर्गतिरूप भव ताकी अवस्थिति है तातै आयुकर्मके पीछै नामकर्म कह्या। वहुरि गोत्र कह्या सो नामकर्मतै प्राप्तभया जो गतिशरीरादिक ताकै आश्रयही ऊचा नीचा कहावै है तातै नामके पाछै गोत्र कह्या वहुरि अतराय कह्या सो यद्यपि अंतरायकर्म घातिया है तथापि अघातियाज्यो समस्त जीवका गुण घातिवेकी समर्थ नही तातै अतमे कह्या है। अर नाम गोत्र ए दोऊ कर्म वेदनीयका निमित्तपणाकरि अघातिनिकै पाछै कह्या। ऐसे इनका अनुक्रमका प्रयोजन जानना। ऐसै मूलप्रकृतिवध अप्टप्रकार कह्यो। अव उत्तरप्रकृतिवधका भेंद कहे है।

पंचनवद्व्यष्टाविंशतिचतुर्द्विचत्वारिंशद्द्विपंचभेदा यथाक्रमम् ॥ ५ ॥

अर्थप्रकाशिका—मूलप्रकृति अष्ट कही तिनमे ज्ञानावरणके पच भेद है। दर्शनानावरणके नव भेद है। वेदनीयके दोय भेद मोहनीयके अठाईस भेद है। आयुके च्यारि भेद है। नामके बीयालीस भेद है। गोत्रके दोय भेद है। अतरायके पाच भेद है। ऐसे भेदरूप उत्तरप्रकृतिबध्र कह्या। अव ज्ञानावरणका पाच भेद कहै है।

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानाम् ॥ ६ ॥

अर्थप्रकाशिका—मतिज्ञानावरण श्रुतज्ञानावरण अवधिज्ञानावरण मन पर्ययज्ञानावरण केवलज्ञानावरण। ऐसे ज्ञानावरणके पाच भेद जानना। इहा प्रश्न। जो अभव्यकें मन.पर्ययज्ञान अर केवलज्ञानके प्राप्ति होनेका सामर्थ्य है कि नाही है। जो हे। तो अभव्यपणाकी उत्पत्ति नही वणिसकै है। अर जो नही है तो वाकै दोऊ ज्ञानका आवरण कहना निरर्थक है। ताको उत्तर कहै है। द्रव्यार्थिकनयकरिकें अभव्यकेंहू दोऊ ज्ञानकी शक्ति विद्यमान है। यातै अभव्यकै मन पर्ययज्ञान अर केवलज्ञान दोऊ है। अर पर्यायार्थिकनयकरि अभव्यकै दोऊ ज्ञान नही है। जातै कोऊ कालमे भी इनकी व्यक्ति नही होइ शक्तिमात्रही है याहीतै सम्यग्दर्शन चारित्रमे अभव्यकै नही होय है। जैसे सुवर्णकी खानिमैंहू सुवर्ण है। परतु कोऊ कालमें सुवर्णपाषाणकू तो वाह्य अग्न्यादिक परिपूर्णसामग्री मिलते सुवर्ण भिन्न हो जाय किट्टिका भिन्न होजाय। अर अधकपाषाणकू वाह्यसामग्रीमिलतैंहू सुवर्ण अर किट्टिका भिन्न होयही नही तैसे भव्य अभव्यपणा जानना। ऐसे पचप्रकार ज्ञानावरण कह्या याका उदयकरि जीवकै जाननेकी सामर्थ्यका अभाव होय है। स्मृति जो देखि सुणी अनुभवी वस्तु ताका विस्मरण होय है। धर्मश्रवणमै उत्सुकताका अभाव होय है। ज्ञानका तिरस्कारजनित अनेक प्रकार दु खकू अनुभवै है। ऐसे ज्ञानावरणके भेद कहे अब दर्शनावरणके नव भेद कहै है।

चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां निद्रानिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाप्रचलास्त्यानगृद्धश्च ॥७॥

अर्थप्रकाशिका—चक्षुर्दर्शनावरण अचक्षुर्दर्शनावरण अवधिदर्शनावरण केवलदर्शनावरण निद्रा निद्रानिद्रा प्रचला प्रचलाप्रचला स्त्यानगृद्धि। ऐसै दर्शनावरणके नव भेद है। जाके उदयतै आत्मा चक्षु आदि इद्रियरहित एकेद्रिय वा विकलेद्रियपणानै प्राप्त होइ तथा पचेद्रियपणोभी होइ तोहू इद्रियनिमैं अवलोकनसामर्थ्यं नहीहोइ सो चक्षुअचक्षुर्दर्शनावरण है। नेत्रद्वारे वस्तुका सामान्यग्रहणकू नही होने दे सो अचक्षुर्दर्शनावरण है। चक्षुविना अन्य इद्रियद्वारै अर्थका सामान्यगहणकू नही होनेदे सो अचक्षुर्दर्शनावरण है। अवधिदर्शनद्वारे वस्तुका सामान्यग्रहणका निरोध करै सो अवधिदर्शनावरण है।

केवलदर्शनद्वारैकरि समस्तदर्शन नही होने दे सो केवलदर्शनावरण है। मद खेद ग्लानि दूरि करनेकू शयनकरना सो निद्रा है तथा निद्रादर्शनावरण कर्मका उदयकरि गमन-करतोहू खडो रहिजाय अर बैठिजाय पडिजाय है। वहुरि जो निद्राकी ऊपराऊपरि प्रवृत्ति होइ सो निद्रानिद्रा है। जातै निद्रानिद्रादर्शनावरणकर्मका उदयकरि जीव नेत्रनिकू उघाडि नही सके हैं।

वहुरि जो शोक खेद मदादिकतै उपजि निद्रा तिसकरि पाचो इद्रिशनिका व्यापारका अभाव हो जाय अतरगमे प्रीतिका बलकू कारण बैठ्याहुवाकैहू नेत्रनिमे शरीरमे विकारकू जणावै सो प्रचल है। प्रचलादर्शनावरणके उदयकरि जीव है सो नेत्रनिकू किंचित् उघाडीकरि शयन करे हे। अर सूताहू किंचित् जाने है अर वारवार मदमद सोवै है। अर वठ्याहूवाहू घूमैं है नेत्र गात्र चलायमान रहे है। देखतोसतोहू नही देखैं हैं।

वहुरि प्रचलाप्रचलादर्शनावरणका उदयकरि लाल वहै मुखते लाल श्रवे है। अग उपांग चलायमान होय है। वहुरि स्त्यानगृद्धि नाम दर्शनावरणका उदयकरि उठ्योहुवोभी सोवे निद्रामे वीर्यविशेषके प्रगट होनेतै बहुत घोररौद्रकर्म करै। निद्रामे वहुनकर्म करे। ऐसे नवप्रकार दर्शनावरण कह्या। अब दोय प्रकार वेदनीय कर्मकू कहे हे।

सदसद्वेद्ये ॥ ८ ॥

अर्थप्रकाशिका–सात असाता ऐसे दोयप्रकार वेदनीयकर्म हैं। जाके उदयतै देवादिक-गतिविषै उपकारक द्रव्यनिका सबधकरि प्राणीनिके शारीरमानसिक अनेकप्रकार सुखरूप परिणाम होई सो सातावेदनाय है। अर जाके उदयतै नरकादिकगतिविषै जन्म जरा मरण प्रियवियोग अप्रियसयोग रोग वध बधनादिकरि उपज्या शरीरसबधी मनसबधी दुखकू प्राप्त-होइ सो असातवेदनीय है। जातै प्रशस्तवेदन सो सातावेदनीय है सो रतिमोहनीय कर्मका उदयके वलकरि जीवकू सुखका कारण जे इद्रियनिके विषय तिनका अनुभव करावेहै। अर अप्रशस्त वेदन सो असातावेदनीय हैं। सो अरतिमोहनीय कर्मका उदयके बलकरि जीवकै दुखका कारण इद्रियनिके विषय तिनका अनुभव करावेहै। अव अठाईस प्रकार मोहनियकू कहेहै।

दर्शनचारित्रमोहनीयाकषायकषायवेदनीयाख्यास्त्रिद्विनवषोडशभेदाः सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभवान्यकषाकषायौ हास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सास्त्रीपुंनपुंसकवेदा अनन्तानुवन्ध्यप्रत्याख्यानसंज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोधमानमायालोभाः ॥ ९ ॥

अर्थप्रका–दर्शनमोहनीय चारित्रमोहनीय अकषायवेदनीय कषायवेदनीय है नाम जिनके ऐसे तीन दोय नव षोडश रूप भेदे है। तिनमे दर्शनमोहनीय तीन भेदरूप है।

चारित्रमोहनीय दोयभेदरूप है। अकषायवेदनीय नवप्रकार है। कषायवेदनीय षोडशप्रकार है। तिनमे। सम्यक्त्व। मिथ्यात्व। सम्यग्मिथ्यात्व। ऐसे दर्शनमोहनीय तीन प्रकार हे। अर अकषायवेदनीय। कषायवेदनीय। ऐसे दोयप्रकार चारित्रमोहनीय है। तिनमे हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा स्त्रीवेद पुरुषवेद नपुसकवेद ऐसे अकाषायवेदनीय नवप्रकार है। अर अनतानुबन्धी। अप्रत्याख्यान। प्रत्याख्यान। सज्वलन। एकएकके क्रोध मान माया लोभ भेदनिकरि षोडषप्रकार कषायवेदनीय हैं। ऐसे अठाईस प्रकार मोहनीय कह्या।

तहा दर्शनमोहनीय है सो बधप्रति तो एक मिथ्यात्वरूपही है। अर उदयकूं अर सत्वकू आश्रयकरि मिथ्यात्व। सम्यक्त्व। मिश्र। ऐसे तीन प्रकार है। तहां जाके उदकरि सर्वज्ञकरि कह्या मार्गतै पराङ्मुखपणा अर तत्वार्थके श्रद्धानमे निरूत्सुकपणा उद्यमरहितपणा अर हितअहितकी परीक्षारहितपणा सो मिथ्यात्व है। वहुरि जो शुभपरिणामके प्रभावकरि इस मिथ्यात्वका रस रूकिजाय तदि शक्तिकें घटनेतै असपर्थ हुवा आत्माका श्रद्धानकू रोकनेसमर्थ नही सम्यक्त्वकू विगाडि नही सकै अर सम्यक्त्वकू मलसहित करे सो सम्यक्त्व है। वहुरि जाके उदयतै तत्वनिका श्रद्धान अर अश्रद्धान दोऊरूप मिले माव होई सो सम्यग्मिथ्यात्व है वहुरि चारित्रमोहनीयके अकषायवेदनीय कषायवेदनीय ऐसे दोय भेद है। इहा अकषायशद्वकरि कषायका अभाव नही जानना। क्यौकी अकारका ईषत् अर्थ है। जैसे याभेड अलोमिका है तो अलोमिका कहनेकरि काछिवाकीज्यो रोमका अभावहीनही नही जानना छेदनेयोग्य रोम वाकै नही तातै अलोमिका कहीहै। तथा जैसे या कन्या अनुदरा है तो उदररहित तो कोऊ हैं नही परतु गर्भधारणादियोग्य स्थूल उदरके अभावतै अनुदरा कही याका अर्थ कृशोदरी है। तैसे हास्यादिक नव कषायनिकू अकषाय कहिए है। वा नो अव्ययकाभी ईषत् अर्थ है तातै नोकषाय कहनेकरिहू ईषत्कषाय जानना। इनके ईषत्कसायपना कैसे सो कहेहै जैसं श्वान जो कूतरा सो स्वामीका सहायका अवलवनतै वहुत वलवान होइ प्राणीनिके मारनेमे वर्तैहै अर स्वामीका सहायका अवलवन नहीहोइ पीछा फिरि आवै। तैसे क्रोधादि कषायका अवलवनतै हास्यादिकनिकी प्रवृत्ति होइ अर क्रोधादिकषायकी प्रवृत्तिका अभावतै हास्यादिक नही प्रवर्तै तातै इनकू अकषाय कहे। जाके उदयते हास्य प्रगट होइ सो हास्य हैं। अर जाके उदयतै देशादिकनिमैं उत्सुकपणा आसक्तपणा होजाय सो रति हैं। अर जाके उदयतै देशादिकनिमैं अनुत्सुकपणा सो अरति है। जाके उदयतै सोच प्रगट होई सो शोक है। जाके उदयतै उद्वेग प्रगट होइ सो भय है। सो सप्तप्रकार है। समस्तही भय सप्तप्रकारमे गर्भित है। जाके उदयतै अपना दोषका आच्छादन करना अर अन्यका कुल शीलादिकनिमे दोष प्रगटकरि अवज्ञा करना तिरस्कारादि करना ग्लानि करना सो जुगुप्सा है।

वहुरि जाके उदयतै मार्दवका अभाव अर मायाचारादिककी अधिकता कामका प्रवेग नेत्रविभ्रमादिसुखके अर्थि पुरूषसे रमनेकी इच्छाकू प्राप्त होइ सो स्त्रीवेद है। वहुरि जाके उदयते नि कपटपणा निश्चलपणा उदारपणा स्त्रीनिमे रमनेकी इच्छारूप परिणाम सो पुरुषवेद है वहुरि जाके उदयते कामकी अधिक्यता भडनशीलता स्त्रीपुरूप दोऊनिमे रमनेकी इच्छा सो नपुसकवेद है। अर जो योनि लिंग कुचादिक शरीरका आकार है। सो नामकर्मकरि रच्या है वेदजनित नही है। ऐसे नवप्रकार अकषाय वेदनी कही।

अव कषायवेदनीय षोडशप्रकार ऐसे जानना। तहां क्रोध मान माया लोभ ऐसे च्यारप्रकार कषाय है। तिनमे स्वरूपके घात करनेके परिणाम तथा परका उपकार करनेका अभाव तथा क्रूरपरिणाम सो क्रोध है। सो पाषाणमे लीख पृथ्वीमे लीख वालुरेतमे लीख जलमे लीख इनके समान च्यार है। वहुरि जाति कुल वल ऐश्वर्य विद्या रूप तप ज्ञान इत्यादिकका मदजनित उद्धततामे परतै नम्रीभूत नही होनेके परिणाम सो मान है। सो पाषाणस्तभसमान अर अस्थि कहिए हाडसमान अर काष्ठसमान अर लतातुल्य च्यार प्रकार है। परके ठिगनेके परिणामकरि परिणाम निका कुटिलपणा सो माया है। सो वाणकी जड मीढाका सीग गोमूत्रिका अर अवलेखनी इतने तुल्य च्यार प्रकार है।

वहुरि जो अपना उपकारक द्रव्यमे अभिलाषा सो लोभ है। सो कृमिराग कज्जल कर्दम हरिद्राका रगतुल्य च्यार प्रकार है। ऐसे क्रोध मान माया लोभ इनकी च्यार प्रकार अवस्था है। अनंतानुबधी। अप्रत्याख्यानावरण। प्रत्याख्यानावरण। सज्वलन। ऐसे च्यार अनतससारका कारणपणातै मिथ्यात्वकू तो अनंतनामकरि कह्या है। मिथ्यात्वके अनुबंधन करनेवाला अनतानुबधी क्रोध मान माया लोभ है सो तो सम्यत्वकू नही होने दे है। वहुरि जाके उदयते अ कहिए किंचितहू प्रत्याख्यान जो देशरूपत्याग नही हो सके सो अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ हैं।

वहुरि जाके उदयते समस्त महाव्रतरूप त्याग नहीं हो सके सो प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ है। वहुरि जो सयमकी साथिहू प्रज्वलीत रहे आत्माकू शुद्धोपयोग-रूप नही होने दे सो सज्वलन क्रोध मान माया लोभ है। ऐसे षोडशप्रकार कषायवेदनीय कह्या। ऐसे अठाईस प्रकार मोहनीय कर्मके भेद कहै। अब च्यार प्रकार आयुकू कहे हैं।

नारकतैर्यग्योनमानुषदैवानि ॥ १० ॥

अर्थप्रकाशिका—नारक तैर्यग्योन मानुष दैव ए च्यार आयुके भेद है। जाका सद्भा-वते आत्माका जीवन होय अर अभावते मरण होई यातै जो भवका धारणका कारण सो

आयु है। इहा कोऊ कहै। जीवनका कारण तो अन्नपानादिक है। अन्नपानादिकका लाभतै जीवन देखिए है अलाभतै मरण देखिए है। ताकूं कहे है। अन्नपानादिक तो बाह्यकारण है। मूल उपादानकारण आयुकर्म है। जैसे घटके होनेविषै मूलकारण तो मृत्तिका है। अर बाह्यनिमित्तकारण चाक कुंभकार दंडादिक हैं। तैसे भवधारणका मूलकारण आयुकर्म है आयुका उपकारक अन्नादिक है। जाका आयु नष्ट हो जाय ताकै अन्नादिक निमित्तकी निकटता होतैंहू मरण देखिए है। अर देव नारकीनिकै अन्नादिकका बाह्य आहारविनाहू जीवन आयुका निमित्ततै होय है। जाके उदयतै तीव्र शीतोष्ण वेदना करनेवाले नरकमें दीर्घकाल जीवनेरूप भवधारण होइ सो नरकायु हैं।

बहुरि जाके उदयते क्षुधा तृषा शीत उष्णादिकृत प्रचुर उपद्रवसहित तिर्यग्योनिमे वसना होइ सो तिर्यगायु है। बहुरि जाके उदयते शरीर मन.संबधी सुखदु.खकरि व्याप्त मनुष्यपर्यायमे जन्म होइ सो मनुष्यआयु है। बहुरि जाके उदयते शारीर मानसिक सुखादिसहित देवनिमे उत्पत्ति होइ सो देवायु है। कदाचित् प्रियका वियोग महर्द्धिक देवनिका अवलोकन मृत्युका चिन्ह जो माला भूषणादिकका मलिनपणाका दर्शन आज्ञाकी हानि इत्यादिककरि मानसिक दु.खहू प्रगट होय है। ऐसे च्यार प्रकार आयुर्कमकू कह्या। अब नामकर्मकी बीयालीस प्रकृतिनिकू कहै हैं।

गतिजातिशरीराङ्गोपाङ्गनिर्माणबन्धनसङ्घातसंस्थानसंहननस्पर्शरसगन्धवर्णानुपूर्व्यागुरुलघूपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वासविहायोगतयः प्रत्येकशरीरत्रससुभगसुस्वरशुभसूक्ष्मपर्याप्तिस्थिरादेययशःकीर्त्तिसेतराणि तीर्थंकरत्वं च ॥ ११ ॥

अर्थप्रकाशिका—गति। जाति। शरीर। अगोपांग। निर्माण। बंधन। संघात। संस्थान। संहनन। स्पर्श। रस। गंध। वर्ण। आनुपूर्व्या। अगुरुलघु। उपघात। परघात। आतप। उद्योत। उच्छ्वास। विहायोगति। इस प्रकार इकईस अर प्रत्येकशरीर। त्रस। सुभग। सुस्वर। शुभ। सूक्ष्म पर्याप्ति। स्थिर। आदेय। यशःकीर्ति। ए दश अर इनके प्रतिपक्षी दश अर तीर्थंकरत्व ऐसे बीयालीस भेदरूप नामकर्म है। तथा याहीके तिराणवै भेद है सो कहे है। जाके उदयतै आत्मा भवांतरप्रति सन्मुख होइ गमनकू प्राप्तहोइ सो गति है सो नरकगति। तिर्यंगति। मनुष्यगति। देवगति। ऐसे च्यार प्रकार है। जाके उदयते आत्माके नारकभव होइ सो नरकगति नाम है। ऐसेही अन्य भी जाननी।

बहुरि तिन नारकादिगतिमे व्यभिचारनें नही सदृशपणाकरि एकरूप कीया सो जाति है सो पंचप्रकार है। एकेन्द्रियजातिनाम। द्वीन्द्रियजातिनाम। त्रीन्द्रियजातिनाम। चतुरिंद्रियजातिनाम। पंचेंद्रियजातिनाम जाका उदयतै आत्मा एकेंद्रियादिक होवै सो जातिनाम

है। वहुरि जाके उदयतै आत्माके शरीररचना होइ सो शरीरनाम कर्म है जाके ऊदयतै औदारिकशरीरकी रचना होइ सो औदारिकशरीरनाम है। जाके उदयतै वैक्रियिकशरीरकी रचना होइ सो वैक्रियिकशरीरनाम जानना। ऐसेही आहारकशरीर तैजसशरीर कार्मणशरीरनाम है। ऐसे पच शरीर कहे।

वहुरि जाके उदयतै अगउपागनिका भेद प्रगट होइ सो अगोपागनाम हैं। तहां शीर पीठ हृदय वाहु उदर नलक हस्त पाद ए तो अंग है अर इनके भेद जे ललाट नासिकादिक उपाग है सो अगोपागनाम तीन प्रकार हैं। औदारिकशरीरागोपागनाम। वैक्रियिकशरीरागोपागनाम। आहारकशरीरांगोपागनाम। जाके उदयतै अगउपांगनिकी उत्पत्ति होइ सो निर्माण है। ताके दोय भेद। एक स्थाननिर्माण। एक प्रमाणनिर्माण। सो तिस जातिनामकर्मका उदयकी अपेक्षा नेत्रादिकनिका जहां योग्य तहा स्थानकैमाही तितना प्रमाण रचना रचै सो निर्माण है।

वहुरि शरिरनाम कर्मके उदयके बशतै ग्रहणकीए जे अहारवर्गणारूप पुद्गलस्कध तिनका प्रदेशनिका जातै मिलना होइ सो बधननाम है। सो औदारिक। वैक्रियिक। आहारक। तैजस। कार्मण। भेदकरि पचप्रकार है। वहुरि जाके उदयतै औदारिकादिशरीरनिका छिद्ररहित अन्योन्यप्रवेशानुप्रवेश करि एकपणा होइ सो सघातनाम है। सो औदारिकसघातनाम। वैक्रियिकसघातनाम। तैजससघातनाम। आहारसघातनाम। कार्मणसघातनाम। ऐसे पचप्रकार सघातनाम है।

जाके उदयतै शरीरकी आकृति उत्पन्न होइ सो सस्थाननाम है। सो छहप्रकार है। समचतुरस्त्रसस्थाननाम। न्यगोधपरिमडलसस्थान। स्वातिसंस्थाननाम। कुब्जकसस्थाननाम। वामनसस्थाननाम। हुडकसस्थाननाम। तिनमे जो ऊपरि नीचे मध्यमे समविभागकरि शरीरके अवयवकी रचना स्थापन होइ जैसे प्रवीणशिल्पीकरिरच्या समवस्थित चक्रकीज्यों अवस्थान करनेवाला समचतुस्त्रश्रसस्थाननाम है। वहुरि नाभिकै ऊपरि तो वहुत देहके पुद्गलनिका स्थापन होय नीचे अल्प सचयका उत्पन्न करनेवाला न्यग्रोधपरिमडलसस्थाननाम है सो न्यग्रोधनाम वडके वृक्षके है तिसकी समानतातै न्यग्रोधपरिमडल कह्या वहुरि स्वाति जो वंवी तिसकै आकार नीचे भारी उपरि हलका शरीर करनेवाला स्वातिसस्थाननाम है। वहुरि पीठके प्रदेशनिमे वहुतपुद्गलनिका समूह जाकै होइ ऐसा लक्षणका रचनेवला कुब्जकसस्थाननाम है।

वहुरि सर्व अगोपागनिकी ह्रस्व रचनाका करनेवाला वामनसस्थान है। वहुरि सर्व अगोपांगनिकी ऊची नीची घटती बधती विषमरचना करनेवाला हुडकसस्थान नाम है। वहुरि जाके

उदयतें हाडनिके बंधानमें विशेष होय सो संहनननाम है। सो छहप्रकार है। वज्रर्षभनाराचसंहनन-नाम वज्रनाराचसंहनननाम। नाराचसंहनननाम। अर्द्धनाराचसंहनननाम। कीलिकासंहनन-नाम असंप्राप्तासृपाटिकासंहनननाम। जो वेढिए बांधिए तिनानिकरि हाडनिकूं तिनकों ऋषभ कहिए है। अर नाराचनाम कीलिनिका है जिनतें कीलित करिए। अर संहनननाम हाडनिके समूहका है। तहां जाके उदयतें ऋषभ जो वेष्टन अर नाराच जो कील अर संहनन जो हाड-निके समूह ए तीनों वज्रवत् अभेद्य होय सो वज्रर्षभनाराचसंहनन है बहुरि जाके उदयतें नाराच अर संहनन दोय तो वज्रमय होय अर ऋषभ सामान्य होइ सो वज्रनाराचसंहनन है।

बहुरि जाके उदयतें वज्रविशेषरहित कीलित हाडनिकी संधि होइ सो नाराचसंहनन-नाम है। बहुरि जाके उदयतें हाडनिकी संधी अर्द्धकीलित होइ सो अर्द्धनाराचसंहनननाम है। बहुरि जाके उदयतें हाड कीलित होइ सो कीलितसंहनननाम है। बहुरि जाके उदयतें हाडनिकी संधि परस्पर प्राप्त नहीं होई बाहिर नसां स्नायु मांसकरि बंधी होई सो असृपाटिकासंहनननाम है। ऐसें संहनन कहे।

अब इहां ऐसा विशेष जानना। जो आठमांस्वर्गपर्यंत तौ छहूही संहननवाले मरणकरि उपजै है। अर नवमा दशमा ग्यारमा बारमा स्वर्गलोकमे असृपाटिकविना पंचसंहननवालेका गमन है। अर तेरमा चौदमा पंद्रमा सोलमा स्वर्गमें असृपाटिक अर कीलकविना च्यार संहननवालेहीका गमन है। अर नवग्रैवेयकनिमें नाराच अर वज्रऋषभनाराच इन तीन संहननवालेहीका गमन है। अर नवअनुदिशविमाननिमें वज्रनाराच अर वज्रर्षभनाराच धारकनिहीका गमन है। अर पंचअनुत्तर विमाननिमें वज्रर्षभनाराचसंहननका धारकहीका गमन है। बहुरि मोक्षहू अर क्षपकश्रेणीहू वज्रर्षभनाराचसंहननके धारकहीकै होय है। बहुरि उपशमश्रेणी उत्तम तीन संहननवालेहीकै होय है।

जिस कर्मका उदयतै शरीरमे स्पर्श प्रगट होई सो स्पर्श नाम कर्म अष्टप्रकार है। कर्कशनाम। मृदुनाम। गुरूनाम। लघुनाम। स्निग्धनाम। रूक्षनाम। शीतनाम। उष्णनाम। ऐसे जानना। वहुरि जाके उदयतै देहमे रस प्रगट होइ सो रसनामकर्म पचप्रकार है। तिक्तनाम। कटुकनाम। कषायानाम। आम्लनाम। मधुरनाम। ऐसे पचभेद है। वहुरि जाके उदयतै देहमे गध प्रगट होई सो गधनाम दोय प्रकार है। सुगध। दुर्गंध। वहुरि जाके उदयतै वर्ण प्रगट होइ सो वर्णनाम पचप्रकार है। कृष्णवर्णनाम। नीलवर्णनाम। रक्तवर्णनाम हरिद्रावर्णनाम। शुक्लवर्णनाम। ऐसे पच भेदरूप है।

इहा कोऊ कहे। ए कहै स्पर्श रस गध वर्ण अचेतनमे कर्मका उदयविना कैसेहै। ताकू कहिए हैं। ते पुद्गलके स्वभावतैंही परिणत है। पुद्गलनिमे तो स्वयमेव स्पर्शरसादिकका परिणमन हैही। चेतनासहित शरीरके कर्मके उदयकी अपेक्षातै होइ है। वहुरि जाके उदयतै पूर्वले शरीरके आकारविनाश नही होइ सो आनुपूर्व्य है। ताके च्यार भेद हैं। नरकगति प्रायोग्यानुपूर्व्यनाम तिर्यंगतिप्रायोग्यानुपूर्व्यानाम। मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्व्यनाम। देवगतिप्रायोग्यानुपूर्व्यनाम। जिस कालमे मनुष्य वा तिर्यंचका आयु पूर्ण होइ तदि पूर्वके शरीरतै वियुक्त होइ अर नरकके भवप्रति सन्मुख होइ तीकै मार्गमे आत्माके प्रदेशनिका आकार पूर्वले शरीरके आकारतै नही विगडै सो नरकगतिप्रायोग्यानुपूयर्व है। सो याका उदय विग्रहगतिहीमे है। ऐसेही अन्य तीन आनुपूर्व्य हैं। याका उदय काल विग्रहगतिमे जघन्य एक समयका है उत्कृष्ट तीन समयका है विग्रहगतिविना अन्यकालमे याका उदय नही है।

वहुरि जाकै उदयतै लोहका पिंडज्यों भार्यापणातै नीचे नही पडै हलकापणातै आकका फूल फद्याज्यो उर्ध्व नही गमनकरै सो अगुरुलघुनाम है। यह कर्मकी प्रकृति शरीरसवधी जाननी। अर जो अलघुगुरुत्व सर्वद्रव्यनिमें गुण है सो स्वाभाविक है। बहुरि जाके उदयतै अपने शरीरके अदयव वडा सींग लवा स्तन वडाभारी उदरादिक नितै अपनाही घात होय सो उपघात नाम है। अर जाके उदयतै तीक्ष्ण श्रृंग नख सर्प्पकै डाढ इत्यादिक परके घात करनेंवाला अंग होइ सो परघातनाम है।

वहुरि जाके उदयतै आतापकारी शरीर होइ सो आतापनाम है। याका उदय सूर्यके विमानकै वादरपर्याप्तजीव पृथ्वीकायिक मणी है तिनकेही है अन्यके नही। वहुरि जाके उदय उद्योतरूप शरीर होइ सो उद्योतनाम है। याका उदय चद्रके विवकी मणीनिमे आगानाम चांडद्रीजीव इत्यादिकर्म होइ है। वहुरि जाके उदयतै उछ्वास होइ सो उछ्वासनामकर्म है।

वहुरि जाके उदयतै आकाशविषै गमन होइ सो विहायोगतिनाम दोय प्रकार है। तहा जो प्रशस्तहस्ती वृषभकीज्यो मदरगमनका कारण प्रशस्तविहायोगति है। अर ऊट

गर्भभादिकज्यो असुदरगमनका कारण अप्रशस्तविहायोगति है। अर सिद्ध होते जीवनिके अर पुद्गलनिकै कर्मका उदयविना स्वाभाविकी गति हैं। इहाँ ऐसा नही जानना जो आकाशमे गति तो पक्षीनिकै है मनुष्यादिकनिकै नही होयगी समस्त जीवपुद्गलनिका आकाशहीमे गमन है।

वहुरि जाका उदयतें एक आत्माके भोगनेका कारण प्रत्येक एक शरीर होइ सो प्रत्येकशरीरनाम हैं। अर जाके उदयतै बहुत आत्माके उपभोगका कारण साधारण एक शरीर होइ सो साधारणशरीरनाम है। जिनके आहारादि च्यारि पर्याप्ति जन्म मरण स्वास उछ्वास उपकार उपघात अनतजीवनिकै समानकालमे होइ सो साधारणजीव है।

भावार्थ। जो एकदेहमे अनतजीव एकक्षेत्रमै अवगाहनरूप होइ तिष्ठै ते साधारण-शरीरनामकर्मका उदयतें साधारणजीव हैं। जिस कालमे आहारादि पर्याप्ति जन्ममरण श्वासोछ्वास एक ग्रहण करे तिस काल अनतजीवनिकै ग्रहण होय है। तातै ते साधारण-जीव कहावे है। साधारणजीव निगोदिया वनस्पतिकायमे है अन्य स्थावरनिमें नही।

जाकें उदयतै द्वीद्रियादिप्राणीनिमे जन्म होइ सो त्रसनाम हैं। अर जाके उदयतें पृथ्वी अप् तेज वायु वनस्पतिकायमे उत्पत्ति होइ सो स्थावरनाम है। वहुरि जाके उदयतै प्रीति उपजै देखतेही अन्यका प्रीतिरूप परिणाम हो जाय सो सुभगनाम है। वहुरि जाके उदयतै रूपादिगुणनिकरि सहितहू परकै अप्रीतिको कारण होइ सो दुर्भगनाम है। जाके उदयतै मनोज्ञस्वरकी उत्पत्ति होइ सो जाका शब्द सर्वकू सुहावै सो सुस्वरनाम है। अर जाके उदयतें अमनोज्ञस्वर होइ सो दुःस्वर नाम है। वहुरि जाके उदयतें मस्तकादि प्रशस्त अव-यव होइ देखे श्रवणकीए रमणीक होइ सो शुभनाम है।

वहुरि जो देखे सुणे रमणीकता नही उपजावै सो अशुभनाम है। जाके उदयतै अन्य जीवनिका उपकार तथा घातकै योग्य शरीर नही होइ सो तथा पृथ्वी जल अग्नि पवनादिकतै जाका घात नही होइ वा वज्रमे पहाडमै प्रवेश करते शरीर नही रुके सो सूक्ष्मशरीर है। वहुरि अन्यके वाधाका निमित्त स्थूलशरीर जाके उदयतै होय सो बादर नाम है।

वहुरि जाके उदयतै आहारादि पर्याप्तिकी रचना होइ सो पर्याप्तिनाम है। सो छह प्रकार है। आहारपर्याप्तिनाम। शरीरपर्याप्तिनाम। इद्रियपर्याप्तिनाम। प्राणापान-पर्याप्तिनाम। भाषापर्याप्तिनाम। मन पर्याप्तिनाम। इस प्रकार है। इहां कोऊ कहै। प्राणापानकर्मके उदयतै पवनका निकसना प्रवेश करना फल है। सोही उछ्वासकर्मके

उदयतै है इनमे कुछ विशेष नही । ताकू कहै है । इनमे इद्रिय अतीद्रिय भेद है । जो शीत उष्णके सबधतै उपज्या है । दु.ख जाकै ऐसा पचेद्रियकै जो उछ्वास नि श्वास दीर्घनादरूप कर्णइद्रिय अर स्पर्शनइद्रियकै प्रत्यक्ष है ते तो उछ्वासनाम कर्मके उदयतै उपजै है । अर जो प्राणापानपर्याप्तिनामकर्मके उदयतैं कीए समस्त ससारीनिकै श्रोत्रेद्रियनिकरि नही ग्रहणमे आवै तातै अतीद्रिय है । एकेद्रियकै भाषा मन विना च्यारि है । विकलचतुष्ककै मनविना पांच है सैनी पचेद्रियके छह पर्याप्ति है । वहुरि जाके उदयतै आत्मा छहू पर्याप्तिनिमे एक पर्याप्तिकूहू पूर्ण करनेकू नही समर्थ होइ सो अपर्याप्तिनाम है ।

वहुरि जाकै उदयतै रसदिक सप्तधातु अर सप्त उपधातु अपने अपने स्थानमे स्थिरभावकूं प्राप्त होई सो स्थिरनाम है । तथा दुष्कर उपवासादि तपश्चरणतैकू अग-उपागनकै स्थिरपणा वण्यारहै सिथिलपणा नही होइ सो स्थिरनाम है । जातै रसतै तो रुधिर होय है । रुधिरतै मास होय है । मासते मेद होइ मेदतै हाड होइ हाडतै मज्जा जो मिजी सो होय मज्जातै वीर्य होय वीर्यते संतान होइ । ऐसे सप्तधातु कह्या ।

वहुरि वात पित्त कफ सिरा स्नायु चाम जठराग्नि । ए सप्त उपधातु जानने । वहुरि जाके उदयतै किंचित उपवासादि करनैतै तथा स्वल्पहू शीत उष्णादिकके सबधतै अगोपांग कृश होजाय धातु उपधातुका स्थिरपणा नही होइ सो अस्थिरनाम है । वहुरि जाके उदयतै प्रभासहित शरीर होइ तथा देखनेवालेकू इष्ट होइ सो आदेयनाम है । वहुरि जाके उदयते प्रभारहित शरीर होइ सो अनादेयनाम है । वहुरि जाके उदयते पुण्यरूप गुणनिकी विख्यातता प्रगट होइ सो यश कीर्त्तिनाम है । जातें यश तो उज्वलगुण है । अर कीर्त्तिनाम विख्यातताका है । वहुरि पापरूप गुणनिकी विख्यातता जाके उदयतै होय सो अयशस्कीर्त्तिनाम है । वहुरि जाके उदयतै अचित्यविभूतिविशेषकरि युक्त अरहतपणा उपजै सो तीर्थंकरत्वनाम है । ऐसे नामकर्मकी बीयालीस प्रकृतिनिहीका तिराणवै भेद जानने । अव गोत्रकर्मकी दोय प्रकृति कहै है ।

उच्चैर्नीचैश्च ॥ १२ ॥

अर्थप्रकाशिका—उच्चगोत्र नीचगोत्र ए दोय गोत्रकमकी प्रकृति है । जाके उदयतै लोकपूज्य ऐसा अर जाका महानपणा विख्यात होइ ऐसे इक्ष्वाक्वादि कुलमै जन्म होय सो उच्चैर्गोत्रकर्म है । वहुरि जाके उदयतै निंद्य तथा दरिद्रसहित अप्रसिद्ध दु खकरि आकुल कुलमै जन्म सो नीचैर्गोत्रकर्म है । अव अतरायकर्मकी पाच प्रकृतिनिकू कहै है ।

दानलाभभोगोपभोगवीर्याणाम् ॥ १३ ॥

अर्थप्रकाशिका—दान लाभ भोग उपभोग वीर्य इन पांचनिमै विघ्न करनेवाला पचप्रकार अतरायकर्म है । जो दान दिया चाहै तोहू जाके उदयतै देनेसमर्थ नही होइ सो

दानातराय है। बहुरि लाभकी इच्छा करताहू जाके उदयते लाभकू प्राप्त नही होइ सो लाभातराय है। बहुरि जाके उदयतै भोगकीया चाहै तोहू भोगनेसमर्थ नही होइ सो भोगातराय हैं। वहुरि उपभोग कीया चाहै तोहू जाके उदयते उपभोग करने समर्थ नही होइ सो उपभोगातराय हैं। वहुरि जाके उदयतै उत्साहरूपक होनेका इच्छकहू शरीरमे सामर्थ्यकू नही प्राप्त होइ सो वीर्यांतराय है इहा गंध अतर पुष्प स्नान ताबूल अगराग भोजन पानादिक तो भोग है। अर शयन स्त्री आभरण हस्ती घोडा रथ पयादा महल वाग इत्यादिक उपभोग जानने। ऐसे ज्ञानावरणादिकनिका उत्तरप्रकृतिबध कह्या। अव जो कर्म अपने कर्मस्वभावको छाडि आत्मातै जुदा जेते काल नही होइ स्थितिबध है। सो सो दोय प्रकार है। एक जघन्य एक उत्कृष्ट दोयप्रकार स्थितिबध है। तिनमे उत्कृष्ट स्थितिकू कहै कहै।

आदितस्तिसृणामन्तरासस्य च त्रिंशत्सागरोपमकोटीकोठ्यः परा स्थितिः ॥१४॥

अर्थप्रकाशिका—आदिका तीन जो ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अर अतराय। इन च्यार कर्मनिकी उत्कृष्टस्थिति तीस कोटाकोटीसागरप्रमाण है। सज्ञीपचेद्रियपर्याप्तकजीवकै ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अतरायकी उत्कृष्टस्थिति तीस कोटाकोटीसागरप्रमाण है। तिनमैहू ज्ञानावरणकी पाच। दर्शनावरण नव। अतरायकी पाच। असातावेदनीय एक। इन वीसप्रकृतिनिकी उकृष्टस्थिति तीस कोटाकोटीसागरप्रमाण हैं। अर सातावेदनीय एककी उत्कृष्टस्थिति पनराकोटीकोडोसागरकी है।

वहुरि अन्य जीवनिकी स्थिति आगमतै जाननी। सोही कहे है। एकेद्रियपर्याप्तके इन च्यार कर्मनिकी उत्कृष्टस्थिति एक सागरोपमके सप्तभाग करिए तिनमे तीनभागप्रमाण है। द्वीद्रियपर्याप्तके पचीस सागरोपमके सातभागमे तीन भागप्रमाण है। त्रीद्रियपर्याप्तके पचाससागरोपमके सातभागमे तीनभागप्रमाण है। चतुरिद्रियपर्याप्तके सौसागरोपमके सप्तभागमे तीन भागप्रमाण है। असैनी पचेद्रियपर्याप्तके हजारसागरोपमके सप्तभागमे तीनभागप्रमाण है। अर सज्ञीपचेद्रिय अपर्याप्तके अनतसागरोपमकोटाकोटीप्रमाण उत्कृष्टस्थिति है।

वहुरि एकेद्रिय द्वीद्रिय त्रीद्रिय चतुरिद्रिय असज्ञीपचेद्रिय अपर्याप्तके च्यार कर्मनिकी उत्कृष्टस्थिति अपने अपने पर्याप्तिकी उत्कृष्टस्थिति कही तिनमे पल्यका असख्यातमाभागप्रमाण ऊन है। अव मोहनीयकी उत्कृस्थिति कहेहै।

सप्ततिर्मोहनीस्य ॥ १५ ॥

अर्थप्रकाशिका—मोहनीयकर्ममे मिथ्यात्वकर्मका उत्कृष्टस्थितिबंध सज्ञीपचेद्रियपर्याप्तके सतरीकोडाकोडीसागरप्रमाण जानना एकेद्रियपर्याप्तके उत्कृष्टस्थिति एकसागरकी। द्विंद्रियके

पचीस सागरकी। त्रीद्रियके पचाससागरकी। चतुरींद्रियके सोसागरप्रमाण है। बहुरि पर्याप्तक असंज्ञिपचेद्रियके एकहजारसागरप्रमाण उत्कृष्टस्थिति जाननी। बहुरि एकेंद्रिय द्विंद्रिय त्रीद्रिय चतुरिंद्रिय तथा असज्ञीपचेद्रिय अपर्याप्तके अपनीअपनी पर्याप्तिकी स्थिति कही तातै पल्यकै असख्यातभाग घाटी जाननी। अर सैनीअपर्याप्तककै अत.कोडाकोडीसागरप्रमाणस्थिति जाननी अब नामगोत्रकर्मकी उत्कृष्टस्थिति कहेहैं।

विंशतिर्नामगोत्रयोः ॥ १६ ॥

अर्थप्रकाशिका—पञ्चीदचेंद्रिपर्याप्तके नामकर्म अर गोत्रकर्मकी उत्कृष्टस्थिति बीसकोडाकोडीसागरप्रमाण है एकेंद्रियपर्याप्तकै एकसागरका सातभागमे दोयभागप्रमाण है। द्वीद्रियपर्याप्तके पचीससागरका सप्तभागमे दोयभागप्रमाणहै। त्रीद्रियपर्याप्तकै पचाससागरका सप्तभागमे दोयभागप्रमाण है। चतुरिरिंद्रियपर्याप्तके सोसागरका सप्तभागमे दोयभागप्रमाण है। असज्ञीपचेद्रियकै हजारसागरका सातभागमे दोयभागप्रमाण है। सज्ञीपचेंद्रियअपर्याप्तकै अत कोडाकोडीसागरप्रमाण है। बहुरि एकेंद्रियद्वीद्रिय त्रीद्रय चतुरिंद्रिय पचेद्रिय असैनी अपर्याप्तके अपनेंअपनें पर्याप्तक उत्कृष्टस्थितितै पल्योपमकै असख्यातवैभाग ऊन स्थिति जाननी अब आयुकी उत्कृष्टस्थिति कहेहै।

त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥ १७ ॥

अर्थप्रकाशिका— आयुकर्मकी उत्कृष्टस्थिति तेतीससागरोपमकी है। सज्ञी पचेद्रिय पर्याप्तककै उत्कृष्टस्थिति तेतीससागरोपमकी है। असज्ञीकै पल्यकै असख्यातवैभागप्रमाण है अर एकेंद्रियादिकनिकै आयुका उत्कृष्टस्थितिबध कोडिपूर्वका जानना। ऐसे मूलप्रकृतिनिका उत्कृष्टस्थितिबध कह्या।

अब उत्तरप्रकृतिनिका उत्कृष्टस्थितिबध कहेहैं। ज्ञानावरण पांच दर्शनावरण नव अतरायकी पांच असातावेदनीय एक ऐसे बीस प्रकृतिनिका उत्कृष्टस्थितिबध तीस कोडाकोडीसागरका होयहै। अर सातावेदनीय स्त्रीवेद मनुष्यद्विक इन च्यारका पद्रह कोटाकोटीसागरप्रमाणस्थितिबध है। दर्शनमोहबधविषै एक मिथ्यात्वही है ताकी सत्तरी कोडाकोडीसागरकी स्थिति है। चारित्रमोहनीयमे षोडशकषायनिकी चालीस कोटाकोटीसागरकी स्थितिबध है हुडकसस्थान असप्राप्तसृपाटिकसहनन दोय प्रकृतिकी बीस कोटाकोटीसागरकी स्तिति है। वामनकी अर कीलककी अठारह कोटाकोटीकी स्थिति है। कुब्जकी अर अर्द्धनाराचकी सोटशकोटाकोडीकी। स्वातीककी अर नाराचकी चोदह कोटाकोटीकी। न्यग्रोधपरिमडलकी अर वज्रनाराचकी बारह कोटाकोटीकी। समचतुरस्त्रकी अर वज्रर्षभनाराचकी दशकोटाकोटी प्रमाणस्थितिबध हैं।

बहुरि विकलत्रय अर सूक्ष्म अपर्याप्तक साधारण इन छहकी अठरहकोडाकोडीसागरकी उत्कृष्टस्थिति है। बहुरि अरति शोक षंढवेद तिर्यंचगति तिर्यंगत्यानुपूर्व्यं भय जुगुप्सा नरकगति नरकगत्यानुपूर्व्यं तैजस कार्मण औदारिक औदारिकअंगोपाग वैक्रियिक वैक्रियिकअंगोपांग आतप उद्योत नीचैर्गोत्र त्रस बादर पर्याप्त प्रत्येक वर्ण रस गंध स्पर्श अगुरूलघु उपघात परघात उछ्वास एकेंद्रिय पचेंद्रिय जाति निर्माण स्थावर अप्रशस्त विहायोगति अस्थिर अशुभ दुर्भग दुःस्वर अनादेय अयश.कीर्तिइनी इकतालीस प्रकृतिनिका उत्कृष्टस्थितिबंध बीसकोडाकोडीसागरप्रमाण है। अर हास्य रति उच्चगोत्र पुरूषवेद स्थिर शुभ सुभग सुस्वर आदेय यशःकीर्ति प्रशस्त विहायोगति देवगति देवगत्यानुपूर्व्यं इन तेरह प्रकृतिनिका दशकोडाकोडीसागरप्रमाणस्थिति है। अर आहारक आहारकअगोपाग तीर्थंकरत्व इन तीन प्रकृतिनिका उत्कृष्टस्थितिबध अत कोटाकोटीसागरप्रमाण है। अर देवआयु नरकायुका उत्कृष्टस्थितिबंध तेतीससागरप्रमाण है। तिर्यग्मनुष्यआयुका स्थितिबंध तीनपल्यप्रमाण हैं। ऐसे बंधयोग्य एकसोबीस प्रकृतिनिका उत्कृष्टस्थितिबध कह्या सो सज्ञीपर्याप्त पचेंद्रियकेही होयहै। एकेंद्रियादिकनिके यथायोग्य आगमतै जाननां। सो इनमे देव मनुष्य तिर्यंक् आयुविना एकसो सतरह प्रकृतिनिका उत्कृष्टस्थितिबधकूं सक्लेशपरिणामही कारण हैं। उत्कृष्ट संक्लेशपरिणामतै उत्कृष्टस्थितिबध होयहै। अर विशुद्ध परिणामनिकरि जघन्यस्थितिबंध होयहै। अर तिर्यक् मनुष्य देवायुको उत्कृष्टविपुद्धपरिणामकरि उत्कृष्टस्थितिबध होय। अशुद्धपरिणामनिकरि जघन्यस्थितिबध होयहैं।

बहुरि आहारकद्विक अर तीर्थंकरनाम देवायुष्य इन च्यार प्रकृतिविना एकसो सोलह प्रकृतिनिका सर्वोत्कृष्टस्थितिका बांधनेवाला मिथ्यादृष्टिजीवही आगममे कह्या हैं। अर देवायु आहारकद्विक तीर्थंकरप्रकृति इन च्यार प्रकृतिनिका सम्यग्दृष्टीही बध करेहै। अब जघन्यस्थितिबधकू वर्णन करेहै।

अपरा द्वादशमुहूर्त्ता वेदनीयस्य ॥ १८ ॥

अर्थप्रकाशिका—वेदनीयकर्मकी जघन्यस्थिति बारहमुहूर्त्तकी है सो सूक्ष्म सांपराय गुणस्थानविषैही बधै है। अब नामगोत्रकी जघन्यस्थिति कहै है।

नामगोत्रयोरष्टौ ॥ १९ ॥

अर्थप्रकाशिका—नामगोत्रकी जघन्यस्थिति आठमुहूर्त्तकी हैं सो सांपरायगुणस्थानमेंही बधै है। अन्यकर्मकी स्थिति कहै है।

शेषाणामन्तर्मुहूर्त्ता ॥ २० ॥

अर्थप्रकाशिका–ज्ञानावरण दर्शनावरण अतराय मोहनीय आयु इन पाचकर्मनिकी जघन्यस्थिति अतमुँहूर्त्तकी बधै है सो सूक्ष्मसापरायविषैही है। अर मोहनीयकी जघन्यस्थिति अनर्मुंहूर्त्तकी बधै है। सो अनिवृत्तिवादरसापरायगुणस्थानहीमे बधै है। आयुको जघन्यस्थिति सख्यातवर्षका आयुको धारक मनुष्य तिर्यंचही बांधै है। ऐसे स्थितिबंध तो कह्या अब अनुभव बधकू कहै है।

विपाकोऽनुभवः ॥ २१ ॥

अर्थप्रकाशिका–विपाक है सो अनुभव है विशिष्ट। कहिए विशेषरूप जो पाक कहिए उदय सो विपाक कहिए। तथा विविध कहिए नानाप्रकार जो पाक सो विपाक है। तहां उपकार अपकार करने है स्वरूप जिनका ऐसे ज्ञानावरणादिक कर्मनिकी प्रकृतिनिका पूर्व आस्रवके निमित्ततै तीव्र मद मध्य भावकरि जो उदय सो विपाक है। अथवा द्रव्य क्षेत्र काल भव भाव लक्षण जो निमित्त तिनके भेदतै उपज्या जो नानाप्रकारका पाक कहिए उदय सो विपाक है। इस विपाकहीकू अनुभव कहिए है। शुभपरिणामनिका प्रकर्षपणातै आधिक्यतातै पुण्यप्रकृतिनिमे अधिकरस पडे है सोही प्रकर्ष अनुभव होय है। अर अशुभप्रकृतिनिमै मदरस पडै है।

वहुरि अशुभपरिणामनिकी आधिक्यतातै अशुभप्रकृतिनिमै अधिक रस पडे है। अर शुभप्रकृतिनिमै मद रस पडे है। ऐसे कह्या जो अनुभव सो स्वमुख अर परमुखकरि दोय प्रकार प्रवर्तै है। समस्त मूल अष्टकर्मनिका तो स्वमुखकरिही अनुभव होय है। अन्यकर्म अन्यकर्मरूप होइ उदय नही आवै है तातै स्वमुखोदय कहिए है। अर उत्तरप्रकृति है, तिनमे तुल्यजातीयप्रकृति है। तिनके परमुखकरिभी अनुभव होय है। जैसे मतिज्ञानावरणीय श्रुतज्ञानावरणीयरूप होयकैहू उदय आवे है। असातावेदनीय है सो कारणनिके वशतै सातावेदनीयरूप भी रस देहै ऐसे परमुखकरिभी उदय आवै है। परतु दर्शनमोहनीय चारित्रमोहनीय परस्पर नही पलटै है। दर्शनमोहनीय है। सो चारित्रमोहनीयरूप होइ रस नही दे है। चारित्रमोहनीय है सो दर्शनमोहनीयरूप होइ उदयमै नही आवे है। बहुरि च्यारो आयुभी परस्पर पलटि उदय नही आवै है। जो बाधी सोही अपना स्वरूपकरि रस देहै। सोही कहे हैं।

स यथानाम ॥ २२ ॥

अर्थप्रकाशिका–जो प्रकृतिनिका नाम हैं तैसाही ताका अनुभव है। जैसे ज्ञानावरणका फल ज्ञानका अभाव है। दर्शनावरणका फल दर्शनशक्तिका अवरोध होना है।

ऐसे समस्त मूलप्रकृतिनिका वा उत्तरप्रकृतिनिका जाका जैसा नाम तैसाही फल देहै सोही अनुभव है। अब कहै है। जो कर्म उदयमे आय तीव्र मंद रस दीए पछै आवरण जो पड-दाका आच्छादनकीज्यों जीवके लग्या रहे कि साररहित होइ आत्मातै छूटि पडे है। सो कहे है।

ततश्च निर्जरा ॥ २३ ॥

अर्थप्रकाशिका—तिस अनुभवपाछै निर्जराही है। जो कर्मबंध भया सो उदयके अवसरमें सुखदु ख देय निर्जरेही। जातै स्थितिको क्षय होते आत्मा एक समयहू उपरि नहीं रहिसकै है। आत्मातै छूटि कर्मपणाके अभावतै अन्यरूप होई परिणमे है। सोही निर्जरा है। सो दोयप्रकार है। एक सविपाकनिर्जरा दूजी अविपाकनिर्जरा। तहा अनेक एकेंद्रियादि-जातिविशेपकरि घूर्णित जो चतुर्गतिरूप ससारसमुद्रमे चिरकालते परिभ्रमण करते जीवके अनेक शुभ अशुभ कर्म है तिनका उदयका काल आय प्राप्त होय तदि जैसा विकल्पनिकरि बध कीया तिसरूप भोगतेके उदयावलीरूप नालीकरिकै जो कर्मरस देय झडे है सो सविपाकनिर्जरा है। सो या सविपाकनिर्जरा च्यारोगतिके समस्त ससारीजीवनिकै होय है।

वहुरि जिस कर्मका उदयकाल तो नही आया अर तपश्चरणादिक सामर्थ्यके विशेषतै उदीरणा होई कर्म झडिजाय सो अविपाकनिर्जरा हैं। जैसे आम्रफल पालमे शीघ्र पचै तैसे जानना। इहा सूत्रमे च शब्द है सो तपसा निर्जरा च ऐसे आगे कहैगे ताकूहू जनावे है। इहा कोऊ कहे सवरके पीछे निर्जरा कहना था इहांही क्यो कह्या ताका समा-धान। जो इहा लघु करनेका प्रयोजन है विपाककू अनुभव कह्या अनुभव नाम भोगनेका है। भोगनेमे आया सो निर्जरैही है। तातै निर्जरा थोरेमै कह्या गया। कर्मकी प्रकृति दो प्रकार है। घातिका अघातिका। तहा ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अतराय ए च्यार घातिका है। अन्य च्यार अघातिका है। तिनमे घातिकाहू दोय प्रकार है। सर्वघातिका अर देशघातिका। तिनमे ज्ञानावरण च्यार दर्शनावरण तीन अतराय पाच सज्वलन कषाय चार नोकषाय नव अर सम्यक्त्वप्रकृत्ति एक। ऐसे छबीस देशघातिका है। अर केवलज्ञाना-वरण केवलदर्शनावरण।

वहुरि निद्रा पांच मिथ्यात्व एक अनतानुबधी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण ए वारह कषाय। ऐसे वीस प्रकृति सर्वघातिका है। अर सम्मिथ्यात्वप्रकृति जात्यतरसर्व-घाति है। तिस सहित एकवीस सर्वघातिका है। ऐसे सैतालिस प्रकृति घातिका है।

वहुरि नामकर्मकी प्रकृतिनिमे पंच शरीर तीन अगोपाग एक निर्माण पाच बधन पांच संघात छह सस्थान छह सहनन आठ स्पर्श पांच रस दोय गध पच वर्ण एक अगुरुलघु

एक उपघात. एक परघात एक आताप एक उद्योत प्रत्येक साधारण शुभ अशुभ स्थिर अस्थिर। ए बासठि प्रकृति पुद्गलविपाकी है। इनका विपाक जो उदय सो पुद्गलमे आवै है। वहुरि च्यारि आनुपूर्व क्षेत्रविपाकी है। जातै जीवको परलोकगमन करतै पूर्वलादेहके आकारकू धारता कार्मणशरीरसहित आत्माका गमन होय तदि मार्गमे जीवके प्रदेशनिका आकारूप क्षेत्रहीमै इनिका विपाक कहिए उदय है तातै क्षेत्रविपाकी है।

वहुरि च्यार आयुकर्म भवविपाकी है इनका विपाक भवधारणरूपही है। अर अवशेषप्रकृति अठंतरि जीव विपाकी है। ते कोन सो कहै है। च्यार घातियानिकी सैंतालीस दोय वेदनीय दोये गोत्र सत्ताइस नामकर्मकी तिनमे गति च्यार जाति पांच उछ्वास एक विहायोगति त्रस स्थावर शुभग दुर्भग सुस्वर दुःस्वर सूक्ष्म बादर पर्याप्त अपर्याप्त आदेय अनादेय यशस्कीर्ति अयशस्कीर्ति, तीर्थंकर। ऐसे सब मिलि अठंतरि जीवविपाकी कही जीवके उपयोगमे उदय देवै है तातै जीवविपाकी है। ऐसे सत्ताकी अपेक्षा एकसौ अठतालीस कही। अब बंधके च्यार भेदनिमै प्रदेशबंधकू कहै है।

नामप्रत्ययाः सर्वतो योगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः ॥ २४ ॥

अर्थप्रकाशिका—नाम जो समस्तज्ञानावरणादि कर्मप्रकृति तिनकूं होनेकूं कारण ऐसें सर्वभवनिमें मन वचन कायके योगविशेषतै सूक्ष्म एकक्षेत्रमै अवगाहकरि तिष्ठते समस्त आत्मप्रदेशनिमै अनंतानंत कर्मप्रदेश है। भावार्थ। एक आत्माके असख्यात प्रदेश है। तिस एकएक प्रदेशविषै अनंतानंत पुद्गलके स्कंध एकएक समयमै बंधरूप होय तिष्ठै सो प्रदेशबंध है। ते पुद्गलस्कंध कैसे कहै। समस्त ज्ञानावरणादि मूलप्रकृति उत्तरप्रकृति उत्तरोत्तरप्रकृतिरूप होनेकूं कारण है। वहुरि कैसे कहै समस्त त्रिकालवर्त्ती भवनिमै मन वचन कायरूप योगनिके निमित्ततै आवै है। अर सूक्ष्म है। इंद्रियगोचर नही।

वहुरि आत्माके प्रदेश अर कर्मके प्रदेश क्षीरनीकीज्यों एकक्षेत्रमै अवगाहकरि तिष्ठै है। अर एकएक आत्माके प्रदेशमे अनंतानंत कर्मपुद्गल तिष्ठै है। ऐसे प्रदेशबंध कह्या। अब बंधपदार्थमे अंतर्भूत जो पुण्यबंध पापबंध कह्या चाहिए तिनमे प्रथम पुण्यप्रकृतिनिकू कहै है।

सद्वेद्यशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ॥२५॥

अर्थप्रकाशिका—साता वेदनीय अर शुभ आयु शुभनाम शुभगोत्र पुण्यप्रकृति है। यातैं नो च्यारो अशुभही है। अर अघातियामे पुण्य पाप दोऊरूप है। तिनमे अडसठी

प्रकृति पुण्यरूप है तिनके नाम कहेहै । साता वेदनीय एक अर तिर्यक् मनुष्य देव ए तीन आयु अर उच्चगोत्र एक अर नामकर्मकी त्रेसठि तिनमे मनुष्यदेवगति दोय अर पचेंद्रियजाति एक अर शरीर पांच अर अगोपाग तीन अर निर्माण एक अर बधन पाच सघात पाच समचतुरस्त्र-सस्थान एक अर वज्रर्षभनाराचसहनन एक अर आठ स्पर्श पांच रस दोय गंध पच वर्ण ए प्रशस्तवर्णादिकनिकी वीस अर मनुष्य देवगत्यानुपूर्व दोय अर अगुरूलघु परघात आतप उद्योग उछ्वास प्रशस्त विहायोगति प्रत्येशरीर त्रस सुभग सुस्वर शुभ बादर पर्याप्त स्थिर आदेय यशस्कीर्ति तीर्थंकर ऐसे नामकर्मकी त्रेसठि समस्त अडसठि पुण्यप्रकृति जाननी । अब पापप्रकृतिनिकू कहेहै ।

अतोऽन्यत्पापम् ॥ २६ ॥

अर्थप्रकाशिका—एकही पुण्यप्रकृति तिनतै अवशेष रही ते पापप्रकृति है । तिनमे च्यार धातियाकर्मनिकी सैतालीस प्रकृति अर असतावेदनीय एक अर नरकायु एक नीचगोत्र एक अर नामकर्मकी पचास ए समस्त सो प्रमाण पापप्रकृति है । तिनमे ज्ञानावरणकी पांच दर्शनावरणकी नव मोहनीयकी अठाईस अतरायकी पाच ऐसे घातीप्रकृति सैतालीस है । अर नरकगती तिर्यग्गति एकेंद्रियादि च्यारि जाति पाच सस्थान पच सहनन अर अप्रशस्त स्पर्श रस गंध वर्ण बीस अर नरक तिर्यग्गत्यानुपूर्व्य दोय अर उपघात अप्रशस्त विहायोगति स्थावर सूक्ष्म अपर्याप्ति साधारणशरीर असुर दुर्भग अस्थिर दुस्वर अनादेय अयशस्कीर्ति ऐसे नामकर्मकी पचास । अर असातावेदनीय अर नरकायु अर नीचगोत्र ऐसे सो हुई । इहा अष्ट स्पर्श पाच रस दोय गध व पच वर्ण ए वीस प्रकृति प्रशस्त अप्रशस्त दोऊरूप है । तिनमे प्रशस्त पुण्यमे कही अप्रशस्त पापमे कही । ऐसे बधवर्णन कीया ।

इहा ऐसा विशेष जानना । जो कर्मकी उत्तर प्रकृति एकसो अडतालिस है तिनमे बधके कथनमे एकसो बीस प्रकृतिही आगममे कहीहैं । जातै पच बंधन पच सघात ए दश प्रकृति तो शरीरते अविनाभावी है । औदारिकादिशरीरका बंध होइगा ताके औदारिक बंधनका अर सघातका नियमतै बध होयहीगा । तातै शरीरपचकाही बधमे ग्रहण कीया अर बंधन सघात तो विनाकह्याही आगया तातै बधन पांच सघात पाच ऐसे दश प्रकृनि तोए घटि अर स्पर्श आठ रस पांच वर्ण पांच गध दोय इन वीस प्रकृतिनिमे स्पर्श रस गंध वर्ण ए भेदरहित च्यारही बधमे ग्रहण करी तातै सोलह प्रकृति ए घटी ।

वहुरि दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृति है तिनमेतै बधमे एक मिथ्यात्वहीका बध होयहै तातै दोय ये घटी । ऐसे बधन पच सघात पंच अर स्पर्शादिकनिके सोलै ऐसे सब मिली अटाईस प्रकृति भई तिनकू एकसो अडतालीसमे घटाये बंधयोग्य एकसोबीस प्रकृति जाननी ।

तिनमे तीर्थंकरप्रकृतिका बधतो सम्यक्त्वहीमे होइ । तहाँ अविरप्तगुणस्थानकू आदि लेय अष्टमगुणस्थानका छठा भागपर्यतही होइ । अर तीर्थंकरप्रकृतिका बंधका आरभ मनुष्यकर्मभूमिककैंही होय । अर केवली तथा श्रुतकेवलीकै निकटही होय । वहुरि आहारकद्विकका बध सप्तमगुणस्थान तथा अष्टमगुणस्थानमेही होयहै । अर आयुका बध मिश्रगुणस्थानमे नही होय । ऐसा नियम जानना । तिनमे मिथ्यात्वगुणस्थामे तो तीर्थकर अर आहारकद्विकका वध नही होय । तातै इन तोन विना एकसो सतरह प्रकृतिही बधयोग्य है ।

वहुरि सासादनमे मिथ्यात्व हुडकसस्थान नपुसकवेद असृपाटिकसहनन एकेंद्रिय स्थावर आतप सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण विकलत्रयकी तीन नरकगति नरकगत्यानुपूर्व्य नरकायु ए पोडशप्रकृति मिथ्यात्वभावकरिही बधैहै तातै सासादनादिकनिमे नही बधैहै इनकी मिथ्यात्वहीमे व्युच्छित्ति भइ तातै सासादनमे एकसो एकही बध योग्य है । वहुरि सासादनके अतमे पचीसकी व्युच्छित्ति है । च्यारि अनतानुबधी अर निद्रानिद्रा अर प्रचलाप्रचला अर स्यानगृद्धि तथा दुर्भग दुस्वर अनादेय सस्थान च्यार सहनन च्यार अप्रशस्त विहायोगति स्त्रीवेद नीचगोत्र तीर्यंगति तिर्यग्गात्यानुपूर्व्य तिर्यक्आयु उद्योत ए पचीस प्रकृतिका बध तो मिथ्यात्वसासादनहीमे होयहै ऊपरि नही । ताते एकसो एकमे घटि तदि छिहतरि चाहिए परतु मिश्र आयुका वध होय नही तातै देव मनुष्य दोय आयुबधका अभाव भया तदि मिश्रगुणस्थानमे चहोत्तर प्रकृति बंधयोग्य है ।

वहुरि मिश्रतै तो व्युच्छित्ति नही तातै अविरतमेंहू चहोत्तर चाहिए परतु इहां आयुका वध होयहै तथा तीर्थकरप्रकृतिकाहू बध होयहै तातै बधयोग्य सत्तरि है । वहुरि अप्रत्याख्यानावरण च्यार कपाय वज्रर्षभनाराचसहनन औदारिकद्विक मनुष्यगति मनुष्यगत्यानुपूर्व्य मनुष्यआयु इन दशकी व्युच्छित अविरतगुणस्थानमे होयहै तातै देशविरतमे सडसठिहिका बध होयहै । वहुरि पचमगुणस्थानमे च्यार अप्रत्याख्यानावरणकी व्युच्छित्ति तदि छठे प्रमत्त गुणस्थानमे त्रेसठिही वध योग्य है ।

वहुरि प्रमत्तगुणस्थानमे अस्थिर अयश.कीर्ति अशुभ असाता अरति शोक इनि छह प्रकृतिनिकी बंधकी व्युच्छित होइ तदि अप्रमत्तगुणस्थानमे वधयोग्य सतावन तिनमे आहारकद्विक मिलि गुणसठि वध योग्य है। वहुरि अप्रतगुणस्थानमे एक देवआयुकी व्युच्छित भई तातै अपूर्वकरणमे वधयोग्य अठावन प्रकृति है । वहुरि अपूर्वकरणमे पहले भागमे तो निद्रा प्रचलाकी व्युच्छित्ति होय है अर छठा भागमे तीर्थंकर निर्माण प्रशस्त विहायोगति पचेद्रिय तैजस औदारिक आहारकद्विक समचतुरस्रसंस्थान देवगति देवगत्यानुपूर्व्य वैक्रियिक वैक्रियिक अगोपांग स्पर्श रस गंध वर्ण अगुरुलघु उपघात परघात उच्छ्वास त्रस वादर पर्याप्त प्रत्येक स्थिर शुभ सुभग सुस्वर आदेय ऐसे तीसकी व्युच्छित्ति होय है ।

वहुरि अंतभागविषै हास्य रति भय जुगुप्सा इनि च्यारिकी व्युच्छिति होयहै। ऐसे अपूर्वकरणमे छतीस प्रकृतिकी व्युच्छिति होय है तदि अनिवृतिकरमै वाईस प्रकृतिही बधयोग्य है। वहुरि अनिवृतिकरणके पचभागनिमे अनुक्रमतै पुरूषवेद सज्वलन च्यार कषाय इन पाचकी व्युच्छिति होय है तदि सूक्ष्मसापरायमे सतरह प्रकृति बधयोग्य है। वहुरि सूक्ष्मसा-परायके अतमे पाच ज्ञानावरण पाच अतराय च्यार दर्शनावरण यशस्कीर्ति उच्चगोत्र इनि सोलहके बधके व्युच्छिति होय है तदि उपशानकषाय क्षीणकषाय सयोगोजिन इन तीन गुणस्थाननिमे एक सातावेदनीयही बधेहै ताकी एक समयकी स्थिति सो बधके समयमेही उदय होय निर्जरेहै। अर अयोगी बधरहित है। ऐसे गुणस्थाननिमे बधप्रकृति कही मार्गणानिमे आगममे कहीहैं सो जाननी।

वहुरि इनमेहू ज्ञानावरण पाच दर्शनावरण नव अतराय पाच मिथ्यात्व एक कषाय सोलह भय जुगुप्सा तैजस कार्मण अगुरूलघु उपघात निर्माण वर्णचतुष्क ए सैतालीस प्रकृति अपनी व्युच्छितिपर्यंत ध्रुव उदयरूप है। इनका उदय समस्त ससारीनिकें अपना व्युच्छितिके गुणस्थानपर्यंत ध्रुवउदयकू धारेहै। इनि प्रकृतिनिका उदय अनादितै सासता निरतर है तातै ध्रुवउदयरूप है वहुरि सैतालीसतो कही सो अर तीर्थंकर अहारकद्विक च्यार आयु इन चोवन-प्रकृतिनिका ध्रुवबध जानना इनका निरतर बध हुवाही करेहै। परतु तीर्थंकर अर आहारक-द्विक ए तीनप्रकृतिनिका बध है सो तो बधका प्रारभकाल पाछै जिन गुणस्थाननिमे बध सभवे तहा तो निरतर बधेहै। अर बधयोग्य गुणस्थानका अभाव होजायतो बधकू नही प्राप्तहोय है अर आयु है सो बधका प्रारभ भए पीछै आयुबधका त्रिभागका अंतर्मुहूर्त्तके समय है तिनमेही निरतर बधेहै अन्य अवसरमे निरतर बधी नहीहै।

वहुरि त्रसस्थावरमेतै एक वादरसूक्ष्ममे एक पर्याप्त अपर्याप्तमे एक प्रत्येकसाधारणमे एक स्थिर अस्थिरमे एक शुभअशुभमे एक शुभगदुर्भगमे एक आदेय अनादेयमै एक यशअयशमे एक गतिच्यारिमे एक जाति पाचमे एक शरीरतीनमे एक सस्थानछहमे एक आनुपूर्व्य च्यारमे एक ऐसे चोदह प्रकृति नामकर्मकी निरतर बधी हैं। ऐसे तो बध कह्या।

अव उदयमे ज्ञानावरणादि एकसो वाईस प्रकृति है तिनमै ऐसा उदयका नियम है। आहारक शरीरका उदय प्रमत्तगुणस्थानमैही होइ तीर्थंकरप्रकृतिका उदय केवलीहीकै होय है। मिश्रप्रकृतिका उदय मिश्रगुणस्थानमैही होय अन्यमे नही होय। सम्यक्त्वप्रकृतिका उदय क्षयोपशमसम्यक्त्वहीमै होय है। अर आनुपूर्व्यका उदय मिथ्यात्व सासादन अविरत इन तान गुणस्थाननिमैही होई अन्यमै नही होय। इहा इतना विशेष जो सासादनगुण-स्थानमै मरणकरि नरक नही जाय यातै नरकानुपूर्व्य मिथ्यात्व अर अविरत इन दोय गुणस्थाननिमैही होय है।

अब गुणस्थाननिमें उदय योग्य प्रकृति कहै हैं। उदययोग्य प्रकृति एकसो बाईस तिनमें सम्यक्त्वप्रकृति अर मिश्रप्रकृति अर आहारकद्विक तीर्थंकर इन पांच विना मिथ्यात्वगुणस्थानमे एकसो सतरहप्रकृतिनिका उदयकी योग्यता है। बहुरि मिथ्यादृष्टमें मिथ्यात्व आताप सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण इनि पचप्रकृतिनिकी व्युच्छित्ति होय अर एक नरकानुपूर्व्यका उदय नही तातै सासादनमें एकसो ग्यारह उदययोग्य हैं।

बहुरि च्यार अनतानुबंधी एकेंद्रिय स्थावर विकलत्रय इन नव प्रकृतिनिका उदय सासादनपर्यंतही है तातै मिश्रगुणस्थानमे एकसो दोय प्रकृति भई परतु एक मिश्रप्रकृतिका उदय तो मिलिगया अर तीन आनुपूर्व्यका उदय मिश्रमैं होइ नही तातै निकासि लिनी तदि सो प्रकृतिका उदय होइ। बहुरि मिश्रगुणस्थानमें एक मिश्रप्रकृतिकी व्युच्छित्ति होइ तदि अविरतमे नीन्याणवै प्रकृति रही फिर च्यार आनुपूर्व्य एक सम्यक्त्वप्रकृति ऐसे पांच मिले उदययोग्य एकसो च्यार प्रकृति है। बहुरि अप्रत्याख्यानावरण च्यार कषाय अर वैक्रियिक अष्टक मनुष्यगत्यापूर्व्यं तिर्यंग्गत्यानुपूर्व्यं दुर्भग अनादेय अयश ऐसे सतरह प्रकृति चतुर्थगुणस्थानके अनतपर्यतही हैं। तातै व्युच्छित्ति भई तदि देशसयम गुणस्थानमें उदययोग्य सत्यासि प्रकृति है।

बहुरि प्रत्याख्यानावरण च्यार कषाय अर तिर्यंच आयु उद्योत नीचगोत्र तिर्यचगति इन आठप्रकृतिनिकी देशसयमके अंतमे व्युच्छित्ति होई है तदि प्रमत्तगुणस्थानमे उदययोग्य गुण्यासी प्रकृतिमैं आहारकद्विक मिले इक्यासी उदययोग्य हैं। बहुरि आहारकद्विक अर स्त्यानगृद्धि अर निद्रानिद्रा प्रचलाप्रचला इन पाचकी व्युच्छित्ति प्रमत्तगुणस्थानमे होई हैं तदि अप्रमत्तमे छिहत्तरि उदयके योग्य है। बहुरि सम्यक्त्वप्रकृति अर अतका तीन सहनन इन च्यारकी व्युच्छित्ति अप्रमत्तमैं होई है तदि अपूर्वकरणमे उदययोग्य बहत्तरि प्रकृति है। बहुरि छह नोकषायकी व्युच्छिति अपूर्वकरणमे होई है तदि अनिवृत्तिकरणमे छठी प्रकृति उदययोग्य है।

बहुरि अनिवृत्तिकरणमैं तिन वेद सज्वलनक्रोध मान माया इनि छहकी व्युच्छित्ति भइ तदि सूक्ष्मसांपरायमैं साठिही उदययोग्य है। बहुरि सूक्ष्मसांपरायमैं सूक्ष्मलोभकी व्युच्छित्ति होइ है तदि उपशातकषायमे गुणसठि प्रकृतिका उदयकी योग्यता है। बहुरि वज्रनाराच अर नाराच दोऊनिकी व्युच्छित्ति उपशांतकषायमैं होइ है तदि क्षीणकषायमे सत्तावन प्रकृति उदययोग्य है। बहुरि निद्रा प्रचला अर पाच ज्ञानावरण अर पाच अतराय च्यार दर्शनावरण इन सोलहकी व्युच्छित्ति क्षीणकषायमें होई तदि सयोगीगुणस्थानमैं एक तीर्थंकर और मिली बीयालीस उदययोग्य है।

प्रकृति पुण्यरूप है तिनके नाम कहेहै। साता वेदनीय एक अर तिर्यक् मनुष्य देव ए तीन आयु अर उच्चगोत्र एक अर नामकर्मकी त्रेसठि तिनमे मनुष्यदेवगति दोय अर पचेंद्रियजाति एक अर शरीर पांच अर अगोपाग तीन अर निर्माण एक अर वधन पाच संघात पाच समचतुरस्त्र-सस्थान एक अर वज्रर्षभनाराचसहनन एक अर आठ स्पर्श पाच रस दोय गध पच वर्ण ए प्रशस्तवर्णादिकनिकी वीस अर मनुष्य देवगत्यानुपूर्व दोय अर अगुरूलघु परघात आतप उद्योग उछ्वास प्रशस्त विहायोगति प्रत्येशरीर त्रस सुभग सुस्वर शुभ वादर पर्याप्त स्थिर आदेय यशस्कीर्ति तीर्थंकर ऐसे नामकर्मकी त्रेसठि समस्त अडसठि पुण्यप्रकृति जाननी। अव पापप्रकृ-तिनिकू कहेहै।

अतोऽन्यत्पापम् ॥ २६ ॥

अर्थप्रकाशिका—एकही पुण्यप्रकृति तिनतै अवशेष रही ते पापप्रकृति है। तिनमे च्यार धातियाकर्मनिकी सैतालीस प्रकृति अर असतावेदनीय एक अर नरकायु एक नीचगोत्र एक अर नामकर्मकी पचास ए समस्त सो प्रमाण पापप्रकृति है। तिनमे ज्ञ.नावरणकी पांच दर्शनावरणकी नव मोहनीयकी अठाईस अतरायकी पाच ऐसे घातीप्रकृति सैतालीस है। अर नरकगती तिर्य-ग्गति एकेंद्रियादि च्यारि जाति पाच सस्थान पच सहनन अर अप्रशस्त स्पर्श रस गध वर्ण बीस अर नरक तिर्यग्गत्यानुपूर्व्य दोय अर उपघात अप्रशस्त विहायोगति स्थावर सूक्ष्म अपर्याप्ति साधारणशरीर असुर दुर्भग अस्थिर दु स्वर अनादेय अयशस्कीर्ति ऐसे नामकर्मकी पचास। अर असातावेदनीय अर नरकायु अर नीचगोत्र ऐसे सो हुई। इहां अष्ट स्पर्श पाच रस दोय गंध व पच वर्ण ए वीस प्रकृति प्रशस्त अप्रशस्त दोऊरूप है। तिनमे प्रशस्त पुण्यमे कही अप्रशस्त पापमे कही। ऐसे बधवर्णन कीया।

इहां ऐसा विशेष जानना। जो कर्मकी उत्तर प्रकृति एकसो अडतालिस है तिनमे बधके कथनमे एकसो बीस प्रकृतिही आगममे कहीहैं। जातै पच बधन पच सघात ए दश प्रकृति तो शरीरतै अविनाभावी है। औदारिकादिशरीरका बध होइगा ताके औदारिक बंधनका अर संघातका नियमतै बध होयहीगा। तातै शरीरपचकाही बंधमे ग्रहण कीया अर बंधन संघात तो विनाकह्याही आगया तातै बधन पांच सघात पांच ऐसे दश प्रकृनि तोए घटि अर स्पर्श आठ रस पाच वर्ण पाच गध दोय इन वीस प्रकृतिनिमे स्पर्श रस गंध वर्ण ए भेदरहित च्यारही बधमे ग्रहण करी तातै सोलह प्रकृति ए घटी।

वहुरि दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृति है तिनमेतै बधमे एक मिथ्यात्वहीका बध होयहै तातै दोय ये घटी। ऐसे बधन पच संघात पंच अर स्पर्शादिकनिके सोलै ऐसे सब मिली अटाईस प्रकृति भई तिनकू एकसो अडतालीसमे घटाये बधयोग्य एकसोबीस प्रकृति जाननी।

तिनमे तीर्थंकरप्रकृतिका बधतो सम्यक्त्वहीमे होइ। तहाँ अविरत्तगुणस्थानकू आदि लेय अष्टमगुणस्थानका छठा भागपर्यतही होइ। अर तीर्थकरप्रकृतिका बंधका आरम्भ मनुष्यकर्मभूमिककैही होय। अर केवली तथा श्रुतकेवलीकै निकटही होय। वहुरि आहारकद्विकका बध सप्तमगुणस्थान तथा अष्टमगुणस्थानमेही होयहै। अर आयुका बध मिश्रगुणस्थानमे नही होय। ऐसा नियम जानना। तिनमे मिथ्यात्वगुणस्थामे तो तीर्थकर अर आहारकद्विकका बध नही होय। तातै इन तीन विना एकसो सतरह प्रकृतिही वधयोग्य है।

वहुरि सासादनमे मिथ्यात्व हुडकसस्थान नपुसकवेद असृपाटिकसहनन एकेद्रिय स्थावर आताप सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण विकलत्रयकी तीन नरकगति नरकगत्यानुपूर्व्य नरकायु ए षोडशप्रकृति मिथ्यात्वभावकरिही बधैहै तातै सासादनादिकनिमे नही वधैहै इनकी मिथ्यात्वहीमे व्युच्छित्ति भइ तातै सासादनमे एकसो एकही बध योग्य है। वहुरि सासादनके अतमे पचीसकी व्युच्छित्ति है। च्यारि अनतानुबधी अर निद्रानिद्रा अर प्रचलाप्रचला अर स्त्यानगृद्धि तथा दुर्भग दु स्वर अनादेय सस्थान च्यार सहनन च्यार अप्रशस्त विहायोगति स्त्रीवेद नीचगोत्र तीर्यग्गति तिर्यग्गात्यानुपूर्व्य तिर्यक्आयु उद्योत ए पचीस प्रकृतिका वध तो मिथ्यात्वसासादनहीमे होयहै ऊपरि नही। ताते एकसो एकमे घटि तदि छिहत्तरि चाहिए परतु मिश्र आयुका वध होय नही तातै देव मनुष्य दोय आयुबधका अभाव भया तदि मिश्रगुणस्थानमं चहोत्तर प्रकृति वधयोग्य है।

वहुरि मिश्रतै तो व्युच्छित्ति नही तातै अविरतमेहू चहोत्तर चाहिए परंतु इहां आयुका वध होयहै तथा तीर्थंकरप्रकृतिकाहू बध होयहै तातै बधयोग्य सत्तरि है। वहुरि अप्रत्याख्यानावरण च्यार कषाय वज्रर्षभनाराचसहनन औदारिकद्विक मनुष्यगति मनुष्यगत्यानुपूर्व्य मनुष्यआयु इन दशकी व्युच्छित अविरतगुणस्थानमे होयहै तातै देशविरतमे सडसठिहिका वंध होयहैं। वहुरि पचमगुणस्थानमे च्यार अप्रत्याक्यानावरणकी व्युच्छित्ति तदि छठे प्रमत्त गुणस्थानमे त्रेसठिही वंध योग्य है।

वहुरि प्रमत्तगुणस्थानमे अस्थिर अयश.कीर्ति अशुभ असाता अरति शोक इनि छह प्रकृतिके वधकी व्युच्छित होइ तदि अप्रमत्तगुणस्थानमें बधयोग्य सतावन तिनमे आहारकद्विक मिले गुणसाठि वध योग्य है। वहुरि अप्रतगुणस्थानमे एक देवआयुकी व्युच्छित भई तातै अपूर्वकरणमे वधयोग्य अठावन प्रकृति है। वहुरि अपूर्वकरणमे पहले भागमें तो निद्रा प्रचलाको व्युच्छिति होह है अर छठा भासमे तीर्थंकर निर्माण प्रशस्त विहायोगति पचेद्रिय तैजस कार्मण आहारकद्विक समचतरस्रसस्थान देवगति देवगत्यानुपूर्व्य वैक्रियिक वैक्रियिक अगोपाग स्पर्श रस गध वर्ण अगुरुलघु उपघात परघात उच्छ्वास त्रस वादर पर्याप्त प्रत्येक स्थिर शुभ सुभग सुस्वर आदेय ऐसे तीसकी व्युच्छिति होय है।

बहुरि अंतभागविषै हास्य रति भय जुगुप्सा इनि च्यारिकी व्युच्छिति होयहै। ऐसे अपूर्वकरणमे छतीस प्रकृतिकी व्युच्छिति होय है तदि अनिवृतिकरमै बाईस प्रकृतिही बधयोग्य है। बहुरि अनिवृतिकरणके पचभागनिमे अनुक्रमतै पुरूषवेद सज्वलन च्यार कषाय इन पाचकी व्युच्छिति होय है तदि सूक्ष्मसांपरायमे सतरह प्रकृति बंधयोग्य है। बहुरि सूक्ष्मसा-परायके अतमे पांच ज्ञानावरण पाच अतराय च्यार दर्शनावरण यशस्कीर्ति उच्चगोत्र इनि सोलहके बधके व्युच्छिति होय है तदि उपशातकषाय क्षीणकषाय सयोगीजिन इन तीन गुणस्थाननिमे एक सातावेदनीयही बंधेहै ताकी एक समयकी स्थिति सो बधके समयमेही उदय होय निर्जरेहै। अर अयोगी बधरहित है। ऐसे गुणस्थाननिमे बंधप्रकृति कही मार्गणानिमे आगममे कहीहैं सो जाननी।

बहुरि इनमेहू ज्ञानावरण पाच दर्शनावरण नव अतराय पांच मिथ्यात्व एक कषाय-सोलह भय जुगुप्सा तैजस कार्मण अगुरूलघु उपघात निर्माण वर्णचतुष्क ए सैतालीस प्रकृति अपनी व्युच्छितिपर्यंत ध्रुव उदयरूप है। इनका उदय समस्त ससारीनिकें अपना व्युच्छितिके गुणस्थानपर्यंत ध्रुवउदयकू धारेहै। इनि प्रकृतिनिका उदय अनादितै सासता निरतर है तातै ध्रुवउदयरूप है बहुरि सैतालीसतो कही सो अर तीर्थंकर अहारकद्विक च्यार आयु इन चोवन-प्रकृतिनिका ध्रुवबध जानना इनका निरतर बध हुवाही करेहै। परतु तीर्थंकर अर आहारक-द्विक ए तीनप्रकृतिनिका बध है सो तो बधका प्रारभकाल पाछै जिन गुणस्थाननिमे बध सभवे तहा तो निरतर बधेहै। अर बधयोग्य गुणस्थानका अभाव होजायतो बधकू नही प्राप्तहोय है अर आयु है सो बधका प्रारभ भए पीछै आयुबधका त्रिभागका अंतर्मुहूर्त्तके समय है तिनमेही निरतर बधेहै अन्य अवसरमे निरतर बधी नहीहै।

बहुरि त्रसस्थावरमेतै एक बादरसूक्ष्ममे एक पर्यात अपर्याप्तमे एक प्रत्येकसाधारणमे एक स्थिर अस्थिरमे एक शुभअशुभमे एक शुभगदुर्भगमे एक आदेय अनादेयमै एक यशअयशमे एक गतिच्यारिमे एक जाति पांचमे एक शरीरतीनमे एक सस्थानछहमे एक आनुपूर्व्य च्यारमे एक ऐसे चोदह प्रकृति नामकर्मकी निरतर बधी हैं। ऐसे तो बध कह्या।

अब उदयमे ज्ञानावरणादि एकसो बाईस प्रकृति है तिनमै ऐसा उदयका नियम है। आहारक शरीरका उदय प्रमत्तगुणस्थानमैही होइ तीर्थंकरप्रकृतिका उदय केवलीहीकै होय है। मिश्रप्रकृतिका उदय मिश्रगुणस्थानमैही होय अन्यमे नही होय। सम्यक्त्वप्रकृतिका उदय क्षयोपशमसम्यक्त्वहीमै होय है। अर आनुपूर्व्यका उदय मिथ्यात्व सासादन अविरत इन तीन गुणस्थाननिमैही होई अन्यमै नही होय। इहा इतना विशेष जो सासादनगुण-स्थानमै मरणकरि नरक नही जाय यातै नरकानुपूर्व्य मिथ्यात्व अर अविरत इन दोय गुणस्थाननिमैही होय है।

अव गुणस्थाननिमैं उदय योग्य प्रकृति कहै है। उदययोग्य प्रकृति एकसो वाईस तिनमें सम्यक्त्वप्रकृति अर मिश्रप्रकृति अर आहारकद्विक तीर्थंकर इन पांच विना मिथ्यात्वगुणस्थानमे एकसो सतरहप्रकृतिनिका उदयकी योग्यता है। वहुरि मिथ्यात्वमे मिथ्यात्व आताप सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण इनि पचप्रकृतिनिकी व्युच्छित्ति होय अर एक नरकानुपूर्व्यका उदय नही तातै सासादनमें एकसो ग्यारह उदययोग्य हैं।

वहुरि च्यार अनतानुबंधी एकेंद्रिय स्थावर विकलत्रय इन नव प्रकृतिनिका उदय सासादनपर्यंतही है तातै मिश्रगुणस्थानमं एकसो दोय प्रकृति भई परतु एक मिश्रप्रकृतिका उदय तो मिलिगया अर तीन आनुपूर्व्यका उदय मिश्रमै होइ नही तातै निकासि लिनी तदि सौ प्रकृतिका उदय होइ। वहुरि मिश्रगुणस्थानमे एक मिश्रप्रकृतिकी व्युच्छित्ति होइ तदि अविरतमे नीन्याणवे प्रकृति रही फिर च्यार आनुपूर्व्य एक सम्यक्त्वप्रकृति ऐसे पाच मिले उदययोग्य एकसो च्यार प्रकृति है। वहुरि अप्रत्याख्यानावरण च्यार कषाय अर वैक्रियिक अप्टक् मनुष्यगत्यापूर्व्य तिर्यग्गत्यानुपूर्व्य दुर्भंग अनादेय अयश ऐसे सतरह प्रकृति चतुर्थगुणस्थानके अनतपर्यंतही हैं। तातै व्युच्छित्ति भई तदि देशसयम गुणस्थानमै उदययोग्य सत्यासि प्रकृति है।

वहुरि प्रत्याख्यानावरण च्यार कषाय अर तिर्यच आयु उद्योत नीचगोत्र तिर्यचगति इन आठप्रकृतिनिकी देशसयमके अतमे व्युच्छित्ति होई है तदि प्रमत्तगुणस्थानमे उदययोग्य गुण्यासी प्रकृतिमैं आहारकद्विक मिले इक्यासी उदययोग्य हैं। वहुरि आहारकद्विक अर स्त्यानगृद्धि अर निद्रानिद्रा प्रचलाप्रचला इन पाचकी व्युच्छित्ति प्रमत्तगुणस्थानमे होई हैं तदि अप्रमत्तमे छिहत्तरि उदयके योग्य है। वहुरि सम्यक्त्वप्रकृति अर अतका तीन सहनन इन च्यारकी व्युच्छित्ति अप्रमत्तमै होई है तदि अपूर्वकरणमे उदययोग्य वहत्तरि प्रकृति है। वहुरि छह नोकषायकी व्युच्छित्ति अपूर्वकरणमे होई है तदि अनिवृत्तिकरणमे छठी प्रकृति उदययोग्य है।

वहुरि अनिवृत्तिकरणमैं तिन वेद सज्वलनक्रोध मान माया इनि छहकी व्युच्छित्ति भई तदि सूक्ष्मसापरायमैं साठिही उदययोग्य है। वहुरि सूक्ष्मसापरायमैं सूक्ष्मलोभकी व्युच्छित्ति होइ है तदि उपशांतकषायमे गुणसठि प्रकृतिका उदयकी योग्यता है। वहुरि वज्रनाराच अर नाराच दोऊनिकी व्युच्छित्ति उपशातकषायमैं होइ है तदि क्षीणकषायमे सतावन प्रकृति उदययोग्य है। वहुरि निद्रा प्रचला अर पाच ज्ञानावरण अर पाच अतराय च्यार दर्शनावरण इन सोल्हकी व्युच्छित्ति क्षीणकषायमे होई तदि सयोगीगुणस्थानमैं एक [illegible] और मिली बीयालीस उदययोग्य है।

वहुरि एक वेदनीय निर्माण स्थिर अस्थिर शुभ अशुभ सुस्वर दु.स्वर प्रशस्तविहायोगति औदारिक औदारिक अगोपाग तैजस कार्मण समचतुरस्रसंस्थान स्पर्श रस गंध वर्ण अगुरु- लघु उपघात परघात उछ्वास प्रत्येक ऐसे तीसकी व्युच्छित्ति सयोगी गुणस्थानमै होइ है तदि ओयोगीमै वारहका उदय होय है। बहुरि एक वेदनीय मनुष्यगति पचेद्रिय सुभग त्रस वादर पर्याप्त आदेय यशस्कीर्त्ति तीर्थंकरत्व मनुष्यायु उच्चगोत्र इन बारह प्रकृति- निकी व्युच्छित्ति अयोगी भगवानके होइ है तदि सिद्धपरमेष्ठी समस्त कर्मोदयरहित अनतज्ञान अनतसुखमय निरतर अविनाशी तिष्ठै है। ऐसे इहा गुणस्थाननिमे उदयप्रकृति कही। अर मार्गणानिमै आगमके अनुसार जाननेयोग्य है।

इहां ऐसा अन्यविशेष जानना। गति आनुपूर्व्य आयु ए तीन सदृशस्थानमै युग- पतहि उदय आवै हैं। अर आतापप्रकृतिको उदय बादर पर्याप्त पृथ्वीकायकैही होय है। अर उच्चगोत्रको उदय देव मनुष्य दोय गतिहीमै होइ है। अर स्त्यानगृद्धि निद्रानिद्रा प्रचलाप्रचला इन तीनका उदय कर्मभूमिहीके मनुष्य तिर्यचनिकै पर्याप्त अवस्थामे उदय आवै है अन्यके नही। परतु आहारक तथा वैक्रियिक ऋद्धिके प्रगट करनवारेनिकै उदय नही होय है। और अव्रतगुणस्थानमे अपर्याप्तअवस्थामे स्त्रीवेदका उदय नही अर घमा- नरकका अपर्याप्तविना अन्य द्वितीयादिपृथ्वीके नारकीनिका अपर्याप्तअवस्थाका अव्रतगुण- स्थानमै नपुसकवेदकाहू उदय नही तातै स्त्रीवेदका अव्रतगुणस्थानमै च्यारों आनुपूर्व्यका उदय नही अर नपुनकका अव्रनमै नरकविना तीन आनुपूर्व्यका उदय नही है।

और एकेंद्रिय विकलत्रय अर स्थावर सूक्ष्म अपर्याप्त इनका उदय तिर्यंचनिहीमै होय अन्यकै नही। अर अपर्याप्तका उदय मनुष्यकैभी होय है अर षट्सहनन अर औदा- रिकद्विकका उदय मनुष्यतिर्यंचहीकै होय है। अर वैक्रियिकद्विक देवनारकीनिकैही उदय होय है। वहुरि उद्योतप्रकृतिनिका उदय है। सो तेजस्काय वातकाय साधारणवनस्पति पृथ्वी- कायविना वादरपर्याप्त अन्यतिर्यंचनिकै होय है। अर एकेन्द्रियकै अगोपांग अर सहननका उदय नही होय है। ऐसे सामान्य उदयप्रकृति कही।

वहुरि इहा इतना विशेष जानना। जो कर्मप्रकृतिका उदय आवै है। तिनकू वाह्यनिमित्तभी जाननी। इनि कर्मसारिसे पदार्थ है ते कर्मकीज्यो रस देनेके निमित्त है। ज्ञानावरणकीज्यो वस्तुका विशेषज्ञानकू रोकनेवाला महीन पडदा है। जैसे देवताका मुखऊ- परि महिनवस्त्र पडिजाय तदि सामान्य तो ग्रहण हो जाय परतु समस्त अवयवसहित विशेपग्रहण करनेकूं समर्थ नही होय। दर्शनावरणकीज्यौ वस्तुका सामान्यग्रहणके रोकने- वारा द्वारविषै नियोगी कीया द्वारपाल है। सो नोकर्म है। जातै द्वारपाल भाही प्रवेश नही करनेदे तदि देवताका सामान्य भी ग्रहण नही होय है।

वेदनीयका सद्वतलपेटी खड्गधारा नोकर्म है । जातै वेदनीयज्यौ याहू सुखदु ख वेदनाका कारण है। मोहनीयका मद्य नोकर्म है। जातै मोहनीयज्यौ मद्यहू जीवका गुणक घ'तै है। आयुकर्मका च्यार प्रकार आहार नोकर्मद्रव्य है । जातै च्यार प्रकार आहार-कैहू आयुकर्मकीज्यौ शरीरकी स्थितिका हेतुपणा है। वहुरि नामकर्मका औदारिकादिदेहही नोकर्मद्रव्य हैं। जातै औदारिक देहकैहू योगका उपजावना सभव है।

वहुरि गोत्रकर्मका उच्च नीच अग नोकर्म है । जाते गोत्रकर्मज्यौ उच्च नीच अगकैहू कुलादिक प्रगट करनेका सद्भाव है । अतरायकर्मको भडारी नोकर्म है। जातै अतरायकर्मज्यौ मडारिहू भोगादिवस्तुनिके सयोगमे विघ्न करै है। ऐसे उत्तरप्रकृतिनिकाभी जानना।

मतिज्ञानादिका रोकनेवाला मतिज्ञानादि कर्म है । त्योही पटादिककी आडमति-ज्ञानकू रोकै हैं। विषादिक द्रव्य श्रुतज्ञानकू रोकै है । अवधिज्ञान मन पर्ययज्ञानका घात करनेवाला कोऊ सक्लेश करनेवाला वाह्यपदार्थ है। केवलज्ञानावरणकै नोकर्म नाही है। केवलज्ञान क्षायिक हैं। याकू रोकनेवाला सक्लेशकारी वस्तु नही है। पचप्रकारकी निद्राका नोकर्म भैसीका दही लशुन खलादिद्रव्य है। चक्षुरचक्षु दर्शनकू रोकनेवाला पटादिक वस्तु-करि आच्छादकता है । अवधिदर्शनकू रोकनेवाला सक्लेशकारी वाह्यपदार्थ नोकर्म है । केवलदर्शन क्षायिक है याका नोकर्म नही है । सातावेदनीयका इष्ट अन्नपानादि नोकर्म है द्रव्य है। असाता वेदनीयका अनिष्ट अन्नपानादिक नोकर्म है। सम्यक्त्वप्रकृतिका नोकर्म कहै है ।

आप्त अर आप्तका आलय आगम अर आगमका धरनेवाला तप अर तपका धारक ए षट् आयतनहू सम्यक्त्वप्रकृतिकीज्यो सम्यग्दर्शनके घात करनेवारे नही। सम्यक्त्वकै चल मल अगाढहीके हेतु है। अर अनाप्त अर अनाप्तका स्थान कुश्रुत अर कुश्रुतका धारक मिथ्यातप अर मिथ्यातपस्वी ए छह अनायतन मिथ्यात्वकर्मके नोकर्म है। मिथ्यात्वज्यौ श्रद्धानके विगाडनेवाले है। अर छह आयतन अर अनायतन दोऊ मिले हुए मिश्रकर्मका नोकर्म है। अनतानुवधी कषायका मिथ्यात्वका आयतनादि षट् अनायतनादिक है।

वहुरि अप्रत्याख्यान अप्रत्याख्यान सज्वलन कषायनिका जो देशव्रत सकलसयम यथाख्यानचारित्रके निवारक अपने अपने योग्य काव्य नाटिक कोकादिक ग्रथ तथा विटजनकी संगति ए नोकर्म द्रव्यकर्म है। वहुरि स्त्रीपुरुषनिका शरीर स्त्रीवेदका नोकर्म है। वहुरि पुरुषशरीर स्त्रीशरीर है । ते पुरुषवेदका नोकर्म द्रव्यकर्म है। वहुरि स्त्रीपुरुष नपुसक शरीर है । ते नपुंसक वेदका नोकर्म है। वहुरि विडवनारूप वहुरूपियादिक हास्यके पात्रते हास्य कर्मका नोकर्म है।

बहुरि सुपुत्रादिक रतिनोकषायको नोकर्म है। बहुरि इष्टका वियोग अनिष्टाका संयोगादिक अरतिनोकषायका द्रव्यकर्म है। बहुरि सुपुत्रादिकका मरणका शोक नोकषायका नोकर्म है। बहुरि निंदितद्रव्यादिजुगुप्सा नोकषायका नोकर्म है। बहुरि सिंहादिकका सगम भयनोकषायका नोकर्म द्रव्यकर्म है। बहुरि अनिष्टआहार विष मृत्तिकादिक नरकायुका नोकर्म है। तिर्यंग्मनुष्य देवादिकनिका इष्ट अन्नादिक तिर्यंग्मनुष्यआयुका नोकर्म है।

च्यार प्रकारकी गतिनिका क्षेत्रमे अपनीअपनी गतिका क्षेत्रही नियमकरि नोकर्म है। बहुरि एकेंद्रिय द्वीद्रिय त्रीद्रिय चतुरिंद्रिय पचेद्रिय जातिनाम कर्मनिका अपनीअपनी द्रव्येंद्रियही नोकर्म द्रव्यकर्म है। बहुरि शरीरनामकर्मका उदयतै उपज्या देहस्कधही शरीरनामकर्मका नोकर्महै। तिनमै औदारिक वैक्रियिक आहारक तैजस शरीरनामकर्मका अपनेअपने देहका उदयजनित च्यार देहनिके योग्य औदारिकादि शरीरवर्गणा नोकर्म हैं। बहुरि कार्मणशरीरका विस्रसोपचय नोकर्म द्रव्यकर्म है। बहुरि बधनादिक पुद्गलविपाकीसहित शेष जे जीवविपाकी तिनका देहही नोकर्म द्रव्यकर्म है। जातै पुद्गलरूप जो जीवका सुखादिकभाव तिनका शरीरवर्गणाही उपादानकारण है।

बहुरि क्षेत्रविपाकीरूप जे च्यार आनुपूर्व्यनिका अपनांअपनां क्षेत्रही नोकर्म द्रव्यकर्म है। बहुरि स्थिरनाम कर्मका स्थिररसरूधिरादिक नोकर्म हैं। अस्थिरनाम कर्मका अस्थिररसरूधिरादिक नोकर्म द्रव्यकर्म है। बहुरि शुभनाम कर्मका शरीरका शुभ अवयव नोकर्म है। अशुभनाम कर्मका शरीरके अशुभ अवयव नोकर्म द्रव्यकर्म है। स्वरानाम कर्मका सुस्वरदु.स्वररूप परणये पुद्गल नोकर्म द्रव्यकर्म है। बहुरि उच्चगोत्रका लोकपूजितकुलमे उपज्या उच्चदेहही नोकर्म द्रव्यकर्म है। नीचगोत्रका नीचकुलमे उत्पन्न हुवा नीचदेहही नोकर्म द्रव्यकर्म है। नीचगोत्रका नीकुचसमे उत्पन्न हुवा नीचदेहही नोकर्म द्रव्यकर्म है।

बहुरि दान लाभ भोग उपभोग नाम अतरायको विघ्न करनेवाला पर्वत नदी पुरूषादिक नोकर्म हैं। बहुरि वीर्यातरायकर्मको रूक्ष आहारपान द्रव्यही नोकर्म हैं। ऐसे कर्मके उदयज्यो काय करनेवाले वा कर्मके उदयकू वाह्यनिमित्तरूप कर्मसारिसे नोकर्मद्रव्य कहे। जातै कर्मका उदयहू वाह्य अभ्यतर अनेककारणनिकरि आवेहै।

द्रव्य क्षेत्र काल भाव समस्तही निमित्त है। उदयमे आजाय सो तो अपना तीव्र मंद रस देवेही। परतु वाह्यनिमित्त टलिजाय तो निमित्तविना उदय आवै नही। वाह्यसामग्री द्रव्यक्षेत्रादिकका कारण है। तातैही अशुभसंयोग छांडिए है। शुभके उदयकू निमित्त शुभसामग्री मिलाइए है। सारा उपाय ए वाह्यही कारण है। इस भरतक्षेत्रमे अवार दु.खमकाल प्रवर्तैहै तातै दु.ख होनेकी सामग्री ते सुलभ हैं अर सुख होनेकी दुर्लभ है। सो देखिएही है।

जो रोगादिक दु ख उपजनेका कारण ऐसा वस्तु औषधादिक सुलभ है धन खरचेंविनाही आवेहै अर रोगादिक मेटनेकी औषधादिक धन दीएभी दुर्ल्लभ है । आक धतूरा ववूल वहुत उपजेहै । सुदर सुगध मिष्ट रोगापहारी फल देनेवाला दुर्ल्लभ है सो सब दु खमकालका प्रभाव है । कालका निमित्तसू समस्त मनुष्यादिक वृक्षादि दु ख करनेवाले वहुत उपजैहै । उपकारवस्तुकी विरलता है ।

अब सत्ताकी प्रकृतिकू गुणस्थाननिमे कहेहै । सत्तायोग्य एकसो अडतालीस प्रकृति है । तिनमे मिथ्यात्वगुणस्थामे एकसो अडतालीसकी सत्ता सभवेहै । सासादनमे तीर्थंकर आहारकद्विकविना एकसोपैतालीसकी योग्यता है । मिश्रतै तीर्थकरविना एकसो सैतालीसकी योग्यता है । अविरतमे एकसो अडतालीसकी है । देशव्रतमे नरकायुविना एकसो सैतालीस प्रमत्तमे तिर्यगायु नरकायुविना एकसो छियालीस है । अप्रमत्तमेभी तिर्यगायु नरकायुविना एकसो छियालीस है ।

वहुरि उपशमसम्यग्दृष्टीके अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसांपराय उपशातमोह इन च्यार गुणस्थानरूप उपशमश्रेणीविषै एकएकमे एकसो छीयालीसको सत्व है । वहुरि क्षायिक-सम्यग्दृष्टीकै उपशमश्रेणीके च्यार गुणस्थाननिमे नरक तिर्यंक देवआयु अर च्यार अनतानुबधी अर तीन दर्शनमोहकी इन दशविना एकसो अडतीसका सत्व है । वहुरि क्षपकश्रेणीके च्यार गुणस्थान हैं तिनमे अपूर्वकरणमे तो तीन आयु च्यार अनतानुबन्धी तीन दर्शनमोहनीविना एकसो अडतीस है ।

वहुरि अनिवृत्तिकरणका नवभाग है । तिनमै प्रथमभागमे तो एकसोअडतीसहीका सत्व है अर इहाही नरकगति नरकगत्यानुपूर्व्य तिर्यग्गति तिर्यग्गत्यानुपूर्व्य विकलत्रय स्त्यानगृद्धि निद्रानिद्रा प्रचलाप्रचला उद्योत आताप एकेंद्रिय स्थावर सूक्ष्म साधारण इन षोडशकी व्युच्छित्ति भई तदि अनिवृत्तिरणका द्वितीयभागविषे एकसो बाईसका सत्व है ।

वहुरि द्वितीयभागमे आठ मध्यमकषायकी व्युच्छित्ति भई तदि तृतीयभागमे एक सो चोदहका सत्व हैं । ऐंसेही तृतीयभागमे षढवेद चतुर्थभागमे नपुसकवेद पचमभागमे हास्यादिक छह नोकषाय छठाभागमे पुरुषवेद सप्तममे सज्वलनक्रोध अष्टममे मान नवममे माया ऐसे अनिवृत्तिकरणके नव भागनिविषै छत्तीसप्रकृतिका नाश भया तदि सूक्ष्मसापरायमे एकसो दोयका सत्व है । वहुरि सूक्ष्मसांपरायमे संज्वलनलोभकी व्युच्छित्ति भई तदि क्षीणमोहमे एकसो एकका सत्व है।

वहुरि क्षीणमोहमे निद्रा प्रचला पांच ज्ञानावरण च्यार दर्शनावरण पच अंतराय ऐसे षोडशका नाश होतै पचासी प्रकृतिका सत्व सयोगीजिनकै है। सयोगीमे व्युच्छित्ति नही है। वहुरि पच शरीर पचवधन पच सघात षट् सस्थान तीन अंगोपाग छह सहनन पांच वर्ण दोय गध पच रस आठ स्पर्श स्थिर अस्थिर शुभ अशुभ सुस्वर दु स्वर देवगति देवगत्यानुपूर्व्य प्रशस्त अप्रशस्त विहायोगति दुर्भग निर्माण अयश अनादेय प्रत्येक अपर्याप्त अगुरूलघु उपघात परघात उच्छ्वास एक वेदनीय नीचगोत्र एक वहत्तरि प्रकृति अयोगिकै द्विचरमयसमयमै नाशनै प्राप्त होय तदि अयोगीका अतसमयमे तेरहका सत्व है ।

वहुरि अयोगीका अतका समयमे एक वेदनीय मनुष्यगति पचेद्रियजाति सुभग त्रस वादर पर्याप्त आदेय यश तीर्थकर मनुष्यायु उच्चगोत्र मनुष्यगत्यानुपूर्व्य इन तेरहका नाशकरि एक समयमे सिद्धालयकूं प्राप्त होय है। ऐसे सत्वका गुणस्थाननिमें सामान्यवर्णन कीया। मार्गणानिमे गोमटसारादि आगमतै धारण करना ।

अव दशकरणका नामादिक स्वरूप कहेहैं। वधकरण । १, उत्कर्षणकरण । २, सक्रमणकरण । ३, अपकर्पणकरण । ४, उदीरणाकरण । ५, सत्वकरण । ६, उदयकरण ७, उपशमकरण । ८, निधतिकरण । ९, निकाचनकरण । १०, ऐसे दशकरण जानने । जिवके मिथ्यात्वादिक परिणामनिकरि जो नवीन पुद्गलद्रव्य ज्ञानावरणादिकर्मके स्वरूप परिणमे है। अर कर्मस्वरूप होइ जीवका ज्ञानादिगुणानिकू आच्छादन करे हे सो वधनाम करण है ।

वहुरि कर्मनिकी स्थिति अर अनुभाग पूर्वे वधरूप था तिनकी वृद्धिका होना सो उत्कर्षण नाम है। वहुरि जो प्रकृति अपने स्वरूपकू छाडि परप्रकृतिरूप परिणमनकू प्राप्त होइ सो सक्रमण नाम है।

वहुरि स्थिति अर अनुभागकी हानि होना सो अपकर्षणनाम है। उदयावली-वाह्य तिष्ठता कर्मकू स्थितिद्रव्यकू अपकर्षणका वशतै उदयावलीविषै निक्षेपण करना सो उदीरणानाम है। पुद्गलनिका कर्मरूपकरि अवस्थितपणा सो सत्वनाम है। वहुरि कर्मके निषेक अपनी स्थितिका क्षय होनेतै सदेव झडै सो उदयनाम है । वहुरि जो कर्मस्वरूप परिणम्या पुद्गलद्रव्य उदयावलीविषै क्षेपनेकू अशक्य होइ सो उपशांतनाम है। अर जो कर्मस्वरूप परिणम्या पुद्गल उदयावलीमैं क्षेपणेकूं अर सक्रमण करनेकू शक्य नही होइ सो निधत्तिननाम है । वहुरि जो कर्मपुद्गलद्रव्य उदयावलीमैं क्षेपणेकू अर सक्रमण करनेकू अर अपकर्षण करनेकू शक्य नही होइ सो निकाचितनाम है । ऐसे कर्मकी दश अवस्था है ।

तिनमे मिथ्यात्वगुणस्थानकूं आदिकरि अपूर्वकरणगुणस्थानपर्यंत तो दश करण है। अपूर्वकरणकै ऊपरि दशमगुणस्थानपर्यंत उपशांतनिधत्तिनिका चित्तविना सात करण है। ऊपरि सयोगीपर्यंत सक्रमणकरणविना छह कारण है। अयोगकेवलीगुणस्थानविषै सत्वकरण अर उदयकरण दोयही करण है। यहा इतना विशेष है। उपशातकषायविषैं मिथ्यात्वप्रकृतिको अर मिश्रप्रकृतिको सम्यक्त्वरूप करणेकरि सक्रमकरणहू है। अन्यप्रकृतिनिका सक्रमकरण-विना छह करणही हैं। ऐसे बधपदार्थ है। सो परमावधि सर्वावधिज्ञानी तथा मन पर्ययज्ञानी तो प्रत्यक्ष जानै है। जिनकै एकएक परमाणुका अनतानत शक्तिके अंशपर्यंत जाननेका सामर्थ्य है। अन्य जीव तिनका उपदेशथा आगमतै जानि इस कर्मका विध्वस करना योग्य है।

ऐसे इस अध्यायमे बधतत्वका निरूपण है। तहां पहले तो गुणस्थानादि वीस प्ररूपणा वर्णनकरि बहुरि मिथ्यात्व आदि बधके कारण कही अर वंधका स्वरूप कह्या। आगै तिसके च्यार भेद कहिकरि पहला प्रकृतिबधकी मूलप्रकृति आठ अर उत्तरप्रकृति एकसो अडतालीस तिनके भिन्नभिन्न नाम कहि अर अष्टकर्मनिकी तथा उत्तरप्रकृतिनिकी उत्कृष्ट जघन्य स्थिति कही।

वहुरि अनुभवबध अर प्रदेशबधका स्वरूप कह्या। वहुरि पुण्यपापप्रकृतिनिका भेद कह्या। वहुरि बधकू अर उदयसत्वकी गिणति गुणस्थानद्वारै कही। बहुरि निरतरबधी ध्रुव-वधयोग्यप्रकृतिनिकूं तथा ध्रुव जिनका उदय तिन प्रकृतिनिकू कही दशकरणरूप दश अवस्थाका सामान्यवर्णनकरी अष्टम अध्याय समाप्त करी।

॥ इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

ऐसे तत्वार्थका है अधिगम जातै ऐसा जो दशअध्यायरूप मोक्षशास्त्रतिसविषै अष्टम अध्याय समाप्त भया ॥ ८ ॥

— दोहा —

है जातै तत्वार्थका । अधिगम सबसुखदाय ॥
मोक्षशास्त्र मंगलमय । नमि अष्टम अध्याय ॥ ८ ॥

अष्टमो अध्याय समाप्तः

॥ ॐ नमः परमात्मने ॥

अथ नवमोऽध्यायः ।

अब नवम अध्याय प्रारंभ करै है ।

– दोहा –

ज्ञानविरागस्वभावतै । करैन कर्मप्रवेश ।
पूर्वकर्म बहु निर्जरै । पाय आप्तउपदेश ॥ १ ॥

बंधपदार्थका व्याख्यानकै अनंतर संवरतत्व कहनेंकू सूचन करै है । जो यो अष्टप्रकार कर्मनिको बंध है सो अनादिसंतानतै वारंवार सुखदुःखका कारण है । अर समस्त आत्मप्रदेशन ऊपरि इन कर्मनिका दृढ अवस्थान है । अर नानाजातिके शरीरके उपजावनमै समर्थ है सो ऐसा बंध कौन उपावकरि नाशकू प्राप्त होइ यातै बंधके नाशकै अर्थि संवरका लक्षणकू कहे हैं ।

आस्रवनिरोधः संवरः ॥ १ ॥

अर्थप्रकाशिका—आस्रवका निरोध होना सो संवर हैं । कर्मकें आवनेके निमित्त जो मन वचन कायके योग मिथ्यात्व कषायादिकनिका निरोध होनेतै जो अनेकदुःखनिका कारण जो कर्म ताकी प्राप्तिका अभाव होना सो संवर है । सो संवर द्रव्य भावको भेदकरि दोय प्रकार है । चतुर्गतिमे भ्रमणरूप जो संसार ताको कारण जो क्रिया ताका अभाव होना सो संवर है । अर भावके निमित्ततै कर्मपुद्गलनिका आगमनका रुकना सो द्रव्यसंवर है । इहां गुणस्थाननिमै संवर योग्य प्रकृतिनिका कथन अष्टम अध्याय अंतमै कह्याही है । इहां आस्रवका निरोध होना सो संवर कह्या परतु आस्रवके निरोध कौन कारण करि होइ ऐसा नही जाण्या यातै आस्रवनिरोधके कारण कहनेकूं कहै है ।

स गुप्तिसमितिधर्मानुप्रेक्षापरिषहजयचारित्रैः ॥ २ ॥

अर्थप्रकाशिका– स कहिए कह्या जो सवर सो गुप्ति समिति धर्म अनुप्रेक्षा परीषह-जय चारित्र इन छहप्रकारकरि होइ है। ससारपरिभ्रमणके कारणनितै आपकी रक्षा करना सो गुप्ति है। परप्राणीनिकै पीडाका परिहारकी इच्छा करि जो सम्यक्यत्नाचार-रूप प्रवृत्ति करना सो समिति है। इष्ट जो नरेंद्र मुनींद्र देवेंद्रादिस्थानमे आत्माकू धारण करै सो धर्म है।

शरीरादिक परद्रव्य ज्ञानस्वभाव आत्मद्रव्य अन्य धर्मादिक द्रव्यनिका स्वभावनिका वारवार चिंतवन करना सो अनुप्रेक्षा है। क्षुधा तृषादि परिषह बाह्य अभ्यतर निमित्ततै प्राप्त होइ तिनकूं क्लेशरहित परिणामनितै सहना सो परिषहजय हैं। ससारपरिभ्रमणकू कारण ऐंसी क्रियाका अभावकरि आचरण करना सो चारित्र हैं ऐंसे गुप्ति समिति धर्म अनुप्रेक्षा परिषहजय चारित्र इनकरि सवर होना कह्या। इहा सवरका प्रकरण होते हू स शब्द सूत्रमे कह्या सो ऐसा जणावै है जो गुप्त्यादिकनितैंही सवर होइ है। अन्य जो तीर्थनिम अभिषेक करना दीक्षाग्रहण करना मूड मुडावना देवताराधनादिक सवरके कारण नही है। जातै राग द्वेष मोहकरि ग्रहणकीया कर्मका अभाव होना अन्यकारणनिकरि नही सभवै है। अब सवरका अन्यहू कारण है ताकू कहै हैं।

तपसा निर्जरा च ॥ ३ ॥

अर्थप्रकाशिका–तपकरि सवर तो होइही है तपतै निर्जराहू होइ है। यद्यपि दश-लक्षणधर्मविषै तप आगया तोहू समस्त सवरके कारणनिमे तप है सो प्रधानकारण हैं। यातै प्रधानकू भिन्न कह्याही चाहिए। तपके प्रभावतै नवीनकर्मका सवर होइ है। अर पुग्गलनबधनरूप भए सत्तामे तिष्ठतेनिकी निर्जराहू होइ है यद्यपि तपका फल स्वर्ग राज्या-दिकनिका अभ्युदयरूप है तथापि प्रधानफल कर्मका क्षयकरि मुक्त होना है। गौणफल इंद्र चक्रवर्त्यादिकनिका विभव है। जैसे खेतीका प्रधानफल धान्य उपजना है गौणफल पराल घासादिकहू है। अब गुप्तिका लक्षण कहै है।

सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः ॥ ४ ॥

अर्थप्रकाशिका––योग जो मन वचन कायकी क्रिया इनका यथेष्ट आचरणका रोकना सो योगनिग्रह है। सम्यक् कहिए सत्कार लोकरंजनादिक तो इस लोकसंबधी अर विषयसुखादि परलोकसंबधीनिकी अपेक्षारहित केवलस्वरूपकी विशुद्धिताकै अर्थि योगनिका निग्रह सो गुप्ति है। मन वचन कायकी स्वेच्छाप्रवृत्तितै जो आस्रव होइ था सो इनके

निरोधतैं संवर होइ है। जो शरीरका परित्याग जेतैं नही होय तेतैं सक्लेशका अभावकैं अर्थि मन वचन कायके योगनिके रोकनेकी प्रतिज्ञा है। तोहू आहार विहार नीहार प्रश्नादिककी अपेक्षातैं योगनिकी प्रवृत्ति अवश्य होइ। तिस प्रवृत्तिमे समितिरूप प्रवर्त्तनेतैं आस्रव नही आवै है सवर होइ है। तातैं समितिनकूं कहै है।

ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥ ५ ॥

अर्थप्रकाशिका—ईर्या भाषा एषणा आदाननिक्षेप उत्सर्ग ए पाच समिति है। इहां पूर्वसूत्रतैं सम्यक्पदकी अनुवृत्ति है तातै सम्यक्पद पाचूनिमे लगाना। तातैं सम्यगीर्या। सम्यग्भाषा। सम्यगेषणा। सम्यगादाननिक्षेपण। सम्यगुत्सर्ग। ऐसे इनकी अनादिसिद्धांतमे सार्थकसज्ञा है। तहा जो मुनी जीवनिके स्थानयोन्यादिकको ज्ञाता होइ अर धर्मकै अर्थि यत्नमे सावधान होय ऐसे साधुके सूर्यका उदय होजाय अर नेत्रनिके विषयग्रहणका सामर्थ्य उपजि आवै अर मनुष्य तिर्यंचनिके परिभ्रमणतेओस बरफ इत्यादिक जिस मार्गतैं दूरि भई होइ ऐसे मार्गमें अन्यतैं मनको रोकी धीरेधीरे पद स्थापन करता शरीरका अगोपागादिकनिकूं सकोचरूप करता चूटामात्र आगली भूमिके देखनेमे दृष्टीकूं लगावता सता गमन करै ताके पृथ्वीकाय जलकायादिजीवनिकी विराधनाके अभावतैं ईर्यासमिति होइहै।

वहुरि हित मित सदेहरहित वचन बोलै सो भाषासमिति है। तहां जातै अपने ससारका अभाव होइ सो स्वहितवचन है। अर जातैं परजीवनिके ससारपरिभ्रमण मिटै सों परहित है। ऐसा वचन कहै जातैं अपना अर अन्यका हित होय। अर अनर्थक वहुत प्रलापरहित प्रामाणीकवचन सो मितवचन है।

अर जामैं सदेहादिरहित प्रगट अर्थ होय वा प्रगट अक्षरहोय सो असदिग्धवचन हैं। हित मित असदिग्ध वचन तो कहै अर मिथ्यात्ववचन ईर्षाके वचन अप्रियवचन कषायके वचन भेद करनेवाले वचन अल्पसारवचन शकाकूं धारता शकित वचन भ्रम उपजावनेवाला वचन हास्यके वचन देशकालादिकके अयोग्यवचन सभाके सत्पुरुषनिमे नही वोलनेके वचन कठोरवचन अधर्मकी विधका उपदेशक वचन अतिप्रशसादिक वचन इत्यादि सदोपवचनकूं छाडि निर्दोष जिनसूत्रके अनुकूल वचन कहै ताके भाषासमिति होइहै।

वहुरि दिवसविषै एकवार निर्दोष आहार ग्रहण करना सो एषणासमिति है। तिसके धारक गृहादिकपरिग्रहरहित अर गुणरत्ननिकरि भरि देहरूपगाडीकूं वागवाकीज्यों। प्रमाणीक आहार देय समाधिपतनकूं प्राप्ति करनेके इच्छक हैं। अर उदरमे उपजी क्षुधादिक दाहक उपशमनके अर्थि औषधिज्यो प्रमाणी आहार ग्रहणकरता भोजनके आस्वादनकी लालसारहित

देशकालादि सामर्थ्यसहित उत्तमकुलमे उपज्या अनिंद्य अर उद्गम उत्पादन एषणासंयोजनप्रमाण अगार धूम कारणादिदोषरहित नवधा भक्तिसहित कृत कारित अनुमोदनादि दोषरहित उत्तमकुलके उपजेनिकरि भक्तितै दीया अतराय टालि खडा अपना हस्तरूपही पात्रमे भोजन करे। याचना नही करे हुकारादि समस्या नही करे। आधा उदर भोजनतै भरे, चोथाई जलतै भरे अर उदरका चतुर्थभाग रीता राखै केवल रत्नत्रय धर्मका सहकारी शरीरकूं जाणि धर्मका पालनके निमित्त आहार लेहै। अर शरीरकी पुष्टता आस्वादनादि दोषररित ग्रहण करे ताके एषणासमिति होइहै।

वहुरि शरीर पुस्तक कमडलादि धर्मतै विरोधरहित अन्य जीवनितै विरोधरहित उपकरणनिकू नेत्रतै देखि पीछितै सोधि ग्रहणकरना धरना प्रवर्त्तन करना सो आदाननिक्षेपणसमिति है। वहुरि त्रसस्थावरजीवनकू वाधा जैसे नही होइ तैसे शुद्ध जतुरहित अंकुररहित मार्गचारिनिकी दृष्टीके अगोचर भूमिमे मलमूत्रादि क्षेपणकरि प्राशुकजलतै शौचक्रिया करे सो उत्सर्गसमिति है। ऐसे सवरकू कारण पचसमिति कही।

इहा कोऊ शका करे। ज्यो ईर्यासमित्यादि पचसमिति तो कायगुप्तिमे अतर्भुत है फिर भिन्न कैसे कही। ताकू उत्तर कहेहै। जो प्रमाणीककालपर्यंत समस्त योग निको निग्रह सा तो गुप्ति है। अर गुप्तिमे वहुतकालपर्यंत ठहरनेकू असमर्थ साधुके अपने कल्याणरूप क्रियामे प्रवृत्ति होय सो समिति है। याहीतै गमन भाषण भोजन ग्रहण निक्षेपण मलमोचनलक्षण समितिकी विधमे जे अप्रमादी है तिनके गमन भाषणादिद्वारे प्रवेश करते कर्मनिके निरोधहोनेते सवरकी सिद्धि होइहै। अव धर्मके सवरका हैतुपणाते धर्मकू कहेहै।

उत्तमक्षमामार्द्दवार्ज्जवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिञ्चिन्यब्रह्मचर्याणि धर्मः ॥६॥

अर्थप्रकाशिका–उत्तमक्षमा। उत्तममार्द्द। उत्तमआजव। उत्तमसत्य। उत्तमशौच। उत्तमसयम। उत्तमतप। उत्तमत्याग। उत्तमआकिंचन्य। उत्तमब्रह्मचर्य। ए दश धर्मके भेद है। आहारके अर्थि परके कुलमे गमन करते साधुके दुष्टजननिकरि कीए दुर्वचन तिरस्कार हास्य ताडन मारणादिक क्रोधकी उत्पत्तिके निमित्तनिकी निकटता होतेहू परिणाममे मलीनपणाका अभाव सो क्षमा है। वहुरि उत्तम जाति कुल रूप विज्ञान ऐश्वर्य श्रुत लाभ वीर्यनिकू विद्यमान होतैहू इन कृत मदका नही होना सो मार्द्दव है। अथवा परकरि कीया तिरस्कार होतैहू अभिमानका अभाव सो मार्द्दव है।

वहुरि मन वचन कायकी कुटिलता वक्रताका अभाव सो आर्जव है। वहुरि जो परके धन परकी स्त्रीनिमे अभिलापाका अभाव अर छह कायके जीवनिकी हिंसाका अभाव सो शौच

है अथवा अपने जीवितका लोभ पर जे स्त्रींपुत्रमित्रादिकनिके जीवितका लोभ अर अपने आरोग्यपणा चाहना तथा स्त्रीत्रादिकनिके आरोग्य रहनेका लोभ अपने इद्रिय प्रवल रहनेका लोभ तथा स्त्रीपुत्रादिकनिकी इद्रियाके प्रचलता रहनेंका लोभ अपने उपभोगसामग्री मिलनेका स्थिर रहनेका लोभ ऐसे च्यार प्रकार लोभका परिणाममे अभाव होइ समभाव सतोषभावका प्रगट होना सो शौंच है

वहुरि प्रशस्तजनामे सुदरवचन बोलना सो सत्य है। ताके जनपदादिक दश भेद कहै। कोऊ कहै जो सत्य तो भागासमितिमे अतरर्भूत है फिर सत्य कैसे कह्या। ताकू कहेहै। जो सयमी है सो साधुपुरूषमे असाधुपुरूषनिमे हित मितिही कहेहै। जो प्रमाणीक नही कहै तो रागभाव तथा अनर्थदडादिक दोष आवै तातै भाषासमिति कही। अर इहा ऐसा जो दीक्षित सयमी वा सयमानका भक्त जे श्रावक है ते ज्ञानचात्रादिककी शिक्षादिकमे सत्यवचन सूत्रके अनुकूलवचन धर्मकी वृद्धिके अर्थि वहुत बोलनाहू युक्त है।

अव सयम कहां है सो कहेहै। ईर्यासमित्यादिकमे वर्त्तता मुनीकै जीवनिकी रक्षाके अर्थि एकेद्रियादि प्राणीनिके पीडा करनेका परिहार सो प्राणीसयम है। अर शब्द रूप गंध रस स्पर्श रूप इद्रियनिके विषयनिमे रागका अभाव सो इद्रियसयम है। ऐसे प्राणसयम अर इद्रिय-सयम दोयप्रकार सयय कह्या। तिस सयमकाहू दोय भेंद है। एक उपेक्षासयम एक अपहृत-सयम दोय भेद हैं। तहां देशकालके विधानका जाननेवाला अर उत्यष्टसहननकू धारता अर मनवचनकायकी गुप्तिका धारक साधुकै जो रागद्वेषकरि लिप्त नही होना सो उपेक्षासयम है। तथा याकू वीतरागसयमहू कहेहै।

वहुरि उत्कृष्ट मध्यम जघन्य भेदकरि अपहृत सयम तीन प्रकार है। तहा प्रासुकवस्तिका प्रासुक आहारमात्रही है वाह्यसाधन जाकै अर स्वाधीन वा पराधीन है। ज्ञानचारित्रका करणा जिनकै ऐसा साधुके वाह्यजतु प्राणीका पडना हो जाय तो उस प्राणीतै अपना शरीरकू दूरिकरि प्राणीनिकी रक्षा करै सो उत्कृष्ट है। अर कोमल उपकरतै प्राणीनिकौ दूरि परिहार करै सो मध्यम है। अर अन्य उपकरणकरि प्राणीनिकू दूरि। करना सो जघन्य अपहृतसयम है।

अव इस अपहृतसयमका जाननेकै अर्थि अष्टशुद्धिताका उपदेश भगवान् कह्या है। सोही कहै है। भावशुद्धि कायशुद्धि विनयशुद्धि ईर्यापथशुद्धि भिक्षाशुद्धि प्रतिष्ठापनाशुद्धि शयनासनशुद्धि वाक्यशुद्धि। ऐसे अष्टशुद्धिका नाम कह्या। अव अष्टशुद्धिताकू कहै है। तहां जो भावशुद्धि है सो कर्मनिके क्षयोमशमकरि उपजे है। अर मोक्षमार्गमै रुचि करिकै जननाकू प्राप्तभई है अर रागादि उपद्रवकरि रहित है। सोही भावशुद्धिता है। याकू

याकू होतैंही आचारप्रकाशकू प्राप्त होय है। जैसे उज्वल भीतपरि चित्राम दिपै हैं। तैसे जाका रागादिक उपद्रवरहित भावशुद्धि होयगा ताकैही आचार भूपित होयगा।

वहुरि कायशुद्धि कहै है। जाका काय वस्त्रादिक आभरण अर आभूषणादिरहित है। अर स्नानविलेपनादिसस्काररहित है। अर शरीरमे पसेव रजादिककरि लिप्तपणाकू धारै है। अर नेत्र भ्रुकुटि ग्रीवा हस्तपादादिकनितै विकार करनेकरि रहित हैं। अर जाकी सर्वत्र यत्नाचाररूप प्रवृत्ति है। मानू मूर्तिमान प्रशमभावके सुखकू दिखावैंही है। ऐसी कायकी शुद्धिता होय तातै अन्य जीवनिकै आपतै भय नही होय है अर अन्य-जीवनितै आपकै भय नही उपजै है सोही कायशुद्धि है। अव विनयशुद्धिताकू कहै है। अरहतादिक परमगुरुनिमे यथायोग्य पूजा स्तवन वदनादिकमै लीन अर सम्यग्ज्ञानादिकनिमै गुरुनकै अनुकूलप्रवृत्तिकरि युक्त अर प्रश्न स्वाध्याय वाचना कथा विज्ञप्ति इत्यादिकनिके अगीकार करनेमै प्रवीण अर देश काल भावनिका यथावत् जाननेमे प्रवाण ऐसी आचार्य-निकै अनुकूल आचरण करनेवाली विनयशुद्धि है। समस्त त्रैलोक्यकी सपदा मूल हैं। अर या विनयशुद्धिही ससारसमुद्रके तिरणेकू जिहाज है। ऐसे विनयशुद्धि कही।

अव ईर्यापथशुद्धि कहै है। नानाप्रकार जीवनिके स्थान तथा जीवनिके उत्पत्ति-योग्य योनिस्थान अर जीवनिके वसनेके आश्रय इनका ज्ञानकरि उपज्या यत्नाचार तिसकरि प्राणीनिकै पीडाका परिहारकरि जामे गमन होय अर अपना अतरगज्ञानका प्रकाश अर सूर्यका प्रकाश अर अपनी इद्रियका प्रकाशकरि देख्याहुवा क्षेत्रमे गमन होय अर जामै शीघ्रगमन नही होय विलवतै गमन नही होय अर सभ्रमरूप विस्मयरूप क्रीडा विकार दिगतरावलोकनादिदोषरहित गमन होय सो ईर्यापथशुद्धि है। याकू होतै संतै सयम प्रति-ष्ठाकू प्राप्त होय है। जैसे सम्यक् नीत होते विभवप्रतिष्ठा पावै। ऐसे ईर्यापथ-शुद्धि कही।

अव भिक्षाशुद्धिकू कहै हैं। कैसी है भिक्षा जो भिक्षाकू जाय है तदि शरीरकू आगै पाछे नेत्रनितै अवलोकन करि है। गमन जामै अर शरीरका आगला पाछला अग ऊपरि पीछी फेरनेका है विधान जामे अर आचाराग सूत्रमै जो भिक्षाका देशकाल कह्या तिसका जाननेमे प्रवीण अर भोजनका लाभमै अलाभमै सन्मानमै अपमानमे समान है। मनकी वृत्ति जामे अर लोकनिंद्य कुलका वर्जन करनेमे तत्पर अर चद्रमाका गमनज्यो हीन अधिक गृहमे समान है।

गमन जामै अर दीन अनाथनिके ग्रह अर दानशाला विवाहगृहादिकनिके अत्यंत वर्जनेकरि सहित अर दीनवृत्तिकरि रहित अर प्रासुक आहारके अवलोकनमे सावधान अर

आगममे ज्यो कह्या निर्दोष आहारकी प्राप्तीकरि प्राणीनिकी रक्षामात्रही हैं। फल जाका अर लाभमे अर अलाभमे सुदर रसरूप आहारमे अर विरस आहारमे समान है। सतोष जामे ऐसी भिक्षा आगममे कही हैं।

भावार्थ ॥ मुनीकी भिक्षा सदाकाल ऐसे जानना। जिस अवसरमे अन्यमतनिके भेषीजन भिक्षा लेय आवर्त होय तथा बहुत धूमादिक शात होगई होय चाकीनिके मूसलनिके शब्द होते रचिगए होय तिस कालमै अपने अंगका आगला पाछला भागकू देखि पीछीसूं सोधि गमन करै। ईर्यापथ सोधते मौनसहित मार्गमै वचनालापरहित धर्मध्यानादि तथा द्वादशभावनादि चितवन करता गमन करै। सो आचारागमै मुनिके आहार करनेयोग्य देशकी अर कालकी प्रवृत्तिकू निपुण हुवा जानता होय जो देशकी कालकी प्रवृत्तिही नही जानै ताकै मुनिधर्म कैसे प्रवर्त्तै। जो इस देशमें उत्तम कुलमै मनुष्यनिकी ऐसी रीति है ऐसा खानपान है।

धर्मका आचारका मार्गकू मुनीके आहार देनेकी विधकी जाननेवाले लोक बसै है की नही जाननेवाले वसै है। तथा लोकनिकै ऐसा कालमे भोजन होइ हैं तथा इस कालमै दानमै सावधानी है। तथा इस कालमै ऐसे वाणिज्यादि कर्ममै प्रवर्त्तै है। ऐसे देशकालजनित प्रवृत्ति पहलैही श्रावकादिक धर्मात्माजननितै श्रवणकरि लीनी होय। अर जो भोजनका लाभ हो जाय तो हर्ष नही करै अर अलाभ होय तो विषाद नही करै अर सन्मान होय तो हर्ष नही अर अपमान होय तो विषाद नही करै। अर लोकनिंद्य कुलमै कदाचित् गमन नही करै। विनाजाने गमन हो जाय तो अतरायकरि वनकू पाछा जाय फिर उस दिवसमै भोजन नही करै।

अर जैसे चद्रमा दरिद्रके घरमेहू प्रकाश करै अर धन ऐश्वर्यवान राजाकें घरमेंहू प्रकाश करै तैसे साधु है सो दरिद्रीका घरमेहू भोजनके अर्थि प्रवेश करै अर धनाढ्यकैंहू प्रवेश करै। अर जे दीन अनाथ याचकादिक लोक है। तिनके घरमे प्रवेश नही करै। अर जहा दान वठता होइ विवाहादिक मगलगान गीतादिक प्रवर्त्तता होय जहा पूजन यज्ञादिक होता होय ऐसे घरमे भोजनके अर्थि प्रवेश नही करै। अर आहारकै निमित्त याचना आशीर्वाद धर्मलाभादिक नही कहै। अर विवर्णता उदरकी कृशता हस्त नेत्र भृकुटीकी समस्या तथा हुकारादिक ऐसी दीनवृत्ति कदाचित् नही करै:

तीनवार आदरपूर्वक तिष्ठतिष्ठ इत्यादिक प्रतिग्रहविना खडा नही है। जैठातांई अन्यभिक्षुरादिकनिके आनेकी मनाई नही होइ तीठापर्यंत जाय विजुलीका चिमत्कारकीज्यो संग दीयो नया मनिदीपो वाहुडी अन्य ग्रहणमे प्रवेश करै प्रासुक आहारकू देखनेमें तत्पर

अयोग्य जैसातैसा नही ग्रहण करे । अर आचारांग आगममें कही ज्यो छीयालीस दोप वत्तीस अतराय चोदह मल इत्यादिकरहित शुद्धविधकरि निर्दोष आहारकू ग्रहणकरि प्राणनिका रक्षामात्रही फल जानै है। आहार करनेकरि भोजनका आस्वादन इंद्रियवल दीर्घजीवनादिफलकूं नही चाहै है । जातै चारित्ररूप सपदा तो भोजनकी शुद्धतातै है । जैसे साधुजननकी सेवा गुणसपदाकू कारण है । लाभमे अलाभमे सुदररसरूप भोजनमे नीरस विरस भोजनमै समभाव करि जो सतोषी होय तिसहीके भिक्षाशुद्धि है ।

भिक्षाकी पाच वृत्ति है। गोचरीवृत्ति । अक्षमृषणवृत्ति । उदराग्निप्रशमनवृत्ति । भ्रमराहारवृत्ति । गर्त्तपूरणवृत्ति । ऐसे पचप्रकार भिक्षावृत्ति । तिनमे जैसे लीला आभरणादिसहित श्रेष्ठस्त्रीकरि ल्याया घासकू गौ चरै है। परतु तिस स्त्रीकी रूपसपदा आभरणादिकके देखनेमे लीन नही होइ है जैसा घास धऱ्या तैसेकू चरबेमेही लीन है तैसे साधुहू भिक्षाके देनेवाले मनुष्यनिका कोमलललित रूप सौंदर्य वेष विलास देखनेमे निरुत्सुक हुवा शुष्क आहार द्रव कहिए जलघृतादिकनिकरि रहित आहारमै तफावत नही विचारता जैसा रस नीरस शीत उष्ण कठिन कोमल जैसा दातारकरि दीया तैसा भक्षण करे है । तातै गौकीज्यो चार कहिए भक्षण तातै गोचरीवृत्ति कहिए है ।

अथवा जैसे बनके नानास्थाननिमे तिष्ठतै अपनेयोग्य धासकू गौ चरै है अर बनके स्थानशोभा सपदा देखनेमे तत्पर नही होइ है। तैसे साधुहू गृहस्थका दीया योग्य आहारहीकू भक्षण करे है। गृहस्थका महल मकान सुवर्ण रूपामय मृत्तिकामय पात्र धन समृद्धिसहितपणा रहितपणाके देखनेमे लीन नही होय तिनके गोचरीवृत्ति वा गवेषणावृत्तिकरि आहार कहिए है।

वहुरि जैसे वणिक् रत्नाके भारकरि परिपूर्ण भरी गाडीकू कोऊ घृतादिकतै वागी अपने वाछित देशकू प्राप्त करे है। तैसे मुनिहू गुणरत्ननिकरि भरी देहरूप गाडीकू निर्दोष भिक्षा देय अपने वाछित समाधिपतनकू प्राप्त करै है समाधिमरणपर्यंत लेजाय है। सो अक्षमृपणवृत्तिकरि भिक्षा है ।

इहा अक्षमृपण नाम गाडीकू वागनेंका है। वहुरि जैसे भडारमे लाग्या अग्निकू जैसातैसा जल्करि गृहस्थी वुझावेहै तैसे साधुहू उदरमे प्रज्वलित भई क्षुधारूप अग्निकू रस नीरस भोजनकरि वुलावै सो उदराग्निप्रशमनवृत्ति नाम भिक्षा है वहुरि जैसे भ्रमर है सो पुष्पकू वाधा नही करता गध ग्रहण करेहै तैसे साधुहू दातारके किंचित बाधा नही उपजावता आहारकू ग्रहण करै सो भ्रमराहारवृत्ति है। वहुरि जैसे गृहस्थ है सो अपना गृहमे भया

खाडाकू भाटारे तकि जोडो इत्यादिककरि भरिदेहै तैसे साधुहू उदररूप खाडाकू लूखा सचिक्कण शीत उष्ण जैसा प्राप्तभया भोजन तिस करि पूर्ण करेहै सो गर्त्तरपूरणवृत्ति है। ऐसे भिक्षा पचप्रकारवृत्तिकरि होय सो भिक्षाशुद्धि है।

वहुरि साधु हैं सो अपने नख रोम नासिका मल कफ वीर्य मूत्र मलादिकका क्षेपण करै। सो देशकालकू जाणि जैसे कोऊ जीव मात्रकै वाधा नही होइ परिणाम नही नही बिगडै मार्गमै आवने जावनेवालेनिका परिणामकै मलीनता नही आवै ऐसी प्रासुक चोपट-रूप भूमि होइ तहा क्षेपण करै सो प्रतिष्ठापनशुद्धि है। बहुरि शयनासनशुद्धिका इच्छक मुनि है सो जहा स्त्रीनिका आरजार होय नीचपुरूष तिष्टते होइ तथा चोर मद्यपानी सिकारी कुकर्मादि करनेवाले होय तथा श्रृगारके विकार शरीरके विकारकरि सहित उज्वलवेषके धारनेवाली वेश्या कुलटादिक जहा होइ। तथा क्रीडासामग्रीसहित तथा गीत नृत्य वादित्रादि-करी व्याप्त होय। ऐसे स्थाननिकू दूरिहिते छाडै तथा तिर्यंच रागीपुरूष मार्गके आवनेजावने वालेनिके स्थानकू छाडिकरि अकृत्रिम गुफा वृक्षनिके कोटरादिक तथा कृत्रिम शून्यगृहादिक अपने अर्थि नही रच्या ऐसे जतुबाधारहित प्रासुकस्थाननिमे तथा बनके प्रदेश पर्वतनिके शिखर वालूके टीवा इत्यादिक निर्दोषस्थानमे शयनासन करै तिनकै शयनासन है।

वहुरि वाक्यशुद्धिताका धारक साधु हे सो ऐसा वचन बोले। जो पृथ्वीकायिकादि छह कायके जीवनिका घात नही होइ। तथा पृथिव्यादिकनिका आरभकी प्रेरणारहित होइ। अर कठोर निष्ठुर परके पीडाका प्रेरक नही होइ। जिस वचनतै मिथ्यात्व असयमादिक नही होइ। कषायनका सघरहित राग द्वेष मोहका नाशकरनेमे तत्पर होइ। व्रतशील उपदेशादिक जाका प्रधान फल होइ सासारिकफल नही होइ। अर आपका परका हितरूप होइ प्रामाणीक अल्प अक्षररूप होइ मधुर होइ मनोहर होइ सयमीके योग्य होइ ऐसा वचनका उच्चारण करना सो वाक्यशुद्धि है। समस्त चारित्रसपदा वाक्यशुद्धिके आधार है। ऐसे अपहृतसयममे अष्टशुद्धि कही।

वहुरि जो कर्मका क्षयके निमित अनशनादिक तपका करना उतमतप है जैसे अग्निकरि तपाया सुवर्ण मलकू छाडि शुद्ध होय है तैसै तपकरि तपाय अत्माहू कर्ममलकरि रहित शुद्ध होयहै। वहुरि चेतन अचेतनलक्षण परिग्रहका त्याग सो त्यागधर्म है। वहुरि जो आत्मस्वरूपतै अन्य जो शरीरादिकनिमे सस्कारादिकनिका अभावकै निमित ए हमारा ऐसा ममत्वरूप अभिप्रायका अभाव सो आकचन्य है। वहुरि पूर्वै जो कलागुणनिकरि चतुर ऐसी स्त्रीनिकू अनुभवकरि तिनकूं स्मरण करनैका त्याग। तथा स्त्रीमात्रकी कथा श्रवण करनेका त्याग। तथा रसि सुगधादिकरि वासित स्त्रीनीका ससर्गसहित शय्या आसनादिकनिका ससर्गका

त्याग करना। तथा विषयानुरागरहित होइ ब्रह्म जो अपना शुद्ध आत्मा तिस विषै जो चर्या कहिए प्रवर्तन करना सो ब्रह्मचर्य है। ऐसे सवरके अर्थि दशलक्षणधर्मका धारणकह्या।

इन क्षमादिक दशधर्मनिकै उतम विशेशण है सो दृष्टप्रयोजनादिक जो ख्याति लाभ पूजदिककी निवृतिके अर्थि जानना। अर समस्त जो ए उत्तमक्षमादि गुण इनके प्रतिपक्षी जे क्रोधादिक तिनमै दोष जाणि भावनी करना योग्य हैं। सोही कहेहैं। उत्तमक्षमातै व्रतकी अर शीलकी रक्षा होइहैं। इस लोक परलोकमै दुखका सगम नही होयहै। अर समस्तजगतमै सन्मान सत्कारादि प्रगट होयहै। अर क्रोधके वशतै धर्म अर्थ काम मोक्षका नाश होयहै तातै क्षमाही करना योग्य है।

वहुरि अन्य कोऊ क्रोधके निमित्त दुर्वचन निदादि प्रगट करि है तो ऐसा विचारै जो यो मूनै निंदेहै दोप कहेहै ते दोष हमारे माही विद्यमान है कि नहीहै। जो हैं तो सत्य कहैहैं। तो सत्य कहनेवाला हमारा निंदक नही है उपकारक हैं। अव मोकू ए दोष अगीकार नही करना शीघ्रत्याग करना। सत्य कहनेवालेमै दोष कोन अज्ञानी करै। यह मेरा उपकारक है जो कुगतिमै डूवतेकू हस्तावलवन देहै। अर झूटे कहैहै तो यो कहनेवावाला अज्ञानी है अज्ञान-भावतै कहेहैं आपके कर्मबध करेहै। अर हमारे निर्जरा होयहै। अर जो यो दुर्वचन कहे अर मैहू क्रोधरूप होजाऊ तो मूझमे अर इसमे भेद कहा रह्या। अर गाली दुर्वचन ए वस्तुत्वकरि देखिए तो शब्दरूप परणमे पुद्गलस्कध है हमारे लगै नही। अर जो यो दुर्वचन कहेहै सो मेरे देहकूं नामकू जातिकुलकू कहेहैं सो ए पर पुद्गल है। मै इनसू भिन्न हू। बहुरि जाकू दुर्वचन कहे सो मै नही अर मै हू ताकू वचन पहूवे नही।

वहुरि जो यो दुर्वचन कहेहै सो परोक्ष कहेहै प्रत्यक्ष तो नही कहेहै। अज्ञानी प्रत्यक्षभी कहेहै। अर जो प्रत्यक्ष केहै तो विचारै जो ताडना तो नही करेहै। अज्ञानी ताडनाहू करेहै। अर ताडन करे तो मोकू प्राणरहित तो नही कीया। अज्ञानी मारीभी डारेहै अर जो मारिडारे तोहू चितवे जो एकवारमरण तो अवश्य होइहीगा इसने मेरा धर्मघात तो नही कीया। ससारमे मरण सवकू आवेगा। यो त्रैलोक्यपूज्य परउपकारक अनतभवनिमे दुर्लभ यो उत्तमक्षमादि-धर्म हमारा मतिविनसो अर हमाराही पूर्वकृत कर्म है जो मै पूर्वै अशुभकर्म वाध्या सो उदय आया है पर पुरुष तो निमित्तमात्र है। इस पापका फल नरकमे उदय आवता अव सहजही रस देय निर्जरै है। अर हे आत्मन् तू वीतरागकू जाने है। अर वीतरागधर्मकी उपासना करे है। तातै तोकू तो वीतरागता वधावनाही श्रेष्ठ है।

वहुरि मेरे उपकारी जन तो पदके सुखके अर्थि धन देवे है जमी जायगा देवे है [illegible] है। अव यो मोकू दुर्वचनादि कहिकरिही सुखी होजाय तो मेरे इस शिवाय

कहा लाभ है। मेरे निमित्ततें कोऊ प्राणीके दुख मति होहू। अर अशुभकर्म तो मे कीया अर अब उदयकूं भोगता अन्यकूं दूषण द्यूं सो तो मेरी बडी मूढता हैं। अर ऐठें तो दुर्वचनही सहूहूं अर सकलेश परिणामकरि नवीनकर्म बाधूहुं सो याका फल तिर्यंचमे मारिडारना नासिका फोडी रज्जू साकल घालना वारवार मारना वहुत बोझ भार लाधना मर्मस्थाननिमे लाटी चामठि लोहमय आयुधनकी चोब देना दृढ वांधना क्षुधा तृषा शीत उष्ण रोगादिजनित हजारां वेदना भोगना पराधीन रहना सो तो थोरे कालनें उदय आवेगा ताते वैर विरोध छाडि समभावकूं अगीकार करि जिनेंद्रभाषित परमोपकारक आत्माका रक्षक ऐसा उत्तम क्षमाधर्महीका शरण ग्रहणकरि धारणकरना श्रेष्ठ है।

वहुरि मानकषायका अभावते मार्द्दवधर्मका धारक पुरुषविषै पुरुजन अनुग्रह करे है। साधुपुरुष है ते मार्द्दवयुक्तकूं साधु माने है उत्तम जानै है। यातै सम्यग्ज्ञानादिकनिको पात्र होय है। तातै स्वर्गमोक्षफलकी प्राप्ति होइ है। इस लोकमे कीर्ति विस्तरे है। अर मानकरि मलिन मनविषै व्रत शील नही तिष्ठे है नष्ट हो जाय है। साधुजन मानीका ससर्गका परित्याग करे है। लोकमे अपकीर्ति होइ है। अभिमानीको जगत् वेरी हो जाय है। सपूर्ण आपदाका मूल एक अभिमान है। तातै मानकषाय छाडि मार्दवधर्म धारना श्रेष्ठ है।

वहुरि सरलहृदयमे समस्तगुण वसै है। सत्यप्रतीती कीर्ति समस्तगुण सरलपरिणामीकूं प्राप्त होय है मायाचारीको गुण नही आश्रय करै है। मित्र भी अवज्ञा करै। प्रतीति साचधर्म समस्त नष्ट हो जाय दुर्गतिकूं प्राप्त होइ। तातै आर्जवधर्म धारना श्रेष्ठ है। वहुरि शौचधर्मीका इहांही वडा सन्मान होय है। समस्त विश्वासादि गुण यामें वसे है। क्लेशित परिणाम नही रहे है। समभाव सतोषभावतै इहांही वडा सुखकूं पाय स्वर्गमोक्षपद पावे हैं। अर लोभीमे समस्त दोपही वसे है।

गुण अवकाश नही पावे है। लोभीमे समस्त पाप कृतघ्नता धर्महीनता अकीर्ति वैर हिंसादिकमहापाप वसै है। इस लोक परलोकमे अचिंत्यकष्ट लोभीमे आवे है। यातै लोभत्यागी शौचधर्म धरना श्रेष्ठ है। वहुरि सत्यबोलनेवालेमे समस्त गुणनिकी सपदा वसे है। असत्यवादीकी वाध वादिकभी अवज्ञा करे है। मित्र है ते असत्यवादीकौं छाडे है। अर इहांही जिव्हाका छेद सर्वस्वहरणादि कष्ट भोगी दुर्गतिमें जाय है। तातै सत्यधर्म धारना श्रेष्ठ है। वहुरि इस मनुष्यपर्यायमें आत्माका हित एक सयमही है। संयमी यहांही देवनिकरि पूजनीक है। परलोकके फलकूं तो कोन कही सकै। अर सयमरहित है सो इहांही हिंसामे विषयनिके अनुरागमे नित्यप्रवर्त्तनकरि दुर्गतिका पात्र होय है।

यातें सयमधारण करनाही श्रेष्ठ है । बहुरि परिग्रहत्यागही आत्माका हित है । जिसजिस परिग्रहते रहित होइ तिसतिसतै जीवके खेद क्लेश दूरि होय है । पापरहित परिणाम होय हैं । दुर्ध्यान नष्ट होय है । परिग्रहकी आशा बहुत बलवान है । इस जीवके परिग्रहकरिकै तृप्ति नाही उपजै है । वडवानलज्यो आशारूप खाडाकू कोन पूर्ण करे । यो आशारूप गर्त दिनदिन ऐसा वधै है । जामे त्रैलोक्यकी सपदा आजाय तोहू नही भरै । समस्त जीव विषयनिकी वाछाकरि सदाकाल कलुषित हो रहे है । तातै उत्तमत्याग-धर्म धारनाही श्रेष्ठ है । बहुरि शरीरादिकनिमे निर्ममत्वपणातै ससारतै परमनिवृत्तिरूप होय है । शरीरादिकनिमे कीया है स्नेह जाने ऐसे पुरुषके सर्वकाल ससारपरिभ्रमणही जानना । ताते शरीरादिक समस्त परवस्तुमे ममत्व छाडि अपने स्वरूपकू आकिंचन्य भावना सोही आकिंचन्य श्रेष्ठ धर्म है ।

बहुरि ब्रह्मचर्यकू पालन करता पुरुषकू हिंसादिक दोष नही स्पर्शन करे है । जो सास्वता गुरुकुलमे वसै तिस विषै गुणसपदा बसे है । अर जो रूपवती स्त्रीनिका हाव भाव विलास विभ्रमके वशीभूत है ताहि पाय अपने आधीन करे है जो इद्रियनिके वसि होना है। सो अपने आत्माका घात करना हैं । तातै ब्रम्हचर्य धारण करना श्रेष्ठ है । ऐसे उत्तम क्षमादिकनिमे अर इनके प्रतिपक्षी क्रोधादिकनिमे गुण दोष विचारपूर्वक क्रोधादिकनिका अभाव होते सतै इनके निमित्ततै आवते कर्मके आस्रवके अभावते महान् सवर होय हैं । अब सवरको कारण द्वादश अनुप्रेक्षाकू कहै है ।

अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रवसंवरनिर्जरालोक-
वोधिदुर्लभधर्मस्वाख्यातत्त्वानुचिन्तनुमनुप्रेक्षाः ॥ ७ ॥

अर्थप्रकाशिका–अनित्य अशरण ससार एकत्व अन्यत्व अशुचि आस्रव सवर निर्जरा लोक वोधिदुर्लभ धर्मस्वाख्यात इन वारहके स्वरूपको वारवार चितना सो अनुप्रेक्षा है । इस जीवके अनित्यभावना नही रची तदि देह धन कुटुवादिकनिके अर्थि महापापमे प्रवर्त्तै है । ए इद्रियविषय धन यौवन जीवितव्य जलवुद्‌वुद्‌जो अथिरस्वभाव हैं । गर्भादि अवस्था-विशेष है ते सयोगवियोगरूप है । मोहते अज्ञानी नित्यता माने है । ससारमे अपना ज्ञान-दर्शनोपयोग स्वभावते अन्य कोऊ वस्तुका सयोग ध्रुव नही है । जन्म हैं सो मरणकरि सहित है । यौवन जराकरि ग्रस्त है ।लक्ष्मी विनाशसहित है । जहा सयोग है तहा अवस्य वियोग है । इद्रियनिके विषय इद्रधनुष्यवत् चचल है । देखते देखतं नष्ट होय है । इद्रिय-[illegible] [illegible] दिनदिन घटै है । जैसे मार्गमे सन्मुख आवता पथिकजनका ससर्ग [illegible] है तैसे मित्र वधु जननिका सवध अत्यन्त अल्पकाल जानहू । नाना भोजन [illegible] आच्छादितकरि बहुतकाल लालना पालना कीयाहू देह क्षणमात्रमे विनसे

है। अर लक्ष्मी चक्रीनिकीहू स्थिर नही । तातैं समस्तकू अनित्य चितवन करना सो अनित्यभावना है। ऐसे चितवन करतेके समस्त देह धन कुटुबादिकनिमैं आसक्तताका अभावतैं वियोग होतैंहू परिणाममे पीडा नही उपजे है।

वहुरि अशरणभावना भावनेतैं सासारीक सबधकू अपने रक्षक नही जाणै है। जैसे एकात वनमे वलवान् अर क्षुधावान् अर मासका इच्छक ऐसा व्याघ्रकरि पकडा मृगका वालककू किंचित शरण नही है। तैसे जन्म जरा मरण रोग प्रियका वियोग दुष्टका सयोग वाछितका अभाव दारिद्रच दुर्जनादिकतैं उपजे दु खकरि पीडित प्राणीकै कोऊ शरण नही हैं।

वहुत पुष्ट कीया अपना शरीरहू भोजनप्रति सहायी है। कष्टमे नही। कष्ट आवतें आत्माके अपना शरीरही महादु ख उपजावै है। अर वडे यत्नतें सचयकीया धनहु परलोककू नही जाय है। अर जिनकू सुखदु खमे सामिल होय भोगे ऐसे मित्रहु मरणकालमै नही रक्षा करे है। अर समस्त वाधवहू रोगसहितकी रोगतैं रक्षा नही करे है। इस संसारमें मरण कहा नही देखो हो। जामै स्वर्गलोकको इद्र ताकू। अणिमादिक अनेक ऋद्धिनिके धारक असख्यात देवहू क्षणमात्रभी नही रक्षा करि सके तो अन्य ग्रह पिशाच योगिनी यक्ष क्षेत्रपाल मत्र तत्र यज्ञ होम औषधि वैद्य रसायनदिक कोन रक्षा करनेमे समर्थ होइ। मरण तो आयुकर्म नाश होनेतैं है अर आयुकर्म कोऊ देनेकू समर्थ नही। यातैं देवनिका इद्रहू आयु पूर्ण भए रक्षा करनेमे समर्थ नही है।

अन्यकी कहा कथा। अर जो मरण करते मनुष्यकी देव देवी मत्र तत्र क्षेत्रपालादिक रक्षा करते तो मनुष्य अक्षय हो जाते। देखहू नाना प्रकार रक्षाका उपायकरिकैंहू कोऊ वलवान् ऐश्वर्यवान् धनवान् ज्ञानवान् शूर वीर तथा निर्वल निर्धन रक अज्ञान अशक्त मरणतैं नही वचै है। ऐसे प्रत्यक्ष देखताहू जो ग्रह भूत पिशाच योगिनी यक्ष मत्र तत्रादिककू शरण माने है सो यो महान् मिथ्याभावकू उदय है। ऐसे अन्य असातादिक कर्मके उदयकूहू निवारण करनेकू कोऊ शरण नही है। एक सम्यग्भावतैं आचरण कीया धर्मही शरण है।

यातैं शरण दोय प्रकार है। एक लौकिकशरण एक अलौकिकशरण। तिनमे लौकिकशरण तो चेतन अचेतन मिश्र भेदकरी तीन प्रकार है। तिनमै राजादिक तथा देवतादिक तो लौकिकजीवशरण है। मनुष्यादिक सहित नगरग्रामादिक लौकिक कमिश्रशरण है ऐसेही पचपरमेष्ठी अलौकिक जीवशरण है। इनिके धातुपाषाणादिमय प्रतिबिंव जिनसिद्धातके पुस्तक वाक्यादिक अलौकिक अजीवशरण है। धर्मोपकरणसहित साधुनिका समूह अलौकिकमिश्रशरण है। ऐसे व्यवहारशरण कह्या। निश्चयशरण तो उत्तमक्षमादिकरूप परिणमनकूं प्राप्तभया ऐसा

शुद्ध वीतरागपरिणतिरूप अपना आत्माही आपके शरण है। जातै निश्चयतै तो क्रोधादिरूप परिणया आत्मा आपही आपका घातक है। अर क्षमादिक परिणमननै प्राप्त होइ तदि आपही आपका रक्षक है।

अन्यकू रक्षक घातक समझना सो मिथ्याभाव है। एक भलै प्रकार आचरणकीया धर्महीकू शरण जानहु। मित्रधनादिक कोऊ रक्षक नही है। ऐसे अशरणानुप्रेक्षा चितवन करतेकै मै नित्य अशरण हू ऐसे भावतै सासारीक समस्त बधमें ममत्वके अभावतै भगवान् सर्वज्ञकथित वचनहीमें लीनता उपजे हैं। ऐसे अशरणभावना कही।

अब ससारभावनाका ऐसा स्वरूप है। ससारनाम परिभ्रमणका है। इस ससारमे एक शरीरकू छाडेहै अन्यकू ग्रहण करेहै। ऐसे निरतर एकएककू छांडना अर नवीन नवीन ग्रहणकरना तथा नाना प्रकारकी देहनिमे परिभ्रमण करना सो ससार है जब पापका उदय आवेहै तदि नरकनिमे प्राप्त होइ नानाप्रकार वचनके अगोचर ताडन मारन छेदन भेंदन शूलारोपण वैतरणीनिमज्जन शाल्मलीघसीटन तथा असुराकरी कीया दु खशरीरसबधी मानसिकदु ख क्षेत्रजनितदु ख परस्परकीया दु ख ऐसे पचप्रकारके घोर दु खनिकू असख्यातकालपर्यंत नरकधरामे भोगेहै। जिनकै नेत्रका टिमकारामात्रहू सुखरूप नहीहैं। अर तिलतिलमात्र खड करेहू घाणीमे मीलेहूआयु पूर्ण भएविना मरणकू प्राप्त नही होयहै। पाराकीज्यो देहके खडखडहू मिलिजायहै।

वहुरि कदाचित नरकमेतै आयु पूर्ण करी निकले तो नानाप्रकारकी तिर्यचयोनिको प्राप्तहोइये। तहां गर्भविषैही छेदन मारणादि दु खकू प्राप्त होयहै। तथा क्षुधा तृषा शीत उष्णजनित घोरवेदना भोगेहै। जहा परस्पर मनुष्यनिकीज्यो अपगा सुखदु ख कहना श्रवण करना गोष्टा करना उपाय करना हैनाही। सदाकाल क्षुधादिवेदनाकरि पीडित भयभीत रहेहै। अनेक तिर्यच मारि खाजायहै। दुष्ट मनुष्य मारि भक्षण करेहै। जेठैतेठै हेरिकरि मारेहैं।

तथा नासिका फाडि जेवडा शाकल घालि वाधेहै वहुतभार लादेहै मर्मस्थाननिमे तीक्ष्ण मारनितै मारेहै। भागने छिपने नही देहै अपना दु.ख सही सकेनही कोऊ पुकार सुने नही। रोगादिककी तीव्र वेदना होतैहू मर्मस्थाननिमे चोट देय मारेहै। उछलेहै पडेहै अत्यत पराधीनता भोगेहै। जिनके कार्य करनेकू समर्थ वचन नही हस्तादिक अवयव नही कोनसूं दुःख कहै कोन पूछै कोन सुनै। कोऊ राजादिक सहाय करेनही। अर अशक्त होय पडे तो कोन उठावे जलने थलमै कर्दममे शीतमे तावडामे वर्षामै पडाहुवाकू असमर्थ जाणि काकादिक दुष्टपक्षी तीक्ष्ण लोहममान चूंचनिकरि नेत्रनिको सिलेजाय हे अर मर्मस्थाननिमै काटियटि

खाय है। ऐसे तिर्यंचगतिका घोरदु ख प्रत्यक्ष दीखेहै। जो अन्यायकरि परका धन खाय है। लोभी व्यसनी होय कुदान लेवेहैं। तथा तिर्यंचनिमे पक्षी है तेहूं अत्यत दुःखरूप रहेहै। छोटि शाखानिकू दृढ पकडी भयभीत भए क्षुधातृषाकी वाधा तीव्र पवनकी वाधा वर्षाका पतनकूं शीत वरफके पडनेकू गडेनिकी मारकू अत्यत भोगते अधकारकी भरी रात्रीकू भयभीत भए एकाकी पूर्ण करेहै। ऐसी तिर्यंचगतिमे मायाचारके परिणामतै भोले असमर्थ जीवनिके धन विषयभोगनिकू हरनेतै अनेकपर्यायनिमे असख्यातकालपर्यंत दु ख भोगेहैं। कोन कहनेकू समर्थ है।

बहुरि कदाचित् मनुष्य होय तो तहाहू गर्भवासविषै सकुचितअंग हुवा महाघ्राणके स्थानमे नव दशमास पूर्णकरि योनिसकट महादु.ख भोगी वाहिर आवेहै बहुरि बाल्य अवस्थामे नानाप्रकारका रोगजनित दु ख तथा मातापिताका मरण होनेकरि वियोगजनित दु ख क्षुधा शीत उष्णजनित वेदनाकू सहता महान दु ख भोगेहै। वहुरि विषयभोगनिकी चाहजनित दरिद्रजनित अपना भयते उपज्या अलाभतै उपज्या घोर दु ख भोगेहै। अर कोऊ पुण्ययुक्तहू मनुष्य होय ताकैहू इष्टका वियोग अनिष्टका सयोगजनित दु ख देखिएही हैं। कोउकै तो स्त्रीही नही है कोऊकै स्त्री है तो पुत्र नही पुत्र है तो धन नही धन है तो निरोगशरीमहीनीरोगशरीर है तो धनका नाश होजाय तथा पुत्र कपूत होइ तथा स्त्रीका पुत्रका मरण हो जाय तथा वैरीसमान वाधव होयहै राजा लूटेहैं अग्नि दग्ध करेहै तथा धनवान् होइ निर्धन होजायहै। इत्यादिक दु ख मनुष्यपर्यायमे प्रत्यक्ष देखहु। वहुरि देवपर्यायमेह इष्टवियोगादिक दु ख तथा महर्द्धिककदेवनिकी सपदा देषि तथा विषयाकी तृष्णातै दु ख तथा स्वर्ग लोकतै पतन होनेका घोरदु.ख भावेहै ऐसे ससारीजीव अनतकालतै चतुर्गतिनिमै नानादु ख भोगता अनतपरिवर्त्तन पूर्णकीए।

परिवर्त्तन नाम परिभ्रमणका है। सो परिवर्त्तन द्रव्य क्षेत्र काल भव भावकरि पांच प्रकार है। तहा द्रव्यपरिवर्त्तन कर्म नोकर्म भेदकरि दोय प्रकार है तिनमै नोकर्मपरिवर्त्तन कहेहै। याका स्वरूप ऐसा। जो औदारिक वैक्रियिक आहारक लक्षण तीन शरीरनिके विषै किसही शरीरसबधी षट्पर्याप्तिनिकै योग्य पुद्गलनिकू एक जीव एकसमयविषै स्निग्ध रूक्ष वर्ण गधादिकरि तीव्र मंद मध्य भावकरि यथासभव ग्रहणकीए अर द्वितीयादि समयनिमै जीर्ण कीए तिनका ऐसा क्रम जानना। जो एकजीव उकससयमै अभव्यराशितै अनतगुणा अर सिद्धराशिके अनतवै भाग ऐसा मध्य अनतका जो प्रमाण तितना परमाणुको पुज एकसमयप्रवद्ध कहावे सो ग्रहण करेहै अर इतनाही निर्जरेहै। तिनमै कोऊ समयप्रवद्ध तो ऐसा है जामै कदे ग्रहण नही कीए ऐसे परमाणु है सो तो अगृहीतसमयप्रवद्ध है। अर जामै पूर्वै ग्रहण कीए परमाणुनिकाही समूह है सो गृहीतसमयप्रवद्ध है। अर जामै केते अगृहीतका समूह सो मिश्रसमयप्रवद्ध है।

इहां कोऊ कहे। अगृहीतपरमाणु कैसे है। ताका समाधान। सर्वजीवराशीके प्रमाणकू समयप्रवद्धके परमाणुनिका प्रमाणकरि गुणिए जो प्रमाण आवै ताकौ अतीतकालके

समयनिका प्रमाणकरि गुणिए जो प्रमाण होइ तिसतैंभी पुद्गलद्रव्यका प्रमाण अनंतगुण है। जातै जीवराशितै अनतवर्गस्थान गुण पुद्गलराशि होइ है। तातै अनादिकाल नानाजीवनिकी अपेक्षाभी अगृहीतपरमाणु लोकविषै विशेष पाइएहै। बहुरि एकजीवका परिवर्त्तनकालकी अपेक्षा नवीन परिवर्त्तनका प्रारभ भया तव सर्वही अगृहीत भए पीछै ग्रहे ते गृहीत होयहै। इस अपेक्षाहू अगृहीत मिश्रगृहीत यथासभव जानना।

तिनका काल द्रव्यपरिवर्त्तनमे ऐसा। जो नोकर्मपुद्गलपरिवर्त्तनका प्रथमसमयतै आरभ करिए है। जो पहलै समय अगृहीतग्रहण होइ फेरि दूजै समयगृहीत वा मिश्र ग्रहण होजाय सो गिणतीमे नही। अगृहीतही ग्रहण होइ सो दूजीबार गिणतीमै आवै फेर अगृहीतही ग्रहण होइ सो तृतीयवारकी गिणतीमै आवै। ऐसे अगृहीतग्रहण निरतर अनंतवारही ग्रहण होजाय तदि एकवार मिश्रग्रहण होइ फेर अनतवार निरतर अगृहीतग्रहण होजाय तदि एकवार मिश्रग्रहण होइ सो तीनवार मिश्रग्रहण भया। ऐसे अनतवार अगृहीतग्रहण होय एकएकवार मिश्रग्रहण होतै होतै मिश्रगृहणहू अनतवार होजाय तदि फेरि अनतवार अगृहीतग्रहण करि एकवार गृहीतग्रहण करै बहुरि अनतवार अगृहीतग्रहण करि एकवार मिश्रग्रहण करै। फेरि अनतवार अगृहीतग्रहण करै तदि एकवार मिश्रग्रहण करै तदि दोयवार मिश्रग्रहण भया।

ऐसे अनतवार अगृहीतग्रहणकरि एकएकवार मिश्रग्रहण करतै फिर अनतवार मिश्रग्रहण हो जाय तदि फेरि अनतवार गृहीतग्रहण करि एकवार गृहीतग्रहण होय ऐसे दोयवार गृहीतग्रहण भया। ऐसी पलटनितैही अनतवार गृहीतग्रहण हो चुकै तदि पुद्गलपरिवर्त्तनका चतुर्थभाग भया। फिर ऐसेही निरतर मिश्रग्रहण अनतवार हो जाय तदि एकवार अगृहीतग्रहण होय। फिर अनतवार मिश्रग्रहण हो जाय तदि एकवार अगृहीतग्रहण होय। ऐसे अनतवार अगृहीतग्रहण हो चुके फिर अनतवार मिश्रग्रहणकरि एकवार गृहीतग्रहण होय। ऐसे निरतर गृहीतग्रहणहू अनतवार होजाय बहुरि पुद्गलपरिवर्त्तनको द्वितीय चतुर्थांश पूर्ण होइ है।

बहुरि निरतर मिश्रग्रहण अनतवार होय चुकै तदि एकवार गृहीतग्रहण हो। फिर निरंतर अनतवार मिश्रग्रहण होजाय तदि एकवार गृहीतग्रहण। ऐसे अनतवार गृहीतग्रहण हो जाय तदि फेर निरतर मिश्रग्रहण अनतवारकरि एकवार अगृहीत ग्रहण करे। ऐसे अगृहीतग्रहण अनतवार हो जाय तदि पुद्गलपरिवर्त्तनका चतुर्थांश पूर्ण होय है।

बहुरि निरतर गृहीतग्रहण अनंतवार होजाय तदि एकवार मिश्रग्रहण करै। फेरि निरतर अनतवार गृहीतग्रहण होजाय तदि एकवार मिश्रग्रहण होय। ऐसे अनतवार

मिश्रग्रहण होजाय तदि निरतर गृहीतग्रहण अनतवारकरि एकवार अगृहीतग्रहण करै। ऐसे अनतवार अगृहीतग्रहण हो जाय तदि पुद्गलपरिवर्त्तनको चतुर्थांश पूर्ण होय। फिर लगतेही समयविषै जे नोकर्मपुद्गलपरिवर्त्तनके प्रथमसमयमै ग्रहणकरि द्वितीयादि समयमें निर्जरारूप कीए। ऐसे अनते नोकर्मके समयप्रबद्धपुद्गल थे तेही अथवा तिनसमानही शुद्ध गृहीतरूप आयकरि ग्रहण होय तदि यो समस्त मिल्यो हुवो नोकर्मपुद्गलपरिवर्त्तन होय है।

अब कर्मपुद्गलपरिवर्त्तन ऐसे जानना। जे पुद्गल एकसमयविषै एकजीव अष्ट-प्रकार कर्मस्वभावकरि ग्रहण कीए। ते समयाधिक आवलीकालकू उलघनकरि द्वितीयादि-समयनिमै निर्जीर्ण भए। ते कर्मयोग्यपुद्गल पूर्वोक्त नोकर्मद्रव्यपरिवर्त्तनकीज्यों तिसही क्रमकरि तिसही प्रकारकरि तिस जीवकै जेतै काल कर्मभावकू प्राप्त होइ है। तिष्ठै है तितने यो समस्त मिल्योहुवो कर्मपुद्गलपरिवर्त्तन होय हैं। ओर समस्तविध नोकर्मपरा-वर्त्तनकीज्यों जाननेयोग्य है। ये कर्म नोकर्मद्रव्यरूप दोऊ पुद्गलपरिवर्त्तनका समानही काल है। ऐसे द्रव्यपरिवर्त्तनका स्वरूप सक्षेपकरि कह्या।

अब क्षेत्रपरिवर्त्तन कहै है। क्षेत्रपरिवर्त्तन दोयप्रकार है। एक स्वक्षेत्रपरिवर्त्तन। एक परक्षेत्रपरिवर्त्तन। तिनमै स्वक्षेत्रपरिवर्त्तन कहै है। कोऊ जीव अगुलिकै असंख्यातवै भागप्रमाण जीव सूक्ष्मनिगोदीयाकी जघन्य अवगाहनाकरी उपजी अर अपना स्वासकै अठारवेभाग जो आयुप्रमाण जीयकरि मर्‍या सो फिर उस देहतै एकप्रदेश अधिक अवगा-हनाकरि उपजी अपनी स्थितिप्रमाण जीवता रहि फेरि मरी दोय प्रदेश अधिक अवगाहना पावै। ऐसे पूर्वले देहतै एकएक प्रदेश अधिक महामत्स्यका देहकी अवगाहनापर्यंत समस्त अवगाहनाके भेदनिकरि अनुक्रमतै समस्त अवगाहना समाप्त करै अर बीचीबीची अनतवार अन्यअन्य अवगाहना धारै सो इहा गिणीनही। जातै एकप्रदेश अवगाहना पायवेका अव-सरको अनतभवनिमे आवै है। तातै एकएक प्रदेशकी अधिकता करिकै अनतानत कालमै समस्त अवगाहना पूर्ण करै है। तदि यो समस्त स्वक्षेत्रपरिवर्त्तन होय है।

अब परक्षेत्रपरिवर्त्तन कहै है। कोऊ जीव सूक्ष्मनिगोदका लब्ध्यपर्याप्तक होय ताकी समस्त अवगाहनातै जघन्य अवगाहना है यातै अन्य जघन्य अवगाहना नही सो इस जघन्य अवगाहनाकरि लोकाकाशका मध्यका अष्टप्रदेशाने अपने शरीरका मध्यका अष्टप्रदेशामे करि उपज्या अर अपनी स्थिति पूर्ण होते मरण करी। फेरि सोही जीव तैसेही तिस अव-गाहनाकरि लोकाकाशका अष्ट मध्यप्रदेशांनै अपने शरीरकै वीचिकरि दूजीवार तीजीवार इत्यादि घनांगुलका असंख्यातभागका जेता प्रदेश होइ है तितनाही वार तहांही उपजी

उपजि मरे। अर बीचिमै अनतवार अन्यअन्य क्षेत्रनिमै उपजै सो इस परिवर्त्तनके प्रमाणमै नही। पाछै एकप्रदेश उस क्षेत्रतै अधिकमे उपजै ऐसे एकएक प्रदेशकी अधिकताकरि समस्तलोक तीनसैतियालीस घनराजूप्रमाण समस्तप्रदेशनिकू अपने जन्मक्षेत्रपणाकू प्राप्त करै सो परक्षेत्र परिवर्त्तन है। भावार्थ ऐसा है। सो सूक्ष्मनिगोद जीवकी जघन्य अवगाहनाकू आदि लेय महामत्स्यकी उत्कृष्ट अवगाहनापर्यंत कोऊ ऐसी अवगाहना वाकी नही रही जो यो जीव नही पाइ। बहुरि लोकका मध्यतै लेय नीचे ऊपरि तिर्यक् समस्तलोकाकाशका प्रदेशनिमै ऐसा कोऊ एक प्रदेश नही है। जहा इस जीवनै जन्ममरण नही कीया।

अव कालससारकू कहै हैं। कोऊ जीव उत्सर्प्पिणी कालका प्रथमसमयविषै उत्पन्न हुवा फिर अपनी आयु समाप्तकरि मरण करै। फिर बीसकोडाकोडीसागरमे उत्सर्प्पिणीकाल आवै ताके पूजे समयमै जन्म ले अर दूजासमयमेही जन्म लेना कहा होइ कोऊ अनते उत्सर्प्पिणी जावतेहू दुजै समयमेही उपजनेका सयोग मिले। ऐसेही उत्सर्प्पिणीका तीसरा समयमे चतुर्थमै पचममै ऐसे उत्सर्प्पिणी अवसर्प्पिणीका बीसकोडाकोडीसागरका जेता समय होय तितना निरतर जन्मकरि पूर्णकरै अर ऐसेही समस्तसमय मरणकरि पूर्णकरै। जो यो जन्ममरणको समुदितरूप काल सो कालपरिवर्त्तन है। भावार्थ। उत्सर्प्पिणी अवसर्प्पिणीका ऐसा कोऊ समय बाकी नही है। जिसमे यो जीव अनतानतवार जन्ममरण नही कीया।

अव भवपरिवर्त्तन कहै है। कोऊ जीव नरकगतिमे जघन्य आयु दशहजार वर्षकी धारणकरि उपज्या फिर मरणकरि ससारनै परिभ्रमणकरि द्वितीय बार भी दशहजार वर्षकी आयु पावै जो एक दो समय घडी दिन वर्ष अधिक पावै सो गणतीमे नही। तृतीयवार चतुर्थवार पचमवारकू आदिकरि दशहजार वर्षका जेता समन होय तीतनीबार तो दशहजार वर्षप्रमाणही आयुपाय मरै पाछे एकसमय अधिक इत्यादि तेतीससागरका जेता समय होय तितनी समय यो उत्तर आयुकरि व्यतीत करै सो नरकभवपरिवर्त्तन जानना।

ऐसेही तिर्यचगतिमे सघन्य आयु अतर्मुंहूर्त्तप्रमाण पाय फिरि समाप्तकरि अतर्मुहूर्त्तका जेते समय होय तेतना प्रमाण जघन्य आयु धारि पछै एकसमय अधिक अनुक्रमकरि तीन पल्यपर्यंत समस्तस्थितिविषै जन्मधारि पूर्ण करै सो तिर्यग्भावपरिवर्त्तन जानना। ऐसेही मनुष्यआयुकू अतर्मुंहूर्तकू आदि लेय तीनपल्यपर्यत पूर्ण करै। देवगतिमें नरकगतिज्यो दशहजार वर्षकू आदि लेय इकतीस सागरपर्यंत पूर्ण करै सो देवभवपरिवर्तन है। इकतीस सागरतै अधिक आयुके धारक अनुदिश अनुत्तर चोदह विमानिमे उपजे देवनिकै परिवर्तन नही होय। जातै उनके नियमतै सम्यक्त्व है। सम्यग्दृष्टीकै संसारमे

भ्रमण होय नहीं । ऐसे च्यार आयुसंबंधी समस्त परिवर्तनका मिल्या हुवा काल भवपरि-
वर्तनका जिनेंद्र कह्या है ।

अव भावपरिवर्त्तनकूं कहै हैं । योगस्थान अनुभागवंधाध्यवसायस्थान कषायाध्य-
वसायस्थान स्थितिस्थान इन च्यारनिके परिवर्तनतै होइ है । सो इन च्यारनिका स्वरूप
ऐसा । जिनतै प्रकृतिवंध प्रदेशवंध होइ ऐसे प्रदेशपरिस्पदलक्षण योग तिनमें जे घनादि-
स्थान ते योगस्थान है ।

वहुरि जिन कषाययुक्तपरिणामनितें कर्मनिका अनुभागवंध हो है तिनके जघन्या-
दिक स्थानते अनुभागवंधाध्यवसायस्थान है । अर जिन कषायपरिणामनिते स्थितिबंध हो
है तिनके जघन्यस्थानते इहां कषायाध्यवसायस्थान कहे है । अर वंधनरूप जे कर्मनिकी
स्थिति तिनके जघन्यादिस्थानते स्थिति स्थान कहिए । कोऊ पचेंद्रियसंज्ञक पर्याप्तक
मिथ्यादृष्टीजीव है । सो आपके योग्य सर्वमें जघन्य ज्ञानावरणकर्मकी अंतःकोटाकोटी-
सागरप्रमाण वांधै है । जातें संज्ञी पर्याप्त मिथ्यादृष्टीके अंत.कोटाकोटीसागरप्रमाणतै घाटि
नही वंधै है । कोटिसागरके ऊपरि अर कोटाकोटीके माही ताही अंतःकोटाकोटीसागर
कहिए है । तिस जघन्यस्थितिकूं आदि लेय एकएकसमय अधिकताकरि तीस कोटाकोटी-
सागरकी उत्कृष्ट स्थितिपर्यंत भेदकूं लीए ज्ञानावरणकर्मकी स्थिति है । अर एकएककषा-
याध्यवसाय स्थानकूं असख्यातलोकप्रमाण अनुभागवंधाध्यवसायस्थान कारण है । वहुरि
एकएक अनुभागबंधाध्यवसायस्थानकै योगश्रेणीकै असख्यातवें भागप्रमाण योगस्थान है ।

अव परिवर्त्तनके आरभका क्रम ऐसा । जो सज्ञीपर्याप्तका मिथ्यादृष्टीके ज्ञाना-
वरणकर्मकी अंत.कोटाकोटीसागरप्रमाणजघन्यस्थितिवंध होय । अर तिस स्थितिकूं कारण
जघन्यही कषायाध्यवसायस्थान अर तिस जघन्यकषायाध्यवसायस्थानकूं कारण जघन्यही
अनुभागवंधाध्यवसायस्थान होइ अर जघन्यही योग्यस्थान होई ।

वहुरि योगस्थान तो पलटीहू दूजो होय अर अनुभागकषायस्थिति जघन्यही वंधै ।
फिर योगस्थान तीजो होजाय अर वै तीनो जघन्यही रहै । फिर योगस्थान चोथो
पाचवो छठो इत्यादिक श्रेणीके असख्यातवै भागप्रमाण योगस्थान पलटीजाय अर स्थित्यादि
तीनो जघन्यही रहै । ऐसे श्रेणीकै असख्यातभागप्रमाणयोगस्थान पलटिजाय तदि स्थिति-
स्थान अर कषायस्थान तो जघन्यही रहै । अर अनुभागस्थान दूजा होय । फिर दूजा
अनुभागस्थानकै योग्य श्रेणीकै असख्यातवैभागप्रमाण योगस्थान क्रमतै पलटिजाय तदि फिर
अनुभागस्थान तीसरा होई । फिर इस ऊपरि योगस्थान श्रेणीकै असख्यातवैभागप्रमाण
पलटिजाय तदि अनुभागस्थान चोथा होय ।

इस क्रमतै एक अनुभागस्थानके योगश्रेणीके असंख्यातवैभागप्रमाण योगस्थान पलटत पलटतै असख्यातलोकप्रमाण अनुभागवधाध्यवसायस्थान होजाय तदि एककपायाध्यवसायस्थान पलटै। तदि स्थितिस्थान तो जघन्यही रह्या अर कपायस्थान दूसरा भया। अर अनुभागस्थान पहला अर योगस्थान पहला भया फिर श्रेणीकै असख्यातवैभागप्रमाण योगस्थान पलटिजाय तदि तो एक अनुभागस्थान पलटै। अर ऐसै असंख्यातलोकप्रमाण अनुभाग पलटि जाय तदि एककषायाध्यवसायस्थान पलटै। ऐसे असख्यातलोकप्रमाण कपायाध्यवसायस्थानभी पलटि चुकै तदि अत कोटाकोटीसागरप्रमाणजघन्यस्थितितै एक समय अधिक कर्मकी स्थिति बाधै। ऐसे श्रेणीकै असख्यावैभाग वार योगस्थान पलटिजाय तदि तो एकअनुभागस्थान पलटै अर असख्यातलोकप्रमाण अनुभाग पलटि जाय तदि एककषायस्थान पलटै। अर असख्यातलोकप्रमाण कषायस्थान पलटिजाय तदि एकसमय अधिक होय स्थिति पलटै।

ऐसे एकएकसमयकरि अधिकतातै ज्ञानावरणकर्मकी तीसकोटाकोटीसागरकी स्थिति समाप्त करै। फिर दर्शनावरण वेदनीय अतरायकी तीसकोटाकोटीसागरकी अर नामगोत्रकर्मकी वीस कोटाकोटीसागरकी अर आयुकी तेतीससागरकी ऐसाही क्रमकरि पूर्णकरै। फिरि एकसौ अडतालीस उत्तरप्रकृतिनिकी अर असख्यात लोकप्रमाण उत्तरोत्तर प्रकृतिनिकी स्थिति पूर्णकरे तदि एकवभपरिवर्त्तन होइहै। ऐसे पचप्रकारके परिवर्त्तन अनते कीए। ऐसे अनेक कुयोनि अर कुलकोटिनिके वहुतसकटरूप ससारमे कर्मयत्रकरि प्रेरित प्राणी पिता पुत्र होय पुत्र पौत्र होयहै माता भहण भार्या पुत्री होयहैं वहुत कहा कहिए आपही आपकै पुत्र होयहै। इत्यादि ससारका स्वभावका चितवन सो संसारानुप्रेक्षा है। ऐसे ससारभावनाकू चिन्तवन करनेवाला पुरुष ससारका दुखतैं भयभीत होय ससारतै विरक्त होयहै। विरागयुक्त होय तदि ससारका नाशके अर्थि यत्न करैहै। ऐसे ससारभावना कही।

वहुरि जन्म जरा मरण रोग वियोगादिकनिके महादुखनिमे आपकूं असहाय एकाकी चितवन करना सो एकत्वानुप्रेक्षा है। ससारविषै मै एकाकी अनादिकालतै हु। कोऊ मेरे स्वजन नही है। अर परिवार नहीहै जो मेरे व्याधि जरा मरणादिक दुखकू दूरि करे। एक धर्मही मेरा सहायी है शरण है अविनाशी है। ऐसे चितवन करना सोही एकत्वभावना है। ऐसे चितवन करतेकै स्वजननिविषै प्रीति नही उपजैहै। परजननिमे द्वेष नही उपजैहै। तातै समस्तमे प्रीति वैर छाडि मोक्षके अर्थिही यत्न करैहैं। ऐसे एकत्वभावना कही।

वहुरि शरीरादिकनितै अपना स्वरूपकू अन्य चितवन करना सो अन्यत्वानुप्रेक्षा है। यो शरीर इद्रियगम्य है अर मै आत्मा अतीद्रिय हू। अर शरीर अज्ञानी है अर मै आत्मा ज्ञानीहू। शरीर अनित्य है मै शाश्वतवन् है मै अनादि अनत हू। संसारमे परिभ्रमण करता जो मै ताक अनंतशरीर व्यतीत भए। ऐसे शरीरादिकनितै अपना अन्यपणाकू चितवन करना

सो अन्यत्वभावना है। ऐसे चितवन करते जीवकै शरीरादिकनिमें ममत्वके अभा तै आत्म-कल्याणहीमे उद्यम होयहै।

शरीरका अशुचिरूप चितवन करना सो अशुचिभावना है। जातै शुचिपणा दोय प्रकार है लौकिक लोकोत्तार भेदतै। तिनमे आत्माके कर्मकलकका नाश होय अपने स्वरूपमे अवस्थित होना सो तो लोकोत्तरशुचिपणा है। इसका कारण तो सम्यग्दर्शनादिक है तथा सम्यग्दर्शनादिकके धारक साधु हैं। तथा साधुनिकी आधाररूप निर्वाणभूम्यादिक मुक्त होंनेके उपाय तातै शुचिनामके योग्य है।

वहुरि लौकिकशुचिपणा अष्टप्रकार है। कालशौंच अग्निशौच भस्मशोच मृत्तिकाशौच गोमयशौच जलशौच ज्ञानशौच ग्लानिरहितपणाशौच। ऐसे है परतु ए अष्टप्रकार शौच लौकिक है। ते शरीरने शुद्धिकरनेकू समर्थ नही। जातै शरीर तो अन्यजलादिकशुचिद्रव्यनकू अशुचि करेहै। शरीरका आदिकारण तो महा अपवित्र माताका रूधिर पिताका वीर्य है। अर उत्तारकारण आहारका परिणमनादिक है सो मनुष्य तिर्यचनिके कवलाहार है सो ग्रहण होत प्रमाण कफके स्थानकू पायकरि अतिद्रवरूप हुवा अधिक अशुचि होयहै। पछै पित्ताशयने प्राप्त होई पच्याहुवा महा अशुचिही होयहै। फिर पक्याहुवा वाताशयकू पाय वायुकरिके खलरस-भावकरि भेदने प्राप्तहोयहै।

तहां मलमूत्रादिक तो खलभागरूप है। रूधिर मासके मेद मज्जा वीर्य ये रसभाग है यातै समस्त अशुचिका पात्र शरीर है। याकी अशुचिता दूरि करनेकू कुकुम चंदन कर्पूरादिक-निके अनुलेपन तथा स्ननादिक समर्थ नही है। अगारकीज्यो आपके अश्रितद्रव्यनिकू शीघ्रही अपने स्वभावज्यो अशुचि करेहै। ऐसे स्मरण करतेकै शरीरतै विरक्तता होइ तदि ससार-समुद्रके तरणके अर्थि चित्तकू धारेहैं। ऐसे अशुचिभावना कही।

वहुरि मिथ्यात्व अविरत कषायनिके द्वारे कर्मनिका आगमन ताकू आस्रव कह्या जो ससार परिभ्रमणका कारण आत्माका गुणनिका घातक है। इद्रियनिकी आतापकरि ससारमे महाक्लेश भोगे है। तथा मोहके उदयके वशतै जीवके परिणाम होइ है ते समस्त आस्रवही है। इन मिथ्यात्वादिक आस्रवभावतै पुण्यपापरूप कर्मका आगमन होय है सो ससारमे परिभ्र-मण करावे है। ऐसे आस्रवनिके दोषनिकू चितवन करना सो आस्रवभावना है। ऐसे चितवन करतेके उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्ममे दृढबुद्धि होय है। आस्रवनिके निरोधमे यत्न करेहै।

वहुरि सम्यक्त्व देशव्रत महाव्रत तथा कषायनिका विजय योगनिका निरोध ए सवर-हीके नाम है। तथा तीन गुप्ति पंचसमिति दशलक्षणधर्म अनुप्रेक्षा परिषहजय उत्कृष्टचारित्र

इनतै परमसवर होयहै। जो पुरूष समस्तविषयतै विरक्त होइ संवर करेहै ताकै संसारपरिभ्र-मणका अभाव होयहै। ऐसे सवरभावना कही।

वहुरि जो सम्यग्ज्ञानी अहंकारमदरहित हुवा निदानरहित वीतरागभावनातै तप करेहै ताके वडी निर्जरा होयहै। समस्तकर्मनिकी शक्तिका उदय होना सो अनुभव है सोही कर्मके रसका अनुभव है। अर रस दींया पाछे निर्जरेही है। सो निर्जरा ससारीजीवके च्यारोंही गतिमे अवसरपाय होय सो सविपाकनिर्जरा है। अर तप व्रत सयमके प्रभावतै होय सो अविपाक-निर्जरा है। जैसेजैसे सयमीनिके उपशमभावकी तपकी वृद्धि होय तैसेतैसे निर्जराकी वृद्धि होयहै। जो साधु कषायनिका निग्रह करिकै दुष्टनिकरि कीए अनेकप्रकारके दुर्द्धर उपसर्ग सहेहै। शरीरकूं विनाशिक जडस्वभाव जानि अपना ज्ञानदर्शनस्वभावकूं अखड अविनाशी अनुभव करता सक्लेशरहित मन अर इद्रियनिका निग्रहकरि अपने स्वरूपमे लीन होइहै तिनके परमनिर्जरा निरतर भावना करना उचित है। ऐसे निर्जराभावना कही।

अव लोकभावना कहै है। सर्वतरफ अनतानतक्षेत्ररूप आकाशद्रव्य है। ताका अत्यतमध्यविषै षड्द्रव्यनिका समुदायरूप लोक है। सो समस्त चोदह राजू ऊचा है। अर दक्षिण उत्तर नीचै उपरि मध्यमै समस्त सात राजू है। अर पछै उपरि अनुक्रमतै सात राजू ऊचापर्यंत घटि मध्यलोककै निकट राजूप्रमाण है।

वहुरि ताकै उपरि क्रमकरि वधतावधता साढातीन राजू ऊचा जाय ब्रम्हस्वर्गका अतके निकट पाच राजू विस्तार हैं। वहुरि ताकै उपरि क्रमकरि घटताघटता लोकका अतविषै एकराजूप्रमाण है। याप्रकार लोकका पूर्वपश्चिम विस्तार है। इस लोककै मध्यमे एकराजू लवी एकराजू चौडी चोकोर चोदहराजू ऊची लोकका नीचला वातवलयका अतमू उपरि लोकका अतपर्यत त्रसनाली है। त्रसजीव इस त्रसनालीमैंही है। नरक भुवनलोक मध्यलोक व्यतरलोक तिर्यग्लोक ज्योतिर्लोक स्वर्गलोक मुक्तिस्थान समस्त त्रसनालीकै माही है। त्रसनालीकै वाह्य उपवाद अर मारणांतिक अर केवलसमुद्घात विना त्रसका गमन नही है। अर स्थावरजीव समस्तही लोकमे है। अर विकलत्रयजीव तथा असज्ञीपंचेद्रिय तिर्यंच है। ते कर्मभूमीके एकसौ सत्तरिक्षेत्रमें है। अर अतका स्वय-भूरमणद्वीपका अर्द्धभागमे समस्तस्वयंभूरमणसमुद्रमे अर ताकै वारै च्यार कोणनिमेही है। और समस्त असख्यातद्वीपसमुद्रनिमै नही है।

और ऊर्ध्वलोक अधोलोकमेहू विकलचतुष्क नही है। अर मनुष्य अढाई द्वीपमेही है। अढाईद्वीपवारै आग्राम्वयंभूरमणद्वीपपर्यंत हैमवतक्षेत्रकी जघन्यभोगभूमिके तिर्यंचनिसमान

पंचेंद्रियतिर्यंचही है । अर लवणोदधि कालोदधि अर अतको स्वयंभूरमणसमुद्र इन तीन समुद्रमेही जलचरजीव है । अन्य असख्यातनिमैं नही है। ओर समस्तरचनाकी कथनी तृतीय अध्यायमैं वर्णन करीही है । इस लोकके अतमैं नीचै ऊपरि मध्यमे सर्वत्र तीनपवन व्याप्त है ।

वहुरि तीनसैंतेतालीस राजूप्रमाण आकाशरूप क्षेत्रके समस्त प्रदेशनिमैं तिलमे तेलकीज्यो धर्म द्रव्यके अर अधर्मद्रव्यके असख्यातप्रदेश व्याप्त हो रहे है। अर तिसही असख्यातप्रदेशरूपलोंकाकाशमै अनतानतजीवद्रव्य तिष्ठै है। अर याहीमे जीवराशितै अनतानतगुणे पुद्गल तिष्ठै है । इस लोककेही असख्यातप्रदेशनिमे एकएक भिन्नस्वरूपकरि कालद्रव्य तिष्ठे है। ऐसे छहु द्रव्यनिका समुदायरूप लोकाकाशविषै यो जीव अनतानकालमें मिथ्यात्वके वशतै परद्रव्यनिमें आपा मानि परिभ्रमण करै हैं । पुद्गलजनितपर्यायहीमें अहकार मानि रह्यो हैं। सो लोकभावनाका चितवन करनेतै समस्तद्रव्यनिका भिन्नभिन्नगुण-पर्यायनिकरि स्वभाव जाननेतै जीवद्रव्यका स्वभाव जाने तदि जीवद्रव्यमे अपना आत्माभी है।ताहि निश्चयकरि परके उलद्गाडतै आपकू निकाशि मोक्षके अर्थि यत्न करै। ऐसे लोकभावना कही।

वहुरि रत्नस्वभावका प्राप्ति होना अतिदुर्ल्लभ है। जातै एकनिगोदशरीरमे अतीत कालके सिद्धनितै अनंतगुण-जीव है । ऐसे निगोद शरीरनितें तथा पचप्रकारकेस्थावर जीवनितै समस्तलोक तिरंतर व्याप्त है । तहां त्रसपणा पावना वालूकासमुद्रमै हीराकी कणिकावत दुर्ल्लभ है । अर त्रसनिमेहू विकलत्रयजीवनिकी बाहुल्यता है । तातै पचेद्रिय पावना वहुत दुर्लभ है। जैसे गुणवतनिके कृतज्ञता पावना वहुत कठिन है । अर कदाचत् पचेद्रियहू होय तो तिनमै पशू सिह व्याघ्र मृग पक्षी सर्प्पादिकनिकी वहुत पर्यायनिमे जाय उपजै चोहटेमै रत्नराशिका पावना दुर्ल्लभ तैसे मनुष्यपणा वहुतदुर्ल्लभ है। अर मनुष्यपणा पायकरि छूटि फेरि मनुष्य होना ऐसा दुर्ल्लभ है जैसे दग्धहुवा वृक्षके पुद्गलनिका फिरि वृक्षरूप होना दुर्ल्लभ हैं। अर कदाचित् मनुष्यपणाभी हो जाय तोहू हित अहितका विचाररहित पशुसमानमनुष्यनिकरि भऱ्याकूंदेश वहुत है। तातै पाषाणनिमे मणिकीज्यो उत्तमदेशपावना अतिदुर्ल्लभ है । अर कदाचित् उत्तमदेशहु पावै तो पापकर्ममैं लीन ऐसे कुकर्मके करनेवाले कुल वहुत है । तातै शीलविनयसयमादिनिकनिकों धारनेवाला कुल अत्यत अल्प है । अर कुलहू उत्तम पाजाय अर अल्पआयुही मरिजाय तो एती सामग्री निष्फल होइ है ।

अर दीर्घायुभी होइ तो इंद्रियपरिपूर्णता दुर्लभ। अर इद्रियसामग्री पाजाय तो [illegible] नीरोगपणा पावना अतिदुर्ल्लभ है। अर समस्त प्राप्त हो जाय अर जो सम्यक्-

धर्मको ग्रहण नही होइ तो नेत्ररहित मुखज्यों व्यर्थ है। यो धर्मही अतिकठिन प्राप्त होय है। अर धर्मकू प्राप्तहोयकरिकेंहू जो विषयनिके सुखमें रजायमान होय है। सो भस्मके अर्थि चदनकू दग्ध करे है। अर विषयसुखनितें जो विरक्त नही ताकै तपकी भावना धर्मकी प्रभावना सक्लेशरहितसुखरूप समाधिमरण नही होय है। समाधिमरण होय तदिही बोधिलाभ फलवान् है। ऐसे चितवन करना सो बोधिदुर्ल्लभत्वानुप्रेक्षा है। याकूं भावनेतें बोधिकू प्राप्तहोय कदाचित् प्रमादी नही होय है। ऐसे बोधिदुर्ल्लभत्वभावना कही।

अब धर्मभावनाका सक्षेप ऐसा। जो धर्म है सो वस्तुका स्वभाव है। यातें जो रागद्वेष मोहादिक परद्रव्यका उदयरूप मलकरि रहित अपना निर्विकारज्ञानदर्शनरूप होना सो धर्म है। अपने स्वरूपके बाहिर दिशाविदिशामें आकाशमे पातालमे नदीमे समुद्रमें पहाडमे मदिरमे प्रतिमामे शास्त्रादिकनिमें धर्म नही धर्‍या है। द्रव्य खरचे मोलि नही आवै है। कोऊका दियाहुवा नही आवै देहादिकनिका बलके आधीन वा नानावेषधारणादिकके आधीन नही है। ए तो समस्तक्रियाकाडादिक बाह्यनिमित्तमात्र है। जब तो आत्मा रागादिकपरिणतितें छूटि शुद्धवीतरागरूप ज्ञानपरिणतिकू प्राप्तहोय तिसकाल धर्मरूप है। जातें मदिरमेंहू जाय धनहरण करेगा वा किसी स्त्रीकू अवलोकन करैगा तथा कामसेवन करेगा भोजनादि विकथादि हिसादि आरभ करेगा तो मदिरमे तो नही करै ये तो धर्मायतन है याकूं धर्म जाणि सेवन करेगा ताकै कल्याण होयगा धर्म परिणति होनेकू सहकारीकारण है।

धर्मरूप तो चेतनही परणमेगा जड तो धर्मरूप नही होयगा। जातै देखिए है। क्रोधमानादिक है ते ज्ञानमे मोहजनितविकार है। ए विकार दूरिहोय तदि आत्मा अपना उत्तमक्षमादिक स्वभावकू प्राप्तहोइ सोही धर्म है। यातें क्रोधविकाररहित आत्माका उत्तमक्षमारूप होना। अर मानकषाय छांडि मार्दवरूप होना। माया छांडि आर्जवरूप होना। लोभ छाडि शौचरूप होना। असत्य छाडि सत्यरूप होना।

विषयनिमे प्रवृत्तिरूप असयमभाव छांडि सयमनियमरूप होना देहादिकपरवस्तुमे ममत्व छाडि अकिंचनरूप होना। विषयनिमें राग छाडि ब्रम्हरूप आत्मामें चर्या करना ए समस्त दशलक्षणरूप आत्माका स्वभाव है। आत्माकी दशलक्षणरूप परिणति होय सोही धर्म है।

वहुरि सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रहू आत्माका स्वभावही है श्रद्धान ज्ञान आचरण है ते आत्माहीकी परिणति है। अर समस्त अन्यजीवनिकी दया अर अपनी दयारूपपरिणतिभि आत्माहीकी है। तातें दशलक्षणरूप रत्नत्रयरूप जीवदयारूप जिनभक्तिरूप

इन रूप आत्माकू हुवाविना अन्यत्र कोऊ प्रकार धर्म हैनही धर्मही संसारका दुःखका अभावको कारण है। सो अहो परमोपकारक धर्मकूं भगवान् अरहतदेवस्वाख्यात कहिए भलेप्रकार वहुत-सुदर कह्या है। ऐसे चिंतवन करना सो धर्मस्वाख्याततत्वानुप्रेक्षा है। ऐसे चिंतवन करताकें धर्मानुरागतै धर्ममे प्रयत्न होयहै। ऐसे अनित्यत्वादि अनुप्रेक्षाके चिंतवनतै उत्तम क्षमादि-धरणतै महान् सवर होयहै।

अव परिषहनिके जयकू आगै कहेंगे सो ह्यालि पूछेहै जो परिषह कोनअर्थि सहिए यातै सूत्र कहेहै।

मार्गाच्यवननिर्जरार्थं परिषोढव्याः परषहाः ॥ ८ ॥

अर्थप्रकाशिका– रत्नत्रयमार्गतै नही छूटनेकेअर्थि अर कर्मकी निर्जराके अर्थि परीषह सहनेयोग्य है। जे क्षुधादिक परिषह स्ववशें होय सहेहै ताके कर्मके वशतै रोगादिक शीत उष्णादिकवेदना आवतैं परिणाम धर्मतै नही चलेहै संयमतै नही छूटेहै। जातै जो अनशनादि-तपकरि तथा आतापनयोग वृक्षमूल अभ्रावकाशादिकजनित परिषहनिकरि अपना शरीरकूं मनकू साधि राख्या होय सो पराधीन आया मनुष्यतिर्यंचदेवनि कृत उपसर्गतातै तथा मरणके कारण रोगनिकू होतेहू धर्मके मार्गतै चलायमान नही होयहै अर कर्मनिकी बडी निर्जरा करेहै यातै सदाकाल शरीरका मनका स्तंभनके अर्थि परिषह सहना उचित है। जो परिषहनिकू जीतहै सो सवरकू आश्रयकरि समस्तससारका नाश करनेकू समर्थ होय ज्ञानध्यानरूप आयुधनि-करि कर्मनिका मूल छेदनिकरि निर्वाणकू प्राप्त होयहै। याहीतै अब परिषहनिकू कहेहै।

क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकनाग्न्यारतिस्त्रीचर्यानिषद्याशय्याक्रोशवधयाचनालाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ॥ ९ ॥

अर्थप्रकाशिका–। क्षुधा । १, तृषा । २, शीत । ३, उष्ण । ४, दशमशक । ५, नाग्न्य ६, अरति । ७, स्त्री । ८, चर्या । ९, निपद्या । १०, शय्य । ११, आक्रोश । १२, वध । १३, याचना । १४, अलाभ । १५, रोग । १६, तृणस्पर्श । १७, मल । १८, सत्कारपुरस्कार । १९, प्रज्ञा । २०, अज्ञान । २१, अदर्शन । २२, ऐसे द्वाविंशातिपरीषहके नाम कहे। क्षुधातृषादिक [illegible] शरीरसंबंधी अर मनसंबंधी अत्यतपीडाका कारण समभावनितै सहना। इनके [illegible] मोक्षके अर्थिनिकू वडा यत्न करना।

[illegible] जीतना सो कहेहै। अत्यंतक्षुधारूप अग्निकूं प्रज्वलित होतैं धैर्यरूपजलकरि जो [illegible] करे ताके क्षुधापरीषहका विजय होयहै। कैसेक है साधु जिनके वस्त्रादिककरि शरीरका

समस्तसम्कार नही है। अर शरीरमात्र उपकरणकरि सतुष्ट है। अर सयमका विनशनेका कारण दूरीहीतै परिहार करेहै। अर कृत कारित अनुमत सकल्पित उद्दिष्टादिक दोषनिकरि रहित है भोजन जिनके। अर देशकालादिककी योग्य अपेक्षाकरि है प्रवर्त्त जिनके। ऐसे त्यागीनिके अनेक उपवास अर मार्गके चलनेतै अर रोगके उपजनेतै तथा तपके वर्द्धनतै तथा स्वाध्यायके करनेतै उपज्या खेदतै वा वेलाका उल्लघनतै अवमोदर्यादिकतै तथा असातावेदनीयकी उदीरणादिकतै तथा नानाप्रकार आहाररूप इन्धनका अभाव इत्यादि कारणनितै जैसे पवनकरि प्रज्वलित अग्निकी शिखाकीज्यो शरीर इद्रिय हृदयकै क्षोभ करनेवाली जठराग्निकरि प्रज्वलितक्षुधाकी वेदना उत्पन्न होय ताका इलाजकू अकालविषै अर सयमके विरोधीद्रव्यनिकरि आप नही करै अर अन्यकरि कीयाहू वाकू नही सेवन करै अर मनविषै संयमके घात करनेवाले द्रव्यनिका सेवनकू नही धारण करेहै। अर ऐसा विषाद नही करे या वेदना दुस्तर है अर काल महान् है दिन वडो है कैसे पूर्ण होयगा। अर जिनके हाड चाम नख कलेवरमात्र देह रहिगया तोहू आवश्यक क्रियामे नित्य सासता उद्यमी है। अर पराधीनवदिग्रहादिकमै तिष्ठता मनुष्य तथा निर्धन रोगीमनुष्य तथा पीजरेनिमे दृढबधननितै बधे तिर्यच तिनकै क्षुधाकी पीडा पराधीनता अवलोकनकरि सयमरूप कुभमे धारणकीया धैर्यरूपजलकरि जे क्षुधारूप अग्निकू शात करते क्षुधाकृतपीडाकू नही गिणेहै तिन साधुनिकै क्षुधापरीषहका विजय होयहै।

बहुरि तृषावेदनीकी उदीरणाके कारण होतेहू ज्यो तृषाके वस नही होना सो तृषापरीषहसहना हैं। देखहू वीतरागीमुनीके स्नानका अवगाहना अगऊपरी चलके सीचनेका तो यावज्जीव त्याग हैं। अर पक्षीनिज्यो एकस्थानमे ध्रुव जिनका वसना नही है। अर परके घर अतिक्षार सचिक्कण रूक्ष प्रकृतिविरूद्ध आहार ग्रहणकीया है। अर ग्रीष्मऋतुका आताप अर पित्तज्वर अर अनशनादितप इनकरि उर्णाकू प्राप्तभड जो शरीर अर इद्रियानिमे मथनकरनेवाली तृषा तीका इलाजमे अनादररूप मन जिनका। अर ग्रीष्मके तीक्ष्णसूर्यकी किरणनिकरि सतापित जो वनभूमि तिसमै तिष्ठै है। अर निकट तिष्ठता जलका हृद तिसमे मनकूं नही चलावते जलकायके जीवनिकै बाधाका परित्यागकी इच्छातै जलकी चाहरहित है जैसे जलका सबंधरहित वेली म्लनताकू प्राप्त होय तैसे म्लानीकू प्राप्त जो शरीरलता ताही नही गिणतं तपका परिपालनमे तत्पर है। अर भिक्षाका अवसरमैहू अपनी चेष्टा आकारसमस्यादिकरि अपने पीवनेयोग्यभी जलादिकप्रति प्रेरणा याचना नही करते अपना धैर्यरूप कुभमे धारणकोया शीतलसुगध ध्यान रूप जलकरि तृषारूप अग्निकी शिखाकूं बुझावे है तीन साधुनिके तृषापरिषहसहना होय है ॥ २ ॥

बहुरि जो शीतके कारतनिकू निकट होतै शीतका इलाजकी वांछारहित हुवा सयमका पालन करेहै। ताके शीतपरिषहसहना जानना। वस्त्रनिका है परित्याग जिनके अर

गमन जाकै । अर ग्रहस्थनिकै घर अन्य किसीका रोकना नही तहांपर्यंत शरीरका दर्शन-मात्र है व्यापार जिनकै । अर मदरहित है अपने आधीन चित्त जाका । अर प्राणनिको अत होतैंहू आहार वस्तिका औषधादिकनिकूं दीनवचनकरि मुखकी विवर्णताकरि हस्तादि-ककी समस्याकरि उदरकी कृशताकरि कदाचित् याचना नहीं करता रत्नका व्यापारी मणिकूं दिखावे तैसे दीनतारहित है शरीरका दिखावना जाके । जेसे जगतमे वदनाकीया-हुवा अपने हस्तका प्रकाशन करे तैसे दातार भोजनके पात्रतै ग्रास उठाय देवनेकूं हस्त करे तदि साधु अजुलीकूं ऊची करे है हस्तपुटका दीनतारहित आहारका अवसरमे धारणा करते साधुके याचना परीषहका सहना होय है । अवार निकृष्टकालके प्रभावतै दीन अनाथ पाखडिनिकरि व्याप्त जगतमे जिनेंद्रके मार्गकूं नही जानते याचना करेहै । तिनकें याचनो-परिषहका सहना नही है ॥ १४ ॥

वहुरि आहारादिकका अलाभ होतैंहू लाभकीज्यो संतुष्ट जो साधु ताकै अलाभपरि षहका विजय है । पवनकीज्यो अनेकदेशनिमैं है गमन जिनका । अर एकदिनमैं एककाल भोजनके अर्थि नगरग्राममैं प्रवेश करेहै । तथा एक उपवास दोय तीन पाच उपवासादिकके पारणे नगर ग्राममे आवेहै तहा एकवार शरीरका दिखावनामात्रही मैं प्रवर्त्तैहै । अर देही इत्यादिक याचनारूप अयोग्यवचनकरि रहित है । अर आजि आहारका लाभ होयगा कि कालि होयगा ऐसे सकल्परहित हैं । अर देहका इलाजरहित है । अर एकग्राममैं भिक्षाका लाभ नही होय यो अन्यग्राममैं गमन कदाचित् नही करै । अर हस्तपुटमात्रही जिनके पात्र है । अर वहुतदिन वहुतगृहामे परिभ्रमण करतैंहू भोजनका लाभ नही होतैंहू सक्लेशरहित है चित्त जिनका । अर यो पुरूष दाता नही अन्य दाता है इत्यादिक परिक्षारहित है परिणाम जिनका अर लाभतैंभी अलाभकूं परमतप मानि सतोषकूं धारते साधुके अलाभपरिषहका विजय होयहै ॥ १५ ॥

वहुरि नानाप्रकारकी व्याधि होतैंहू इलाजप्रति वाछाका अभाव सो रोगपरिषहका विजय है । यो शरीर दुखको कारण है । अशुचिताको भाजन है । जीर्णवस्त्रकीज्यो अवश्यत्यागनेयोग्य है । अर वायु पित्त कफ सनिपातके निमित्ततैं अनेकज्वर काशश्वासादिक अनेकरोगनकरि पीडित है ऐसे अपने शरीरकूं अन्यका शरीरकीज्यो माने हैं । वीतरागपरिणामतै नही छूटे है । देहका इलाजतैं अपूठा है चित्त जाका । रत्नत्रय इस देहविना नही रहे । यातैं रत्नत्रयका सहकारी देहका अकालमे नाश नही होनेकै अर्थि आचारागकी आज्ञाप्रमाण निर्दोष आहार ग्रहण करेहै । जिनके जल्लोषधादिक अनेक ऋद्धि तपके प्रभावतैं उपजी है तोहू शरीरमे निस्पृहपणातैं प्रतिकारीकी नही वाछा करता रोगकूं पूर्वकर्मकृतफल जानि समभावतै सहते ऐसा विचारेहैं जो कर्मरा ऋण चुकै है । अव ऋणरहित भयो ऐसे चिंतवन करनेकै रोगपरीषहका विजय होय है ॥ १६ ॥

तृणकटकादिकनिका निमित्ततै उपजी वेदनाकूं सहते साधुकै तृणस्पर्शविजय होय है। शरीरमे व्याधि अर मार्गमैं गमन अर शीतउष्णताजनित खेदके दूरि करनेके अर्थि आपके निमित्त नही सवारे ऐसे सुके तृण पत्र कठोरभूमि कंटक काष्ठफलक शिलातलादिक प्राशुक देशनिमै शय्या वा आसनादि करनेतें तृणादिककरि वाधानै प्राप्तभया है शरीर जाका। अर उत्पन्नभया है खाजिका विकार जाकै। तोहू तृणकटक कठोर कांकरिभूमिका स्पर्शजनित दुखकू नही अनुभव करतेके तृणपरी षहसहना होय है ।। १७ ।।

वहुरि अपना शरीरका मल अर आगतुकमलका संचयका नाश होनेका संकल्पको अभाव सो मलपरीषहका सहन जानना। जीवनिकी पीडाका परित्यागकै अर्थि यावज्जीव स्नानका त्याग है प्रतिज्ञा जाकै। अर पसेवरूप कर्दमकरि लिप्त है सर्व अग जाका। अर खाजि दाघ कोढकी उत्कटतासहित है काय जाका। अर नख रोम डाढी मूछके केशनिका अर सहज वाह्यमलका मिलापकारण अनेक चामकै मध्य है विकार जाकै। अर अपने शरीरमे अर परके मलका संचय दूरि करनेमे नही है मन जाका। कर्ममलरूप कर्दमका नाश करनेमे उद्यमी अर पूर्वै भोग्या स्नानविलेपनादिकका स्मरणतै पराङमुख है चित्तकी वृत्ति जाकी ऐसे साधुकै मलपरीषहका सहन कहिएहै ।। १८ ।।

बहुरि जिन साधुनिका सन्मान अपमानविषै समरूप होय सत्कारपुरस्कारका अभिलाष नही होंइ तिनके सत्कारपुरस्कारविजय है। मै चिरकालतै ब्रम्हचर्यका सेवन कोया है। महातपस्वी हूं स्वमतपरमतका निश्चयका ज्ञाता हू। हितकारी उपदेश देनेंमे तत्पर हू। रत्नत्रयमार्गमे प्रवीण हू। अर बहुतवार वादीनिका विजय कीया है। ऐसा हू तोहु मोकू प्रमाण नही करै है। भक्ति नही करे है हर्षतै खडा होइ आसनादिक नही देहै। ऐसे परिणाम कदाचित नही करै है। अपने आत्मकल्याणकू ध्यावें है। सत्कारपुरस्कारकू नही वाछा करे। ताकै सत्कारपुरस्कारपरीषहका विजय होय है। पूजाप्रशसारूप तो सत्कार है। अर नामर्मे क्रियाके आरभमें अग्रेसर करना वा प्रधानकार्यमें बुलवोना सो पुरस्कार है ।।१९।।

वहुरि बुद्धिके मदका अभाव करना सो प्रज्ञापरीषहका विजय है। मै अगपूर्वप्रकीर्णकनिमें प्रवीण हू अर समस्तग्रथ तथा अर्थंका निश्चय करनेवाला हू। त्रिकाल विषय अर्थके जाननेवाला हू। शब्दशास्त्र तथा न्यायशास्त्रके जाननेमें निपुण हूं। हमारे अग्रभागविषे अन्य पडितजन सूर्यका उद्योतकरि तिरस्कारकूं प्राप्तहुवा आग्याका उद्योतज्यों अवभासे है। इस प्रकार प्रज्ञाका मदका अभाव करना सो प्रज्ञापरीषहका जीतना है ।।२०।।

वहुरि आपके अज्ञातपणाकरि आपका तिरस्कार होना अर ज्ञानकी अभिलाष करतेंहू ज्ञानका नही होना ऐसा अज्ञानजनितपरीषहका जीतना सो अज्ञानपरीषहका सहना

है। यो अज्ञानी हैं। कुछ नही जाने है पशुसमान हैं। इत्यादिक तिरस्कारके वचननिकूं मैं सहूंहू। अर अध्ययन करनेमे अर अर्थके ग्रहण करनेमे अर तिरस्कार सहनेमें अशक्त हूं। अर बहुतकालका दीक्षित हु। अर नानाप्रकारके तपके भारकरि व्याप्त हूं। अर सकलसामर्थ्यमे उद्यमी हूं। अर अनिष्टमनवचनकायकी प्रवृत्तिकरि रहित हू। तोहू अब भी मेरे ज्ञानका अतिशय नही उपज्या। ऐसे विकल्पनिकूं स्वप्नहूमैं नही करे ताके अज्ञानपरीषहका विजय जानना ॥ २१ ॥

बहुरि दीक्षादिकनिकूं निरर्थक जाननेका अभाव सो अदर्शनपरिषहका सहन है। मैं सयमीनिमे मुख्य हू। अर दुर्द्धरतपका आचरण करनेवाला हू परमवैराग्यभावना करि शुद्धमनका धारक हूं। सकलपदार्थनिके तत्वका जाननेवारा हू अर्हंतके आयतन साधुजन अर धर्म इनका पूजक हू। औरूहूमेरा ज्ञानका अतिशय प्रगट नही भया। महान उपवासादिक आचरण करनेवालेनिकै प्रातिहार्यविशेष प्रगट होय है सो यह वात तो प्रलापमात्र है कहनेकी है। अर या दीक्षाहू निरर्थक है। अर तव्रनिका पालनाहू निष्फल है। हमके तो कुछ प्रभाव प्रगट हुवा नही दर्शनविशुद्धिताके योगतै इत्यादिक चिंतवन नही प्रगट होय ताकै अदर्शनपरीषहका विजय होय है ॥ २२ ॥

ऐसे विना सकल्पही उपजे द्वाविंशतिपरीषह तिनको सहता सक्लेशचित्त नही होय है। तिसके रागादिकपरिणामजनित आस्रवका अभावतै महान् सवर होय है। अव गुणस्थाननिमें परिषहनिकू कहै है।

सूक्ष्मसाम्परायछद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥ १० ॥

अर्थप्रकाशिका—सूक्ष्मसापराय तो दशमगुणस्थानवर्त्ति अर छद्मस्थ वीतराग जो उपशातकषाय क्षीणकषाय है। नाम जिनके ऐसे ग्यारमा बारमा गुणस्थानवालेनिकै चोदह परीषहही है। क्षुधा। तृषा। शीत। उष्ण। दशमशक। चर्य्या। शय्या। वुध। अलाभ। रोग। तृणस्पर्श। मल। प्रज्ञा। अज्ञान। ए चतुर्दश है। अव शेष नान्य। अरति। स्त्री। निषद्या। सत्कारपुरस्कार। आक्रोश। याचना। अदर्शन। इन अष्टपरीषहका सद्भाव नही है। अर ए चोदह परीषहहू सत्तामात्र है। जैसे सर्वार्थसिद्धिके देवनिकै समस्त-पृथ्वीका गमनका सामर्थ्य है परतु जानेका प्रयोजन नही अर रागभाव नही तातै गमन नही। तैसे सूक्ष्मसांपरायकै तो मोहको अत्यत मद उदय अर छद्मस्थ वीतरागके मोहका अभाव तातै वेदनीयका तथा ज्ञानावरण अंतरायके सद्भावतै चोदह परीषह उपचारतै कहे तोहू मोहनीयके अभावतै मुख्यपणातै अभावही है। अव केवलीकै कहै है।

एकादश जिने ॥ ११ ॥

अर्थप्रकाशिका—जिनेंद्रभगवानकै ग्यारह परीषह कल्पै हैं। वेदनीयकर्मके उदयकें सद्भावतै भगवान केवलीजिनकै ग्यारह परीषह है। कोऊ कहैगा ग्यारहपरीषह है तो क्षुधादिककाहू प्रसग आया। सो नही हैं। जातै अघातिकर्मका उदयका प्रभावतै वेदनीयकर्मके क्षुधादिक वेदना उपजावनेकी सामर्थ्यका अभाव हैं। जैसे मंत्र औषधादिकके वलतै क्षीण भई है। मारणशक्ति जामैं ऐसा विषद्रव्य मरणकै अर्थि नही कल्पना करिए है। तैसे ध्यानरूप अग्निकरि दग्ध कीए है घातिकर्मरूप इंधन जानै अर प्रगट भया हैं अनत ज्ञानादिकचतुष्टय जाकै ऐसे केवली जिनके अतरायकर्मका अत्यत अभावतै निरतर शुभनोकर्मपुद्गल्निका सचय होनेतै प्रक्षीण भया है। सहाय बल जाकै ऐसा वेदनीयकर्म अपना वेदनारूप प्रयोजन उपजावनेकू असमर्थ है। यातै भगवान् जिनके वेदनीयका उदय होतेहूं क्षुधाका अभाव निश्चय करना।

ससारीजीवनकै वेदनीयकर्मके उदयतै। क्षुधा। १, तृषा। २, शीत। ३, उष्ण। ४, दंशमशक ५, चर्या। ६, शय्या। ७. वध। ८, रोग। ९, तृणस्पर्श। १०, मल। ११, ए ग्यारहपरीषह होयहै। यातै केवलीजिनकैहू वेदनीयकर्मका उदय है तातै कर्मकू कारण देखि केवलीके ग्यारह परीषह कहे। परतु मोहनीयकर्मके वलतै वेदनीयकर्म प्रवल होइ आहारादिककी इच्छारूप क्षुधादिक परीषह उपजावे था अव वेदनीयके मोहनीयकर्मके सहायका अभावतै वेदना देनेरूप शक्ति नही रही तव क्षुधादिक वेदना कैसे उपजावे। अर असातावेदनीकी उदीरणा होय तदि क्षुधा उपजेहै। सो वेदनीयकर्मकी उदीरणा छठा गुणस्थानपर्यंतही है उपरि नहीहै। तदि वेदनीयकी उदीरणाविना केवलीकै क्षुधादिकवाधा कैसे होय। जैसे निद्रा प्रचलाकर्मका उदय तो वारमा गुणस्थानपर्यत है परतु उदीरणाविना निद्रा नही व्यापैहै। अर जो निद्राकर्मके उदयतेही ऊपरके गुणस्थाननिमे निद्रा आजाय तो प्रमादीकै ध्यानका अभाव होजाय।

वहुरि जैसे सज्वलनका मद उदय होतै अप्रमत्तगुणस्थानमै प्रमादका अभाव है। जातै प्रमाद है सो सज्वलनका तीव्र उदयमे होयहै मदउदयमे नही होय। तथा वेदनीयके तीव्र उदयतै ससारीजीवनकै मैथुनसज्ञा होयहै। अर वेद नवगुणस्थानतांइ है। परतु वेदके मद उदयतै श्रेणी चढेहुवे सयमीनिकै मैथुनसज्ञाका अभाव है मंद उदयतै मैथुनमै वाछा नही उपजैहै। तथा निद्रा प्रचला कर्मका उदय तो वारमा गुणस्थानताई है। परतु मद उदयतै निद्रा नही व्यापैहै। तैसेही केवलीभगवानकै वेदनीयका मँद उदयतै क्षुधातृषादिक नही उपजैहै।

वहुरि शक्तिरहित असातावेदनीयहू केवलीकै क्षुधादिकवेदना उपजावनेकू समर्थ नही स्वयंभूरमणसमुद्रका समस्त जलकूं एक सरसूंका अनंतवा भागप्रमाण विषकी कणिका

विषरूप करनेंकू समर्थ नही तैसे अनंतगुण अनुभागका धारक सातावेदनीयका उदयसहित केवलीभगवानकू अनंतभागखंड असंख्यातवार जाका होयगा ऐसा असातावेदनीयकर्म क्षुधादिक वेदनाकू नही उपजाय सकेहै। अर जो थे या कहो आहारविना केवलीका देहकी स्थिति कैसे रही। तो या जाणों आहारविना देवनिका शरीरकी स्थिति कैसे है जैसे देवनिका शरीरकी स्थिति कवलाहारविना है तैसे केवलीका देहकी स्थितिहू है। अर जो थे या कहो देवनिके तो मानसिक आहार है तो केवलीकैहू ,निरतर शुभसूक्ष्मशरीरके बलाधानका कारण ऐसे नोकर्मपुद्गलनिका ग्रहणरूप आहार हैही। अर जो थे या कहो केवलीका देह तो मनुष्यका है मनुष्यदेह औदारिक है इस देहकी स्थिति कवलाहारविना कैसे होय। तातै देहवत् कवलाहारही उचित है। ऐसें कहो सो ठीक नही। जो मनुष्यके तपश्चरणजनित ऐसा प्रभाव प्रगट होय हैं जो त्रैलोक्यमे ऐसा सामर्थ्य नही।

अर भगवान् केवलीके अनतवीर्य प्रगट भया। अन्यमनुष्यनिके इद्रियजनित ज्ञान केवलीके अतिद्रियज्ञान केवलीजिनकूं अन्यमनुष्यनिके समान कैसे कहोहो। अर मनुष्यनिके अर केवलीजिनकै समानता होजाय तदि आत्मा अर परमात्मामे भेद काहेका रह्या। जिस काल क्षपकश्रेणी चढै है तिस कालविषै अधःप्रवृत्तिकरणका परिणामनितै च्यारि आवश्यक होय हैं। प्रथम तो समयसमयविषै कषायनिकी मदतातै परिणामनिकी अनतगुणी उज्वलता। १, अर स्थितिबंधापसरण कहिए पूर्वै कर्मकी स्थिति बाधि ताका समयसमय अनतगुणा घटना। २, अर सातावेदनीयादि प्रशस्तकर्मनिका अनुभाग जो रस देनेकी शक्ति ताका समयसमय अनतगुण वधना। ३, अर असातावेदनीयादिक अप्रशस्तकर्मकी प्रकृतिनिका अनुभाग समयसमय घटना ४, जातै अशुभप्रकृतिनिमै विषहालाहलरूप शक्तिका तो अभाव होय है अर निंब काजीरूप रस रहिजाय है। ५, ऐसे च्यार आवश्यक तो अध प्रवृत्तिकरणतै होय है।

अर अपूर्वकरणतै गुणश्रेणीनिर्जरा। १, अर गुणसंक्रमण। २, अर स्थितिकाडकोत्कीर्ण ३, अर अनुभागकाडकोत्कीर्ण। ४, च्यार आवश्यक अपूर्वकणतै होयहै। यातै केवलीभगवानके असातावेदनीय आदि अप्रशस्तप्रकृतिनिका रस असख्यातवार अनतअनतका भागलागिकै घटि-गया तदि असातामे सामर्थ्य कहां रही जो केवलीके क्षुदादिवेदना उपजावे।

बहुरि असातावेदनीयका वंध तो छठा गुणस्थानपर्यंतही है। अर सप्तमगुणस्थानसूंही असातावेदनीयका बंध नही एक सातावेदनीयकाही वंध है। अर ग्यारमा बारमा तेरमा गुणस्थानमे जो सातावेदनीयका बंध है सो एक समयकीहू स्थिति नही पावै है। जातै स्थितिका [illegible] तो मूलतै गया तदि साताका ——

वहुरि वडी मूढता प्रगट दीखै है। जो तीन लोकके पतिकरि वदनीय देवाधिदेव परमपूज्य अर्हत् भट्टारककू अर जगतके विषयी रक पुरुषनिकू समान कहना इस सिवाय अन्य मूढता नही है। अर जगत्विषै भी प्रसिद्ध हैं। जो मणि मत्र औषध विद्या तप इनका अचित्य प्रभाव है। चितामणि अर अन्यपाषाण कैसे समान होय। अर अन्य तारा अर सूर्य कैसे समान होय। तातै नानावेदनाका नष्ट करनेमे समर्थ ऐसा केवलज्ञानकौ होतै केवलीके आहार निहार मानना अनतससारका कारण है। अर प्राणीनिका जीवना तो आयुकर्मके उदयके आधान है। केवल आहारमात्रतैही नही है। तातै भोगभूमिके मनुष्यनिका तो शरीरतीन कोसप्रमाण है। अर तीन पल्यका आयु है। अर तीन दिन गए पीछै बोरप्रमाण आहार करे है।

वहुरि अडेमे पक्षी अपनी माताका उदरकी ऊष्माहीतै वृद्धीने प्राप्त होय है। तातै पक्षीनिकै उजाहार है। एकेद्रियनिकै जल पवनादिकही आहार है। सो लौकिकजनहूं कितने जीवनिकै पवनकाही आहार कहे है। नारकीनिकै कर्मनिका भोगनाही आहार है। देवनिकै मानसिक आहार है। तैसे केवलीजिनकै नोकर्मपुद्गलनिका आहार है।

वहुरि अन्यमनुष्यनिकीज्यो केवलीजिनके वेदनीके उदयतै कवलाहार मानोहो तो सयोगीके द्रव्यमनका सद्भावते मनका विकल्पहू मानो। अर द्रव्येद्रिय विद्यमान हैं। तातै इद्रियजनितज्ञानहू मानो। अर शुक्ललेश्या विद्यमान है तातै कषायहू केवलीकै माननेका प्रसग आवैगा। जिस मुनिके कायवलऋद्धि होय है ताकैही ऐसा समर्थ्य होय है। जो त्रैलोक्यकू चलायमान करे तो केवलीका सामर्थ्य कौन कहीसके

वहुरि भक्षण करनेकी इच्छाकू बुभुक्षा कहिए है। सो भगवानके मोहनीयकर्मका अभाव भया तदि भोजनकी इच्छा काहेतै भई। अर मोहनीयकर्मका अभाव होते भी जो इच्छा मानोहो तो स्त्रीभोगनेकी इच्छाकाहू सद्भाव आया। तदि वीतरागताकू जलाजलि दीनी वीतरागता कहां रही।

वहुरि जो केवली भोजन करे है सो नित्य एकबार करै है कि अनेकबार करे हैं कि एकदिन दोय दिनकें आतरै करे है कि छ महीना बरस दिनके अतरते करे है। उनके कितने दिनके अतरकरि भोजन है। जो प्रमाण कहोगा तो उनकी शक्तिका प्रमाण आगया तदि अनतशक्ति कहना वृथा है। वहुरि भोजन करै हैं सो क्षुधाकी वेदनाते करै हैं कि रसनेद्रियका स्वादकै अर्थि करे है। जो क्षुधाकि वेदना नही सहिजाय यातै करै है। तो क्षुधासमान वेदनाही नही। तदि केवलीके अनतसुख कहना वृथा भया। अर जो रसनेद्रियका स्वादके अर्थि करे है। तो अतीद्रियात्मक स्वाधीनसुखका अभाव आया। भोजनके आधीन सुख रह्या तदि स्वाधीन परमेश्वरपणाका अभाव आया।

बहुरि भोजनकू आस्वादे है। सो केवलज्ञानते आस्वादै है कि रसनेंद्रियतै आस्वादै है। जो केवलज्ञानतै आस्वादै है। तो दूर समस्त त्रैलोक्यमे वर्त्तेतेकू आस्वदन करे है फेर कवलाहारसू कहा प्रयोजन रह्या । अर रसनेंद्रियतै आहारका स्वाद लेहै तो केवलीके इद्रियजनित मतिज्ञानका प्रसग आया तदि केवलज्ञानका अभाव आया । बहुरि केवली त्रैलोक्यमे वर्त्ते समस्त जीवनिका मरण ताडन त्रासन मांस रुधिरादिकनिकू प्रत्यक्ष देखता भोजनका अतराय कैसे टाले है। अल्पशक्तिका धारक श्रावकहू ऐसे घोरकर्मनिकू देखै तो अतराय करे है। केवली कैसे भोजन करे है।

बहुरि भोजनकी इच्छामात्रते सप्तमगुणस्थानका धारक तथा श्रेणीमे तिष्ठता साधु छठे गुणस्थानकू प्राप्त होय है प्रमादी कहावे है। तो केवली भोजन करता प्रमादी कैसे नही होय। यह बडा आश्चर्य हैं। ध्यानरूप अग्निकरि दग्ध कीए है। च्यारघाति-कर्म जिनने। अर अनत अरोक ज्ञानदर्शनसुखवीर्य जिनके प्रगट भया ऐसा भगवान् केव-लीके अतरायकर्मके अत्यत अभावतेंनिरतर समयसमय शुभसूक्ष्मपुद्गलनिके सचय होनेतैं औदारिकशरीर कवलाहारविनाही अनतशक्ति धारण करे हैं। तातै बहोत कहाताई लिखि-जाय केवलीके आहारकी असत्यकल्पनाकरि मोहनीयकी सत्तरीकोटाकोटीसागरकी स्थिति निरतर बाधना उचित नही।

निरस्त भया है । घातिकर्मका चतुष्टय जाके ऐसे जिनभगवानके वेदनीयका सद्भाव होतेहू द्रव्यकर्मका सद्भावतै एकादशपरीषह नही होय है। जातै मोहनीयका सहायविना वेदनीयकर्म क्षुधादिकवेदना नही करि सकै है। अर वेदना नही करै है तोहू वेदनीयका कर्मपरमाणुके सद्भावते उपचारतै ग्यारह परीषह कहे है । जैसे समस्त ज्ञानावरणका अभावकरि सकलपदार्थनिका अवभास केवलज्ञान प्रगट होतैहू केवलीभगवानके उपचारतै ध्यान कह्या। भगवानके सकलपदार्थ एककालमे युगपत् प्रत्यक्ष भए । तदि एकाग्रचितानिरोधध्यान जो एकपदार्थकू आलबनकरि ध्यावे सो कहा रह्या। तोहू ध्यानका फल कर्मका नाश होनेके सद्भावतै उपचारते ध्यान कह्या । अथवा इसही वाक्यतै केवलीजिनके ग्यारह-परीषह नही हैं। जातै उपचारते परीषह कहे है सो उपचार झूठा है।

जैसे किसि बालकमै क्रूरपणा शूरपणा देखि उपचारतै सिह कहीदीया। तीक्ष्ण दाढ़ें कपिल नयनके सावलीका धारनेवाला सिह नही है। परतु सिहका केई धर्म देखि सिह कहना सो उपचार है। तथा लौकिकजन कहेहै । वस्त्र आभरण मेरा है। यह देश मेरा है। यह राज्य हमारा है। यह नगर हमारा है। ऐसे समस्त कहना उपचार है सो झूठा है। तातै जिनेंद्रके उपचारतै कहे ग्यारह परीषह नही हैं। अब बहुत कथनी [illegible] बधिजाय तातै श्वेतांबरपराजयादितें विशेपकथन जानना। अब समस्तपरी-

बादरसाम्पराये सर्वे ॥ १२ ॥

अर्थप्रकाशिका–प्रमत्तकू आदिकरि नवमगुणस्थानताई बादरसांपराय कहिए स्थूल-कषाय है। इनमे समस्त बाईस परीषह होयहै। अब कौन प्रकृतिका उदयतै कौन परीषह होय सो कहै है।

ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥ १३ ॥

अर्थप्रकाशिका– ज्ञानावरणकू होतसंतै प्रज्ञा अर अज्ञानपरीषह होयहै। इहां कोऊ कहै ज्ञानावरणके उदय होते अज्ञानपरीषह होना तो ठीक है परतु प्रज्ञापरीसह कैसे होय प्रज्ञा तो ज्ञान है सो आत्माका स्वभाव है। सो ज्ञानावरणके उदय कसै होय। जो प्रज्ञाका मद-जनित परीषह होयह सो ज्ञानावरणका उदय होतेही होयहै। जातै क्षयोपशमतै उपजी मदप्रज्ञा सोही मंद उपज्यावेहै। जाके सकलज्ञानावरणका नाश होजायगा ताहे प्रज्ञाका मद नही उपजैगा प्रज्ञाका मद होयहै सो क्षयोपशमज्ञानीके होयहै क्षयोपशमज्ञानीके ज्ञानावरणको उदय-विद्यमान हैही।

दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालाभौ ॥ १४ ॥

अर्थप्रकाशिका– दर्शनमोहकू होतसंतै अदर्शनपरीसह होयहै। अर अतरायके उदयतै अलाभपरीसह होयहै।

चारित्रमोहे नग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाचनासत्कारपुरस्काराः ॥ १५ ॥

अर्थप्रकाशिका– चारित्रमोहकू होतसंतै नाग्न्य। १, अरति। २, स्त्री। ३, निषद्या ४, आक्रोश। ५, याचना। ६, सत्कारपुरस्कार। ७, ए सात परीषह होयहै। अब अवशेष परीषहनिके निमित्तकू कहेहै।

वेदनीये शेषाः ॥ १६ ॥

अर्थप्रकाशिका– कहे तिनतै शेष जे क्षुधा। १, तृष्णा। २, शीत। ३, उष्ण। ४, दंशमशक। ५, चर्या। ६, शय्या। ७, वध। ८, रोग। ९, तृणस्पर्श। १०, मल। ११, ए ग्यारह परिषह वेदनीय कर्मके होतसतै होयहै। अब एककालमे युगपत कितने परिषह होय सो सूत्र कहेहै।

एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नेकोनविंशतिः ॥ १७ ॥

अर्थप्रकाशिका– एक जीवके युगपत् एककालमे उगणीस परिषह होयहैं अधिक नही। जातैं शीत उष्णमेतैं एककाल एकही होय अर शय्या चर्या निषद्या इन तीननिमे एककालमे युगपत् एकही होय। तातैं तीन घटनेतैं युगपत् उगणीसही कहैं। ऐसे परिषहनिका प्रकरण कह्या। अब संवरनिर्ज्जराका कारण चारित्रकू कहेहै। सो चारित्र चारित्रमोहका उपशम क्षय क्षयोपशम लक्षण जो आत्मविशुद्धिरूप लब्धि तिसकी सामान्य अपेक्षाकरि तो एक प्रकार है। प्राणीनिकै पीडा अर इंद्रियनिका दर्पका निग्रहकी शक्ति अपेक्षा दोय प्रकार है। उत्कृष्ट मध्य जघन्य विशुद्धिताकी प्रकर्षता अप्रकर्षता तातैं तीन प्रकार है। सराग वीतराग सयोगी अयोगीकी अपेक्षा च्यार प्रकार है। तोहू पचप्रकारकरि कहेहै।

सामायिकच्छेदोपस्थापनापरिहारविशुद्धिसूक्ष्मसाम्परायथाख्यातमिति चारित्रम्।१८।

अर्थप्रकाशिका– सामायिक। १, छेदोपस्थापना। २, परिहारविशुद्धि। ३, सूक्ष्मसापराय। ४, यथाख्यात। ५, ऐसे पचप्रकार चारित्र है। व्रतनिका धारण समितिका पालन कषायनिका निग्रह अशुभमनवचनकायकी प्रवृत्तिरूप दडनिका त्याग करना इंद्रियनिका विजय जिस जीवके होय ताकै सयम जानना। तहा समस्त सावद्ययोगका अभेदकरि जामैं त्याग होय सो सामायिकचारित्र है बहुरि कोऊ सामायिकसयमरूप होय फेर चिगकरि सावद्यव्यापाररूप हुवा फिर प्रायश्चित्ततैं सावद्यव्यापारतैं उपज्या दोषकू छेदि आत्माकू व्रतधारणादिरूप सयममें धारण करिए सो छेदोपस्थापन है। अथवा। व्रत समिति गुप्त्यादिकका भेदरूप चारित्र सो छेदोपस्थापन है। बहुरि प्राणीनिकी पीडाका परित्यागकरिकै विशिष्टशुद्धिता जाके होय सो कहेहै।

जन्मतैं तीस वर्षप्रमाण जाकी अवस्था होय। अर जन्मदिनको आदि लेय सर्वकाल सुखी रह्यो होय अर तीस वर्ष पीछै जिनदीक्षा ग्रहणकरि श्रीतीर्थंकराकाचरणारविंदसेवनकरतो तीर्थंकराका चरणाकै मूल प्रत्याख्यान नाम नवमा पूर्व पढ्याहोय। अर जीवनिका निरोध जीवनिका प्रगट होनेका काल जीवनिका प्रमाद उत्पत्ति योनि देश द्रव्यस्वभावके विधानका जाननेवाला होय। प्रमादरहित होय महावीर्यका धारक होय। बडी निर्जरा जाकै होय। दुर्धर चर्याको आचरण करनेवाला होय। तीन सध्याकू वर्जनकरि अन्य अवसरमे दोय कोशप्रमाण विहार करनेवाला होय। रात्रिकै विषै विहाररहित होय। वर्षाकालका नियमरहित होय। ऐसा साधुकै परिहारविशुद्धि होयं अन्यकै नही होय।

इनूके शरीरतें जीवकी विराधना नही होयहै। परिहारविशुद्धिचारित्रका जघन्यकाल अंतर्मुहूर्त्त है। छटो अर सातमो दोय गुणस्थानमैं यो संयम है। जो अतर्मुहूर्त्तमे गुणस्थान

पलटिजाय तो सयम छूटिजाय। अर उत्कृष्टकाल अडतीस वर्षघाटि कोटिपूर्व है। कैसे सो कहेहै। उत्पत्तिदिवसतै तीस वर्षका दीक्षित होय अष्टवर्ष तीर्थंकरनिकै निकट रह्या पाछै परिहारविशुद्धिसयम उपजै अर कोटीपूर्वका आयु तातै अडतीस वर्ष घाटि कोटिपूर्व रहै। वहुरि सूक्ष्मकषागुणस्थानमे सूक्ष्मसापरायचारित्र है। जो सूक्ष्म अर स्थूलहिंसाका त्यागमे असावधान नही। अर अखडित जिनकै उत्साह हैं। अर सम्यग्दर्शनज्ञानमहापवनकरि संधुक्षित जो प्रशस्त परिणामरूप अग्निकी शिखाकरि दग्ध कीयाहै कर्मरूप इंधन ज्या। ध्यानविशेषकरि शिखारहित कीयाहै कषायरूप विषका अकुरा ज्यां। नाशकें सन्मुख कीयाहै सूक्ष्मकोहवीज ज्या। ऐसे साधुकै सूक्ष्मसापरायचारित्र होय है।

समस्त उपशात तथा क्षीणमोहके होनेतै यथाख्यातचारित्र होय है। जैसा निर्विकार आत्माको स्वभाव तैसो समस्त मोहनीयके उपशमतै वा क्षयते प्रगट होगयो तातै यथाख्यातचारित्र है। सो उपशातकषाय क्षीणकषाय वा सयोगी अयोगी जिनके होय है। सामायिक छेदोपस्थापन सयम हैं। सो प्रमत्त अप्रमत्त अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण इन च्यार गुणस्थाननिमे होय है। अर परिहारविशुद्धि छठे सातमे दोयही गुण स्थानमे होय। सूक्ष्मसापराय एक सूक्ष्मसापरायगुणस्थानहीमे होय है।

इहां और विशेष जानना। सामायिकछेदोपस्थापनाकी जघन्यविशुद्धिताकी लब्धि अल्प है। तातै परिहारविशुद्धिचारित्रकी जघन्यविशुद्धिता अनंतगुणी है। तातै परिहारविशुद्धिताकी उत्कृष्टविशुद्धिता अनतगुणी है। तातै सामायिकछेदोपस्थापनाकी उत्कृष्ट विशुद्धिता अनतगुणी है। तातै यथाख्यातचारित्रकी सपूर्णविशुद्धिता अनतगुणी है सो घाटि वाधिरहित है। अव निर्जराका कारने तपके भेदनिमें बाह्यतपके भेद कहे है।

अनशनावमोदर्यवृत्तिपरिसङ्ख्यानरसपरित्यागविविक्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्यं तपः ॥ १९ ॥

अर्थप्रकाशिका—अनशन। १। अवमोदर्य।२। वृत्तिपरिसख्यान।३। रसपरित्याग।४। विविक्तशय्यासन।५। कायक्लेश।६। ऐसे छहं प्रकार बाह्य तप है। तहा लौकिक ख्याति पूजा देवताआराधन मन्त्रसाधनादिककी नहीं अपेक्षा करिकै जो सयमकी सिद्धिके अर्थि रागका उच्छेदके अर्थि कर्मका विनाशके अर्थि ध्यानकी स्वाध्यायकी सिद्धिके अर्थि इंद्रियनिका विजयके अर्थि कामका नाशके अर्थि निद्राप्रमादका विजयके अर्थि जो भोजनका त्याग सो अनशनतप है। सो अवधृतकालका अर अनवधृतकालका भेदतै दोय प्रकार है। तिनमें एकवार भोजन तथा एक उपवास दोय तीन पाच पक्ष मास छमास इत्यादिक

कालकी मर्यादाकरि जो अशनत्याग सो अवधृतकालअनशन है। अर यावज्जीव भोजनका त्याग करि संन्यास करना सो अनवधृतअनशन है।

बहुरि सयमका पालन निद्राका विजय त्रिदोषका उपशमन आलस्यका अभाव अनशनजनित बाधाका अभाव कायोत्सर्गकी दृढता ध्यानकी निश्चलता संतोष स्वाध्यायकी सुखसिद्धिकै अर्थि जो अल्प आहार करना अर्द्धभोजन चतुर्थांशभोजन एकग्रासपर्यंत लेना सो अवमोदर्यतप है। बहुरि संयमीमुनीका एक गृह पाच गृह सात गृहादिमै भोजनके अर्थि नियम करना तथा एक पाडामे वा दोय पाडामे वथा रसता चहोटादिकका नियम तथा दातारका भोजनका नियम तथा पात्रका निगमकरि भोजनके निमित्त नगर ग्रामादिकमे जावना अर सकल्पमाफिक भोजनका भोग मिले तो लेना नही मिलै तो पाछा वनमें आय उपवास धारणा सो वृत्तिपरिसख्यान है। इस तपतै आशाका अभाव अतरायकर्मकी निर्जरा अर परमसतोष होय है।

बहुरि इद्रियनिका दमन तेजकी हानि सयमका भंगका अभाव लालसाका नाशकै अर्थि इद्रियनिका दमनकै अर्थि तेजकी हानिके अर्थि सयमका घातकू दूरि करनेकें अर्थि जो घृत दुग्ध तैल गुड लवण छह प्रकार रसनिका त्याग करना सो रसपरित्याग तप है। कोऊ कहै रसवान वस्तुको त्याग सो नही है। जातै समस्तही पुद्गल रसवान् है रस-रहित कोऊ नही। तातै रसपरित्यागकरि घृत तैल दुग्धादि रस ग्रहणका त्याग जानना। जो रसवान्का त्याग करिए तो रसवान् तो समस्त आहार है। तदि समस्त आहार त्यागका प्रसग आजाय। अर आहारविना देह रहे नही देहविना रत्नत्रय कौनके आधार होय। रत्नत्रयधर्मविना कर्मका अभाव नही तातै रसशब्दकरि घृतादिरसविशेष ग्रहण करना।

इहां कोऊ कहै। जो साधु आहारके निमित्त मोन धारणकरि जाय है। अर आपके निमित्त कीयाहुवा आहार ग्रहण नही करै है। अर गृहस्थकू अपना त्यागकू जणावै नही है। तदि रसनिका त्यागका निर्वाह कैसे होय। सो ऐसा जानना। जो गृहस्थ पात्रमैतै भोजन उठाय साधुका अजलीरूप पात्रमे धरै है। तदि साधु नेत्रकरि अपन भोजनकू अवलोकन करै है। तिसमे दुग्ध दधि घृत गुडादिककरि सयुक्त होय सो तो दृष्टीतैही अवलोकनमें आवे है। अर लवणका अनुमान देशादिककी रीतीसों होजाय है। जो कितने देशनिमें तो रोटी पुडी खीचडी वडा सेव कचोरी इत्यादिकमे लवणका सयोग नहीं होय है। कितने देशमें लवणसहितही होय है। अर लाडू मोदक घेवर खीर पूवा इत्यादिकमै लवण नही होयहै। सो देशकालका ज्ञाता समस्तरीति जाणि त्याग ग्रहण करै

है। कदे छह रसका त्याग करे है । कदे एक रसका करे दोय च्यारका ऐसे अपनी इच्छापूर्वक रसनिका त्याग सो रसपरित्यागतप है ।

वहुरि प्राणीनिकी पीडारहित प्राशुक क्षेत्रविषै निवासकू इच्छा करता साधु है। सो एकातमे ब्रह्मचर्य स्वाध्याय ध्यानादिककी सिद्धिके अर्थि शयनआसन करै है । जिस स्थानमै विषयी कषायी रागीनिका सचार नही होय स्त्रीनिका नपुसकनिका तिर्यचनिका सचार क्रीडादिक नही होय इद्रियनिका विषयनिकू पुष्ट करनेवाली सामग्री नही होय। ऐसा पर्वतनिका दराडा गुफा मठ वनखडादिक निर्जन प्रदेशनिमे शय्या आसन करै तिनके विविक्तशय्यासननाम तप होय है ।

वहुरि शरीरमें ममत्व त्यागी जिनेदका मार्गतै अविरोध ऐसा अनेक प्रकार कायके कप्टरूप तप करे सो कायक्लेशतप है । कठोरभूमिमै वहुतकाल आसनकी अचलताकरि तिप्ठना । मौन धारना । ग्रीष्मऋतुमे पर्वतके शिखर अचल कायोत्सर्गादिक धारणकरि तीव्र आतापनयोग धारण करना । वर्षाऋतुमें वृक्षके नीचै वर्षाकृत घोरवाधा सहना । शीतऋतुमे नदीकी तीर तथा चोहटै दृढशय्यासनकरि रात्री व्यतीत करना । सर्प वीछु कानखिजूरे डांस इत्यादिक जतुनिकरि करि वाधा तथा दुष्टमनुष्य व्यतरादिक देव सिह व्याघ्रादिकनिकरी करी तीव्र वाधाकू समभावनितै सहना सो कायक्लेश तप है। सो यह तप देहके आया दुख सहनेके अर्थि अर विषयसुखनिमै अभिलाष मेटनेकै अर्थि अर प्रवचनकी प्रभावनाकै अर्थि कायक्लेश तप आचरण करीए है ।

ऐसे क्लेशका कारण होतैहू ज्ञानाभ्यासमे आत्मानुभवमे लीन रहे है। चित्तमे क्षोभ नही करे है। साम्यभावतै नही चिगे है ते साधु धन्य है । इहा सम्यक्पदकी अनुवृत्ति लेणी तातै सम्यक्तप है। सो यत्रमत्रादिककी सिद्धिकै अर्थि नहीं धारे है। तथा जगतके जनकरि पूजाप्रशमाकै अर्थि नही करे है । केवल आत्माके सहनशीलता अर कर्ममलका क्षपणकै अर्थि करे है ।

कोऊ कहै परिषहमे अर कायक्लेशमे कहा भेद है ताका उत्तर । जो स्वयमेव उदे आवै सो परिषह है । अर अपनी वुद्धिपूर्वक-अगीकार करै सो कायक्लेशतप है । अर इन छह प्रकारकै तपकै वाह्यपणा कैसे सो कहेहै । अनशनादि वाह्यतपकी अपेक्षातै ए तप है। तथा वाह्यइद्रियनिकै ग्रहणमे आवेहै । तथा गृहस्थनकरिभी करिएहै तथा वाह्यलोकनिकू प्रत्यक्ष दीखैहै तातै याकै वाह्यपणा जानना । कर्मरूप इधनके दग्ध करनेतै तप कहिएहै । तथा देहकै अर इद्रियनिकै ताप करनेतै तप कहिएहै । अव अभ्यंतरतपकू कहिएहै ।

प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम् ॥ २० ॥

अर्थप्रकाशिका— । प्रायश्चित विनय वैयावृत्य स्वाध्याय व्युत्सर्ग ध्यान । ए छहप्रकार अभ्यंतर तप है । ए तप अन्यमतीनिकरि नही कीए जाय तथा वाह्य द्रव्यकी अपेक्षा नही करेहै तातै अभ्यंतरनाम है । अब इन अभ्यतर तपके भेद कहनेकू सूत्र कहेहैं ।

नवचतुर्दशपंचद्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥ २१ ॥

अर्थप्रकाशिका— नवप्रकार प्रायश्चित हैं । विनय च्यार प्रकार है । वैयावृत्य दश प्रकार है । स्वाध्याय पचप्रकार है । दोय प्रकार व्युत्सर्ग है । ऐसे ध्यान पहली पच प्रकार तपके भेद कहे । अब प्रायश्चित्तके नव भेद कहनेकू सूत्र कहेहै ।

आलोचनप्रतिक्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्गतपश्छेदपरिहारोपस्थापनाः ॥ २२ ॥

अर्थप्रकाशिका— । आलोचना । १, प्रतिक्रमण । २, आलोचना अर प्रतिक्रमण दोऊ सो तदुभय । ३, विवेक । ४, व्युत्सर्ग । ५, तप । ६, छेद । ७, परिहार । ८, उपस्थापना ९, ए नव भेद प्रायश्चितके कहै । जो प्रमादतै उपज्या दोषका अभाव होनेकू अर भावनिकी उज्जलता होनेकू अर परिणाम शल्य दूरि करनेकू । अर अनवस्थाका अभावके निमित्त अर मर्यादाका लोप नही होनेकै अर्थि अर सयमीकी दृढ आराधनादिककी सिद्धिकै अर्थि नवप्रकारको प्रायश्चित अगीकार करिएहैं । प्राय जो साधुजन ताके चित्त जाविषै होय सो प्रायश्चित्त है । अथवा प्राय. जो अपराध ताकी चित्त कहिए शुद्धिता सो प्रायश्चित है । तहा जो एकातमै तिष्ठते अर प्रसन्नमनका धारक अर देशकालके जाननेवालें ऐसे वीतरागी गुरुके आगे शिष्य है सो विनयकरिकै दश दोषरहित हुवा आपका प्रमादकू प्रगट करि जनावना सो आलोचना हैं । सो आलोचना गुरुनिकू दश दोष टालिकरि करै ।

तें दोष कौन सो कहेहै । जो आचार्य हमारे ऊपरि प्रीति अनुग्रहरूप होय अल्प प्रायश्चित देवेगे ऐसे अभिप्रायतै गुरुनिकी भेट पीछी कमडलादिककरि अर आलोचना करे सो आलोचना आकपितदोषसहित है । बहुरि गुरुनिकू ऐसा जणावै जो मै प्रकृतिबलरहित हूं रोगी हूं उपवासादि करनेकू समर्थ नही हू । जो मोकू अल्प प्रायश्चित देओगे तो मै दोष आलोचना करू । ऐसे आचार्यनै अपना स्वरूपका अनुमान कराय आलोचना करै सो अनुमापित दोषसहित आलोचना है । बहुरि अन्यकरि नहीं देख्या दोषकू तो छिपावै अर अन्यकै प्रगटहुवा दोषकू आलोचना करै सो दृष्टदोष है । बहुरि अल्पदोष हुवा सोय नाम तो नहीं जणावै अर स्थूल दोषकू आलोचना करै सो बादरनाम दोष है । बहुरि महान दुर्धर

है। कदे छह रसका त्याग करे है। कदे एक रसका कदे दोय च्यारका ऐसे अपनी इच्छापूर्वक रसनिका त्याग सो रसपरित्यागतप है।

बहुरि प्राणीनिकी पीडारहित प्राशुक क्षेत्रविषै निवासकू इच्छा करता साधु है। सो एकातमे ब्रह्मचर्य स्वाध्याय ध्यानादिककी सिद्धिके अर्थि शयनआसन करै है। जिस स्थानमै विषयी कषायी रागीनिका सचार नही होय स्त्रीनिका नपुसकनिका तिर्यंचनिका सचार क्रीडादिक नही होय इद्रियनिका विषयनिकू पुष्ट करनेवाली सामग्री नही होय। ऐसा पर्वतनिका दराडा गुफा मठ वनखडादिक निर्जन प्रदेशनिमे शय्या आसन करै तिनके विविक्तशय्यासननाम तप होय है।

बहुरि शरीरमे ममत्व त्यागी जिनेदका मार्गतै अविरोध ऐसा अनेक प्रकार कायके कष्टरूप तप करे सो कायक्लेशतप है। कठोरभूमिमै बहुतकाल आसनकी अचलताकरि तिष्ठना। मौन धारना। ग्रीष्मऋतुमे पर्वतके शिखर अचल कायोत्सर्गादिक धारणकरि तीव्र आतापनयोग धारण करना। वर्षाऋतुमे वृक्षके नीचै वर्षाकृत घोरवाधा सहना। शीतऋतुमे नदीकी तीर तथा चोहटै दृढशय्यासनकरि रात्री व्यतीत करना। सर्प बीछु कानखिजूरे डास इत्यादिक जतुनिकरि करि वाधा तथा दुष्टमनुष्य व्यतरादिक देव सिह व्याघ्रादिकनिकरी करी तीव्र वाधाकू समभावनितै सहना सो कायक्लेश तप है। सो यह तप देहके आया दुख सहनेके अर्थि अर विषयसुखनिमै अभिलाप मेटनेकै अर्थि अर प्रवचनकी प्रभावनाकै अर्थि कायक्लेश तप आचरण करीए है।

ऐसे क्लेशका कारण होतैहू ज्ञानाभ्यासमे आत्मानुभवमे लीन रहे है। चित्तमे क्षोभ नही करे है। साम्यभावतै नही चिगै है ते साधु धन्य है। इहा सम्यक्पदकी अनुवृत्ति लेणी तातै सम्यक्तप है। सो यत्रमत्रादिककी सिद्धिकै अर्थि नही धारे है। तथा जगतके जनकरि पूजाप्रशसाकै अर्थि नही करे है। केवल आत्माके सहनशीलता अर कर्ममलका क्षपणकै अर्थि करे है।

कोऊ कहै परिषहमे अर कायक्लेशमे कहा भेद है ताका उत्तर। जो स्वयमेव उदे आवै सो परिषह है, अर अपनी बुद्धिपूर्वक अगीकार करै सो कायक्लेशतप है। अर इन छह प्रकारकै तपकै वाह्यपणा कैसे सो कहेहै। अनशनादि बाह्यतपकी अपेक्षातै ए तप है। तथा वाह्यइद्रियनिकै ग्रहणमे आवेहै। तथा गृहस्थनकरिभी करिएहै तथा वाह्यलोकनिकू प्रत्यक्ष दीखैहै तातै याकै वाह्यपणा जानना। कर्मरूप इधनकै दग्ध करनेतै तप कहिएहै। तथा देहके अर इद्रियनिके ताप करनेतै तप कहिएहै। अब अभ्यतरतपकू कहिएहै।

प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम् ॥ २० ॥

अर्थप्रकाशिका– । प्रायश्चित विनय वैयावृत्य स्वाध्याय व्युत्सर्ग ध्यान । ए छह्प्रकार अभ्यंतर तप है । ए तप अन्यमतीनिकरि नही कीए जाय तथा बाह्य द्रव्यकी अपेक्षा नही करेहै तातै अभ्यंतरनाम है । अब इन अभ्यतर तपके भेद कहनेकू सूत्र कहेहै ।

नवचतुर्दशपंचद्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥ २१ ॥

अर्थप्रकाशिका– नवप्रकार प्रायश्चित हैं । विनय च्यार प्रकार है । वैयावृत्य दश प्रकार है । स्वाध्याय पचप्रकार है । दोय प्रकार व्युत्सर्ग है । ऐसे ध्यान पहली पच प्रकार तपके भेद कहे । अव प्रायश्चित्तके नव भेद कहनेकू सूत्र कहेहै ।

आलोचनप्रतिक्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्गतपश्छेदपरिहारोपस्थापनाः ॥ २२ ॥

अर्थप्रकाशिका– । आलोचना । १, प्रतिक्रमण । २, आलोचना अर प्रतिक्रमण दोऊ सो तदुभय । ३, विवेक । ४, व्युत्सर्ग । ५, तप । ६, छेद । ७, परिहार । ८, उपस्थापना ९, ए नव भेद प्रायश्चितके कहे । जो प्रमादतै उपज्या दोषका अभाव होनेकू अर भावनिकी उज्जलता होनेकू अर परिणाम शल्य दूरि करनेकू । अर अनवस्थाका अभावके निमित्त अर मर्यादाका लोप नही होनेकै अर्थि अर सयमीकी दृढ आराधनादिककी सिद्धिकै अर्थि नवप्रकारको प्रायश्चित अगीकार करिएहै । प्राय जो साधुजन ताके चित्त जाविषै होय सो प्रायश्चित्त है । अथवा प्राय जो अपराध ताकी चित्त कहिए शुद्धिता सो प्रायश्चित है । तहा जो एकांतमै तिष्ठते अर प्रसन्नमनका धारक अर देशकालके जाननेवालें ऐसे वीतरागी गुरूके आगे शिष्य हैं सो विनयकरिकै दश दोषरहित हुवा आपका प्रमादकू प्रगट करि जनावना सो आलोचना हैं । सो आलोचना गुरूनिकू दश दोष टालिकरि करै ।

ते दोष कौन सो कहेहै । जो आचार्य हमारे ऊपरि प्रीति अनुग्रहरूप होय अल्प प्रायश्चित देवेगे ऐसे अभिप्रायतै गुरूनिकी भेट पीछी कमडलादिककरि अर आलोचना करे सो आलोचना आकंपितदोषसहित है । वहुरि गुरूनिकू ऐसा जणावै जो मैं प्रकृतिवलरहित हूं रोगी हू उपवासादि करनेकू समर्थ नही हूं । जो मोकू अल्प प्रायश्चित्त दीजीए तो मै हू दोष आलोचना करू । ऐसे आचार्यनै अपना स्वरूपका अनुमान कराय आलोचना करेहै सो अनुमापित दोषसहित आलोचना है । वहुरि अन्यकरि नही देख्या दोषकू तो छिपावै अर अन्यके प्रगटहुवा दोषकूं आलोचना करै सो दृष्टदोष है । वहुरि अल्पदोष हुवा होय ताकू तो नहीं जणावै अर स्थूल दोषकू आलोचना करै सो वादरनाम दोष है । वहुरि महान दुस्तर

प्रायश्चित्तका भयतैं महान् दोषकू तो छिपावै अर वाकै अनुकूल अल्प दोप जणावै सों सूक्ष्म-दोप है। वहुरि गुरूनिकू पूछै जो है भगवान् ऐसा दोष जाकै होय ताका कहा प्रायश्चित्त है ऐसा उपायकरि गुरूनिकू पूछै सो प्रच्छन्नदोष है। वहुरि पाक्षिक चातुर्मासिक सांवत्सरिकादि प्रतिक्रमणका दिवसमे वहुत यतीनिके समुदायका शब्दमे अपना दोपकू कहे सो शद्वाकुलित दोप है।

वहुरि जो यो गुरूनिको दीयो प्रायश्चित्त है सो योग्य है कि नही तथा आगममे है कि नही ऐसी शका करि अन्यसाधुनिकू पूछना सो वहुजनदोष है। वहुरि कुछ प्रयोजन विचारि गुरूनिकू दोष नही जणावै अर आपणै समान अन्य साधुकू दोष जणाय महानहू प्रायश्चित्त ग्रहण करै सो सफल नही सो यो अव्यक्तदोप है। वहुरि गुरूनिकू तो आलोचना नही करै अर अन्य मुनि आपसमान अपराधी जाणि वाकू पूछै जो म्हारै याकै अपराध समान है जो याकू प्रायश्चित दीया सो मोकू करना युक्त है ऐसे आपका दोषकू छिपावै ताकै तत्सम-दोष है। ऐसे दश दोषरहित आलोचना करै। सयमी आलोचना करै सो एकातमे एकाकी गुरूकू आलोचना करै अर अर्जिकाकी आलोचना एकगणिनी दूजी अर्यिका तीजा गुरू तिनके आश्रय चोडै प्रकाशमे होयहै। जो साधु लज्जाकरि तिरस्कारके भयकरि अपना दोपकी आलोचना करि दोपकू सोधन नही करै। तो नही जाण्या है लाभ अर खरच जाने ऐसा अधमऋणवानकीज्यो क्लेशित होयहै। अर आलोचना कीए विना महानहू तप वा. छित्फलकू नही देवेहै।

वहुरि आलोचना करिकैंहू गुरूनिका दीयाहुवा प्रायश्चित्तग्रहण नही करै सो विना-वीजके सस्कारकीया धान्यकीज्यो फलकू नही देवेहै अर आलोचना अर पूर्व ग्रहणकीया प्राय-श्चित्त मज्जनकीया दर्प्पणमै रूपज्यो देदीप्यमान होयहै। बहुरि कर्मके वशतैं उपज्या प्रमादके उदयतैं उपज्या जो दोप सो ह्मारे मिथ्या होहु। ऐसे परिणामनिमै पापकू खोटा जानि विरक्त होय मिथ्या मे दुक्कृत इत्यादिक प्रगट करना सो प्रतिक्रमण है। बहुरि कोऊ कर्म तो अलोचनामात्रकरि शुद्ध होइहै। कोऊ प्रतिक्रमणतैं शुद्ध होयहै। कोऊ आलोचन अर प्रति-क्रमण दोऊनितैं शुद्ध होयहै सो तदुभय है। वहुरि दोषसहित आहार पान उपकरणका ससर्ग भया होय तो ताका त्याग करना। आपको दोपतैं न्यारा करना सो विवेक है। बहुरि कालका नियमकरि कायोत्सर्ग करना सो व्युत्सर्ग है। वहुरि अनशनादितप ग्रहण करना। तथा उपवास वेलातेला पचोपवास पक्षमासादिकनिका उपवास करना सो तप है।

वहुरि दिवस मास सवत्सरकी मर्यादाकरि दीक्षाका घटावना सो छेदनाम प्रायश्चित है। कोऊ साधु वहुतकालका दीक्षित होयकरिकैंहू कोऊ दोष ऐंसा करै जो ताका छेद नामा प्रायश्चित होय। ऐंसे कोऊ वीस वर्पका दीक्षित था फिर दोषके वशतैं दशवर्षकी दीक्षा छेदी

गई तो अव आपको दश वर्षकाही दीक्षित मानै । दश वरशतै एक दिवस पहलीकाभी दीक्षित होय ताकूं आपतै वडा मानै वन्दनादिक पहली करै । वहुरि पक्षमासादिकका नियमकरि सघतै वाह्य करना सो उपस्थापनप्रायश्चित्त है । ऐसे नव प्रकार प्रायश्चित्त कह्या । इहा ऐसा जानना । जो प्रमादजनित दोषका तो सोधना शल्यका मेटना भावनिकी उज्जलता करना मर्यादमै रहना इत्यादिककी सिद्धिके अर्थि प्रायश्चित्त है । यद्यपि प्रायश्चित अनेक प्रकार है तोहू सामान्य नवभेद कहे । तहा देश काल अवस्था सहनन बुद्धि इत्यादिक देखि यथा योग्य प्रायश्चित देहै । अर शिष्य हैं सो आचार्यनिकी आज्ञाप्रमाण श्रद्धानकरि प्रायश्चित्त ग्रहण करे ताकै शुद्धिता होयहै । अव विनयनाम अभ्यतरतपकू कहैहै ।

ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः ॥ २३ ॥

अर्थप्रकाशिका—ज्ञानविनय दर्शनविनय चारित्रविनय उपचारविनय । ऐसे विनयतप च्यारप्रकार है । तहा जो आलस्यरहित होय अर देशकालादिककी विशुद्धिताका विधानमें विचक्षण शुद्धमनकरि वहुल सन्मानपूर्वक जिनसिद्धातनिका ग्रहण अभ्यास स्मरणादिक करै सो ज्ञानविनय है । वहुरि निःशकितादिगुणकरि सहित होय शकादिकदोषरहित तत्वार्थनिका श्रद्धान सो दर्शनविनय हैं ।

वहुरि सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञानके धारकनिका पंचप्रकारचारित्रके श्रवणमात्रतैंही रोमाचादिसहित अतरगमे उपजना । परमहर्षका होना मस्तकविषै अजुलिकरना भावनिमे चारित्रके अगीकार करनेमे परिणाम राखना सो चारित्रविनय है । वहुरि पूजवेयोग्य जें आचार्यादिक त्याने प्रत्यक्ष होते उठि खडा होना सन्मुख गमन करना अजुली करना वदन करना पश्चाद्गमन करना सो उपचारविनय है । वहुरि आचार्यादिक प्रत्यक्ष नही होइ परोक्ष होते अजुली जोडना गुणनिका महिमा करना वारवार स्मरण करना उनकी आज्ञा-प्रमाण प्रवर्त्तन करना सो उपचारविनय है । इस विनय नाम तपतै ज्ञानका लाभ आचारकी विशुद्धिता सम्यक् आराधना इत्यादिकनिकी सिद्धि होय हैं । तातै विनयभावनाकरि निर्वाणकी प्राप्ति निकट है । अब वैयावृत्य तपकू कहै है ।

आचार्योपाध्यायतपस्विशैक्ष्यग्लानगणकुलसङ्घसाधुमनोज्ञानाम् ॥ २४ ॥

अर्थप्रकाशिका— आचार्य उपाध्याय तपस्वी शैक्ष्य ग्लान गण कुल सघ साधु मनोज्ञ ए दशप्रकारके साधु इनका वैयावृत्य करना सो वैयावृत्य तप है । कायकी चेष्टाकरि वा अन्यद्रव्यकरि व्यापार करना आचार्यादिकनिकी टहल करना सो वैयावृत्य है । तिनमें जिनतै व्रताचरण करिए सो आचार्य है । उसे तो निरुक्ति है । अर याका विशेष । जो

सम्यग्ज्ञानादिकगुणनिका आधार ऐसे महत्पुरुषनितै स्वर्गमोक्षके सुखरूप अमृतके वीज जे अहिंसादिकव्रत तिनको अपनें हितके अर्थि भव्यजीव आचरण करै ते आचार्य है । जो व्रत शील भावनाके आधार होय अर जिनकी निकटतानै साधुजन विनयपूर्वक प्राप्त होय श्रुतको अध्ययन करिए सो उपाध्याय है ।

वहुरि जे महान उपवासादिकमै तिष्ठै ते तपस्वी है । वहुरि श्रुतज्ञानके शीखणेमै तत्पर अर निरन्तरव्रतभावनामैं निपूण सो शिष्य है । वहुरि जिनका शरीर रोगादिककरि क्लेशरूप होय ते ग्लान मुनि है । वहुरि वृद्धमुनिनिका समुदाय सो गए है । वा वडेमुनिनिकी परिपाटिका होय सो गण है । वहुरि दीक्षा देनेवाले आचार्यका शिक्ष सो कुल है । वहुरि च्यार प्रकारके मुनिका समूह सो संघ है । वहुरि वहुतकालका दीक्षित होय सो साधु है ।

वहुरि जाका उपदेश लोकमान्य होय वा स्वयं उपदेशविनाही लोकनिमै पूज्य होय प्रशसावान् होय सी मनोज्ञ है । अथवा समस्तलोक जाकू महाविद्यावान् कहै प्रशस्तवक्ता कहै महाकुलवत कहै ऐसे लोकमान्य होय जिनमार्गका गौरवके उत्पादनका कारण होय सो मनोज्ञ है । अथवा असयतसम्यग्दुष्टीहू मनोज्ञ है ।

ऐसे आचार्यादिक दशप्रकार कह्या तिनके शरीरसबधी व्याधि अर दुष्टमनुष्य तिर्यचनिकृत उपसर्ग वा क्षुदादिकपरिषह । तथा मिथ्यात्वादिककी उत्पत्ति होजाय तो प्रासुक औपध भोजन पाचन वस्तिका काष्ठफलक तृणानिका संस्तर धर्मोपकरणादिककरि इलाज करै । अर सम्यक्त्व छूटिगया होय तो उपदेश देय फेरि सम्यक्त्वग्रहण करावै इत्यादिक वैयावृत्ति है । अर जो भोजन पान औषधादिक वाह्यसामग्री नही होय तो अपना देहकरिकै टहल करै । कफ नासिकामल मूत्र विष्टादिकनिकें दूरि क्षेपै जैसे सुख होय तैसे शरीरकरि टहल सेवा करै । जैसे धर्ममें लीनता होजाय तैसे उपदेश करै धैर्यधारण करावै तिनके अनुकूल आचरण करै सो समस्तवैयावृत्य करनेतें रत्नत्रयकी विशुद्धिता ग्लानिको अभाव प्रवचनमे वात्सल्यता इत्यादिकगुण प्रगट होय है । तातै वैयावृत्यहीमे प्रवर्त्तन करना उचित है । इहा विषयके भेदतै वैयावृत्य दशप्रकार कह्या है । अव स्वाध्यायतपकू कहे है ।

वाचनाप्रछनानुप्रेक्षम्नायधर्मोपदेशाः ॥ २५ ॥

अर्थप्रकाशिका—वाचना । १ । पूछना । २ । अनुप्रेक्षा । ३ । आम्नाय । ४ । धर्मोपदेश । ५ । ऐसे पचप्रकार स्वाध्यायतप है । तहा निर्दोषग्रथका तथा ग्रंथके अर्थका तथा ग्रथ अर्थ दोऊनिका विनयवान् धर्मका इच्छक भव्यपात्रकू सिखावना पढावना सो वाचना है । वहुरि जो आपके शब्दमें शब्दके अर्थमें सशय होय तो सशयका दूरि करनेके अर्थि तथा

अपने निश्चयरूप दृढपरिणाम होनेंके अर्थि विनयसहित होय बहुज्ञानीनिसू प्रश्न करना सो प्रच्छना स्वाध्याय हैं । आपका ज्ञानकी उन्नति परका तिरस्कार परकी हास्य प्रगट-करनेकू प्रश्न नही करै है । अर प्रश्न करै सो उद्धत होय नही करै हसतो सतो नही करै बहुत उत्कट शब्दकरि सभानिवासीनिकैं क्षोभ करतो नही करे । बहुतप्रलाप नही करे । विनयपूर्वक अल्पअक्षरनिमें प्रश्न करै सो प्रच्छनानाम स्वाध्याय है ।

बहुरि गुरुनिकी परिपाटीतै जाण्याहुवा अर्थको मनकरि अभ्यास करना वारवार चिंतवन करना सो अनुप्रेक्षा स्वाध्याय है । बहुरि इस लोकसबधी फलकू नही वाछा करता शीघ्रता अर विलवनरूप जे घोषणाके दोष तिनकरि रहित जो पाठ करना सो आम्नायनाम स्वाध्याय है । बहुरि दुष्टप्रयोजनका परित्यागतै उन्मार्ग दूरि करनेके अर्थि सदेहका दूर करनेकों अर अपूर्व पदार्थके अर्थि धर्मके उपदेशरूप कथन करना सो धर्मो-पदेशनाम स्वाध्याय है । सो स्वाध्यायतै बुद्धिका अतिशय प्रगट होय है । प्रशस्तअभिप्राय होय है । प्रवचनकी स्थिरस्ति होय है । सशयका उच्छेद होय है । परवादीकी शकाका अभाव होय है । परमसवेग जो धर्मानुराग वा ससारदेहसोगनितै विरक्तता होय हैं । तपकी वृद्धि होय है । अतिचारनिकी शुद्धिता होय है । अव स्वाध्यायके अनतर कह्या जो व्युत्सर्ग ताहि कहै हैं

बाह्याभ्यन्तरोपध्योः ॥ २६ ॥

अर्थप्रकाशिका— वाह्य अर अभ्यतर दोय प्रकारका उपधि जो परिग्रह ताका त्याग सो व्युत्सर्ग है । तहा आत्मातै बाह्य जें धन शरीरादिकका त्याग सो वाह्य उपधित्याग है । वहुरि क्रोध मान माया लोभ हास्य रति अरति शोक भयादिक दोषनितै निवृत्ति होना सो अभ्यतरव्युत्सर्ग है । सो त्याग करना है सो कालका नियमकरिभी होयहै अर यावत्जीवभी होयहै । सो यो कायोत्सर्ग नि.संगपणो करेहै । निर्भयपणो करेहैं । जीवितकी अशाका अभावके अर्थि दोषनिका छेदके अर्थि मोक्षमार्गकी प्रवृत्तिके अर्थि कायोत्सर्गतप अगीकार करना योग्य है । वाह्य अभ्यतर परिग्रहत्यागी ज्ञायक शुद्ध आत्मस्वभावमे निश्चल तिष्ठना सो कायोत्सर्ग है । अब ध्याननामतपकू कहेहै ।

उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्तानिरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्त्तात् ॥ २७ ॥

अर्थप्रकाशिका— उत्तमसंहननके धारकपुरूषके एकाग्रचिंताका निरोध सो ध्यान है सो ध्यान उत्कृष्टपणे अंतर्मुहूर्तपर्यंत है । आदिका तीन सहनन है सो उत्तमसहनन है तेदी ध्यानके कारण है । अर ध्यान है सो उत्कृष्टपणे अंतर्मुहूर्तपर्यंतही रहेहै । तिनमे मोक्षको कारण

वज्रऋषभनाराचही हैं । चित्तकी वृतिकू अन्यक्रियातें रोकिएकके विषै निरोध करै सो एकाग्रचितानिरोध है सोही ध्यान है । भावार्थ । अर्थकी एकपर्यायकू अवलवनकरि चित्तकी वृत्तिका ठहरना सो ध्यान है । सो उत्तमसहननके धारकके अतर्मुहूर्त्त उत्कृष्ट ठहरै अन्य सहननववालेके इतने काल एकाग्र ठहरनेमे असमर्थपणा है इहा एकाग्रवचनतें वैयग्रचका अभाव जानना नानापर्यायनिमे भ्रमण करै सो वैयन्य सो तो ज्ञान है ध्यान नाही । । इहा कोऊ पूछै । जो साधुपुरूषके वहुतकाल ध्यनाअवस्था कैसे कहिए । ताका समाधान । जो एक ध्येयकू छाडि दूजे ध्येयविषै उपयोग आवै ऐसे अन्यअन्य ध्येयमे ध्यानका सतान चल्या आवे जेतै एकाग्र ठहरै ऐसे वहुतकाल कहनेमे विरोध नाही ।

वहुरि इस सूत्रमे ध्याता ध्यान ध्येय ध्यानका काल ए चार कहेहै । सामर्थ्यतै याके प्रवर्त्तनकी सामग्री जानिएहै । तहा उत्तमसहननका धारी पुरूष है सो ध्याता है । एकाग्रचिताका विरोध होना सो ध्यान है । एककू प्रधानकरि चित्तकू रोके सो ध्येय है । अतर्मुहूर्त्त उत्कृष्ट याया काल है । इस सूत्रमे समस्त ध्यानको वर्णन मही सग्रह कीयो है । जातै ध्यानक प्राभृतग्रथनिमे सकलध्यानके लक्षणवर्णन है । इहां तो प्रसगपाय सामान्यलक्षण कह्या है । अव ध्यानके भेद जनावनेकू सूत्र कहेहै ।

आर्त्तरौद्रधर्म्यशुक्लानि ॥ २८ ॥

अर्थप्रकाशिका– आर्त्त रौद्र धर्म्य शुक्ल ए च्यार प्रकार ध्यान है । तिनमे आर्त्त रौद्र दोय अप्रशस्त है । अर धर्म्यशुक्ल दोय प्रशस्त है । तिन प्रशस्तध्याननिकू कहेहै ।

परे मोक्षहेतू ॥ २९ ॥

अर्थप्रकाशिका– परे कहिए अतके धर्म अर शुक्ल ये दोन ध्यान मोक्षके हेतु है । इनही वचनतें पहिले कहे जे आर्त्त रौद्र ते अप्रयस्तध्यान हैं ससारके कारण है । अव आद्यका आर्त ध्यानका लक्षण कहनेकू सूत्र कहेहै ।

आर्त्तममनोज्ञस्य सम्प्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥ ३० ॥

अर्थप्रकाशिका– अमनोज्ञका सयोग होता संता तिसके वियोगके अर्थि-जो चितवन सो आर्तध्यान है । विष कटक शत्रु शस्त्रादिक जो अननोजवस्तु ताका वियोग मरै कैसे होय ऐसे वारवार चितवन करना सो अनिष्टसयोगज आर्तध्यान है । तथा और दूसरा भेदकू कहेहै ।

विपरीतं मनोज्ञस्य ॥ ३१ ॥

अर्थप्रकाशिका– मनोज्ञवस्तुका वियोग होतैं तिसके संयोगकै अर्थि वारवार चितवन करे सो इष्टयोगज नाम आर्तध्यान है। अब आर्तका तिसरा भेद कहेहै।

वेदनायाश्च ॥ ३२ ॥

अर्थप्रकाशिका– दुःखरूप रोगादिककी वेदनाका चितवन करना सो वेदनाजनित आर्त है। वेदना होते वारवार रोगका इलाजमे चितवन करना मनकी स्थिरताका अभाव होना धैर्य छूटि जाना तथा अगमे विक्षेप शोक विलाप रूदनादिक होना सो वेदनाजनित आर्त है। अव रागके विशेषतै वा कामकरि आतुररतातै तथा परभवमे विषयसुखमे लपटतातै चोथा आर्तध्यान होय ताका स्वरूप कहनेकू सूत्र कहेहै।

निदानं च ॥ ३३ ॥

अर्थप्रकाशिका–आगामी भोगनिकी वांछा सो निदान है। हमारे सपदा होजाय कुटुवकी वृद्धि होजाय ऐसे तथा स्त्रीकी प्राप्तिके निमित्त तथा राज्यकी ऐश्वर्यकी महल-मकानकी इद्रियनिकाभोगाकी वैरीनिका घातकी वाछा करै सो निदान नाम आर्त्तध्यान है। सो यो च्यार्‌प्रकारको आर्त्तध्यान कृष्ण नील कापोत लेश्यामे उपजे। अज्ञानतै उत्पन्न होय है। अपने पुरुषार्थतै उपज्याया है। पापमे प्रयोग रखणेका परिणाम याका आधार है। नानासकल्पका करनेवाला है। धर्मके आश्रयकू त्यागि कषायनिका आश्रयस्थान है। उपशमभावका अभाव करनेवाला है। प्रमाद इसका मूल है। अशुभकर्मके ग्रहणका कारण है। कटुकविपाकरूप असाताका वंध करै है। तिर्यचगतिमे परिभ्रमण करावै है। अव इस आर्तध्यानका स्वामीकू कहै है।

तदविरतदेशविरतप्रमत्तसंयतानाम् ॥ ३४ ॥

अर्थप्रकाशिका–सो यो आर्त्तध्यान अविरत जे मिथ्यात्व सासादन मिश्र इन चार गुणस्थाननिमें तथा देशविरतमें प्रमत्तगुणस्थानके धारकनिके भी होय है। परंतु प्रमत्तगुणस्थानके धारकनिके निदान नहीं होय है। अन्य तीन आर्त्त कदाचित् होय है। अर मिथ्यादृष्टि आदि लेय छठा गुणस्थानपर्यंत [illegible] गुणस्थाननिमें कषायकी मंदतातै आर्त्तध्यानहू [illegible] है। अब रौद्रध्यान कहनेकू सूत्र कहै है।

हिंसानृतस्तेयविषसंरक्षभ्यो रौद्रमविरतदेशविरतयोः ।। ३५ ।।

अर्थप्रकाशिका–हिंसा अनृत स्तेय विषयरक्षण इनतै रौद्रध्यान होय है। सो अव्रती अर देशव्रतीनिकै होय है। हिसा असत्य चोरी परिग्रह इनके चिंतवनतै रौद्रध्यान होय है। सो मिथ्यात्वादि चार अव्रतरूप अर देशव्रत इन पचगुणस्थाननिमे होय है। देशव्रती-कैहू हिसारूप विवाहादिकके आरंभतै अर परिग्रहकी रक्षातै रौद्रध्यान होय है। परतु नरकादिकको कारण रौद्रपरिणाम नही होय है। जातै देशव्रतीकै अन्यायप्रवृत्तिका अभाव है। अर सकलसयमीकै रौद्रध्यान नही होय है। जो रौद्रध्यान होजाय तो सकलसयमका अभाव हो जाय। तातै देशव्रतीपर्यतही रौद्र होय है। अर कृष्ण नील कापोत लेश्याके आधारही रौद्रध्यान होय है। अब धर्मध्यान कहनेकू सूत्र कहै है।

आज्ञापायविपाकसंस्थानविचयाय धर्म्यम् ।। ३६ ।।

अर्थप्रकाशिका– आज्ञाविचय अपायविचय विपाकविचय सस्थानविचय ।। ऐसे च्यार प्रकार धर्मध्यान है। तहा जो आगमकी प्रामाण्यतातै अर्थका निश्चय करना सो आज्ञाविचय है। जो उपदेशदाताका तो अभाव होय अर अपनी बुद्धिमद होय अर कर्मका प्रवल उदय होय अर पदार्थनिका स्वरूपके सूक्ष्मपणा होय तातै समझनेमे नही आवै तथा हेतु दृष्टात जाननेमे नही आवै तहा सर्वज्ञका प्ररूप्या आगमकू प्रमाण करिकै अर गहनपदार्थम ऐसा निश्चय करै जो योही तत्व है। इस प्रकारही है अन्य नही अन्यप्रकार नही ऐसा चिंतवनकूं आज्ञाविचय कहिए है। अथवा सम्यग्दर्शनकरि जाका परिणाम उज्जल होय अर अपने अर परके मतके सिद्धातकरि पदार्थनिका निर्णयका ज्ञाता होय। अर सर्वज्ञके कहे सूक्ष्मपदार्थनिकू निश्चय करिके अर ए पदार्थ ऐसे ही है। इस प्रकार अन्य जीवनिकूं जानावनेका इच्छक होय सो पुरुष श्रुतज्ञानका सामर्थ्यतै अपने सिद्धाततै जैसे विरोध नही आवै तैसे व्याख्यानके अवसरमे प्रमाण नय हेतु इत्यादिक करि सभानिवासी भव्यजन-निकू जिनभाषित सत्यार्थ तत्व जणावै तथा ताके समर्थनके अर्थि तर्क नय प्रमाणका युक्त कर-नेमे तत्पर होय चितवन करै सो सर्वज्ञकी आज्ञाप्रकाशनपणातै आज्ञाविचय धर्मध्यान होय है।

अहुनि अपायविचचयकू कहै है। जिनका मिथ्यादर्शनकरि ज्ञाननेत्र ढिकीगया [illegible] आचार विनय उद्यमादिक समस्त ससारका वधावनेके अर्थि होय है। अविद्याका [illegible] मनागपि भ्रमण वधैही है। तथा जैसे जन्मके आधे वलवान् है तोहू सन्मार्गतै [illegible] मार्गका उपदेशदाताविना नीच उच्च पर्वत विषमपाषाण कठोर स्थाणु

कंटकसमूहकरि व्याप्तपृथ्वीमे पडे हुए उद्यम करतेहूं सन्मार्गने प्राप्त होनेकूं समर्थ नहीं होय है।

तैसेही सर्वज्ञप्रणीतमार्गतैं विमुख पुरुष मोक्षकी वांछा करै हैं तोहू उपदेशदाता-विना सत्यार्थमार्गकूं नही जाननेतैं दूरिही नष्ट होय है। ऐसे सन्मार्गका अभाव चिंतवन सो अपायविचय धर्मध्यान है। अथवा मिथ्यादृष्टिनिकरि कह्या उन्मार्गते ए प्राणी कैसे टलै। तथा अनायतन सेवाका अभाव कैसे होय। तथा पापके कारण वचन अर पापकी भावनाको अभाव कैसे होय। ऐसे चिंतवन करना सो अपायविचयधर्मध्यान हैं।

बहुरि कर्मके फलका अनुभवनकू गुणस्थाननिमे तथा मार्गणास्थाननिमै तथा उदीरणाकू चिंतवन करना सो विपाकविचयधर्मध्यान है। बहुरि जो लोकका संस्थानका तथा द्रव्यनिका स्वभावका तथा द्वादशभावनाका चिंतवन सो संस्थानविचयधर्मध्यान है। सो असंयत प्रमत अप्रमत्त संयत इन च्यारगुणस्थाननिमे होय है। अब शुक्लध्यानके स्वामीकूं कहै हैं।

शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥ ३७ ॥

अर्थप्रकाशिका आद्यके दोय शुक्लध्यान है। ते- सकलश्रुतधारक श्रुतकेवलीके होय है। च शब्दकरि धर्मध्यानहू होय है। परतु श्रेणी नही चढै तेतैं धर्मध्यान है अर दोऊ श्रेणी निमें शुक्लध्यान नही है। ऐसे मोहके उपशमावनेवालेके तो पहला शुक्लध्यान अर मोहके क्षपावनेवाले आदिके दोय शुक्लध्यान कहै। अब अन्य दोय कौनके होय यातैं सूत्र कहे है।

परे केवलिनः ॥ ३८ ॥

अर्थप्रकाशिका— अतके दोय शुक्लध्यान सयोगकेवली अयोगकेवलीजिनके होयहै. छद्मस्थकै नही होयहै। इहां आचार्यनिनै ऐसे कह्याहै। जैसे अंधकारमे मुष्टिकरि अभिघात करना तिसकै सदृश शुक्लध्यानका कहना है। जातैं मोहनीयका उपशम तथा क्षयविना इस ध्यानका अनुभव नही होयहै। तातैं शुक्लध्यानके ध्याताकी विशेषताप्रति हमने व्यापर नही कीयाहै। क्योकि इस ध्यानका लक्षणविशेषका उपदेश नही प्राप्तभयाहै। अब शुक्लध्यानके नामविशेष कहेहै।

द्रव्यकू ध्यावता द्रयक्कू छाडि पर्यायकू ध्यावेहै पर्यायकू छाडि द्रव्यकू ध्यावेहै या तो अर्थसंक्रांति है अर श्रुतका एकवचनकू अवलवनकरि अन्यकू अबलवन करै। वाहूकू छाडि अन्य अवलवन करै सो व्यंजनसक्रांति है। अर काययोगकू त्यागि अन्ययोगकू ग्रहण करै अर उसहूकू त्यागि अन्य-योगकू ग्रहण करै सो काययोगसक्राति है। ऐसे परिवर्तनकू विचार कहिएहै। ऐसे कह्या जो च्यार प्रकार शुक्लध्यान तथा धर्मध्यान अर गुप्त्यादिक वहुप्रकारके उपाय तिनकू ससारका अभावके अर्थि मुनीश्वर ध्यावनेकू योग्य है। अब इस ध्यानका आरभविषै ऐसा परिकर होयहै। जदि उत्तमशरीरका सहननकरिकै परिषहनिकी वाधाके सहनेकी शक्तिरूप अपना आत्मकू जाने तदि ध्यानका परिचयके अर्थि आरभ करै। कैसे करे सो कहेहै।

पर्वतकी गुफा कदर दरी द्रुमनिके कोटर नदीनके तट स्मशान जीर्णवर्गीचा शून्य-गृहादिकनिमै कोऊ एक स्थान ध्यानके योग्य होय तथा सर्प मृग पशु पक्षी मनुष्यादिकनिके रहनेवसनेका स्थान नही होय। अर उस स्थानकमें उत्पन्नभए तथा अन्यस्थानकनितै आए ऐसे द्वीद्रियादिक जीवनिकरि रहित होय। अर जहा अती गरमीकी उष्मा नही होय अती शीतकी वाधा नही होय। अर जामै अतिपवन नही होय अतीवर्षाकी वाधा नही होय अती वडा नही होय वाह्य अभ्यंतर विक्षेपका करनेवाला नही होय। ऐसा अनुकूलस्पर्श-सहित पवित्र पृथ्वीतलके विषै सुखरूप तिष्ठता। अर बाध्यो है पल्पकासन जाने। ऐसो शरीरकू सरल करिकै कठोरता बक्रता रहितहुवा अपना अक जो गोदि ताकै विषै वाम_ हस्तका तलउपरि दक्षिणहस्तकी हथेलीकरि तिष्ठै। अर नेंत्रनिकू अति ऊघाडै नही अर अति मीचै नही अर दतनिकरि दतनिका अग्रभाग मिल्याहुवा रहै अर किंचित् मात्र उन्नत मुख होय। मध्यका अग उदर सरल होय। कठोरतारहित होय। परिणामकरि मस्तक ओष्ठ गभीर होय मुखवर्ण प्रसन्न होय। टिमकारणेरहित स्थिर अर सौम्यदृष्टी होय। अर निद्रा आलस्य काम राग रति अरति शोक हास्य भय द्वेष विचिकित्सा इनकरि रहित होय अर मदमद स्वासोस्वासका प्रचार होय।

इत्यादिक परिकरसहित साधु है। सो मनकी वृत्तिकू नाभिऊपरि वाह्य हृदयविषै तथा मस्तकविषै तथा अन्यस्थानमें जहा परिचयकरि राख्या होय तहां निरोधकरि निश्चल मोक्षाभिलापी हुवो प्रशम्तध्यानकू ध्यावै तिस ध्यानविषै एकाग्रमन हुवा उपशम कीया है राग द्वेप मोह जाने। अर निपुणपणातै निग्रहकरि है। शरीरका हलन चलन क्रिया जाने अर मद कीया उच्छ्वासनिश्वास जानै। अर भलेप्रकार निश्चल कीया है अभिप्राय जानें। ऐसा क्षमावान् हुवा वाह्य अभ्यतर द्रव्यपर्यायनिमे ध्यावता ग्रहणकीया है। श्रुतज्ञानका सामर्थ्य जाने ऐसा अर्थ अर अक्षर जें है।

पृथक्त्वैकत्ववितर्कसूक्ष्मक्रियाप्रतिपातिव्युपतक्रियानिवर्त्तीनि ॥ ३९ ॥

अर्थप्रकाशिका– पृथक्त्ववितर्कविचार । एकत्ववितर्कविचार । सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति । व्युपरतिक्रियानिवर्त्ति । ऐसे चार प्रकार है । इनिका आगैं लक्षण कहेंगे तिनतैं सार्थकपणा जानना । अब शुक्लध्यानका अवलंबन कहेहै ।

त्र्येकयोगकाययोगायोगानाम् ॥ ४० ॥

अर्थप्रकाशिका– प्रथमशुक्लध्यान तौं तीन योगनिविषैं होयहै । अर दूजा शुक्लध्यान तीन योगनिमेतैं एकयोगमे होयहै । अर तीजा शुक्लध्यान काययोगके विषैंही होयहै । अर चौथा शुक्लध्यान अयोगीकेही होयहै । अब प्रथमध्याका विशेष जाननेकूं सूत्र कहेहै ।

एकाश्रये सवितर्कविचारेपूर्वो ॥ ४१ ॥

अर्थप्रकाशिका– पूर्वो कहिए आदिके दोऊ ध्याननिका आधार परिपूर्णश्रुतज्ञान है जिनकैं पूर्वनिका ज्ञान प्रगट भया होय तिनकेही आदिके दोऊ ध्यान होय है । बहुरि वितर्क जो श्रुत अर विचार जो अर्थयोगशब्दनिका पलटना ताकरि सहित है । इनमे विशेश कहेहै ।

अविचारं द्वितीयम् ॥ ४२ ॥

अर्थप्रकाशिका– दूजा शुक्लध्यान विचाररहित हैं । जातैं प्रथम शुक्लध्यान तो वितर्कविचार दोऊनिकरि सहित है । अर दूजा शुक्लध्यान वितर्ककरि सहित हैं । अर विचार-सहित नही । अब वितर्कका लक्षण कहेहै ।

वितर्कः श्रुतम् ॥ ४३ ॥

अर्थप्रकाशिका– विशेषताकरि तर्क कहिए विचारिए सो वितर्क है । वितर्क नाम श्रुतज्ञानका है । अब विचारका लक्षण कहेहै ।

विचारोऽर्थव्यंजनयोगसंक्रान्तिः ॥ ४४ ॥

अर्थप्रकाशिका– व्यजनयोगका पलटना सो विचार है । इहां ऐसा विशेष हैं । अर्थनामकरि तौ ध्यान करनेयोग्य द्रव्य वा पर्याय है । अर व्यंजननाम शद्बका है । अर मन वचन कायकी क्रियाकूं योग कहिएहै । सक्रातिनाम पलटनेका परिभ्रमणका है । तिस ध्यानमे

तिनमे अर काय अर वचन जे है। तिनमें भिन्नभिन्नताकरि परिभ्रमण करता ऐसा ध्यावनेवाला ध्याता बलका उत्साहपूरिपूर्ण नही ताकीज्यों अनिश्चलज्यो मन ताकरिकै जैसे अतीक्ष्ण कहिए भोटा शस्त्रकरिके बहुतकालमे वृक्ष छेद्या जाय तैसे मोहनीयकी प्रकतिनिकू उपशम करता वा क्षपावता साधु पृथक्त्ववितर्कविचारध्यानकू भजनेवाला होय है। ऐसे पृथक्त्ववितर्कविचारध्यान कह्या।

अब इसही विधकरि मूलसहित समस्त मोहनीयकू दग्ध करनेतै अनतगुणा विशुद्धयोगविशेषकू आश्रयकरिके ज्ञानाकरणकी सहायभूत बहुतप्रकृतिनका बधकू निरोध करता अर स्थितिकू घटावता वा दोय करता श्रुतज्ञानका उपयोगसहित हुवा अथव्यजनयोगनिके पलटनेका अभावकरि अचल हुवा है मन जाका ऐसा क्षीणकषायगुणकू प्राप्तहुवा वैडूर्यमणिकीज्यो कर्ममलका लेपरहित हुवा ध्यान करिकै फिर पाछा नही वाहुडैहै यातै याकू एकत्ववितर्कशुक्लध्यान कह्या। ऐसे एकत्ववितर्कशुक्लध्यानरूप अग्निकरि दग्ध कीयाहै घातिकर्मरूप इधन जाने। अर देदीप्यमान प्रगट हुवाहै केवलज्ञानरूप सूर्य जाकै ऐसा जैसे मेघपटलमे हुवा सूर्य मेधपटलकू दूरि होतेही प्रगट होय अपनी प्रभाकरि प्रकाशमान होयहै। तैसे आचरणकर्मकू दूरि होतेही अपनी प्रभाकरि प्रकाशमान होयहै। तैसे आवरणकर्मकू दूरि होतेंही अपनी प्रभाकरि प्रकाशमान भगवान् तीर्तंकर तथा अन्यकेवली लोकेश्वर जे इद्रादिक तिनकरि वदनीय पूजनीय होयहै। अर उत्कृष्टताकरि किंचित् ऊन कोटीपूर्वकी आयुप्रमाण आर्य देशनिमे विहार करेहै। अर जदि आयुका अतर्मुहूर्त अवशेष रहिजाय अर जो वेदनीय नाम गोत्र कर्मकी स्थितिभी जो अतर्मुहूर्तकीही होय।

तदि सर्व वचनमनका योग अर बादरकाययोगका अवलबरूप होय सूक्ष्मक्रियाप्रतिपातिध्यानकू प्राप्त होनेकू योग्य है। अर जो आयुकर्मकी स्थिति तो अतर्मुहूर्तकी होय अर वेदनी नाम गोत्र इन तीन कर्मनिकी स्थिति अधिक होय तो योगी अपने आत्मप्रदेशनिके चार समयकरि दड कपाट प्रतर लोकपूरणरूप विस्तारणतै अर चार समयकरिही प्रदेशनिके सकोचतै चार कर्मनिकी स्थितिकू अतर्मुहूर्तप्रमाण आयुकी स्थितिकै समानकरिकै अर पूर्वशरीरप्रमाण होय सूक्ष्मक्रियातै अप्रतिपातिध्यानकू प्राप्तहोय। पछै समुछिन्नक्रियानिर्वर्त्तिध्यानकू आरभै है। इस अवसरमे सासोच्छ्वासका प्रचार समस्त मनवचनकायके योग समस्तप्रदेशनिका चलनहलनरूप क्रियाका निषेध भया तामै समुछिन्नक्रियानिर्वतिध्यान कहिएहै तिस समुछिन्नक्रियानिर्वतिध्यान होतै समस्त बध अर आस्रवका निरोध अर अवशेष समस्त कर्मका नाशका सामर्थ्य उत्पन्न होनेतै अयोगकेवलीके सपूर्ण संसारका दुःखका नाश करनेवाला साक्षात मोक्षका कारण सपूर्ण यथाख्यात ज्ञानदर्शनकी परिपूर्णताकू प्राप्त होय है। सो भगवान् अयोगकेवली

तिस अवसरमे ध्यानरूप अग्निकरि दग्धकीया हैं समस्तमलकलकका बध ज्या जैसे किट्टपाषाण-रहित जातिवान् सुवर्णकीज्यी अपने शुद्धरूपकू पाय निर्वाणकू प्राप्त होयहै ।

इहां ऐसा जानना। जो यथाख्यातचारित्र तो पूर्वे बारमे गुणस्थानहीमे होगया। परतु चारित्रकी परिपूर्णता जो चोरासी लाख उत्तरगुण अर अठारहजार शील इनकी परिपूर्णता चोदमा गुणस्थानकेही अतमे होयहै। तातै यथाख्यातचारित्रकी परिपूर्णता इहां लिखि है। अर यथाख्यातचारित्ररूप ज्ञानदर्शनहीका परिणमन हुवाहै। अर जो पहलीही रत्नत्रयपरिपूर्ण होगया होय तो मोक्ष उसही कालमे भया चाहिए। तातै जहा रत्नत्नयकी पूर्णता भई तिसही समयमे मोक्ष होय ऐंसा जानना। यद्यपि भगवान् केवलीकै एकाग्रचितानिरोधध्यानही हैं। एकएक-पदार्थका चितवन तो क्षयोपशमज्ञानीकै होयहै। भगवान् केवलीकै युगपत् सकलपदार्थ प्रत्यक्ष होगया। अब ऐसा पदार्थ कोऊ बाकी रह्या नही जाका ध्यान करैं। कृतकृत्य है कुछ करना जानना बाकी नही रह्या तथापि आयुकू पूर्ण होने अर अन्य तीन कर्मकी स्थिति पूर्ण होतै योगनिका निरोध अर कर्मनिकी निर्ज्जरा स्वयमेव होयहै।

अर ध्यानतैंहू योगनिका निरोध अर कर्मकी निर्ज्जरा होयहै। यातै ध्यानकासा कार्य देखि उपचारतै ध्यान कह्याहै। सत्यार्थध्यान नहीहै। केवलीभगवानके अनतानतपरिणति-सहित त्रिकालवर्ती समस्तपदार्थ हस्तरेखावत् प्रगट भया अब ध्यावनेकू कोऊ बाकी रह्या नही जाका ध्यान करैं। ऐसे दोय प्रकार तप है सो नवीन कर्मका निरोधका हेतुपणातै सवरको कारण है। अर पूर्वके बांधे कर्मनिके नाश करनेके निमित्तपणातै निर्ज्जराका हेतुहू है। अैठे कही जो परीषहके जयतै अर तपश्चरणतै कर्मकी निर्ज्जरा होयहैं। तहा ऐसै नही जाण्यागया जो समस्तसम्यग्दृष्टीनिके समानही निर्ज्जरा है कि भिन्नभिन्न है। समस्तके निर्ज्जरासमान नाहीहै। यातै सूत्र कहेहै।

सम्यग्दृष्टिश्रावकविरतानन्तवियोजकदर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशान्तमोहक्षपकक्षीणमोहजिनाः क्रमशोऽसङ्ख्येयगुणनिर्ज्जराः ॥ ४५ ॥

अर्थप्रकाशिका—सम्यग्दृष्टि। १। श्रावक पचमगुणस्थानी। २। विरत कहिए महाव्रती मुनि। ३। अनतानुबंधीका विसयोजन करनेवाला। ४। दर्शनमोहकू क्षपावनेवाला। ५। चारित्रमोहका उपशम करनेवाला। ६। उपशांतमोह। ७। क्षपकश्रेणी चढना। ८। क्षीण-मोह। ९। जिन। १०। इनके आदिके अंतर्मुहूर्त्तपर्यत अनुक्रमतै असंख्यातगुणी निर्ज्जरा होइ है। प्रथमसम्यक्त्वकूं आदिकरि दशस्थाननिके धारकनिके परिणामकी विशुद्धिताका आधिक्यतातै अतर्मुहूर्तपर्यत समयसमय असंख्यातगुणी निर्ज्जरा होय है।

हा ऐसा जानना। जैसे कोऊ मद्यपानीके मद्यका एकदेशका अभावतैं अप्रगट हू ज्ञानतनी प्रगट होय है। तथा जैसे प्रचुरनिद्रामे शयन करता पूरुषके एकदेशनिद्राका अभाव होनेही कुछ थोरा स्मरण उत्पन्न होय है। तथा जैसे विषकरि अचेत पुरुषके किंचित् विषके दूरि होनेतें चेतनाका अवलवन होय है। तथा जैसे पित्तादिविकारकरि मूर्छित पुरुषके विकारका अश किंचित दूरि होतै अप्रगट चेतना प्रगट होय है। तैसे निगोदादि एकेंद्रियपर्यायनें अनतानतकाल परिभ्रमण करते कोऊ विशेषलब्धितै द्वीद्रियादिक त्रसनिमें जन्म पावै है। फिर वारंवार निगोदिमे जाय है। फिर अनतानंतकालमे अतिकठिन त्रसपर्याय पाय फिर निगोदिमै पृथ्वीकायादि एकेंद्रियमे जाय है।

पचेद्रियपणा पावना अतिदुर्लभ है। अर पचेद्रियभी होय तो क्रूर तिर्यंच होय नरकमें गमन करे है। केचित् नरक तिर्यचसू निकसि मनुष्यपणामे घुणाक्षरन्यायकरि उपजे है। जैसे कोऊ घुणनामा जीव धान्य तथा काष्ठादिकमैं उत्पन्न होय भक्षण करते स्वयमेव अक्षर उकीरि आवै तैसे मनुष्यजन्मकू प्राप्त होय हैं। तिसमैंहू उत्तमदेश कुल इद्रियपरिपूर्णता पाय अर रोगका अभावतै विशुद्ध अभिप्राययुक्त होय अर जाका आत्मा कषायमलरहित होय तोहू सम्यक उपदेशका अभावत सत्यार्थमार्गकू नही प्राप्त हुवा।

कुगुरुनके उपदेशतै मिथ्यादृष्टी होय फेर ससारमे अनंतानतकालमै ज्ञानावरणकर्मका मददेतात उपशमनें परिणामनिकी विशुद्धितायुक्त हुवा उपदेश लब्धिसयुक्त होय सत्यार्थउपदेशकू प्राप्त होनेतें अथवा मुनीद्रनिसवधी श्रद्धान ज्ञान पाय कर्मका अभावतैं सत्यार्थ ज्ञानकू प्राप्त होना मिथ्यात्वके उपशम करनेकू कारण तीन करणपरिणामनिकू प्राप्तैं होय उपशमसम्यग्दृष्टी होय है।

तातैं अनंतानुबंधी च्यार कषायकू द्वादशकषाय नवनोकषायरूप परिणमन कराय दे तीन करणके प्रभावतै ताकै असख्यातगुणा गुणश्रेणी निर्ज्जराद्रव्य है। सो अनंतानुबधीका विसंयोजन अविरत देशविरत प्रमत्तसंयत अप्रमत्तसयत इन च्यार गुणस्थाननिहिमै होय है। जिस गुणस्थानमे विसयोजन करै ताहि अतर्मुहूर्त्तपर्यंत समयसमय असख्यातगुणी निर्ज्जरा होय है। अर अनतानुबंधीका विसयोजनतै दर्शनमोहकू क्षपावनेवालाके गुणश्रेणी निर्ज्जराद्रव्य असख्यातगुणा है। सो दर्शनमोहकी क्षपणाहूं करणत्रयका सामर्थ्यतें केवली श्रुतकेवलीकै निकट मनुष्यहीके अविरतादि च्यार गुणस्थाननिमें होय है।

तहांही अतर्मुहूर्त्तपर्यंत गुणश्रेणीनिर्ज्जरा होय है। तातै अपूर्व करणादि तीन गुणस्थानी कषायके उपशम करनेवालेके गुणश्रेणी निर्ज्जराद्रव्य असंख्यातगुणा है। तात उपशातकषाय गुणस्थानी सकलमोहनीयकू उपशम कीया ताकै गुणश्रेणीनिर्ज्जराद्रव्य असख्यातगुणा है। ततै क्षपकश्रेणीवाला अपूर्वकरणादि तीन गुणस्थानवालेके गुणश्रेणीनिर्ज्जराद्रव्य असख्यातगुणा है। तातै समुद्घातकेवलीजिनके गुणश्रेणीनिर्ज्जराद्रव्य असख्यातगुणा है।

भावार्थ। इन ग्यारह स्थाननिकू प्राप्त होय तिनकै आदिके अंतर्मुहूर्तपर्यंत परिणामनकी विशुद्धिताकी अधिकताकरि समयसमयप्रति असख्यातगुणी आयुविना सप्तकर्मके परमाणुद्रव्यनिकी निर्ज्जरा होयहै। इहां निर्जरा तो स्थानस्थानप्रति असख्यातगुणी है। अर निर्जरा होनेका काल असंख्यातवै भाग घटताघटता है। इहा समुद्घातजिनके गुणश्रेणी निर्जराका काल अतर्मुहूर्त है सो समस्ततै अल्प है। यातै सख्यातगुणा काल स्वस्थानजिनके है। यातै क्षीणकषायके संख्यातगुणा है। ऐसे सातिशयमिथ्यादृष्टीपर्यंत वधतावधता है तोहू सातिशयमिथ्यादृष्टिकैहू गुणश्रेणी निर्ज्जराका काल अतर्मुहूर्त्तही है। जातै अतर्मुहूर्तके भेद बहुत है। ऐसे गुणश्रेणीनिर्ज्जराके स्थान कहे। अब साधुपणामैहु केते भेद हैं। तिन भेदनिकू कहेहै।

पुलाकबकुशीलनिर्ग्रन्थस्नातका निर्ग्रन्थाः ॥ ४६ ॥

अर्थप्रकाशिका— पुलाक बकुश कुशील निर्ग्रंथ स्नातक ए पचप्रकारके निर्ग्रंथ है। तहां जो उत्तरगुणनिकी भावनाकरिके तो रहित होय। अर व्रतनिविषैहू कोऊ काल कोऊ क्षेत्र विषै कदाचित् परिपूर्णकू नही प्राप्त होतें पुलाक ऐसे नाम पावै है। जातै पुलाक ऐसा नाम परालसहित शालीका है। सो अशुद्धपरालसहित धानकी उपमा देय साधूकू पुलाक कह्या है। जातै याकै कोऊ क्षेत्र कालके योगनै मूलगुणनिमे विराधना होय है तातै शुद्धताका मिलापतै याकू पुलाक कह्या है। बहुरि जाकै बाह्य अभ्यतर परिग्रहका अभावके अर्थि तो निरतर उद्यम है। अर व्रत जाकें अखडित हैं। मूलगुणनिमे बाधा नही है। अर शरीर पीछी कमडलू पुस्तकादिकनिका सवारनेमे शोभित करनेमे जाका परिणाम है। अर धर्मका यश प्रभाव

अपना प्रभाव यशकू जानेहै । तथा जाके सघकी धर्मकी प्रभावनाके अर्थि शुद्धिकी वाछाहू है । ससारीके प्रयोजनके अर्थि नहीहै । वा अपने साता रहनेकूहू भला जानेहै । जातै परमार्थतै एहू प्ररिग्रहही है । जो सघ तथा उपकरणका हर्ष सोही भया छेद यातै कर्बूरित आचरणकरि युक्त है तातें वकुश कह्या । इहा बकुशनाम कर्बुरितका है। उज्जलमे किंचित् मलिनतातै कर्वुरित कह्याहै ।

वहुरि कुशील दोय प्रकार हैं । एक प्रतिसेवानकुशील । एक कषायकुशील । तहां जाकै उपकरण शरीरादिकतें भिन्नपणा नही भया अर मूलगुण उत्तरगुणनिकी परिपूर्णता है । कथचित् कोऊ प्रकार उत्तरगुणनिमे विराधनाहुवा होजाय है ते प्रतिसेवनाकुशील हैं। वहुरि ग्रीष्मऋतुमे कदाचित् गोडे नीचै जघा कहावें ताका प्रक्षालनहू हैं । अन्य कषायनिका उदयकू तो वशीकीया अर सज्वलनमात्रका उदयपणाके आधीनपणातै कपाय कुशील कहावे है ।

वहुरि जाकै मोहकर्मका उदयका तो अभाव भया अर अन्य कर्मका उदय ऐसा है। जैसे जलमें दडतै लहरि पडे ते शीघ्रही विलयमान होजाय हैं । तैसे प्रदेशनिका तथा उपयोगका मदमद चलना है । सो प्रगट अनुभवमे नही आवै है तिनकी निरर्थसज्ञा है ।

तिसमे ग्यारमो वारमो दोय गुणस्थान है । तिनमे ग्यारमा गुणस्थानमे तो मोहका उपशमही है सो उपरि चढैनही पडैही । सो दशमै गुणस्थान आवै अर मरण करै तो अहमिंद्रनिमे जाय उपजै । अर वारमे गुणस्थानक्षपकश्रेणीवालो जाय सो अतर्मुहूर्त गए केवलज्ञान केवलदर्शन उपजावै ते निर्ग्रंथ है । यद्यपि पाचप्रकारका मुनि वस्त्र आवरण आयुध गृह कुटुव धन धान्यादिक रहितपणातै समस्तनिर्ग्रंथही है । तथापि मोहनीयकर्मका सद्भावतै निर्ग्रंथ नही कीया कह्या ।

व्यवहारकरि निर्ग्रंत है । परमार्थते तो समस्त मोहनीयका अभाव भया निर्ग्रंथपणा प्रगट क्षीणकापयी वारमा गुणस्थानधारककैही होय है । वहुरि समस्तघातिकर्मनिका नाशकरि केवलीजिन भए तिनके स्नातक ऐसी सज्ञा प्रगट होय है। स्नात वेदसमाप्तौ इन धातुका स्नातक शब्द वणे है। सो वेद जो ज्ञान ताकी पूर्णता जहां होय तहा स्नातकसंज्ञा प्रगट होय है ।

इहां कोऊ कहै । जैसे चारित्रका भेदते गृहस्थ हैं। सो निर्ग्रंथनाम नही पावे है । तैसें पुलाकादिमुनिनकेहू उत्कृष्ट मध्य चारित्रका भेदतै निर्ग्रंथपणा नही वणे है । ताकू

कहिए है । जो ऐसे नही है । जैसे ब्राम्हणजाति आचार अध्ययनादिके भेदकरि भिन्न है । तोहू ब्राम्हणपणाकरि सर्वेही ब्राम्हण है । तैसे इहांहू जानना । बहुरि सम्यग्दर्शन अर निर्ग्रंथरूपकरि समस्तपुलाकादिक समान है । अर भूषण वस्त्र आयुधकरि समस्तही पुलाकादिक रहित है । तातें समस्त पुलाकादिकनिमे निर्ग्रंथशब्द वर्त्ते हे । अर जो या कहो पुलाकमुनिके कोई अवसरमे व्रतका भग भी क्षेत्रकालके वशतै होय है ताकू भी निर्ग्रंथ कहोहो तो श्रावकके भी निर्ग्रंथपणा कहनेका प्रसंग आया । ताकूं उत्तर कहे है ।

श्रावकके नग्नरूप नही कैसे निर्ग्रंथपणा आवै नही आवे । अर जो कहो अन्य-मिथ्यादृष्टी नग्न भी रहे है । तिनके निर्ग्रंथ कहनेका प्रसग आया सो नही है । जातै अन्य भेषीनिके सम्यग्दर्शन नही है । नग्नपणामात्र तो बावलाकै तथा बालकके है तिर्यच-केहू है सो निर्ग्रंथ कहावै नही । जो सम्यग्दर्शनसहित सम्यग्ज्ञानपूर्वक ससारदेहभोगनतै विरक्त होय नग्नपणा धारे है तिनमे निर्ग्रंथशद्व प्रवर्त्ते है । अन्यमे नही प्रवर्तै । अव पुलाकादिकनिर्ग्रंथनिके अन्य विशेष जणावनेकू सूत्र कहे हैं ।

संयमश्रुतप्रतिसेवनातीर्थलिङ्गलेश्योपपादस्थानविकल्पतः साध्याः ।। ४७ ।।

अर्थप्रकाशिका—संयम श्रुत प्रतिसेवना तीर्थ लेश्या उपपाद स्थान ए अष्टभेद-रूप अनुयोगनिकरिहू पुलाकादिक मुनिनिके भेद साधणे व्याख्यानकरणें तहा पुलाकादिक कोन सयममे है सो कहे है । तहा पुलाक बकुल प्रतिसेवनाकुशील हैं । ते सामायिक छेदोप-स्थापन परिहारविशुद्धि सूक्ष्मसापराय इन चार सयमनिमे वर्त्ते है । अर निर्ग्रंथ स्नातक ए दोय एक यथाख्यातसयमविषै प्रवर्त्तै है ।

अब श्रुत कहे हैं । पुलाक वकुश प्रतिसेवनाकुशील ए तीन उत्कृष्टताकरि अभि-न्नाक्षर दशपूर्वधारी होय है । अर कषायकुशील अर निर्ग्रंथ ए दोय चोदहपूर्वधर होय है । अर जघन्यकरि पुलाकके आचारागमे आचारवस्तु होय है । अर वकुशकुशील निर्ग्रंथनिके अष्ट प्रवचनमात्रका ज्ञान होय है । अर स्नातक है ते केवली है । इनके श्रुत नही होय हैं ।

बहुरि प्रतिसेवना जो विराधना ताहि कहे हैं । पुलाकमुनिके तो पंच महाव्रत एक रात्रिभोजनत्याग इन छह व्रतनिमे परके बसतै जवरीतै एक कोऊ व्रतकी विराधना हो जाय है । जातें महाव्रतनिमे मन वचन काय कृत कारित अनुमोदनातें पंचपापनिका त्यागरूप है । तिनमे अपनी सामर्थ्यकी हीनताते कोऊ भगमे दूषण लागै है ।

वहुरि वकुश दोय प्रकार है। एक उपकरणवकुश एक शरीरवकुश। तिनमे उपकरणनिमे आसक्त कमंडलु पीछी पुस्तकादिकनिकी भूपा कहिए शोभायमान ताका अभिलापकरि सस्कारका सेवनतै उपकरणबकुशकै विराधना जाननी। वहुरि शरीरका सस्कार करनेरूप शरीरवकुशके विराधना है। वहुरि प्रतिसेवनाकुशील निर्ग्रंथ अर स्नातक इनके प्रतिसेवना जो विराधना सो नाही है। जाका त्याग होइ ताकू कोइ कारणकरि सेवन करि फिर सावधान होय फेरी नही सेवन करे है। यातै प्रतिसेवना नही है। इहा प्रतिसेवनाकू विराधनाहू कहिए है।

अव तीर्थ कहेहै। समस्ततीर्थकरनिके तीर्थमे पचप्रकारके मुनि होयहै।

अव लिंग कहेहै। लिग दोय प्रकार है। एक द्रव्यलिग एक भावलिग। तहा भावलिंगकरि तो पाचूही भावलिंगी है। सम्यग्दर्शनसहित सयमपालनेमे सावधान है। अर द्रव्यलिगकरि भेद है। कोऊ आहार करेहै। कोऊ अनशनादितप करेहै। कोऊ उपदेश करेहै। कोऊ अध्ययन करेहै। कोऊ ध्यान करेहै। कोऊ तीर्थविहार करेहै। काहूकै दोष लागेहै। कोऊ प्रायश्चित लेहैं। कोऊ दोष नही लगावेहैं। कोऊ आचार्य हैं। कोऊ उपाध्याय है। कोऊ प्रवत्तक है कोऊ निर्यापक है। कोऊ वैयावृत्य करेहै। कोऊ ध्यानकरि श्रेणी चढेहै। कोऊ केवलज्ञान उपजावेहै। इत्यादिकप्रवृत्तिकरि भेद है। अर नग्न दिगवरपणा सवके है इसमे भेद नही है। ऐसा लिंगभेद नही। जैसे रक्त पीत श्वेत स्यामवस्त्र धारै कोई जटा धारै कीऊ कौपीन धार कोऊ पालकी चढै कोऊ हस्ती चढै रथ चढै सो ए सव भेद मिथ्यादृष्टीनिके कालके निमित्ततै है।

अव लेश्या कहेहै। पुलाककै तो तीन शुभलेश्याही है। याकै वाह्यप्रवृत्तिका अवलवन नहीहै। अपने मुनिपणाका साधनसेही राचि रहेहै। वकुश अर प्रतिसेवनाकुशीलकै छहभी होयहै अपि शद्वकरि अन्य आचार्य तीन शुभही कहेहै। कषाय कुशीलकै कापोतादिक च्यार है। अन्य आचार्यनिके अभिप्रायतै तीन शुभही हैं। अर निर्ग्रंथ स्नातकनिके एक शुक्लही है। अयोगी लेश्यारहित है।

अव उपपाद कहे। पुलाकमुनिका उत्कृष्ट उपपाद-उत्कृष्ट आयुके धारक सहस्रारस्वर्गके देवनिमे अठारह सागरकी आयुका धारक उपजै। अर वकुश प्रतिसेवनाकुशीलका उत्कृष्ट उपपाद बाईस सागरका आयुके धारक आरण अच्युत कल्पमे जानना। अर कषायकुशील अर ग्यारमा गुणस्थानवाले उपशातमोह है ते निर्ग्रंथ है। तिन निर्ग्रंथनिका उत्कृष्ट उपपाद तेतीस

सागरकी स्थितिका धारक सर्वार्थसिद्धिमैं होयहै। बहुरि इन पचप्रकार पुलाकादिक समस्तनिका जघन्य उपपाद दोय सागर आयुका धारक सौधर्म ईशानस्वर्गमे है। अर स्नातककै निर्वाणही होयहै ।

अव सयमकी लब्धिके स्थान कहै ते कषायके निमित्ततै असख्यात लोकप्रमाण होयहै। तहा सर्वजघन्यलब्धिस्थान पुलाक अर कषायकुशीलके हैं। ते दोऊ युगपत् असख्यात सयमलब्धिस्थाननिकू प्राप्तहोय तीठा पाछे पुलाककी व्युच्छित होयहै। बहुरि कषायकुशील अर प्रतिसेवनाकुशील अर वकुश युगपत् असख्यातस्थान साथि प्राप्त होय पाछें वकुशकी व्युच्छित्ति होयहै। पाछे तहातै प्रतिसेवनाकुशील अर कषाय कुशील साथि गमनकरि प्रतिसेवनाकुशीलकी व्युच्छित्ति होयहै। तहातैहू असख्यातस्थान जाय कषायकुशीलकी व्युच्छित्ति होयहै। यात ऊपरि अकषायस्थाननिकू निर्ग्रथप्राप्ति होयहै। सोहू असख्यातस्थान जाय व्युच्छित्तिकू प्राप्त होयहै। याकै ऊपरि एकस्थानको प्राप्तहोय स्नातक निर्वाणणकू प्राप्त होयहै। ऐसे ए सयमस्थानमे है ते अविभागप्रतिच्छेदनिकी अपेक्षा स्थानस्थानप्रति अनतगुणा है ।

ऐसे इस अध्यायमे सवरतत्व निर्जरातत्वका निरूपण है। तहा संवरका कारण गुप्ति समिति धर्म अनुप्रेक्षाके भेद परीषहका विशेषकरि भेदनिका कथन अर चारित्रके भेद तपके वारह भेद ताके उत्तरभेद तथा ध्यानके चारभेदनिका निरूपण कीया। वहुरि गुणश्रेणीरूप निर्जराके दशस्थान अर पुलाकादिक पचप्रकार मुनिनिका स्वरूप कही अध्याय पूर्ण कीया ।

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अर्थप्रकाशिका— ऐसे तत्वार्थका है अधिगम जातै ऐसा दशाध्यायरूप मोक्षशास्त्रविषै नवम अध्याय समाप्तभया ।

— दोहा —

॥ है जातै तत्वार्थका । अधिगम सबसुखदाय ॥
॥ मोक्षशास्त्र मंगलमय । नमो नवम अध्याय ॥ १ ॥
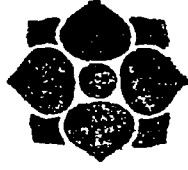
नवम अध्याय समाप्तः

॥ ॐ नमो वीतरागाय ॥

अथ दशमोऽध्यायः ।

अव दशम अध्यायका प्रारभ करे है ।

— दोहा —

आरिरज विघ्न निवारिकै । निरावरणनिर्दोष ।
नमो आप्तके परमपद । होय मोक्षसुख पोष ॥ १ ॥

अव अतविषै कह्या जो मोक्षपदार्थ ताके स्वरूप कहनेका अवसर है। तथापि मोक्षकी प्राप्ति केवलज्ञानपूर्वक है तातैं पहिले केवलज्ञानकी उत्पत्तिको कहिए हैं ।

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलम् ॥ १ ॥

अर्थप्रकाशिका— मोहनीयकर्मका क्षयतै अंतर्मुहूर्त्त क्षीणकषायनाम पाय पछै युगपत ज्ञानावरण दर्शनावरण अतरायका क्षय करि केवलज्ञानकू प्राप्त होय हैं । इहां पहली मोहका क्षय काहतें होय है सो कहे है। परिणामनिके विशेषतै सो कहे हैं। पूर्वं कही जो विध तिसकरि अर परमतपका विशेषकरि परिणामनिकी उज्जलताकी आधिक्यतातै शुभप्रकृतिनमे रस प्रचुर हो जाय है। अर अशुभप्रकृतिनिमे रसविनष्ट हो जाय है। तहां कोऊ वेदकसम्यग्दृष्टी अविरत देशविरत प्रमत्तसंयत इन च्यार गुणस्थानमध्यको इन एक गुणस्थनमे तीन करणपरिणामनिकरि अनतानुवंधी क्रोध मान माया लोभकूं अप्रत्याख्याना-वरणादि वारह कषाय नव नोकषायरूप परिणमन करै सोही अनंतानुवंधीका विसंयोजन है। सो अनतानुवंधीका विसंयोजनकरि ।

वहुरि अतर्मुहूर्त स्थिति रही फिर तीन करणकू प्राप्त होय क्रमते मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्वप्रकृतिका क्षयकरि क्षायिकसम्यग्दृष्टी होय अर कर्मकी हानि होनेतें महान् विशुद्धताकरि शुद्धहुवो सप्तमगुणस्थानमे अध:करणके परिणामनिकरि पूर्ववत् अपूर्वकरण क्षपक ताने प्राप्त होय तहां नवीन शुभपरिणामनितै पापप्रकृतिनिका स्थिति अनुभागका नाश करि अर शुभप्रकृतिनमे अनुभाग वधाय अनिवृत्तिकरणकरि अनिवृत्तिवादरसापरायनाम पाय तहा अप्रत्याख्यानावरण अर प्रत्याख्यानावरणरूप अष्टकषायनिको क्षयकरि फिरि नपुसक वेदका नाशकरि फिर स्त्रीवेदका नाश करे । फिर नोकषाय षट्ककू पुरुषवेदमे क्षेपकरि इनका नाश करे ।

वहुरि पुरुषवेदकू क्रोधसज्वलनमे मायासज्वलनकू लोभसज्वलनमे संक्रमणके विधानका क्रमकरि वादरप्रकृष्टिका विभागतै नाशने प्राप्त करिके अनिवृत्तिवादरसापरायक्षपकभावकूं पाय लोभसज्वलनकू सूक्ष्मकरि सूक्ष्मसापरायक्षपकभावका अनुभवकरि समस्त मोहनीयका मूलतै नाशकरि क्षीणकषायकू चढिकरि उत्तारण कीया है । मोहका भार जाने ऐसा क्षीणकषायगुणस्थानका द्विचरमसमयमे निद्राप्रचलाका विनाशकरि अतका समयविषै पचज्ञानावरण च्यार दर्शनावरण पच अतराय इन चोदह प्रकृतिका नाशकरि तिसके अनतर समयविषै ज्ञानदर्शन है । स्वभाव जाका अर अचित्य है । विभूतिविशेप जाका अर जाके कोऊ प्रतिपक्षी नाही ऐसा केवलनामा आत्माका असहायपर्यायकू प्राप्त होय केवली होय है ।

कैसाक है केवली । कर्मके लेपरहित है । अर कमलकीज्यों निर्मल है । अर त्रिकालवर्त्तीसमस्तद्रव्यनिका गुणपर्यायनिके स्वभावकू युगपत् साक्षात् जाननेवाला है । अर सर्वत्र अरोक है दर्शन जाकै । अर प्राप्तभया है समस्त पुरुषार्थ जाकै । जैसे वर्षाकालकू व्यतीत होते अपनी किरणनिका समूहकरि आल्हादकारी सौम्य है दर्शन जाका ऐसा चद्रमाकीज्यो उज्जल है । देदीप्यमान है मूर्ति जाकी ऐसा त्रैलोक्यनाथ भगवान् केवली होय । अव कहै है । जो अवरोधकरिरहित अनतवीर्यादिसयुक्त केवलज्ञानकूं अर इसका लाभ होनेका कारणनिकू तो जान्या । अव मोक्षका लक्षण तो कहा है । अर कोन हेतुतै मोक्ष होय सो कहो यातै सूत्र कहै हैं ।

वन्धहेत्वभावनिर्ज्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः ॥ २ ॥

अर्थप्रकाशिका—बधके कारणनिका अभाव अर निर्ज्जराकरिके समस्तकर्मका अत्यत अभाव सो मोक्ष है । तहां मिथ्यादर्शनादि बधके कारणनिका अभावते तो नवीनकर्म नही बधै । अर पूर्व बधे कर्मनिकी गुप्त्यादिकनिर्ज्जराके कारणनिकरि निर्ज्जरा हो जाय तदि भवमे स्थिति करनेके कारण आयुकर्म नाम गोत्र वेदनीय कर्मका अत्यत अभावते मोक्षही होय हैं । तहा चरमशरीरीकै नरक तिर्यंच देव इन तीन आयुका तो पहली बधहीका

अभाव है। जातै चरमशरीरीकै भुज्यमान एकही आयुका सत्व होय है। पराभवका आयु नही वांधे है ऐसा नियम है। अर असंयतादि चारि गुणस्थानमिमेतै कोईएक गुणस्थान-विषै दर्शनमोहनीय कर्मकी तीन प्रकृति अर चार चार अनतानुबधी ऐसे सात प्रकृतिनका क्षय करे।

बहुरि नवम गुणस्थानका नवभाग है। तिसके पहले भागमे निद्रानिद्रा प्रचलाप्रचला स्त्यानगृद्धि नरकगति तिर्यचगति एकेद्रिय द्वीद्रिय त्रीद्रिय चतुरिंद्रिय ए च्यार जाति नरक-गत्यानुपूर्व्वं तिर्यग्गत्यानुपूर्व्यं आताप उद्योत स्थावर सूक्ष्म साधारण इन षोडशप्रकृतिनिका युगपत् नाश करे है। अर-दूसरा भागमे अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण इन आठ कषायनिका क्षय करे। अर तीसरा भागमे नपुसकवेदका चौथामे स्त्रीवेदका पांचमांमै छह हास्यादिकनिका छटामै पुरुषवेदका सातमामै संज्वलन क्रोधका आठमामै मानका नवमामै मायाका। ऐसे नवमा गुणस्थानमे छत्तीस प्रकृतिनका नाश करे है। दशमगुणस्थानमे सज्वलनलोभका नाश करे है।

बहुरि क्षीणकषाय छद्मस्थ वीतरागनाम बारमा गुणस्थानमे द्विचरमसमयमें पच-ज्ञानावरण पच अतराय दर्शनावरण ४ निद्रा १ प्रचला १ ऐसे सोलह प्रकृतिनिका नाश करे है। इहा पर्यंत सोलह प्रकृतिनिका नाश करि केवलज्ञान उपजाय चौदमा अयोगीगुण-स्थानमे पच्यासी प्रकृतिनिका नाश करै है।

तहा उपान्त्यसमय जो अतका समयका पहला समय तहा द्विचरम कहिए तिस विषै दोय वेदनीयमेतै। एक वेदनीय। १, देवगति। १, पाच शरीर। ५, पाच बधन। ५, पांच-सघात। ५, छह सस्थान। ६, छह सहनन। ६, तीन अगोपांग। ३, पचवर्ण। ५, दोयगध २, पचरस। ५, अष्ट स्पर्श। ८, देवगत्यानुपूर्व्य। १, अगुरुलघु। १, उपघात। १, परघात १, उच्छवास। १, प्रशस्ताप्रशस्तविहायोगति। २, अपर्याप्तक। १, प्रत्येकशरीर। १, स्थिर १, अस्थिर। १, शुभ। १, अशुभ। १, दुर्भग। १, सुस्वर। १, दुस्वर। १, अनादेय १, अयशस्कीर्ति। १, नीचगोत्र। १, निर्माण। १, ऐसे बहत्तरी प्रकृतिनिका क्षय करै है। बहुरि अयोगीका अतसमयविषै। एक वेदनीय। १, मनुष्यगति। १, मनुष्यआयु। १, पचेंद्रिय-जाति। १, मनुष्यगत्यानुपूर्व्यं। १, त्रस। १, बादर। १, पर्याप्तक। १, सुभग। १, आदेय १, अयशस्कीर्ति। १, तीर्थंकर। १, उच्चगोत्र। १, ए तेरह प्रकृतिनिका [illegible] [illegible] मोक्ष होय है।

इहां प्रश्न। जो कर्मका बधके [illegible]

चाहिए। ताकू उत्तर कहे है जो ऐसा [illegible]

अंकुरका अनादिसंतान हैं तोहू अग्निकरि बीज दग्ध होजाय तदि फिर अंकुरा प्रगट नही होयहै। ऐसे अत देखिएहै। तैसे मिथ्यादर्शनादि कारणतैं ससारका अनादिसतान होतैंहू ध्यानरूप अग्निकरि कर्मबीज दग्ध होजाय तदि भयरूप अकुराके उत्पादका अभावतैं मोक्ष होयहै। द्रव्यकर्म है सो पुद्‌गलपरमाणुनिका स्कध है सो कर्मकषायरूप परिणया है सो कर्मरूप पर्यायका नाश होयहै। पुद्‌गलद्रव्यपणाकरि विनाश नही होयहैं। अब कोऊ पूछैहै जो पुद्‌गलमयी द्रव्यकर्मकी प्रकृतिनका नाशतेही मोक्ष हैं कि भावकर्मकाभी नाश होयहैं यातैं सूत्र कहेहैं।

औपशमिकादिभव्यत्वानां च ॥ ३ ॥

अर्थप्रकाशिका— जीवके औपशमिकादिकभाव अर पारिणामिकमे भव्यत्वभावनिके अभावते मोक्ष है। इहा भव्यत्वका ग्रहण है सो अन्य जीवत्वादिकका अभावका निषेधकै अर्थि है। औपशमिक क्षायोपशमिक औदयिक अर पारिणामिकमैं भव्यत्व इनकाहू मुक्तजीवकै अभाव नहीहै। अब मुक्तजीवकै जें क्षायिकभाव है तिनको कहेहै।

अन्यत्र केवलसम्यक्त्वज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः ॥ ४ ॥

अर्थप्रकाशिका— केवलसम्यक्त्व ज्ञान दर्शन सिद्धत्व इन भावनिविना अन्यभाव निका मुक्तजीवकै अभाव है। इहां कोऊ कहै। जो मुक्तजीवकै चारही भाव अवशेष रह्या कह्या तो अनतवीर्यकाहू अभाव आया। ताकू कहेहै। ये दोष नहीहै। अनतवीर्यादिक है ते ज्ञान-दर्शनतैं अविनाभावी हैं तातैं अनतज्ञानदर्शनकी लारही अनतवीर्य है। जातैं अनतवीर्यरूप सामर्थ्यकरि हीनहैं अनंतज्ञानदर्शनकी प्रवृत्तिभी नही होयहे। अर अनतसुख है सो अनतज्ञानमयही है। ज्ञानविना जडकै सुखवेदना हैनही।

कोऊ कहै। जो दुःखरूप समुद्रमैं डूब्याहुवा समस्तजगतकू जानते देखते सिद्धनिके करुणा उत्पन्न होय। करुणातैं कर्मका आस्रव होनेका प्रसग आवै है। सो नही हैं। भक्ति स्नेह करुणा वाछा क्रिया ए समस्त रागभावके भेद है। वीतरागकै समस्तरागके अभावतैं समस्तआस्रवका अभाव है। अर जो कारणविनाही मुक्तजीवके बध कल्पना करिए तो मुक्ति होनेका अभाव आवैगा। मुक्त हुवा पाछैं बधका सद्‌भाव ठहरैगा। अर जो या कहोगे मुक्तजीवकैंहू स्थानवान्‌पणो है। तातैं पतन होयगा सो नही है। जातैं आस्रवका अभावतैं पतन नही। जिम नावमैं जल प्रवेश करैगा सो डूबैंगी। मुक्तजीवकै आस्रव नही तातैं पतनहू नहीं है। बहुरि जाकै कर्मका बधकरि भारीपणो हैं ताका पतन होयहै। जैसे भारी जो [illegible] ताकै तूंबी बंधी बोटके संयोगका अभावतैं पतन देखिए हैं। अर गौरवरहित

आकाशका पतन नही देखिए है। अर मुक्तजीवकै गौरवता है नाही तातै पतनको अभाव है। अर जिसके मतमै स्थानवानपणाही पतनका कारण ताकै समस्तपदार्थनिका पतन ठहैरगा।

बहुरि कोऊ कहै सिद्धक्षेत्र तो अल्प है तिसमै अनतानतसिद्ध है तातै परस्पर उपरोध होयगा सो नहीहै। अवगाहनशक्तिका योगतै जैसे मूर्तिमान्‌पदार्थनिमैंहू अनेकमणिदीपकादिकनिका प्रकाश अल्पक्षेत्रनिनैंहू परस्पर नहीरूकैहैं। तो अवगाहनशक्तियुक्त अमूर्तिकमुक्तजीव कैसे परस्पर अवरोध करै। बहुरि मुक्तजीवनिकै अमूर्त्तिकपणातैही जन्ममरणक्लेशादिक वाधा नहीहै यातै बांधारहितपणातैही अनतसुखी तिष्ठैहै। बहुरि आकाशकू तो परमाणुकरि अवगाह्यक्षेत्रकू आदि लेय एकएक प्रदेशकी वृद्धिकरि कलनारूप आकाशका परिमाणकू कल्पना कीया परतु मुक्तजीवका ज्ञानकू उपमा देनेकू कोऊ पदार्थ नही अर ससारिकसुख है सोहू तंद्रियादिकनिकै आधीन अर वेंदनापूर्वक अर अतसहित है। अर मुक्तजीवनिका सुख स्वाधीन सास्वता वेदनारहित है तातै मुक्तजीव उपमारहित है। बहुरि कोऊ कहै मुक्तजीवनिकै मूर्त्ति नही तातै आकारको अभाव होयगो सो नहीहै। चरमदेहका जैसा आकार है तैसा आत्मप्रदेशनिका आकार है।

फिर कोऊ कहै। जीवकी रचना आकार तो शरीरकें अनुकूल है। शरीरका बधनमे था तदि शरीरके आकार था। अब शरीरका अभाव भया तदि स्वाभाविक लोकाकाशके प्रदेशनिप्रमाण विस्तारकू प्राप्त होना योग्य है। ताकू उत्तर कहै है। जो ऐसे नही है। आत्माके प्रदेशनिका सकोच विस्तारका कारण नामकर्म था नामकर्म जैसा शरीरमे प्रवेश करावे था तैसा सकोचविस्तार था नामकर्मका अभावतै दीपक वत् सहार सकोच विसर्प्पण विस्तार दोऊका अभाव जानना। अब कोऊ कहैं।

जिस देशमे कर्मका अभाव होय तिसही स्थानमे मुक्तजीवका अवस्थान प्राप्त हुवा चाहिए। जातै मुक्तजीवके बधका अभाव भया अर भारीपणाका अभाव हैं। तातै अधोगति सभवे नही हे। अर योगनिका अभावतै तिर्यंगगति नही सभवे है। तातै सहाही अवस्थानयुक्त है। ताकू उत्तर कहे है। जैसे अनेकदिशामे गमनके निमित्तका अभाव है। तैसे, उर्ध्वगमनके निमित्तका अभाव नही है।

तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् ॥ ५ ॥

अर्थप्रकाशिका—समस्तकर्मका अभाव भए पीछै उर्द्धगमन करेंगे तो लोकका अंतपर्यंत जाय है। अब ऊर्ध्वगमनका कारण कहे विना ऊर्ध्वगमन कैसे निश्चयकीया जाय तातैं ऊर्ध्वगमनका हेतु कहे है।

पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद्बन्धच्छेदत्तथागतिपरिणामाच्च ।। ६ ।।

अर्थप्रकाशिका–पूर्वप्रयोगते असगते बधके छेदतै तथागतिपरिणामते इन चार हेतुनितै ऊर्ध्वगमन होय हैं। अत्र इन चार हेतुनिका दृष्टातके अर्थि सूत्र कहे है।

आविद्धकुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाबुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ।। ७ ।।

अर्थप्रकाशिका–इहा पूर्वसूत्रमे कहे हेतु तिनका यथासख्य दृष्टात जानना। सोही कहे है। जैसे कुभकारके प्रयोगतै भया जो हस्तका अर दडका अर चाकका सयोगतातै चाकका फिरना होय है। फिर जो कुभकार फिरावता रहिगया तोहू पूर्वके प्रयोगतै जहा-ताई फिरनेका सस्कार नही मिटै तहाताई फिर बोही करे। तैसेही ससारमें तिष्ठता जीवहू मुक्तिकी प्राप्तिके अर्थि वारवार चितवन अभ्यास करे था सो मुक्ति भए पीछै अभ्यास नही रह्या तोहू पूर्वले संस्कारतें मुक्तिगमन होय है।

वहुरि जैसे तूंवा मृत्तिकाके लेपतै भार्‍याहुवा जलमे डूबी रह्या था मृत्तिकाका लेप दूरि होतेही तूवा जलकै ऊपरिही आजाय। तैसे कर्मके भारकरि दब्या परवश भया आत्मा तिम कर्मके सवधतै ससारमे नियमतै पडा है। फिर कर्मका लेप दूरि होय तव ऊर्ध्वही गमन करे है।

वहुरि जैसे एरडका डाडामें तिष्ठता एरडबीज सो डोडाकू सूकिकरि फूटतेही ऊचा उछले है। तैसे मनुष्यादिभवमे राखनेवाला गतिजात्यादि नामकर्म तथा आयु नाम गोत्रके बधन टूटतेही आत्मा ऊर्ध्व गमन करे है। वहुरि जैसे तिर्यग्गमन करावनेवाला पवनका अभाव होय तदि दीपककी शिखा ऊर्ध्वही गमन करे है। तसे ना नागतिमे गमन करावनेका कारण कर्मका अभाव होते आत्माका ऊर्ध्वगमनही होय है। जैसे अग्निका ऊर्ध्वगमनस्वभाव है। तैसे जीवकाहू ऊर्ध्वगमनस्वभाव है। जैसे अग्निशिखा पवनकी प्रेरी तिर्यग्गमन करै अर पवनका अभाव भए ऊर्ध्वगमन करे है। तैसे कर्मका प्रेर्‍या जीव चतुर्गतिमे परिभ्रमण करे है। कर्म अभाव भए ऊर्ध्वगमन करै है। इहा कोऊ पूछै मुक्ति भए पछै आत्माका ऊर्ध्वगमनस्वभावही है। तो लोकके अतमेही कैसे ठहर्‍या फिर ऊचाही कोन हेतुते [illegible]। ताका उत्तर कहे है।

आगे पूछे है। मुक्त भए जीव तिनके गति जाति आदिक तो कारण नाही ताते इन विषै भेदका व्यवहार नाही है कि कछु भेदव्यवहार कीजिए । ताका उत्तर कथचित् भेद भी करिए ताका सूत्र कहे हैं ।

क्षेत्रकालगतिलिङतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाह नान्तरसंख्याल्प-बहुत्वतः साध्याः ॥ ९ ॥

अर्थप्रकाशिका--क्षेत्र काल गति लिंग तीर्थ चारित्र प्रत्येकबुद्ध बोधितबुद्ध ज्ञान अवगाहना अतर सख्या अल्पवहुत्प इनि वारह अनुयोगनिकरि सिद्धजीवनिकू भेदरूप साधने। प्रत्युत्पन्ननय अर भूतप्रज्ञापननय इन दोऊ नयनिकी विवक्षाकरि क्षेत्रादिक बारह अनुयोग-निते सिद्धनिमे भेद साधनेयोग्य है। तहा क्षेत्रकरि तो कोंन क्षेत्रमे सिद्ध होय है। प्रत्युत्प-न्ननय अपेक्षाकरि सिद्धक्षेत्रविषै अथवा अपने आत्मप्रदेशनिविषै सिद्ध होय हैं । अथवा आकाशके प्रदेशनिविषे सिद्ध होय है। भूतप्रज्ञापननयकी अपेक्षाकरि जन्म अपेक्षातें पनरह कर्मभूमिका जन्म्या जीवहीकै सिद्धगति होय है। तथा पद्रह कर्मभुमिमे जन्म्या मनुष्यकू कोऊ देव आदि अन्यक्षेत्रमे लेजाय तो अढाई द्वीपप्रमाण समस्तमनुष्यक्षेत्रतें सिद्ध होय है। इहां प्रत्युत्पन्नग्राहीनय वर्त्तमानपदार्थकू ग्रहण करे है सो ऐसा नय ऋजूसूत्र है। तथा शब्द समभिरूढ एवंभूत भी याही नयका परिवार है।

वहुरि कालकरि कोनसे कालमै सिद्ध होय है। तहा प्रत्युत्पन्नग्राहीनयकी अपेक्षाकरि एकसमयमे सिद्ध होय है। भूतप्रज्ञापननयकी अपेक्षाकरि सामान्यकरि तो उत्सर्पिणी असवर्पिणी दोऊ कालमै सिद्ध होय है। अर विशेपकरि अवसर्पिणी का सुखमदु खमा जो तीजा काल ताका अतभागविषै अर दुखमासुखमा जो चोथा काल समस्तके विषैं उपज्या अर दुखमसुखमका उपज्या पचमकालके विषैभी मोक्ष होय है। अर दुखमकालमै अर दु खमदु खमकालमैं उपज्या सिद्धगति नही पावै है। अर विदेहक्षेत्रका उपज्या कोइ देवादिक हरिले जाय सो समस्त उत्सर्प्पिणीकै विषै सिद्ध होयहै ।

बहुरि गतिविषै प्रत्युत्पन्नग्राहीनयकी अपेक्षा सिद्धगतिविषैही सिद्ध होयहै। अर भूतविषयनयकी अपेक्षाकरि मनुष्यगतिहीमै सिद्ध होयहै ।

बहुरि लिंगकै विषै प्रत्युत्पन्ननयकी अपेक्षाकरि वेदरहितही सिद्ध होयहै। भूतग्राहीनयकी अपेक्षाकरि भाववेद तीनोहीकरि क्षपकश्रेणी चढी मोक्ष पावैहै। द्रव्यकरि पुरूपवेदहीतै सिद्ध होयहैं। अथवा । निर्ग्रंथलिंगकरिही सिद्धगति होयहै। भूतविषयनयकी अपेक्षा पूर्वे जाकै सग्रथीपणा था तहीकै मोक्ष होयहै ।

वहुरि तीर्थकरि कोऊ तो तीर्थंकर होय मोक्ष पावेहै। अर केई सामान्यकेवली होय मोक्ष पावेहै। तिसमैहू कोऊ तो तीर्थकर विद्यमान होय तिस समय मोक्ष पावेहै। केई तीर्थकर-निकू नही विद्यमान होतै मोक्ष पावैहै।

वहुरि चारित्रविषै प्रत्युत्पन्ननयकी अपेक्षा तो चारित्रनिका अभावहीकरी सिद्ध होयहै तहां चारित्रका नामही नही। अर भूतग्राहीनयकी अपेक्षामै अनतर अपेक्षा तो नथाख्यात-चारित्रकरिही मोक्ष पावैहै।

अर अतरकी अपेक्षा सामायिक छेदोपस्थापना सूक्ष्मसापराय यथाख्यातचारित्रकरिही मोक्ष पावेहै। तथा कोऊकै परिहारविशुद्धि होय तब पाचूहीतै मोक्ष पावेहै। वहुरि प्रत्येकबुद्ध तो अपनी शक्तिकरि स्वयमेवही ज्ञान पावेहै। अर बोधित कहिए परके उपदेशतै पावै। तहा केई तो प्रत्येकवुद्ध मोक्ष पावैहै। केई बोधितबुद्ध मोक्ष पावेहै। बहुरि ज्ञानकरि प्रत्युत्पन्ननयकी अपेक्षा तो केवलज्ञानकरिही सिद्ध होयहै। अर भूतग्राहीनयकी अपेक्षाकरि केई तो मति श्रुत इन दोय ज्ञानकरिही केवलज्ञान उपजाय मोक्ष पावेहै। केई मति श्रुत अवधि मन पर्यय इन चारो ज्ञानकरि केवल एपजाम मोक्ष पावेहै। केई मति श्रुत अवधि इन तीन ज्ञानकरि केवल उपजाय मोक्ष पावैहै।

वहुरि अवगाहन उत्कृष्ट पाचसे पचीस धनुष्यकी है। अर जघन्य साढा तीन हस्त-प्रमाण कछु घाटि हैं मध्यके नानाभेद हैं। इनमे एकएक अवगाहनातै मोक्ष पावैं है। प्रत्युत्पन्न-नयकी अपेक्षा देशोनकही है। वहुरि सिद्ध होते जीव अतरकरिभी सिद्ध होय अर अतररहितभी सिद्ध होय है। तहा जो सिद्ध होय है तिनकै अतर जघन्य तो दो समय है। अर उत्कृष्ट अष्ट-समयपर्यंत निरतर सिद्ध होय है। वहुरि अतर जघन्य तो एकसमय है। अर उत्कृष्ट छह महिना है। वहुरि सख्या जघन्यकरि तो एकसमयमे एकही सिद्धगति पावै है। अर उत्कृष्ट एकसमयमे एकसो आठ जीव मोक्ष पावै है।

वहुरि क्षेत्र आदिकएकादशकरि अभिन्ननिके परस्पर भेदतै सख्याकी विशेषतातै अल्प-वहुत्व कहिएहै। तहा प्रत्युत्पन्ननयकी अपेक्षा सिद्धक्षेत्रविषेही सिद्ध होयहै। याकै अल्पवहुत्व नहीहै। वहुरि भूतग्राहीनयकी अपेक्षा क्षेत्रसिद्ध दोय प्रकार हैं। जन्मतै अर सहरणतै। तिनमे संहरणाद्धि अल्प है। इनतै सख्यातगुणे जन्मसिद्ध है। वहुरि क्षेत्रनिका विभागतै ऊर्ध्वलोकतै भए सिद्ध अल्प है। तिनतै असख्यातगुण अधोलोकतै भए सिद्ध है। तिनतै असख्यात-गुणा तिर्यग्लोकतै भए सिद्ध है। कोऊ कहै ऊर्ध्वलोकतै अर अधोलोकतै भए सिद्ध कैसे है। ताका उत्तर। जो आगमकी आज्ञाविना अपनी रूचिसै तो कहि कोन ससारमे डुबै। विशेष [illegible] नही सामान्य सो आगममे लिख्या सो प्रमाण है। सोही लिखदीया है।

बहुरि सर्वतै थोरे समुद्रतै भए सिध्द है तिनतै सख्यातगुणा द्वीपतै सिध्द भएहै। ऐसे तो सामान्य कह्या।

इनका विशेष। सबेतेथोरे लवणसमुद्रतै भए समुद्रतै सिध्द है। तिनतै सख्यातगुणा कालोदधिसमुद्रतै भए सिध्द हैं। तिनतै सख्यातगुणा जबूद्वीपतै भए। तिनते सख्यातगुणा धीतकी द्वीपते भए सिध्द है तिनतै असख्यातगुणा पुष्करार्द्धते भए सिद्ध है। ऐसे क्षेत्रका विभागतै अल्पवहुत्व जानना। बहुरि कालका विभागते उत्सर्प्पिणीकालतै सिद्ध भए तिनते अवसरर्पिणीकालमे भए सिद्ध विशेषकरि अधिक हैं। बहुरि उत्सर्प्पिणी अवसर्पिणीकाल विना जे सिद्ध भए ते तिनते सख्यातगुणा है जाते विदेहक्षेत्रनिमे उत्सर्प्पिणी अवसर्पिणी दोऊ काल नही प्रवर्त्तेहै। बहुरि प्रत्युत्पन्नयनकी अपेक्षाकरि एकसमयमे सिद्ध होयहै याते अल्पवहुत्व नाही है। गतिविषै प्रत्युत्पन्ननयकी अपेक्षा तो अल्पबहुत्व नाही। वहुरि एकगतिका अतर अपेक्षाकरि तर्यंचगतिके आये मनुष्य सिद्ध भए ते तो समस्ततै अल्प है। तिनते सख्यातगुणें मनुष्यगतितें मिनुष्य होय सिद्ध होयहै। तिनते सख्यातगुणा नरकगतिते आए मनुष्य होय सिद्ध होयहै तिनते सख्यातगुणा देवगतिते आए मनुष्य होय सिद्ध होयहै।

वहुरि वेदका अनुयोगकरि प्रत्युत्पन्ननयकरि तो वेदरहित सिद्ध होयहै तहा अल्पवहुत्व नाही। भूतनयअपेक्षासर्वतै अल्प तो नपुसकलिंगतै श्रेणी चढी सिध्द होयहै। तिनतै असख्यातगुणा स्त्रीवेदमे श्रेणी चडी सिध्द होयहै। तिनतै सख्यातगुणा पुरूष वेदतै श्रेणी चढि सिध्द भए है। बहुरि तीर्थंकर होय सिध्दभए अल्प है। तिनतै सख्यातगुणा सामान्यकेवली होय सिध्द भए है। बहुरि चारित्रकरि प्रत्युत्पन्ननयअपेक्षा चारित्रविनाही सिध्द भए तहा अल्पबहुत्व नाही। अर भूतनयअपेक्षा अनंतरचारित्र यथाख्यातहीते सिध्द होयहै तहाभी अल्पवहुत्व नाहीहै। बहुरि अतरसहित चारित्रअपेक्षा पचचारित्रते सिध्द भए अल्प है। तिनते सख्यातगुणा चारित्रते भएहैं।

बहुरि प्रत्येकबुद्धनितें सख्यातगुणें वोधितबुद्ध भए सिद्ध है। वहुरि ज्ञानकरि प्रत्युत्पन्नयकी अपेक्षा तो केवलज्ञानहीते सिद्ध होय है। तिनमे अल्पवहुत्व नाही। भूतनयकी अपेक्षाकरि दोय ज्ञानतै सिद्ध भए अल्प है। तातै सख्यातगुणा च्यार ज्ञानतै भए सिद्ध है। तिनते असख्यातगुणा तीन ज्ञानते भए सिद्ध है। वहुरि अवगाहनाकरि जघन्य अवगाहनातें सिद्ध भए थोरे है। तिनने सख्यातगुण उत्कृष्ट अवगाहनातै भए सिद्ध है। तिनतै संख्यातगुणे मध्यम अवगाहनातै भए सिद्ध है।

वहुरि सख्याविषै एकसमयमे उत्कृष्टपणे एकसो आठ सिद्ध होय है ते तो अल्प है। तिनते अनतगुणा पचासताईकी सख्याते भए सिद्ध है। तिनतै असख्यातगुणा गुणनागतै

लगाय पचीसताईकी संख्याते एकसमयमे भए सिद्ध हैं। तिनते सख्यातगुणे चोईसते लगाय एकपर्यंत सख्यातै एक सकसमयमे भए सिद्ध है।

ऐसे निसर्ग अर अधिगमविषं कोऊ एकते उपज्या तत्वार्थनिका श्रद्धान है स्वरूप जाका अर शकादि अतिचाररहित है। अर प्रशम सवेग अनुकंपा आस्तिक्य, है। प्रगट लक्षण जाका ऐसा निर्मलसम्यग्दर्शन अर सम्यग्दर्शनकी उपलब्धितैंही विशुध्द हुवा सम्यग्ज्ञानकू प्राप्त होय करिके अर नामादिक च्यार निक्षेप अर प्रत्यक्ष परोक्ष दोय प्रमाण अर निर्देशादिक अर सत्सख्यादिक जे वडे उपाय तिनकरि जीवनिके पारिणामिक औदयिक औपशमिक क्षायोपशमिक क्षायिक भावनिके स्वरूप है। ताहि जाणि करिकै।

वहुरि चेतनके भोगके साधने जे विषय तिनका उत्पत्ति विनाश स्वभावके ज्ञान होनेतें विषयनिमे विरक्त होय अर वाछारहित होय तीनगुप्ति पंच समितिरूप हुवो दशलक्षण धर्मके आचरणतै अर धर्मके फलका दर्शनतै निर्वाणकी प्राप्तिमे यत्नके अर्थि वृद्धितै प्राप्त हुवा है। श्रध्दान अर सवेग जाके अर भावनाकरि प्रगट कीया है। स्वरूप जानें ऐसा अर अनुप्रेक्षाकरि स्थिर कीया है। अभिप्राय जाने ऐसा अर सवररूप है। आत्मा जाका ऐसा हुवा सता आस्रवरहितपणातै दूरि भया है। नवीनकर्मका सचय जाके ऐसा वहुरि परिग्रहके जीतनेतै अर वाह्य अभ्यतर तपके आचरणते अर अनुभव करनेतै सम्यग्दर्शनके धारक विरताविरतकू आदि लेय सयोगीजिन पर्यंतनिके परिणमनरूप अध्यवसाय कहिए परिणाम तिनकी विशुध्दताके स्थानातरके असख्यातका गुणकार कीया आधिक्यता करिकै पूर्वले सचय कीए कर्मनिकू निर्जरा करता संता ऐसा।

वहुरि सामायिकचारित्रकू आदि लेय सूक्ष्मसांपरायपर्यंत कषायनिकें विशुध्दिस्थाननिका उत्तरोत्तर उत्कृष्टपणाका अवलवनतै अर पुलाकादिक निर्ग्रंथनिका सयमके अनुपालनके विशुध्दिताके स्थानविशेषनिकी उत्तरोत्तर उत्कृष्टताकी प्राप्तिकरि रच्यो अर अत्यत नष्ट हुवो है। आर्त्त रौद्र ध्यान जामे अर धर्मध्यानके प्रभावतै प्राप्तभयो है। समाधिबल जाके। अर शुक्लध्यानके विकल्प जे पृथक्त्ववितर्कविचार अर एकत्वावितर्कविचार इन दोऊ ध्याननिके मध्य किसि एक ध्यानमे वर्त्ततो ऐसो। अर नानाप्रकारकी पूर्वोदित शुध्दिनिके विशेषकरि युक्त ऐसो। अर तिन शुध्दिनिमे नही आसक्त है। चित्त जाका ऐसा कोऊ महान् साधु है।

सो पूर्वे कह्या क्रमकरि मोहादिक च्यार घातिया कर्मनिका नाशकरि सर्वज्ञपणाकी आनन्दधर्मीकू अनुभवकरि अरहंतपणा पाय पछे शेष अघातिकर्मनिका नाशतें भवबधरहित हुवा। जैसे उपादानकारण इंधनका अभाव जाके होयगा ऐसा अग्निकीज्यों पूर्वे ग्रहणकीया

भव ताका वियोगतै अर कारणके अभावतें नवीन शरीरका नही प्रगट होनेतें ससारका दु खको उल्लघनतें अतरहित ऐकांतिक निरुपम निरतिशय ऐसा निर्वाणका सुखकू प्राप्त होय है। इस प्रकार तत्वार्थभावनाको यो फल हैं । सो तत्वार्थसूत्रके ज्ञाता ऐसे वक्ता श्रोता भव्यजीविनिकू प्राप्त होहू ।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः ।।

ऐसे तत्वार्थका है अधिगम जातें ऐसा जो दश अध्यायरूप मोक्षशास्त्र तिस विषै दशम अध्याय पूर्ण भया ।

दोहा—

है जातै तत्वार्थका । अधिगम सबसुखदाय ।
मोक्षशास्त्रमंगलमय । नमो दशम अध्याय ।। १० ।।

ऐसे अर्थप्रकाशिकानाम देशभाषामय वचनीका श्री राजवार्तिक नाम ग्रंथका अल्प-लेश लेय अपना उपयोगकी विशुध्दिताके अर्थि तथा संस्कृतके बोधरहित अल्पज्ञके तत्वार्थ-सूत्रनिके अर्थं समझनेके अर्थि अपनी बुध्दिकी अनुसार लिखी है। परतु राजवार्तिकका अर्थं तथा कहूकहू गोमटसार त्रिलोकसारका अर्थकू लेय लिख्या है । अपनी बुध्दिकी कल्पनातैं इस ग्रथमे एक अक्षरहू नही लिख्या है। जाके पापका भय होयगा अर जिनेंद्रकी आज्ञाका धारणेवाला होयगा सो जिनेंद्रके आगमकी आज्ञाविना एक अक्षर स्मरणगोचर नही करेगा लिखना तो वर्णेही कैसे। अर जे सूत्रकी आज्ञा छाडि अपने मनकी युक्तिनैंही अपने अभिमान पुष्ट करनेकू योग्य अयोग्य कल्पनाकरि लिखे है। मिथ्यादृष्टी सूत्रद्रोही अनतससारपरिभ्रमण करेगे।

इस तत्वार्थसूत्रके दश अध्याय ऊपरि समतभद्रस्वामी चोऱ्यासी हजार श्लोकनिमें गधहस्तिनाम महाभाष्य रची है । अर च्यार हजार श्लोकनिमे सर्वार्थसिद्धिनाम टीका श्रीपूज्यपादस्वामी रची हैं। अर सोलह हजार श्लोकनिकमे राजवार्तिक नाम भाष्य श्रीअक लकदेव रची हैं । अर वीस हजार श्लोकनिमे श्लोकवार्तिक नाम भाष्य श्रीविद्यानद-स्वामी रची हैं। अर इस दशाध्यायसूत्रका आदिका एक श्लोककी व्याख्याही आठ हजार अष्ट सहस्री अर तीन हजार आप्तपरीक्षा ए दोऊ ग्रथ तथा अन्य भी वडेवडे ग्रथ विद्या-नंदस्वामी रची । आप्तप्रकाश सत्यार्थस्वरूपकी दृढता कराई है।

एकांत अभिप्रायकू निकाशि दीया है। जिनके हृदयमे ए ग्रथ प्रवेश कीए तिनके मिथ्याश्रध्दान जन्मांतरहूमे प्रगट नही होय है । इसकी महिमा वचनद्वार कहनेकूं कोन समर्थ हैं। इस कलिकालमे ए ग्रथही साक्षात् केवलीतुल्य है। श्रीकुंदकुदस्वामीकरि विर-चित समयसार प्रवचनसार पचास्तिकाय नाटिकत्रय तिनउपरि श्रीअमृतचद्रसूरि टीका रची है। सो ऐसे ग्रथ ऐसी टीकाकी रचना इस कालमे ओर हैं । नही श्रुतकेवलीतुल्य ज्याकी व्याख्या है। अर अष्टपाहुड नियमसार इत्यादिक अनेकग्रथनिकी रचनाकरि धर्मका स्तभ कीया है।

वहुरि श्रीनेमिचद्र गोमटसार लब्धिसार क्षपणासार त्रिलोकसार द्रव्यसग्रहादिक अनेक रचना जिनसूत्र नितैंरची है। जिन उपरि अभयनदीसिध्दाती तथा केशवमुनि टीक रची तथा त्रिलोकसारउपरि माधवचद्र त्रैविद्यदेव रचना रची है। श्रीवटकेरस्वामी मूला-चार रच्या । श्रीवीरनदी आचारसार रच्या श्रीपूज्यपादस्वामी जैनेंद्रव्याकरण रच्या श्रीजिनसेन गुणभद्रादि महापुराण रच्या शिवाचार्य भगवती आराधना रची । तथा श्रीप्रभा-चंद्रमुनि अकलकदेवकृत लघुत्रयी वृहत्त्रयीचूलिका इन सप्तग्रथनिका सारभूत लेय कुमुद-चद्रोदय नाम महाप्रभावीक अनेकातमय ग्रथ रच्या । तथा परीक्षामुख कमलप्रमेयमार्तंड

प्रमेयचंद्रिका प्रमाणपरीक्षा प्रमाणनिर्णय प्रमाणमीमांसा पत्रपरीक्षादि अनेक ग्रंथ जीवनिका उपकारके निमित्त अनेक आचार्य रचना करि इस अनादिके धर्मकी इस कलिकालमें रक्षा करी है ।

जातैं इस कालमे बुद्धि वीर्य आयु अल्पत घटता जायहै । तातैं पूर्वाचार्यनिकरि प्ररूपे महान् ग्रंथ तिनमैं प्रवेश अति दुर्द्धर जानि इन ग्रंथनिमैं महान् ग्रंथामें प्रवेश होना जानि बडा उपकार कीयाहै । अब इन ग्रंथनिके समझनेवालेहू विरले रहिगये । तातैं धर्मकी प्रवृत्तिकै निमित्त भाषावचनीका रचना बनीहैं । अब स्याद्वादविद्याके पारगामी वीतरागी परमहितोप-देशक दयारूप अमृतरसकरि भीजे ऐसे निर्ग्रंथगुरूनिकूं अर उनके प्ररूपे ग्रंथनिकूं हमारा मन वचन कायकरि वारवार सदाकाल आगामीकालमे वर्त्तमानमे बहुत विनययुक्त नमस्कार होहु इनके चरणारविंदके प्रसादतैं हमारै हृदयविषै निरतर पंच परमगुरूनिकी भक्ति होहु । हमारे समाधिमरण होहु । अपमृत्युको विनाश होहु । जिनभक्तिविना पर्यायका एकक्षणहू मतिजाहु ।

दोहा—नाम जु अर्थप्रकाशिका । देशवचनिकारूप । पढो पढावो ज्ञान वढि । पावो सुख निजरूप । १ । संवत् उगणीसैं अधिक । द्वादश श्रावणमास । वदी नवमी शसिवार है । आरंभदिन उज्जास । २ । संवत् उगणीसे अधिक । चोदह आदितवार । सुदि दसमी वैशा-खकी । पूरणकीयो विचार । ३ । उमास्वामी मुनि सूत्र धर बंदों शिवदातार । पूज्यपाद-गुरूकों नमो । शब्दब्रह्मआधार । ४ । अनेकातआकाशमे । दिपै जु सूरसमान । समंतभद्रस्वामी-चरन । नमत नसत अज्ञान । ५ । श्रीअकलंक कलंकहर । विद्यानंदि महान् । बंदो मनवच-कायतै । द्यो मम सम्यग्ज्ञान । ६ । पंचमकालकरालमे । मोहतिमिर नही थाह । गुरूदीप-गविनु को गहै । अनेकांत पथराह । ७ । चौपई—बंदो उमास्वामिमुनिराज । तत्वारथगर्भित वचकाज । सूत्र मोक्षमारगकें रचे । द्वादशांग आगमतैं जचे । ८ । भाष्यरचिता परि अकलंक राजवार्त्तिक निशंक । मिथ्यातमखंडनकूं सूर । अनेकांतमय गुणकरि पूर । ९ ।ताको महिमाको कहि सकै । कोटी जीभ वरनत वक थकै । जाकूं पढत जु सम्यक्ज्ञान । प्राप्त होय पावै सिवथान । १० । ताको किंचित अर्थ जु लेय । अर्थप्रकाशिक नाम धरेय । भाषा देशवचनीका करी । भूलि सोधि वुध करि यो खरी । ११ । मोक्षमार्ग प्रापक परिपूर । कर्मकठिन-नग भेदन शूर । सकलतत्वके जाननहार । तद्गुणहेतु नमो हितकार । १२ । पूरवमैं गंगातट-धाम । अतिसुंदर आरा तिस नाम । तामैं जिनचैतालय लसैं । अग्रवाल जैनी बहु वसैं । १३ । बहुज्ञाता तिनमैं जु रहाय । नाम तास परमेष्ठीसहाय । जैनग्रंथमे रुचि वहु करे । मिथ्याधरम न चितमैं धरे । १४ ।

दोहा—सो तत्वारथसूत्रकी । रची वचनिकासार । नाम जु अर्थप्रकाशिका । गिणती पत्र हजार । १५ । सो भेजी जयपूरविषै । नाम सदासुख जास । सो पूरण ग्यारह सहस । करि भेजी तिनपास । १६ ।

छप्पै—डेंडराजके बसामाहि इक किंचित ज्ञाता । दुलीचदका पुत्र कासलीवाल विख्याता नाम सदासुख कहे आत्मसुखका बहु इच्छक । सो सुख वानिप्रसाद विषयतै भए निरिच्छक । इम जानि वानि सेवन करो जगउपकार जु करनकी । इस भव परभवमे होहू मुझ सरन जु सम्यक्ज्ञानकी । १ ।

सवैया, । ३१ । अगरवालकुल श्रावक कीरतिचद जु आरेमाहि सुवास । परमेष्ठी-सहाय तिनके सुत पितानिकट करि शास्त्रअभ्यास । कियो ग्रथनिजपरहित कारण लखि बहुरुचि जगमोहनदास । तत्वारथअधिगम सुसदासुखरास चहु दिश अर्थं प्रकाश । १८ ।

दोहा—

बरतो भव्यनि उरविषै । स्यादवाद उज्जास ॥
यातै निजपरतत्व लखि । होय जु अर्थप्रकाश ॥ १९ ॥

इति श्रीतत्वार्थसूत्रकी अर्थप्रकाशिका नाम वचनीका समाप्ता ॥ १ ॥

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
भूमिका १३	१९	सत्य	सप्त	२४	१३	क्षमोपशम	क्षयोपशम
,,	२१	कपन	कपत्र	२६	११	ईहाजान	ईहाज्ञान
१४	१२	नामसेन	नागसेन	,,	१९	धनुक्र	अनुक्त
,,	२१	भगवानको	भगवानके	२९	१२	कोठी	कोटी
१५	४	वदो	वदो	३१	१३	पुग्दल	पुगद्ल
३	१	एकात	एकात	३२	६०	,,	,,
४	१३	माग	मार्ग	,,	१४	परिणामे	परिणमे
६	३	सम्यग्यदर्शन	सम्यग्दर्शन	,,	२३	आम रण	आमरण
७	२७	सप	सप्त	३५	२०.	अनुनामी	अनुगामी
९	९	सम्दाव	सद्भाव	३७	१५	प्रक	प्रकट
,,	२९	निष्ठै	तिष्ठै	३९	१०	सर्वपर्यायेषु	असर्वपर्यायेषु
,,	३०	अनुभार	अनुभाग	४०	१४	विपर्यश्च	विपर्ययश्च
१०	३	कर्मात्रिमे	कर्मनिर्मे	४७	११	नयना	नयाना
,,	१०	बिपमे	बिंबमे	५१	२०	केवलाहार	कवलाहार
,,	१२	शुक	शुभ	५२	३०	नदी	नही
,,	१६	पुग्द्ल	पुगद्ल	५३	९५	लिग्ड	लिग्ड
,,	१८	उपनात्रेकू	उपजावनेकू	५४	६	पद्य	पद्म
,,	२३	उताहिये	उतारिये	६०	२०	निर्वत्त्युपकरणे	निवृत्त्युपकरणे
,,	२९	आशध्व	आराध्य	६१	२०	नामककार्मे	नामकर्म
११	१५	तोआगमद्रय	नोआगमद्रव्य	,,	२७	अन्यदोय	अन्य
,,	२१	आयुक्त	आयुका	६२	२८	लटसखादीको	दो इद्रिय
,,	२७	व्यक्त	त्यक्त			पिपीलिकादीको	तीन इद्रिय
,,	२८	पूजा	दूजा	६३	७	मनरहित	असज्ञीमनरहित
१२	९	तो आगम	नोआगम	,,	१७	पुग्दलका	कर्णपुग्दलका
,,	२६	को	भी	,,	१९	समयप्रवृद्ध	समयप्रवद्ध
,,	,,	विशल्प	विकल्प	६४	१९	जाने	जाते
१३	१९	परिणमत्रका	परिणमनका				
,,	२०	स्वतुष्टय	स्वचतुष्टय				
,,	२३	चतुष्य	चतुष्टय				
,,	२५	सकट	सकर				
,,	२७	स्वचतुष्य	स्वचतुष्टय				
१४	४	चतुष्य	चतुष्ठय				
१९	५	अकने	अनेक				
,,	१३	वाचा	वाच्य				
२२	२८	दो	गो				
२३	१०	अन्यय	अन्वय				

शुद्धि पत्र

(पान न. ३८४)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६५	१७	उत्पाद	उपपाद	२२७	१	स्तनत्त्व	स्वतत्त्व
६७	१३	जो	चऊ	२३२	१८	छाया	क्षय
,,	२५	श्प	पर	२३४	१४	सूक्ष्मदृष्टि	सूक्ष्मकृष्टि
७०	१८	औपपादि	औपपादिक	२४१	२५	णिगिदमणणा	णिगिहमण्णाणा
,,	,,	वैाक्रयिकमक्	वैक्रियिक	२४६	२४	उपदाद	उपपाद
७१	२३	प्रयत्त	प्रमत्र	२५५	२४	अनघन्य	जघन्य
७९	१४	त्रिशस	त्रिश	२५६	२६	च्याय	चार
१००	१	म्लेंछाच्च	म्लेछाश्च	२६०	२४	तिखना	दीखना
१२७	४	सतार	शतार	२६५	१	सारद्य	सावद्य
,,	,,	न्नवसु	र्नंवसु	,,	११	परहरिण	परिहरण
१४३	११	काकाश	आकाश	,,	१३	पंव	वर्प
१४४	२२	जिवाश्च	जीवाश्च	२६८	१०	आपमे	आत्पमे
१४५	१७	आकाशादक	आकाशादेक	२७०	१	समुद्रघात	समुद्घात
१४९	१८	वारदोहि	वादरेहि	,,	११	,,	,,
१५२	११	अहगाह	अवगाह	,,	१४	,,	,,
१६४	२४	अदनाअदना	अपन।अपना	२७२	७	परत्पिमे	अपर्यात्पिमे
१६८	२४	वदो	वधो	,,	१७	वेदना	वेद
१७१	८	अन्यत्वमे	अनन्यत्वमे	,,	२३	मतज्ञान	मतिज्ञानश्रुतज्ञान
,,	१३	अनन्यत्व	अन्यत्वमे	,,	३१	दर्षन	दशन
१७९	१३	गोदु	होदु	२७३	२	पद्य	पद्म
१८३	१३	प्रदुष्ट	दुज्प्रमृष्ट	२७९	१९	मप्य	मध्य
१८६	१३	वाद्रो	वादो	२८०	३	भुक्राजार	भुजाकार
१९१	१०	मार्गं	मर्गि	२८१	२१	सत्यानगृयद्धश्च	स्त्यानगृद्धयश्च
,,	११	अनतीहार	अनतीचार	,,	२६	अचक्षु	चक्षु
१९७	२३	तीर्तंकर	तीर्थकर	२८२	२७	प्रत्य ख्यान प्रत्याख्यान	प्रत्याख्यान
२१६	१२	योपिता	जोपिता	२८७	११	असृपाटिका	असप्राप्तासृपाटिका
,,	१३	,,	,,	२९१	११	मत्तरासस्प	मत्तरायस्य
२२५	१६	क्षीणसोह	क्षीणमोह	,,	,,	कोठयः	कोटच.
२२६	२६	दडय	उदय	२९६	३	प्रदेशेष्ट	प्रदेशेष्व
१३९.	३	मनन्कुमार माहेंद्रन्योः	सानत्कुमार माहेन्द्रयो.				

शुद्धि पत्र

(पान न.३८४)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३०४	७	मिथ्यात्म	मिथ्यात्व
३११	३	प्रम्वलित	प्रज्वलता
३१४	२५	पम्वलित	प्रज्वलित
३१९	२०	रक	रक
३२१	२४	डक ससयमे	एक समयमे
,,	२८	अगृहित	गृहीत अगृहीत
३२४	२०	समत्र	समय
३२५	२१	योग्यस्यान	योगस्थान
३२६	१५	वभ	भव
,,	२९	मै आद्यतवन्	शरीरआद्यनवत्
३३१	८	परषहा	परीषहा
३३३	६	होगी	भोगी
३३४	८	सतिति	समिति
३३९	११	आज्रचण	आचरण
,,	१२	तव्रत्रिका	व्रतनिका
३४४	२	सवम	नवम
३४५	१	विंशति	विंशते.
३४९	५	प्राध्यानात्	प्राध्यानात्
,,	९	आलोचन	आलोचना
३५१	२४	गरए	गण
३५३	२५	उत्तक	उत्तम
३५६		विष	विषय
,,	,,	सरक्षभ्यो	सरक्षणैभ्यो
३५७	१६	नही	ही
३५८	९	पूर्वो	पूर्वे
,,	१०	,,	,,
,,	१३	अविचार	अवीचार
,,	२०	विचारो	वीचारो
,,	२१	,,	,,
३६१	८	ध्यानही	ध्याननही
,,	२२	निज्जरा	निर्जरा
३६३	२१	वकुशील	वकुश कुशील
३६४	१५	निरर्थं	निर्ग्रंथ